

COLLECTION OF HINDU LAW TEXTS

No. 25 (5)

Śrī VAIDYANĀTHA DĪKSHITA'S

SMRTIMUKTĀPHALAM

(PART V)

KĀLA KĀṆḌA (5) and PRĀYAŚCHITTA KĀṆḌA (6)

EDITED BY

J. R. GHARPURE, B. A., LL. B. (Honours-in-Law), F. R. S. A.

*Principal, Law College, Poona; Senior Advocate, Federal Court
of India, Fellow of the University of Bombay.*

BOMBAY.

First Edition

(All Rights Reserved.)

1940

Printed at the Aryabhushan Press, 915/1 Bhamburda Peth,
Poona City, by Mr. V. H. Barve and
Published by Mr. V. J. Gharpure, M. A., LL. B. at the Office
of the Collection of Hindu Law Texts,
Angre's Wadi, Vithalbhai Patel Road, Bombay 4.

धर्मशास्त्रग्रन्थमाला.

[ग्रन्थाङ्कः २५ (५)]

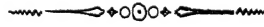
श्री

वैद्यनाथदीक्षितीय-

स्मृतिमुक्ताफलम्

(पञ्चमः खण्डः)

कालकाण्डम् (५), प्रायश्चित्तकाण्डः (६)



जगन्नाथ रघुनाथ धारपुरे,

बी. ए., एलएल. बी., (ऑनर्स-इन्-लॉ)

पुण्यपत्तनस्थव्यवहारशालाया आचार्यः, मुम्बईविश्वविद्यालयसदस्यः

भारतसङ्घन्यायसभासदस्यः, लंदनराजकलासंघसदस्यः

इत्यनेन संशोधितं, मुद्रापितं, प्रकाशितं च ।

प्रथमावृत्तिः

शकाब्दाः १८६२

क्रिस्ताब्दाः १९४०

(सर्वेऽधिकाराः स्वायत्तीकृताः)

पुण्यपत्तने 'आर्यभूषण' मुद्रणालये 'विठ्ठल हरि बर्वे' इत्यनेन मुद्रितः,
मोहमय्यां 'विश्वनाथ जगन्नाथ धारपुरे,' इत्यनेन प्रकाशितश्च ।

श्री

विषयानुक्रमणिका

कालकाण्डम् (५)

| विषयः | पृष्ठम् | विषयः | पृष्ठम् |
|--|---------|---|---------|
| कालनिरूपणम् | ... ८२५ | सप्तमी-पूर्वविद्धा-ग्राह्या | ... ८३१ |
| निमेषादिलक्षणम् | ... ” | पूर्वविद्धाया अलाभे उत्तरविद्धा | ... ” |
| तिथिस्वरूपम् | ... ” | अष्टमीनिर्णयः | ... ” |
| खण्डतिथिलक्षणम् | ... ” | शुक्लाष्टमी परविद्धा ग्राह्या | ... ” |
| तत्र निर्णयः | ... ” | दूर्वाष्टमीव्रते | ... ८३२ |
| ” विधिनिषेधादि | ... ” | कृष्णजन्माष्टमी | ... ” |
| प्रतिपत्तिर्निर्णयः | ... ” | अस्मिन्व्रते तिथिरेव निमित्तम् | ... ” |
| सा द्विविधा, शुद्धा विद्धा च | ... ” | अत्र श्रावण इति मुख्यकल्पः | ... ” |
| पूर्वविद्धायाः पूज्यत्वम् | ... ” | तत्स्वरूपम् | ... ” |
| संमुखत्वम् | ... ८२६ | जयंतीव्रतम् | ... ” |
| उत्तरविद्धाया निषेधः | ... ” | तत्करणे फलम् | ... ” |
| सर्वादर्पाहिंसादितिथिभेदाः | ... ” | अकरणे प्रत्यवायः | ... ” |
| तिथीनां वेधः | ... ८२७ | जयंतीव्रते फलविशेषः | ... ८३३ |
| कार्तिकशुक्लप्रतिपदि बल्युत्सवः | ... ” | ग्राह्या तिथिः | ... ” |
| ज्योतिःशास्त्रप्रसिद्धाभावे स्मृत्यापादितग्रहणम् | ... ” | चत्वारः कल्पाः | ... ८३४ |
| तत्रापवादः | ... ८२८ | पारणानिर्णयः | ... ८३५ |
| एकभक्तव्रतम् | ... ” | नवमीनिर्णयः | ... ” |
| नक्तव्रतम् | ... ८२९ | दुर्गासरस्वतीव्रतादौ पूर्वविद्धा ग्राह्या | ... ” |
| तत्र कालभेदेनाधिकारव्यवस्था | ... ” | रामनवमीनिर्णयः | ... ८३६ |
| त्रिमुहूर्तात्मकप्रदोषव्यापिन्यां तिथौ कार्यम् | ... ” | दशावतारकालाः | ... ८३७ |
| दानव्रतादीनां क्रमः | ... ८३० | दशमीनिर्णयः | ... ” |
| द्वितीयानिर्णयः | ... ” | एकादशीनिर्णयः | ... ” |
| परविद्धाया उपोष्यत्वम् | ... ” | उपवासः | ... ८३८ |
| तृतीयानिर्णयः | ... ८३१ | वैष्णवानां विशेषाः | ... ८३९ |
| परविद्धैव ग्राह्या | ... ” | वैष्णवशब्दार्थः | ... ” |
| चतुर्थी- | ... ” | स्मार्तैकादशीनिर्णयः | ... ८४० |
| विनायकव्रतानुष्ठाने मध्यान्हव्यापिनी | ... ” | अष्टादशभेदपूर्वकमुपवासनिश्चयः | ... ८४१ |
| पंचमी-पूर्वविद्धा ग्राह्या | ... ” | एकादश्या ऋषावृद्धिः | ... ८४२ |
| षष्ठी-परविद्धा- | ... ” | दिनत्रयविषये | ... ८४३ |

| विषयः | पृष्ठम् | विषयः | पृष्ठम् |
|---|---------|-------------------------------|---------|
| दिनक्षये ... | ... ८४४ | त्रयोदशीनिर्णयः ... | ... ८५० |
| नैमित्तिककाम्यौ ... | ... ८४५ | चतुर्दशी ,, ... | ... ८५१ |
| श्रवणद्वादशीनिर्णयः ... | ... ८४६ | अनन्तव्रतम् ... | ... ,, |
| द्वादश्यां माध्याह्नकालः ... | ... ८४७ | शिवरात्रिव्रतनिर्णयः ... | ... ८५२ |
| एकादश्युपवासे अधिकारिणः ... | ... ,, | दिनद्वयव्यापिन्याम् ... | ... ८५३ |
| पतिमत्या उपवासनिषेधः ... | ... ,, | तत्र विवेकः ... | ... ,, |
| उपवासासमर्थविषयः ... | ... ८४८ | इष्टिकालनिर्णयः ... | ... ८५४ |
| सूतकादावुपवासविचारः ... | ... ,, | संधिमत्यां तिथौ ... | ... ८५५ |
| एकादश्यां नित्यनैमित्तिकश्राद्धे उपवासभेदः ,, | ... | तिथिक्षयवृद्ध्योः संधौ ... | ... ८५६ |
| काम्यैकादश्व्रितानुष्ठानक्रमः ... | ... ८४९ | बौधायनमतानुसारिणाममावास्यायां | |
| नित्योपासविषयः ... | ... ८५० | विशेषः ... | ... ८५७ |
| द्वादशीनिर्णयः ... | ... ,, | नक्षत्रादिनिर्णयः ... | ... ८५८ |

प्रायश्चित्त काण्डः (६)

| विषयः | पृष्ठम् | विषयः | पृष्ठम् |
|----------------------------------|---------|---|--------------|
| प्रायश्चित्ताधिकारिणः ... | ... ८५९ | प्रायश्चित्तविधानस्थलम् ... | ... ८७१ |
| अकरणे दोषः ... | ... ,, | ब्रह्महत्याप्रायश्चित्तम् ... | ... ८७१ |
| एकविंशति नरकाः ... | ... ,, | वधोधमे ,, ... | ... ८७२ |
| पापफलानि ... | ... ८६० | प्रायश्चित्ताकरणे ,, ... | ... ,, |
| रहस्यकृतपापफलम् ... | ... ८६० | जनकादिहत्यायाम् ,, ... | ... ८७३ |
| नरकानुभवानन्तरं जन्मान्तराणि ... | ... ८६१ | क्षत्रियादिकृतब्रह्महत्याप्रायश्चित्तम् ... | ... ,, |
| नवविधपापानि ... | ... ८६२ | क्षत्रियादिवधे ,, ... | ... ,, |
| ब्रह्महत्यादिमहापातकानि ... | ... ,, | शस्त्रग्रहणविचारः ... | ... ८७४ |
| प्रयोजकादीनां फलतारतम्यम् ... | ... ,, | गोवधप्रायश्चित्तम् ... | ... ८७५ |
| अतिपातकानि ... | ... ८६३ | गोवधनिमित्तकानि ... | ... ,, |
| ब्रह्महत्यासमानि ... | ... ८६४ | दण्डलक्षणम् ... | ... ८७६ |
| सुरापानसमानि ... | ... ८६५ | द्विगुणप्रायश्चित्तस्य निमित्तान्तरम् ... | ... ,, |
| स्वर्णस्तेय ,, ... | ... ,, | गृहे बद्धस्य गोमरणे ... | ... ,, |
| गुरुतल्प ,, ... | ... ,, | कचित्प्रायश्चित्ताभावः ... | ... ,, |
| उपपातकानि ... | ... ८६६ | शृङ्गभङ्गादौ ... | ... ,, |
| कामाकाप्रकृतपापविचारः ... | ... ८६७ | प्राण्यन्तरहनने ... | ... ८७६, ८७७ |
| प्रकाशरहस्यप्रायश्चित्तम् ... | ... ८६८ | वृक्षच्छेदादिप्रायश्चित्तम् ... | ... ८७७ |
| परिषल्लक्षणम् ... | ... ८६९ | सुरापानादिप्रायश्चित्तम् ... | ... ८७८ |
| परिषद्योग्याः ... | ... ८७० | प्रायश्चित्ताकरणे दण्डः ... | ... ८७९ |

| विषयः | पृष्ठम् |
|--|---------|
| प्रमादतः पाने ... | ८८० |
| कामकरे ,, ... | ” |
| विण्मूत्रादिभक्षणे प्रायश्चित्तम् ... | ” |
| चंडालघटस्थजलपाने ... | ८८१ |
| ” वाप्यादिजलपाने ... | ” |
| उच्छिष्टविषयापवादाः ... | ” |
| निषिद्धक्षीरपाने ... | ८८२ |
| सुवर्णस्तेये ... | ” |
| स्तेयस्वरूपम् ... | ८८३ |
| मनसापहारे ... | ” |
| अल्पस्वर्णापहरणे ... | ” |
| क्षत्रियादीनां स्तेयप्रायश्चित्तम् ... | ८८४ |
| रजतस्तेये ,, ... | ” |
| ताम्रस्तेये ,, ... | ” |
| कांस्यादिस्तेये ,, ... | ” |
| धनधान्यादिस्तेये ,, ... | ” |
| भूम्यपहारे ,, ... | ८८५ |
| वस्त्रादिस्तेये ,, ... | ” |
| अजादिहरणे ,, ... | ” |
| गृहोपकरणहरणे ,, ... | ” |
| सालग्रामादेः पूजोपकरणस्य च हरणे ... | ” |
| मध्यस्थेन धनग्रहणे ,, ... | ” |
| अग्न्यागमनप्रायश्चित्तानि ... | ८८६ |
| गुरुतल्पगमने ,, ... | ” |
| ” तत्समानि ,, ... | ” |
| रेतस्सेकात्पूर्वनिवृत्तौ ,, ... | ” |
| कामकृतगमने प्रायश्चित्तम् ... | ८८७ |
| सवर्णागमने ,, ... | ” |
| सम्बन्ध्यादिस्त्रीगमने ,, ... | ८८८ |
| स्वैरिणीगमने ,, ... | ” |
| गर्भोत्पादने ,, ... | ” |
| चण्डाल्यादिगमने ,, ... | ” |
| षोडशविधचण्डालीगमने प्रायश्चित्तम् ... | ८८९ |
| चर्मकारस्त्रीगमने ,, ... | ” |
| ब्राह्मचण्डालीगमने ,, ... | ८९० |

| विषयः | पृष्ठम् |
|---|----------|
| रजस्वलागमने प्रायश्चित्तम् ... | ८९० |
| विधवागमने ,, ... | ८९१ |
| दास्यादिगमने ,, ... | ” |
| मुखमैथुने ,, ... | ” |
| पश्वादिगमने ,, ... | ” |
| अवकीर्णप्रायश्चित्तम् ... | ८९२ |
| ब्रह्मचारिणो रेतस्वलने ... | ” |
| नैष्ठिकादीनां तु कृतप्रायश्चित्तानामपि न व्यवहारः ... | ” |
| ऋतुकालातिक्रमे ... | ” |
| स्त्रीबालातुराणामर्धप्रायश्चित्तम् ... | ८९३ |
| शपथोल्लंघने ,, ... | ” |
| क्षत्रियादीनां ब्राह्मणीगमने ,, ... | ” |
| स्त्रियाः परपुरुषगमने ,, ... | ” |
| व्यभिचारिस्त्रीणां त्यागविचारः ... | ८९४ |
| अनिमित्ततया भर्तृभार्यापरित्यागे ,, ... | ” |
| विधवाया गर्भत्यागः ... | ८९५ |
| शङ्कितव्यभिचारे स्त्रीणां कर्तव्यम् ... | ” |
| बन्धुवाहित्येन गमने ... | ” |
| पुनरागमने प्रतीक्षणकालः ... | ” |
| स्वातन्त्र्येण गताया अत्यागे } ... | ” |
| भर्त्रादीनां प्रायश्चित्तम् } | ” |
| ताडनादिना निर्गच्छन्त्याः त्यागविचारः ... | ८९६ |
| व्यभिचारिण्या गृहप्रवेशे शुद्धिप्रकारः ... | ” |
| ब्राह्मण्याश्चाण्डालादिगमने प्रायश्चित्तम् ... | ” |
| ” म्लेच्छरजकादिगमने ,, ... | ८९७ |
| संसर्गस्य महापातकविचारः ... | ” |
| कर्मण एव पातित्यहेतुत्वम् ... | ” |
| कलौ संसर्गस्य पापमात्रहेतुत्वम् ... | ८९८ |
| तत्र प्रायश्चित्तम् ... | ” |
| गोचर्मक्षेत्रलक्षणम् ... | ८९८ |
| मिथ्याभिज्ञाने प्रायश्चित्तम् ... | ८९८, ८९९ |
| ब्राह्मणापगुरणे ,, ... | ८९९ |
| ब्राह्मणतिरस्काणे ,, ... | ” |
| ” ताडना ,, ... | ” |

| विषयः | पृष्ठम् |
|--------------------------------------|--------------|
| गुरुपित्राद्यधिक्षेपे प्रायश्चित्तम् | ... ९०० |
| पतनीये समुद्रयानादौ ” ... | ... ” |
| दुर्जनसेवाप्रायश्चित्तम् | ... ” |
| शूद्रसेवा ” ” ... | ... ” |
| अशुचिकराणाम् ” ... | ... ९०१ |
| अभिचारशापादि ” ... | ... ” |
| भृतकाध्यापनाध्ययने ” ... | ... ” |
| ब्रह्मोज्ञे ” ” ... | ... ९०२ |
| अनाश्रमवासे ” ... | ... ” |
| पञ्चाशद्वत्सरादुपरि विवाहनिषेधः | ... ” |
| ऊढायाः पुनरुद्वाहे प्रायश्चित्तम् | ... ” |
| सगोत्रादिविवाहे ” ” ... | ... ” |
| परिवित्यादेः ” ” ... | ... ९०३ |
| उष्ट्रादियुक्तयानारोहणे ” ... | ... ” |
| खराद्यारोहणे ” ” ... | ... ” |
| कारागृहवासप्रायश्चित्तम् | ... ” |
| कुग्रामवासे ” ... | ... ९०४ |
| दुर्देशगमने ” ... | ... ” |
| श्वशृंगालादिदंशने ” ... | ... ” |
| शरीरे कृम्युत्पत्तौ ” ... | ... ९०५ |
| दुर्ब्राह्मणगृहभोजने ” ... | ... ९०६, ९०७ |
| राजाद्यन्नभोजने ” ... | ... ९०६ |
| व्यतीपातादिभोजने ” ... | ... ९०७ |
| अयुतसहस्रभोजने ” ... | ... ९०८ |
| शूद्रादिगृहे स्वयंपाकभोजनेऽपि | ... ” |
| संघान्नभोजने | ... ” |
| क्रीतान्नभोजने प्रायश्चित्तम् | ... ९०८ |
| यागान्नभोजने ” ... | ... ९०९ |
| अस्नात्वा भोजने ” ... | ... ” |
| अशुचिकालभोजने ” ... | ... ” |
| पर्युषितान्नभोजने ” ... | ... ” |
| ओदनवटकमाषवटकादिभक्षणे ” | ... ” |
| परमान्नकुसरभक्षणे नियमाः | ... ९१० |
| व्रात्यकुष्ठचाद्यन्नभोजने | ... ” |
| अन्तःशवग्रामभोजने ” ... | ... ” |

| विषयः | पृष्ठम् |
|--|---------|
| उपरागभोजने प्रायश्चित्तम्... | ... ९१० |
| भिन्नपात्रभोजने ” ... | ... ९११ |
| रजस्वलापक्वान्नभोजने ” ... | ... ” |
| निषिद्धदिने द्विर्भोजने ” ... | ... ” |
| ब्रह्मयज्ञानकरणे ” ... | ... ” |
| स्वस्वकाले गर्भाधानाद्यकरणे ” | ... ” |
| उष्णोदकस्नाने ” | ... ९१२ |
| यज्ञोपवीतादिना विना भोजने ” | ... ” |
| शिखोपवीतभ्रंशे ” | ... ” |
| भोजनकाले क्षुतादौ ” | ... ” |
| शिवनिर्माल्यभोजने ” | ... ” |
| पत्न्या सह भोजने ” | ... ९१३ |
| नीलवस्त्रधारणनिषेधः ” | ... ” |
| परान्नभोजने प्रायश्चित्तम् ” | ... ” |
| नवश्राद्धादिभोजने ” ” | ... ” |
| श्राद्धभोजने ब्रह्मचारिणः ” | ... ९१४ |
| क्षत्रियादिश्राद्धभोजने ” | ... ” |
| नान्दीश्राद्धभोजने ” | ... ” |
| श्राद्धशिष्टान्नभोजननिषेधः | ... ९१५ |
| चौलाद्यन्नभोजने | ... ” |
| अविक्रयविक्रये | ... ९१६ |
| ऋणादि कृत्वा व्रताद्याचरणनिषेधः | ... ९१७ |
| ब्राह्मणादिविक्रये प्रायश्चित्तम् | ... ९१७ |
| श्रुतिस्मृत्यादेः विक्रये ” ... | ... ९१८ |
| जलाग्न्यादिषु मर्तुमुद्यम्य निवृत्तस्य ” | ... ” |
| पारिव्राज्यात् प्रच्युतौ ” | ... ९१९ |
| आत्मघातिनः शवदहनादौ ” | ... ” |
| अनृतभाषणे ” ” | ... ९२० |
| मिथ्याभूतचतुर्वर्णवधशपथे ” | ... ” |
| कचिचु निमित्तविशेषे अनृतमपि वक्तव्यम् | ९२१ |
| श्रौताभित्यागे प्रायश्चित्तम् ... | ... ” |
| नास्तिक्यप्रायश्चित्तम् | ... ९२२ |
| एकपत्नौ वैषम्येण दाने ” | ... ” |
| अपाङ्केयपङ्क्तिभोजनादौ ” | ... ” |
| पलाशदारुशयनादौ ” | ... ” |

| विषयः | पृष्ठम् |
|---|---------|
| श्राद्धे निमन्त्रितस्य कालातिक्रमे प्रायश्चित्तम् | ९२३ |
| क्षत्रियाद्याभिवादानादौ | ९२४ |
| शूद्रस्य वेदवाक्यश्रवणे | ९२४ |
| प्रतिग्रहविचारः | |
| वृत्त्यर्थं सत्प्रतिग्रहे न प्रायश्चित्तापेक्षा | ९२४ |
| तत्र व्यवस्था | ९२४ |
| तुलापुरुषादिप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् | ९२५ |
| ब्रह्माण्डघटविषये | ९२५ |
| हिरण्यगर्भविषये | ९२६ |
| कल्पतरुविषये | ९२६ |
| गोसहस्रप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् | ९२७ |
| हिरण्यकामधेनुप्रतिग्रहे | ९२७ |
| हिरण्याश्वप्रतिग्रहे | ९२८ |
| हिरण्याश्वरथप्रतिग्रहे | ९२८ |
| हिरण्यहस्तिप्रतिग्रहे | ९२८ |
| पञ्चलाङ्गुलप्रतिग्रहे | ९२९ |
| धराप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् | ९२९ |
| विश्वचक्रप्रतिग्रहे | ९२९ |
| कल्पलता | ९२९ |
| सप्तसागर | ९२९ |
| चर्मधेनुप्रतिग्रहे | ९३० |
| महाभूतघट | ९३० |
| साधारणप्रायश्चित्तम् | ९३१ |
| अतिपातक्रियायश्चित्तम् | ९३१ |
| संकरीकरणादौ | ९३३ |
| उपपातक्रियायश्चित्तम् | ९३४ |
| रहस्यपापप्रायश्चित्तानि | ९३५ |
| तत्र प्रतिपदोक्तप्रायश्चित्तम् | ९३५ |
| रहस्यसुरापानादौ | ९३५ |
| उपपातकरहस्यप्रायश्चित्तम् | ९३६ |
| अधिकारभेदेन प्रयोगान्तरम् | ९३६ |

| विषयः | पृष्ठम् |
|---------------------------------|---------|
| पादकृच्छ्राः | ९३६ |
| तत्र वर्णभेदेन व्यवस्था | ९३६ |
| अतिकृच्छ्रलक्षणम् | ९३७ |
| कृच्छ्रातिकृच्छ्र | ९३७ |
| तत्कृच्छ्र | ९३७ |
| सांतपनकृच्छ्र | ९३८ |
| महासांतपनम् | ९३८ |
| पराकलक्षणम् | ९३८ |
| पर्णकृच्छ्र | ९३८ |
| फलकृच्छ्रादि | ९३८ |
| वारुणस्त्रीसौम्यकृच्छ्रादि | ९३९ |
| तुलापुरुषकृच्छ्राः | ९३९ |
| अघमर्षणकृच्छ्रलक्षणम् | ९३९ |
| दैवतकृच्छ्र | ९३९ |
| यज्ञकृच्छ्र | ९३९ |
| यावककृच्छ्र | ९४० |
| प्रसृतियावककृच्छ्र | ९४० |
| चांद्रायणकृच्छ्र | ९४० |
| तत्र पिपीलिकामध्यम् | ९४० |
| वपनादिक्रमः | ९४१ |
| चान्द्रायणानि | ९४१ |
| तेषां स्वरूपम् | ९४१ |
| तत्र ग्रासपरिमाणम् | ९४१ |
| चान्द्रायणफलम् | ९४१ |
| व्रतग्रहणप्रकारः | ९४२ |
| असमापने प्रत्यवायः | ९४२ |
| ब्रह्मकूर्चस्वरूपं तत्परिमाणं च | ९४२ |
| देशविशेषाः | ९४२ |
| प्राजापत्यादिप्रत्याम्नायाः | ९४३ |
| चान्द्रायणादीनां | ९४३ |
| महानदीपरिगणनम् | ९४४ |
| गोदानादावशक्तेन तेभ्यस्तूपदानम् | ९४४ |

स्मृतिमुक्ताफलम्

कालकाण्डम् (५)

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ कालो निरूप्यते ॥ स च कर्मण्यंगभूतः । तदाह गार्ग्यः—
“ तिथिनक्षत्रवारादि साधनं पुण्यपापयोः । प्रधानगुणभावेन न स्वातंत्र्येण ते क्षमाः ” ॥ इति ।
व्यासोऽपि—“ यत्तिथौ यच्च नक्षत्रे वारे यत्र च यद्यथा ।

५

“ विहितं वा निषिद्धं वा पालयन्निदिवं व्रजेत् । अपालयन् पुनर्मोहादपवित्रं पदं व्रजेत् ” ॥ इति ।
निमेषादिलक्षणम् । काल एकोऽप्युपाधिभेदादनेकप्रकारः । तथा च गार्ग्यः—
“ अक्षिपक्ष्मपरिक्षेपो निमेषः परिकीर्तितः । द्वौ निमेषौ त्रुटिर्नाम द्वौ त्रुटी तु लवः स्मृतः ॥
“ द्वौ लवौ क्षण इत्युक्तः काष्ठा प्रोक्ता दश क्षणाः ।

“ त्रिंशत्काष्ठाः कलाः प्रोक्ताः कलास्त्रिंशन्मुहूर्तकः । ते तु त्रिंशदहोरात्र इत्याह भगवान्हरः ” ॥ इति । १०

तिथिस्वरूपम् । तिथिस्वरूपमुक्तं कालादर्श—

“ रवीन्द्रोयोगविरहौ क्रमादृशश्च पूर्णिमा । कलाः प्रवेशनिर्याणैस्तिथयोऽन्याश्च पक्षयोः ” ॥ इति ।
सूर्याचंद्रमसोः सन्निकर्षो दर्शः । विप्रकर्षः पूर्णिमा भवति । इंदोः कलानां रवौ प्रवेशनिर्याणैः
सूर्याचंद्रमसोः कृष्णशुक्लपक्षयोः प्रतिपदादयः तिथयो भवेयुरित्यर्थः ।

खण्डतिथिलक्षणम् । तत्र संपूर्णतिथौ नास्ति संदेहः । यदा ज्ञासवृद्धिवशेन खंडतिथि- १५
भवति तदा निर्णयोऽपेक्ष्यते । ज्ञासवृद्धौ च गार्ग्येण दर्शिते—

“ सर्वा दर्पा तथा हिंसा त्रिविधं तिथिलक्षणम् । धर्माधर्मवशादेव तिथिस्त्रेधा विवर्तते ” ॥ इति ।

सर्वा समतिथिः । दर्पा वृद्धियुक्ता । हिंसा क्षययुक्ता ।

खंडतिथौ विधिनिषेधव्यवस्थामाह वृद्धगार्ग्यः—

“ निमित्तं कालमादाय वृत्तिर्विधिनिषेधयोः । विधिः पूज्यतिथौ तत्र निषेधः कालमात्रके ॥ २०

“ तिथीनां पूज्यता नाम कर्मानुष्ठानयोग्यता । निषेधस्तु निवृत्त्यात्मा कालमात्रमपेक्षते ” ॥ इति ।

“ दर्शे स्नात्वा पितृभ्यस्तु दद्यात्कृष्णतिलोदकम् ” इत्यादिविधिः कर्मानुष्ठानयोग्यतिथिमपेक्षते ।

“ अमावास्यायां न गच्छेत्प्रातःकालामपि स्त्रियम् । तैलं च न स्पृशेदामं वृक्षादींश्च न छेदयेत् ” ॥

इत्यादिको निषेधस्तिथिमात्रमपेक्षत इत्यर्थः । एवं च सति खंडतिथौ पूज्यत्वं निर्णेतव्यं भवति ।

तत्र प्रतिपदमारभ्य पंचदश्यंतास्तिथयः क्रमेण निर्णयन्ते ।

२५

प्रतिपन्निर्णयः । प्रतिपत् द्विविधा । शुद्धा विद्धा चेति । या सूर्योदयमारभ्य पुनरुदयपर्यन्ता
भवति सा शुद्धा

“ सर्वा ह्येताश्च तिथय उदयादोदयस्थिताः । शुद्धा इति विनिश्चेयाः षष्टिनाड्यो हि वै तिथिः ” ॥ इति

स्मृतंते । शुद्धत्वात्प्रतिपदादिविहितं सर्वं निःशकैस्तत्रानुष्ठेयम् । विद्धा च द्विविधा । पूर्वदिने दर्श-

युक्ता उत्तरदिने द्वितीयायुक्ता चेति । तत्र पूर्वविद्धायाः पूज्यत्वमाह पैठीनसिः—

३०

“ पंचमी सप्तमी चैव दशमी च त्रयोदशी । प्रतिपन्नवमी चैव कर्तव्या संमुखा तिथिः ” ॥ इति ।

संमुखत्वं च स्कांदपुराणे विवेचितम्—

“संमुखा नाम सायाह्नव्यापिनी दृश्यते यदा । प्रतिपत्संमुखा कार्या या भवेदापराह्निकी” ॥ इति ।

व्यासोऽपि—“प्रतिपत्सैव विज्ञेया या भवेदापराह्निकी” ॥ इति ।

एतस्यैव पक्षस्यानुग्राहक उत्तरविद्धाया निषेधो बृहद्वसिष्ठेन स्मर्यते—

५ “द्वितीया पंचमी वेधादशमी च त्रयोदशी । चतुर्दशी चोपवासे हन्युः पूर्वोत्तरे तिथी” ॥ इति ।
द्वितीयादयः स्ववेधेन पूर्वोत्तरां च तिथिं हन्युरित्यभिधानादुत्तरविद्धा प्रतिपदुपवासे निषिद्धा भवति । तथा च ब्रह्मकैवर्ते—

“प्रतिपत्पंचमीभूतसावित्रव्रतपूर्णमा । नवमी दशमी चैव नोपोष्याः परसंयुताः” ॥ इति ।
सावित्रव्रतपूर्णमा सावित्रव्रतयुक्ता पौर्णमासी । एतच्च पूर्वविद्धायाः प्रतिपदः पूज्यत्वाभिधानं

१० शुक्लप्रतिपद्विषयम् । अत एवोक्तं निगमे—

“युग्माग्नियुग्माभूतानां षण्मुन्योर्वसुरंध्रयोः । रुद्रेण द्वादशी युक्ता चतुर्दश्या च पूर्णिमा ॥

“प्रतिपद्युग्मावास्या तिथ्योर्युग्मं महाफलम्” ॥ इति । युग्मं द्वितीया । अग्निस्मृतीया । युग्मं चतुर्थी । भूतं पंचमी । षट् षष्ठी । मुनिः सप्तमी । वसुरष्टमी । रंध्रं नवमी । रुद्र एकादशी । अत्र युग्माग्न्यादिसप्तयुग्मेषु पूर्वा तिथिरुत्तरविद्धा ग्राह्या । उत्तरा तु पूर्वविद्धेत्युक्तं भवति ।

१५ स्मृत्यंतरेऽपि—

“एकादशी तथा षष्ठी अमावास्या चतुर्थिका । उपोष्याः परसंयुक्ताः पराः पूर्वेण संयुताः” ॥ इति ।

अन्यत्रापि—

“षष्ठ्यष्टमी अमावास्या कृष्णपक्षे त्रयोदशी । एताः परयुताः पूज्याः पराः पूर्वेण संयुताः” ॥ इति ।

अत्र ‘प्रतिपद्युग्मावास्या पराः पूर्वेण संयुता’ इति चामावास्यायुतायाः प्रतिपदः उपोष्यत्वा-

२० भिधानात् शुक्लप्रतिपद्विषयत्वं स्फुटमवगम्यते । न हेतानि वचनानि कृष्णपक्षविषयतायाः कथंचिदपि योजयितुं शक्यन्ते । एतदनुसारेण “प्रतिपत्सद्वितीया स्यात् द्वितीया प्रतिपद्युता” इत्यापस्तम्बवचनं कृष्णपक्षविषयत्वेनैव संकोचनीयम् । एवं च ‘नोपोष्याः परसंयुता’ इति द्वितीयायुतोपवासनिषेधः शुक्लपक्षविषयतया योजनीयः । यत्तु गोभिलवचनम्—

“सर्वा दर्पा तथा हिंसा त्रिविधं तिथिलक्षणम् । सर्वादपि परे कार्ये हिंसा स्यात्पूर्वकालिकी” ॥ इति ।

२५ यदपि बोधायनवचनम्—

“वर्धमानस्य पक्षस्य उदया पूज्यते तिथिः । यदा पक्षः क्षयं याति तदा स्यादापराह्निकी” ॥ इति ।

उदया उदयंगतेत्यर्थः । यदपि स्मृत्यंतरवचनम्—

“सा तिथिस्तदहोरात्रं यस्यामभ्युदितो रविः । वर्धमानस्य पक्षस्य त्वासे त्वस्तमया तिथिः” ॥ इति ।

वृद्धौ तिथिरुदयगता पूज्या क्षये त्वस्तगता पूज्येत्यर्थः । एतान्येकोद्दिष्टादिविषयाणि ।

३० तथाह व्यासः—

“द्वितीयादिकयुग्मानां पूज्यतानियमादिषु । एकोद्दिष्टादिवृद्ध्यादौ त्वासेवृद्ध्यादिचोदना ॥” इति ।

नियमादिष्वित्यादिशब्देन पितृकर्मव्यतिरिक्तव्रतोपवासादिसकलकर्मणां ग्रहणम् । एकोद्दिष्टादीत्यादि-
शब्देन पार्वणश्राद्धस्य ग्रहणम् ।

कालादर्शोऽपि—

“प्रत्याब्दिकादिश्राद्धादौ वृद्धि-हासादिचोदना । द्वितीयादिकयुग्मानां व्रतादौ पूज्यता भवेत् ॥” इति । तदेवं वृद्धि-हासानादरेण उपवासे शुक्लप्रतिपदं पूर्वविद्धा ग्राह्या कृष्णप्रतिपदुत्तरविद्धेति स्थितम् । तिथीनां वेधः पैठीनसिना दर्शितः—

“पक्षद्वयेऽपि तिथयस्तिथिं पूर्वा तथोत्तराम् । त्रिभिर्महूर्तैर्विध्यन्ति सामान्योऽयं विधिः स्मृतः” ॥ इति । ५
पूर्वेद्युर्दयानन्तरमभावास्या त्रिमुहूर्ता ततोऽधिका वा सा प्रतिपदं विध्यति । परेद्युरस्तमयात्प्राक् द्वितीया त्रिमुहूर्ता ततोधिका वा साऽपि पूर्वा प्रतिपदं विध्यतीत्येवं सर्वतिथिसाधारणो वेधो विशेषवचनाभावविषये द्रष्टव्यः । वेध्यापि प्रतिपदिवा त्रिमुहूर्ता ततोधिका वा भवेत् सा वेधाहं भवेत् । न न्यूना । तदुक्तं कालनिर्णये—

“शुद्धा विद्धा तिथिः शुद्धा हीना तिथ्यान्ययाहनि । उदये पूर्वया तिथ्या विध्यते त्रिमुहूर्तकैः ॥ १०

“सायं तूत्तरया तद्वन्न्यूनया तु न विध्यते । वेध्यापि त्रिमुहूर्तैव न न्यूना वेधमर्हति ॥

“शुक्लपक्षे दर्शविद्धा कृष्णे विद्धा द्वितीयया । उपोष्या प्रतिपच्छुक्ले मुख्या स्यादापराह्निकी ॥

“तदभावे तु सायान्हव्यापिनी परिगृह्यताम् । प्रातः संगवमध्यान्हापराह्णाः सायमित्यसौ ॥

“अत्रान्हः पंचधा भागो मुख्यो द्वित्र्यादिभागतः” ॥ इति । पूर्वाण्होऽपराण्ह इति द्वेधा विभागः । पूर्वाण्हो मध्यान्होऽपराह्ण इति त्रेधा विभागः । पूर्वाण्हो मध्यान्हः अपराण्हः सायान्ह १५ इति चतुर्धा विभागः । प्रातः संगवो मध्यान्होऽपराण्हः सायान्ह इति पंचधा विभागः । द्वित्र्यादि-विभागात् पंचधाविभागस्य बहुश्रुतिस्मृतिसंमतत्वात् स एव मुख्य इत्यंतिमश्लोकार्थः । एवं च सत्युक्तेषु पंचस्वन्हो भागेषु पंचमं सायान्हभागं व्याप्य ततः पूर्वं चतुर्थमपराण्हभागं या शुक्ल-प्रतिपत्स्पर्शति तादृशी पूर्वविद्धोपवासे पूज्या । स चोपवासः भविष्योत्तरपुराणे कार्तिक-मासांतदर्शे पायसभोजनादिनियमं विधाय प्रतिपदि विहितः—

“मार्गशीर्षे ततो मासि प्रतिपद्यपरेऽहनि । स्पृष्ट्वा गुरुं चोपवसेन्महादेवं स्मरन्मुहुः” ॥ इति स्कंदपुराणे कार्तिकशुक्लप्रतिपदि बल्युत्सवो विहितः । एवमन्यत्रापि द्रष्टव्यम् । पूर्वविद्धायां शुक्लप्रतिपदि योऽयमुपवासो विहितः तस्य प्रातरेव संकल्पः कार्यः । तदानीं ज्योतिःशास्त्र-प्रसिद्धप्रतिपदभावेऽपि स्मृतिभिरापादितायाः प्रतिपदः सत्वात् । अत एव देवलः—

“यां तिथिं समनुप्राप्य त्वस्तं याति दिवाकरः । सा तिथिः सकला ज्ञेया दानाध्ययनकर्मसु” ॥ इति । २५
अत्र कर्मस्त्विति बहुवचनादुपवासादिनिखिलदैवकर्मपरिग्रहः । अत्रास्तमयात्पूर्वं मुहूर्तत्रय-व्यापिनीं तिथिं समनुप्राप्येति व्याख्येयम् । न तु ततोऽल्पव्याप्तिर्न विवक्षिता ।

तथा च वृद्धवसिष्ठः—

“यस्यां तिथावस्तमित्यात्सूर्यस्तु त्रिमुहूर्तकैः । यागदानजपादिभ्यस्तामेवोपक्रमोत्तिथिम्” ॥ इति ।

स्कांदेऽपि—

“यां तिथिं समनुप्राप्य यात्यस्तं पद्मिनीप्रियः । सा तिथिस्तद्दिने प्रोक्ता त्रिमुहूर्ता यदा भवेत्” ॥ इति ।

सौरेऽपि—

“यां प्राप्यास्तमुपेत्यर्कः स्याच्चेत्सा त्रिमुहूर्तगा । धर्मकृत्येषु सर्वेषु संपूर्णा तां विदुर्बुधाः” ॥ इति ।

एवं च सायंतनत्रिमुहूर्तशुक्लप्रतिपदुपेतायां तिथौ प्रातरेव संकल्प्य प्रतिपदुपवासः कर्तव्य इति निश्चयः । पूर्वविद्धायां शुक्लप्रतिपदि उपवासं कृत्वा परेद्युः तिथ्यन्ते पारणं कुर्यात् । तदाह सुमंतुः— ३५

“तिथिनक्षत्रनिग्रमे तिथिभान्ते च पारणम् । अतोऽन्यथा पारणे तु व्रतभंगमवाप्नुयात्” ॥ इति ।

निगमे—“पूर्वविद्धासु तिथिषु भेषु च श्रवणं विना । उपोष्य विधिवत्कुर्यात्तत्तदन्ते तु पारणम्” ॥ इति ।
स्कांदेऽपि—

“ तिथीनामेव सर्वासामुपवासव्रतादिषु । तिथ्यन्ते पारणं कुर्याद्विना शिवचतुर्दशी ” ॥ इति ।
अस्य तिथिभांतपारणस्यापवादः क्वचित् स्मर्यते—

५ “ तिथ्यन्ते चैव भांते च पारणं यत्र चोद्यते । यामत्रयोर्ध्ववर्तिन्यां प्रातरेव हि पारणम् ” ॥ इति ।
यत्तु देवलवचनम्—

“ उपवासेषु सर्वेषु पूर्वाह्णे पारणं भवेत् । अन्यथा तत्फलस्यार्थं धर्ममेवोपसर्पति ” ॥ इति । धर्मो
यमः । तत्पूर्वविद्धाव्यतिरिक्तपरविद्धाशुद्धतिथ्युपवासविषयम् । पूर्वविद्धायां विहितस्योपवासस्य
केनापि निमित्तेन तत्रानुष्ठानासंभवे सत्युत्तरविद्धा गौणकालत्वेन ग्राह्या । “ पौर्वाह्निकास्तु तिथयो
१० देवकार्ये फलप्रदा ” इति सामान्येन स्मरणात् । उक्तं च कालनिर्णयसंग्रहे—

“ अभावेऽपि प्रतिपदः संकल्पः प्रातरिष्यते । तिथिस्त्रियामतोऽर्वाक् चेत् तिथ्यन्ते पारणं भवेत् ॥
“ मुख्यतिथ्यन्तरत्वे तु तिथिशेषोऽपि गृह्यताम् ” ॥ इति ।

एकभक्तव्रतनिर्णयः । अथैकभक्तं निर्णीयते । तच्च त्रिविधम् । स्वतंत्रमन्यांगं उपवासप्रति-
निधिरूपं चेति । तेषु स्वतंत्रं ब्रह्मपुराणे पठ्यते—“प्रतिपद्येकभक्ताशी समाप्ते कपिलाप्रदा” ॥ इति ।
१५ तत्र कर्मकालव्यापिनी तिथिर्ग्राह्या “ यो यस्य विहितः कालस्तत्कालव्यापिनी तिथिः ”
इति स्मृतेः । कर्मकालस्तत्कर्मस्वरूपं चेत्युभयं स्कंदपुराणे दर्शितम्—

“ दिनार्धसमयेऽतीते भुज्यते नियमेन यत् । एकभक्तमिति प्रोक्तमतस्तत्स्याद्विवैव हि ” ॥ इति ।
देवलोऽपि—

“ दिनार्धसमयेऽतीते भुज्यते नियमेन यत् । एकभक्तमिति प्रोक्तं न्यूनं शास्त्रयेण तु ” ॥ इति ।

२० अत्र दिनार्धस्योपरि सार्धमुहूर्तपरिमितः काल एकभक्तस्य मुख्यः । दिनार्धेऽतीते सति समनन्तर-
भावितादस्तमयात् प्राचीनो गौणः कालः । दिवेत्यभ्यनुष्ठानात् । अत्र मुख्यकालव्यापिनी तिथिर्ग्राह्या ।
अत एव पादौ—“मध्यान्हव्यापिनी ग्राह्या एकभक्ते सदा तिथिः ” ॥ इति । बोधायनोऽपि—

“ मध्यान्हव्यापिनी ग्राह्या एकभक्तव्रते तिथिः ” ॥ इति । अत्र निर्णेतव्यो विषयः षोढा भिद्यते ।

पूर्वेद्युरेव मध्यान्हव्यापित्वं परेद्युरेव तद्व्यापित्वम् उभयत्र साम्येन तदेकदेशव्यापित्वं वैषम्येण
२५ तदेकदेशव्यापित्वं चेति । तत्र प्रथमाद्वितीययोर्मध्यान्हव्यापित्वस्यैव निर्णायकत्वम् । तृतीये पूर्व-
विद्धा ग्राह्या । मुख्यकालव्याप्तेः समत्वेऽपि गौणकालव्याप्तेः अधिकत्वात् । चतुर्थेऽपि पूर्वविद्धैव ।
उभयत्र मुख्यकालव्याप्त्यभावेऽपि गौणकालव्याप्तिभावात् । पंचमेऽप्ययमेव न्यायो योज्यः । षष्ठे तु
यस्मिन् दिने अधिकव्याप्तिः सैव ग्राह्या । एवं स्वतंत्रैकभक्तं निर्णीतम् । अन्यांगं त्वपराण्हादौ
कार्यम् । “ पूजाव्रतेषु सर्वत्र मध्यान्हव्यापिनी तिथिः ” इति ‘ मध्यान्हे पूजयेन्मृप ’ इत्यादि
३० शास्त्रैरंगिनः पूजादेर्मध्यान्हे विहितत्वेन एकभक्तस्य मुख्यकालासंभवात् उपवासप्रतिनिधिरूपमेक-
भक्तमुपवासतिथौ कार्यम् । तस्य गौणोपवासत्वात् ।

अत एव सुमंतुः—“ तिथौ यत्रोपवासः स्यादेकभक्तेऽपि सा तिथिः ” ॥

नक्तव्रतम् । अथ नक्तं निरूप्यते । तच्च वराहपुराणे पठ्यते—

“मार्गशीर्षे सिते पक्षे प्रतिपद्या तिथिर्भवेत् । तस्यां नक्तं प्रकुर्वीत रात्रौ विष्णुं च पूजयेत्” ॥ इति ।

नक्तं कुर्वीत दिवा अभुञ्जानो रात्रिभोजनं कुर्वीतित्यर्थः । तस्य काल उक्तः कालादर्श—

“त्रिमुहूर्तास्तमानात्प्राक् परतश्च तथाविधा । तस्या नक्तव्रतं कुर्याद्धरिनक्तव्रतादृते ” ॥ इति ।

कौर्मेऽपि—

“प्रदोषव्यापिनी यत्र त्रिमुहूर्ता यदा दिवा । तदा नक्तव्रतं कुर्यात्स्वाध्यायस्य निषेधवत् ” ॥ इति ।

एतत्प्रदोषव्याप्तिर्मुख्यः कल्पः सायंकालव्याप्तिरनुकल्प इत्येवंपरम् । तथा च कालद्वयं भविष्यत्पुराणे दर्शितम्—“मुहूर्तोर्नादिनं नक्तं प्रवदन्ति मनीषिणः । नक्षत्रदर्शनान्नक्तमहं मन्ये गणाधिप” ॥ इति ।

अस्य च कालद्वयस्याधिकारिभेदेन व्यवस्थामाह देवलः—

“नक्षत्रदर्शनान्नक्तं गृहस्थस्य बुधैः स्मृतम् । यतोर्दिनाष्टमे भागे तस्य रात्रौ निषिध्यते ” ॥ इति । १०

स्मृत्यंतरेऽपि—

“नक्तं निशायां कुर्वीत गृहस्थो विधिसंयुतः । यतिश्च विधवा चैव कुर्यात्तत्सदिवाकरम् ॥

“दिवा नक्तं तु तत्प्रेक्तमंतिमे घटिकाद्वयम् । निशा नक्तं तु विज्ञेयं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥

“नक्षत्रदर्शनान्नक्तं यामार्धे प्रथमे सदा ” ॥ इति । रात्रिनक्तभोजने कालमाह व्यासः—

“त्रिमुहूर्तः प्रदोषः स्याद्भानावस्तंगते सति । नक्तं तत्र तु कर्तव्यमिति शास्त्रविनिश्चयः ” ॥ इति । १५

नक्तं त्रिमुहूर्तात्मकप्रदोषव्यापिन्यां तिथौ कार्यम् । यदाह वत्सः—

“प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या सदा नक्तव्रते तिथिः । एकादशीं विना सर्वा शुक्लकृष्णे तथा स्मृता ” ॥ इति ।

अयमपि विषयः षोढा भिद्यते । पूर्वैद्युरेव प्रदोषव्याप्तिः परेद्युरेव तद्याप्तिः उभयत्रापि तद्याप्तिः

उभयत्र तदभावः । उभयत्र साम्येन तदेकदेशव्याप्तिः । उभयत्र वैषम्येण तदेकदेशव्याप्तिरिति ।

तत्र प्रथमद्वितीययोः प्रदोषव्याप्तिर्नियामिका । उभयत्र तद्याप्तौ परतिथिरेव । तदाह जाबालिः— २०

“सदैव तिथ्योरुभयोः प्रदोषव्यापिनी तिथिः । तत्रोत्तरत्र नक्तं स्यादुभयत्रापि सा तिथिः ” ॥ इति ।

उभयत्रापि दिवारान्नावपि सा तिथिर्विद्यते इत्यर्थः । उभयत्र प्रदोषव्याप्यभावेऽपि परैव ।

तदाह जाबालिः—“अतथात्वे परत्र स्याद्वर्गास्तंगते हि सा ” इति । प्रदोषे तदभावेऽपि अस्त-

मयाद्वर्गागतः सा विद्यते सा ग्राह्येत्यर्थः । ईदृशे विषये गृहस्थोऽपि यतिवत् दिवा नक्तमाचरेत् ।

तदुक्तं स्कांदे—“प्रदोषव्यापिनी न स्याद्विवा नक्तं विधीयते ।

“आत्मनो द्विगुणच्छायामतिक्रामति भास्करे । तन्नक्तं नक्तमित्याहुर्न नक्तं निशिभोजनम् ॥

“एवं ज्ञात्वा ततो विद्वान्सायान्हे तु भुजिक्रियाम् । कुर्यान्नक्तव्रती नक्तफलं भवति निश्चितम्” ॥ इति ।

प्रदोषव्यापिन्यां तिथौ भानुवारसंक्रांत्यादिना गृहस्थस्यापि यदा रात्रिभोजननिषेधः तदा दिवैव

नक्तं कुर्यात् । तथा च भविष्यत्पुराणे—

“ये त्वादित्यदिने ब्रह्मन्नं कुर्वीत मानवाः । दिनांते तेऽपि कुर्वीरन्निषेधाद्रात्रिभोजने ” ॥ इति । ३०

अस्मिंश्च दिवाभोजने उत्तमोऽतिममुहूर्तः । मध्यम उपान्त्यः । ततः प्राचीनो जघन्यः । एवं च

सति अन्तिमाष्टमभागत्रिमुहूर्तवचनान्युपपद्यन्ते । रात्रिभोजनेऽपि घटिकात्रयमुत्तमः कालः ।

घटिकाषट्कं मध्यमः कालः

“प्रदोषोऽस्तमयादूर्ध्वं घटिकात्रयमिष्यते । त्रिमुहूर्तः प्रदोषः स्याद्रावावस्तंगते सति” ॥ इति च स्मृतेः ।

निशीथपर्यतो जघन्यः कालः । नक्तं प्रकुर्वीत रात्रौ कुर्वीतिति सामान्येनाभिधानात् । असौर-
नक्तेषु साम्येन वैषम्येण वा दिनद्वये प्रदोषैकदेशव्याप्तौ परेद्युरेव नक्तं कार्यं सायंकालस्य
गौणस्य तिथिव्याप्तत्वात्सौरनक्तेषु सायंकालैकदेशव्याप्तौ पूर्वपूर्वतिथिर्ग्राह्या प्रदोषकालस्य तत्तिथि-
व्याप्तत्वात् । “अर्कद्विपर्वरात्रौ च चतुर्दश्यष्टमी दिवा ” इत्यनेन दिवाचतुर्दश्यष्टमीयोगे सति

५ भोजने प्रायश्चित्तविधानात् दिवा तत्संबंधसमये भोजननिषेधो गम्यते “निषेधस्तु निवृत्त्यात्मा
कालधर्ममपेक्षते ” इति स्मृतेः । तत्संबंधाभावसमये तु भोजनं न निषिध्यते । अत एव रात्रौ
पर्वयोगे भोजने निषिद्धे तद्विगमे सति कच्चिद्रोजनमभ्यनुज्ञायते

मनुना—“चंद्रसूर्यग्रहे नाद्यादद्यात् स्नात्वा विमुक्तयोः ” इति ।

व्यासोऽपि—“नाद्यात्सूर्यग्रहात्पूर्वमन्दि सायं शशिग्रहात् ।

१० “ग्रहकाले च नाश्रीयतास्नात्वाऽश्रीयच्च मुक्तयोः । मुक्ते शशिनि भुंजीत यदि न स्यान्महानिशा” ॥ इति ।
वृद्धगौतमोऽपि—

“चंद्रसूर्यग्रहे नाद्यात्तस्मिन्नहनि पूर्वतः । राहोर्विमुक्तिं विज्ञाय स्नात्वा कुर्वीत भोजनम्” ॥ इति ।
चतुर्दश्यष्टमी दिवेत्यस्य नक्तव्रतत्वाभावान्नक्तन्यायोऽप्यत्र नावतरति । तदेवं प्रतिपद्युपवास एक-
भक्तनक्तानि निर्णीतानि । तत्र शुक्लप्रतिपत्पूर्वविद्वैवोपोष्या कृष्णप्रतिपदुत्तराविद्धा । एकभक्त-

१५ नक्तयोस्तु सर्वासु तिथिषु मध्यान्हप्रदोषव्याप्त्या निर्णयः ।

दानव्रतादीनां कालः । दानव्रतादीनि उत्तरविद्धायां प्रतिपदि कर्तव्यानि । तेषां दैवत्वात् ।
तदाह वृद्धयाज्ञवल्क्यः—“पौर्वाहिकास्तु तिथयो दैवकार्ये फलप्रदाः” इति । अन्हः पूर्वा भागः
पूर्वाण्हः । स च मुहूर्तत्रयात्मकः प्रातःकालः । कर्मकालव्याप्तिं च वृद्धयाज्ञवल्क्य आह—
“कर्मणो यस्य यः कालस्तत्कालव्यापिनी तिथिः । तथा कर्माणि कुर्वीत ह्यसवृद्धी न कारणम्” ॥ इति ।

२० गार्ग्यश्च—

“यो यस्य विहितः कालस्तत्कालव्यापिनी तिथिः । तथा कर्माणि कुर्वीत ह्यसवृद्धी न कारणम्” ॥
एवं च उदयानंतरं मुहूर्तत्रयव्यापिनी दानादौ तिथिर्ग्राह्या ।

“यां तिथिं समनुप्राप्य उदयं याति भास्करः । सा तिथिः सकला ज्ञेया स्नानदानजपादिषु ॥

“व्रतोपवासस्नानादौ घटिकैका यदा भवेत् । उदये सा तिथिर्ग्राह्या श्राद्धादावस्तगामिनी ” ॥

२५ इति देवलादिवचनं वैश्वानराधिकरणन्यायेन त्रिमुहूर्तव्याप्तिप्रशंसापरम् । अत्रापि षोढा
भिद्यते । उदयकाले पूर्वद्युरेव त्रिमुहूर्तव्यापिनी परेद्युरेव तद्यापिनी उभयत्रापि त्रिमुहूर्त-
व्यापिनी नोभयत्र त्रिमुहूर्तव्यापिनी साम्येन वैषम्येण वा त्रिमुहूर्तैकदेशव्यापिनीति । तत्र
प्रथमद्वितीययोर्नास्ति संदेहः । तृतीयादिषु चतुर्षु पक्षेष्वस्तमयव्याप्तेः कर्मकालबाहुल्यस्य च
लाभात् पूर्वद्युरेवानुष्ठानमिति निर्णयः । पित्र्यकालस्तु श्राद्धकांडे निरूपितः । इति प्रतिपन्निर्णयः ।

३० अयमेव निर्णय उत्तरासु सर्वासु तिथिषु सामान्येन संचारयितव्यः । विशेषस्तु तत्र तत्राभिधास्यते ।

द्वितीयानिर्णयः । तत्र द्वितीयायाः पराविद्धायाः उपोष्यत्वं भृगुराह—

“एकादश्यष्टमी षष्ठी द्वितीया च चतुर्दशी । त्रयोदशी त्वमावास्या उपोष्याः स्युः परान्विताः” ॥ इति ।

व्यासः—“तृतीयया युता कार्या द्वितीया न तु पूर्वया ” इति । यदा तु पूर्वद्युरदयमारभ्य
परेद्युरदयस्योपरि त्रिमुहूर्तं वर्तते तदा पूर्वद्युरेव संपूर्णतिथित्वाद्युपवासः । तदुक्तं कालनिर्णये—

३५ “पूर्वद्युरसती प्रातः परेद्युस्त्रिमुहूर्तगा । सा द्वितीया परोपोष्या पूर्वविद्धा ततोऽपरा ” ॥ इति ।

१ खगध-मात्र । २ जैमिनीय न्या, । १।१।१२ (सू. १७-२२) जातेष्टिन्यायः । ३ पृ. ७२३-७५२

तृतीयादिनिर्णयः । तृतीया परविद्भैव ग्राह्या । रंभाख्यव्रते तु पूर्वविद्धा ग्राह्या । तदुक्तं ब्रह्मकैवर्ते—

“रंभाख्यां वर्जयित्वा तु तृतीयां द्विजसत्तम । अन्येषु सर्वकार्येषु गणयुक्ता प्रशस्यते” ॥ इति । गणश्चतुर्थी । स्मृत्यन्तरेऽपि—

“द्वितीयया तु विद्धा चेत्तृतीया न कदाचन । कर्तव्या व्रतिभिस्तात धर्मकामार्थतत्परैः ॥ ५

“विहार्यैकां च रंभाख्यां तृतीयां पुण्यवर्धिनीम्” ॥ इति ।

चतुर्थीनिर्णयः । चतुर्थ्यपि परविद्भैव ग्राह्या । यदाह बृहद्वसिष्ठः—

“एकादशी तथा षष्ठी अमावास्या चतुर्थिका । उपोष्याः परसंयुक्ताः पराः पूर्वेण संयुताः” ॥ इति ।

विनायकव्रतानुष्ठाने तु मध्यान्हव्यापिनी चतुर्थी ग्राह्या । तदाह बृहस्पतिः—

“चतुर्थीगणनाथस्य मातृविद्धा प्रशस्यते । मध्यान्हव्यापिनी चेत्स्यात्परतश्चतुर्थेऽहनि” ॥ १०

मातृविद्धा तृतीयाविद्धा । स्मृत्यन्तरेऽपि—

“मातृविद्धा प्रशस्ता स्याच्चतुर्थीगणनायके । मध्यान्हे परतश्चेत्स्यान्नागविद्धा प्रशस्यते” ॥ इति ।

नागः पंचमी । एकभक्तन्यायेन मध्यान्हव्याप्तेः षोढा भेदे सति यदा परेद्युरेव मध्यान्हव्याप्तिः तदा परा । इतरेषु पंचसु भेदेषु जयायोगस्य प्रशस्तत्वात्पूर्वेद्युरेव सा भवति ।

पञ्चमीनिर्णयः । पंचमी पूर्वविद्भैव ग्राह्या । तदाह हारीतः—

१५

“चतुर्थीसंयुता कार्या पंचमी परया न तु । दैवे कर्मणि पित्र्ये च शुक्लपक्षे तथाऽसिते” ॥ इति ।

षष्ठीनिर्णयः । षष्ठी परविद्धा ग्राह्या । तदुक्तं विष्णुधर्मोत्तरे—

“एकादश्यष्टमी षष्ठी शिवरात्रीचतुर्दशी । अमावास्या तृतीया च ता उपोष्याः परान्विताः” ॥ इति ।

स्कंदव्रते तु षष्ठ्याः पूर्वविद्धाया ग्राह्यत्वमाह वसिष्ठः—

“कृष्णाष्टमी स्कंदषष्ठी शिवरात्रिश्चतुर्दशी । एताः पूर्वयुताः कार्यास्तिथ्यंते पारणं भवेत्” ॥ इति । २०

यदि कदाचित्तिथिक्षयवशादुत्तरविद्धा न लभ्यते तदा स्कांदव्रतवदन्यान्यपि व्रतानि पंचमी-विद्धायां कर्तव्यानि । तदाह वसिष्ठः—

“एकादशी तृतीया च षष्ठी चैव त्रयोदशी । पूर्वविद्धा तु कर्तव्या यदि न स्यात्परेऽहनि” ॥ इति ।

सप्तमीनिर्णयः । सप्तमी पूर्वविद्भैव ग्राह्या । “षष्ठ्या युता सप्तमी च कर्तव्या तत्र सर्वदा” ॥

इति स्मृतेः । उत्तरविद्धाप्रतिषेधः स्कंदपुराणे दर्शितः—

२५

“षष्ठ्येकादश्यमावास्या पूर्वविद्धा तथाऽष्टमी । सप्तमी परविद्धा च नोपोष्यं तिथिपंचकम्” ॥ इति ।

पूर्वविद्धायाः सप्तम्या अलाभे तूत्तरविद्धा ग्राह्या । तदुक्तं कालनिर्णये—

“सप्तमी पूर्वविद्भैव व्रतेषु निखिलेष्वपि । अलाभे पूर्वविद्धायाः परविद्धापि गृह्यताम्” ॥ इति ।

अष्टमीनिर्णयः । अथाष्टमी निर्णयते । तत्र शुक्लाष्टमी परविद्धा ग्राह्या । तथा च निगमे—

“शुक्लपक्षेऽष्टमी चैव शुक्लपक्षे चतुर्दशी । पूर्वविद्धा न कर्तव्या कर्तव्या परसंयुता ॥ ३०

“उपवासादिकार्येषु ह्येष धर्मः सनातनः” ॥ इति । स्कांदेऽपि—

“अष्टमी नवमी मिश्रा कर्तव्या भूतिमिच्छता । सप्तम्या चाष्टमी चैव न कर्तव्या शिखिध्वज” ॥ इति ।

कृष्णपक्षे पूर्वविद्धायाः परिग्रहः परविद्धायाः प्रतिषेधश्च निगमे पठ्यते—

“कृष्णपक्षेऽष्टमी यत्र कृष्णपक्षे चतुर्दशी । पूर्वविद्धा तु कर्तव्या परविद्धा न कस्यचित् ॥

“उपवासादिकार्येषु ह्येष धर्मः सनातनः” ॥ इति । व्रतविशेषे तु तत्र तत्रोक्तं द्रष्टव्यम् ।

३५

तथा दूर्वाष्टमीसंज्ञकव्रतविशेषविषये भविष्यत्पुराणम्—

“श्रावणी दुर्गनवमी तथा दूर्वाष्टमी च या । पूर्वविद्धैव कर्तव्या शिवरात्रिर्बलेर्दिनम् ” ॥ इति ।

कृष्णजन्माष्टमी । कृष्णजन्माष्टमीव्रतात् जयन्तीव्रतं भिन्नम् । जन्माष्टमीव्रते तिथिरेव निमित्तम् । जयन्तीव्रते तु रोहिणीयोगः । तथा च स्मर्यते—

५ “श्रावणे बहुले पक्षे कृष्णजन्माष्टमीव्रतम् । न करोति नरो यस्तु भवति क्रूरराक्षसः ॥ “श्रावणस्य च मासस्य कृष्णाष्टम्यां नराधिप । रोहिणी यदि लभ्येत जयन्ती नाम सा तिथिः” ॥ इति । वसिष्ठसंहितायाम्—

“श्रावणे वा नभस्ये वा रोहिणी सहिताऽष्टमी । यदा कृष्णा नरैर्लब्धा सा जयन्तीति कीर्तिता ॥

“श्रावणेन भवेद्योगो नभस्ये तु भवेद्भुवम् । तयोरभावे योगस्य तस्मिन् वर्षे न संभवः” ॥ इति ।

१० अत्र श्रावण इति मुख्यकल्पः । नभस्य इत्यनुकल्पः । एतदेवाभिप्रेत्य विष्णुरहस्येऽपि—

“अष्टमी कृष्णपक्षस्य रोहिणी ऋक्षसंयुता । भवेत्प्रोष्ठपदे मासि जयन्ती नाम सा स्मृता ” ॥ इति । हरिवंशे—

“अभिजिन्नाम नक्षत्रं जयन्ती नाम शर्वरी । मुहूर्तो विजयो नाम यत्र जातो जनार्दनः ” ॥ इति ।

अत्र श्रावणनभस्यप्रोष्ठपदशब्दाः सिंहश्रावणादिपराः । तथा च ज्योतिषाण्वे—

१५ “श्रावण्यां प्रोष्ठपदां वा यदा सिंहगतो रविः । जयन्त्याराधनं कुर्यान्न तु कर्कटकन्ययोः ” ॥ इति ।

वाराहेऽपि—“सिंहराशिगते सूर्ये गगने जलदाकुले । मासि प्रोष्ठपदेऽष्टम्यामर्धरात्रे विधूदये ॥

“बुधवारे वृषे लभे रोहिण्याश्चरमांशके । शुभे हर्षणयोगे च कौलेन युते तथा ॥

“वसुदेवेन देवक्यामहं जातोऽस्मि पद्मजे ” ॥ इति । यस्मिन्वर्षे श्रावणे वा नभस्ये वा जयन्ती न संभवति तस्मिन्वर्षे श्रावणमास एव कृष्णाष्टमीव्रतमनुष्ठेयम् ! तस्य स्वरूपमुपवासमात्रम्—

२० “केवलेनोपवासेन तस्मिन्जन्मदिने मम । सप्तजन्मकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ” ॥ इति स्मृतेः । यदि शिष्टास्तत्रापि जागरणदानादिकमनुतिष्ठन्ति अनुतिष्ठन्तु नाम । अविरोद्धैः पुण्यविशेषैः व्रतस्योपोद्बलनसंभवाच्छ्रेण तु प्रापितमुपवासमात्रम् । जयन्तीव्रतस्य तु दानादिसहित उपवासः स्वरूपम् । तथा च भविष्योत्तरे—“मासि भाद्रपदेऽष्टम्यां निशीथे कृष्णपक्षके ।

“शशांके वृषराशिस्थे ऋक्षे रोहिणिसंज्ञके । योगेऽस्मिन्वसुदेवाद्धि देवर्का मामजीजनत् ॥

२५ “तस्मान्मां पूजयेत्तत्र शुचिः सम्यगुपोषितः । ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्या ततो दद्याच्च दक्षिणाम् ॥

“हिरण्यं मेदिनीं गावो वासांसि कुसुमानि च । यद्यदिष्टतमं तत्तत्कृष्णो मे प्रीयतामिति ” । जयन्तीं प्रकृत्य नारदीयसंहितायां स्मर्यते—

“उपोषणं जन्मदिने कुर्याज्जागरणं च यः । अर्धरात्रयुताष्टम्यां सोऽश्वमेधफलं लभेत्” ॥

शुद्धं नित्यं जन्माष्टमीव्रतं करणे फलविशेषस्मरणात् अकरणे प्रत्यवायस्मरणाच्च । नित्यं काम्यं

३० च जयन्तीव्रतं अकरणे प्रत्यवायस्मरणात्फलविशेषस्मरणाच्च ।

तथा हि जन्माष्टम्या अकरणे प्रत्यवायः स्मर्यते—

“कृष्णजन्मदिने प्राप्ते यो भुंक्ते तु द्विजोत्तमः । त्रैलोक्यसंभवं पापं तेन भुक्तं द्विजोत्तम ” ॥ इति ।

स्कन्दपुराणेऽपि—

“ये न कुर्वन्ति जानन्तः कृष्णजन्माष्टमीव्रतम् । ते भवन्ति नराः पापा व्याला व्याघ्राश्च कानने” ॥ इति ।

तथा जयंतीव्रतस्याकरणे स्कान्दे प्रत्यवायः स्मर्यते—

“शूद्राग्नेन तु यत्पापं श्वहस्तस्थभोजने । तत्पापं लभते कुन्ति जयन्त्यां भोजने कृते ॥

“ब्रह्मघ्नस्य सुरापस्य स्त्रीवधे गोवधेऽपि वा । न लोको यदुशार्दूल जयंतीविमुखस्य च ॥

“न करोति यदा विष्णोर्जयंतीसंभवं व्रतम् । यमस्य वशमापन्नः सहते नारकीं व्यथाम् ॥

“जयंतीवासरे प्राप्ते करोत्युदरपूरणम् । संपीड्यतेऽतिमात्रं तु यमदूतैः कलेवरम्” ॥ इति ।

जयंतीव्रते फलविशेषोऽभिहितो भविष्योत्तरे—

“प्रतिवर्षं विधानेन मज्जको धर्मनन्दन । नरो वा यदि वा नारी यथोक्तं फलमाप्नुयात् ॥

“पुत्रसंतानमारोग्यं सौभाग्यमतुलं भवेत् । सदा धर्मरतिभूत्वा मृतो वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥

“तत्र दिव्येन मानेन वर्षलक्षं युधिष्ठिर । भोगान् नानाविधान्भुक्त्वा पुण्यशेषादिहागतः ॥

“सर्वकामसमृद्धे तु कुले महति जायते” ॥ इति । पाद्मेऽपि—

“प्रेतयोगिगतानां तु प्रेतत्वं नाशितं नरैः । यैः कृता श्रावणे मासि अष्टमे रोहिणी युता” ॥ इति ।

“किं पुनर्बुधवारेण सोमेनापि विशेषतः” ॥ इति ।

ननु जन्माष्टमीव्रतेऽपि फलं स्मर्यते “सप्तजन्मकृतात् पापान्मुच्यते नात्र संशयः” इति १ । अतस्तदपि नित्यं काम्यमिति चेन्नैवम् । उपात्तदुरितक्षयमात्रेण काम्यत्वे संध्यावन्दनादेरपि काम्यत्वप्रसंगात्सत्यपि पापक्षये फलांतरास्मरणात् । अतः केवलं नित्यं जन्माष्टमीव्रतम् । नित्यं काम्यं च जयंतीव्रतम् ।

नन्वेवं व्रतभेदे सति यदा दिनद्वयेऽष्टमी वर्तते रोहिणी तूत्तरदिन एव तदा पूर्वदिने जन्माष्टम्युपवासः परेर्बुर्जयंत्युपवास इति नैरंतर्येणोपवासद्वयं प्रसज्येतेति चेन्न । रोहिणीयोगसंभवे २ । जन्माष्टम्या अपि तत्रैव कर्तव्यत्वात् । सर्वतिथिष्वलभ्ययोगस्य केवलतिथेरुत्कृष्टत्वेन केवलाया-
स्तिथेस्तत्रोपेक्षणीयत्वात् । यदा त्वेकस्मिन्नेव दिने अष्टमी वर्तते रोहिण्या च युज्यते तदा जन्माष्टमीजयंत्योः सह प्रयोगस्यावश्यंभावित्वेन जयंतीव्रत एव जन्माष्टमीव्रतमंतर्भवतीति न पृथगुपवासप्रसंगः । तदुक्तं कालनिर्णये—

“यस्मिन्वर्षे जयंत्याख्यो योगो जन्माष्टमी तदा । अंतर्भूता जयंत्यां स्यादृक्षयोगः प्रशस्यते” ॥ इति २५

ग्राह्या तिथिर्निरूप्यते । जन्माष्टम्या जयंत्याश्चार्धरात्रप्रधानत्वात् तद्योगोऽतिप्रशस्तः ।

तदुक्तं वसिष्ठसंहितायाम्—

“अष्टमी रोहिणीयुक्ता निश्चर्ये यदि दृश्यते । मुख्यकाल इति ख्यातस्तत्र जातो हरिः स्वयम्” ॥

विष्णुरहस्येऽपि—

“रोहिण्यामर्धरात्रे तु यदा कृष्णाष्टमी भवेत् । तस्यामभ्यर्चनं शौरेर्हीति पापं त्रिजन्मजम्” ॥ इति । ३०

एवं च सत्यर्धरात्रसद्भावात् एवात्र कर्मकालव्याप्तिः । तत्र योगीश्वरः—

“रोहिणीसहिता कृष्णा मासे च श्रावणेऽष्टमी । अर्धरात्रादधश्चोर्ध्वं कलयाऽपि यदा भवेत् ॥

“जयंती नाम सा प्रोक्ता सर्वपापप्रणाशिनी” ॥ इति । पक्षांतरमाह स एव—

“अर्धरात्रादधश्चोर्ध्वमेकार्धघटिकान्विता । रोहिणी चाष्टमी ग्राह्या उपवासव्रतादिषु” ॥ इति ।

एकघटिकान्विता वा अर्धघटिकान्विता वा । तत्रायमर्थः संपद्यते । पूर्वभागावसन एका घटिका उत्तरभागादवेका मिलित्वा निशीथशब्दवाच्यं मुहूर्तं तावत्परिमाणं मुख्यः कल्पः । तदसंभवे उभयत्र अर्धघटिका तस्या अप्यसंभवे कलेति । एवं चार्धरात्रे कलामात्रमष्टमीसद्भावेऽपि जयन्ती-योगस्य प्रतिपादनात् “अह्नि चेत् सप्तमी विद्धा तस्यां नाराधयेद्धरिम्” इति वचनं ५ निर्मूलम् । सोऽयमर्धरात्रयोगो मुख्यः कल्पः । कृत्स्नाहोरात्रयोगोऽत्यन्तमुख्यः ।

यदा कदाचित् मुहूर्तयोगः स्वल्पयोगश्चानुकल्पः तदा वसिष्ठसंहितायाम्—

“अहोरात्रं तयोर्योगो ह्यसंपूर्णो भवेद्यदि । मुहूर्तमप्यहोरात्रे योगश्चेत्तामुपोषयेत् ॥

“वासरे वा निशायां वा यत्र स्वल्पाऽपि रोहिणी । विशेषेण नभोमासे सैवोपोष्या मनीषिभिः” ॥ इति । यो जयन्तीव्रते योगनिर्णयः स एव जन्माष्टमीव्रतेऽपि द्रष्टव्यः

१० “दिवा वा यदि वा रात्रौ नास्ति चेद्रोहिणीकला । रात्रियुक्तां प्रकुर्वीत विशेषेणन्दुसंयुताम् ॥

“अष्टमी शिवरात्री च अर्धरात्राद्धो यदि । दृश्यते घटिका या सा पूर्वविद्धा प्रकीर्तिता” ॥ इति स्मृतेः । तत्र जन्माष्टमी द्विविधा । शुद्धा सप्तमीविद्धा चेति । सूर्योदयमारभ्य प्रवर्तमानाष्टमी शुद्धा । निशीथादर्वाक्सप्तम्या कियत्यापि युक्ता विद्धा । शुद्धापि पुनर्निशीथव्याप्त्यव्याप्तिभ्यां द्विविधा । तत्र “निशीथव्यापिनी मुख्या विशेषेणैन्दुसंयुताम्” इति वचनात् “निशीथव्याप्तिरहितापि

१५ रात्रियुक्तां प्रकुर्वीत” इति वचनात् गृहीतव्या भवति ।

ननु पूर्वैन्दुनिशीथादूर्ध्वमारभ्य परेन्दुनिशीथादर्वाग्या समाप्यते तस्यामुभयत्र रात्रिसंबन्धसत्त्वात् कुत्रोपवास इति चेत्परेन्दुरेवोपवासः कार्यः । प्रातः संकल्पकालमारभ्य प्रवर्तमानत्वात् ।

सप्तमी विद्धापि त्रिविधा । पूर्वैन्दुरेव निशीथव्यापिनी परेन्दुरेव तत्रापिनी उभयत्रापि निशीथव्यापिनी चेति । तत्र प्रथमद्वितीययोः पक्षयोर्निशीथव्याप्तेः प्रयोजकत्वेन “या

२० निशीथव्यापिनी सा विशेषेणन्दुसंयुताम्” इति वचनेन गृहीतव्या भवति । तृतीये तु पक्षे परेन्दुरूपवासः प्रातःसंकल्पमारभ्य तिथिव्याप्तिसंभवात् ।

रोहिणीसंहिताष्टमी चतुर्विधा । शुद्धा विद्धा शुद्धाधिका विद्धाधिका चेति । तत्र शुद्धायां संपूर्णयोगो निशीथयोगो यत्किञ्चिन्मुहूर्तयोग इति त्रैविध्यं भवति । एवं विद्यायामपि त्रैविध्यं । एतेषु षट्सु पक्षेषु दिनांतरे योगाभावादुपवासे संदेहो नास्ति । किन्तु योगतारतम्यात् प्राशस्त्य-

२५ तारतम्यं भवति । यत्किञ्चिन्मुहूर्तयोगः प्रशस्तः । निशीथयोगः प्रशस्ततरः । संपूर्णयोगः

प्रशस्ततमः । शुद्धाधिका तु सूर्योदयमारभ्य प्रवृत्ता परेन्दुः सूर्योदयमतिक्रम्य एषा वर्धते । सा च त्रिविधा । पूर्वैन्दुरेव रोहिणीयुक्ता परेन्दुरेव तद्युक्ता दिनद्वयेऽपि रोहिणीयुक्ता चेति । तत्राद्ययोर्नास्ति संदेहः । रोहिणीयोगस्य नियामकत्वात् । तृतीये तु रोहिणीयोगस्य उभयत्र समानत्वेऽपि गुणाधिक्यात्पूर्वोपोष्या । तथा हि सा रोहिणीयोगभेदात् त्रिधा भिद्यते । अष्टमी-

३० वत्सूर्योदयमारभ्य प्रवृत्ता रोहिणी कदाचित्परेन्दुरपि कियती वर्धते । कदाचित् पूर्वैन्दुनिशीथमारभ्य रोहिणी प्रवर्तते । कदाचिन्निशीथादूर्ध्वमारभ्य प्रवर्तते । तत्र प्रथमद्वितीययोर्निशीथयोगस्य सत्त्वात्पूर्वैन्दुरेवोपवासः । तृतीयपक्षे दिनद्वयेऽपि निशीथे जयन्तीयोगो नास्ति । पूर्वैन्दुनिशीथे केवलाष्टमी परेन्दुः केवलरोहिणी । तत्र निशियोगाभावेऽपि रात्रियोगस्य सत्त्वादष्टम्याः प्राधान्याच्च पूर्वैन्दुरूपवासः । तदेवं शुद्धाधिका पूर्वोपोष्या । निशीथादर्वाक्सप्तम्या युक्ता परेन्दुरपि विद्यमाना ३५ विद्धाधिका । सा च त्रिविधा । पूर्वैन्दुरेव रोहिणीयुक्ता विद्धाधिका परेन्दुरेव रोहिणीयुक्ता उभयत्र

रोहिणीयुक्ता विद्धाधिकेति । प्रथमद्वितीययोस्तु रोहिणीयोगो नियामकः । या तूभयत्र रोहिणी-
युक्ता विद्धाधिका साऽपि निशीथे जयंतीयोगमपेक्ष्य चतुर्था भिद्यते । पूर्वद्युरेव निशीथयोगवती
परेद्युरेव निशीथयोगवती उभयत्रापि तादृशी उभयत्रापि निशीथयोगरहिता चेति । तत्र प्रथम-
द्वितीययोः निशीथयोगो नियामकः । तृतीयचतुर्थयोः परदिन एवोपवासः । परेद्युः संकल्पकाले
तिथिनक्षत्रयोगस्य सत्वात् । जयंतीभेदेषूपवासदिने यदि सोमवारो बुधवारो वा भवति तदा ५
फलाधिक्यं भवति । तदुक्तं ब्रह्मपुराणे—

“प्रेतयोनिगतानां तु प्रेतत्वं नाशितं नरैः । यैः कृता श्रावणे मासि अष्टमी रोहिणीयुता ॥

“किं पुनर्बुधवारेण सोमेनापि विशेषतः । किंपुनर्नवमी युक्ता कुलकोन्द्रास्तु मुक्तिदा ” ॥ इति ।

दिनद्वयेऽप्यर्धरात्रसंबन्धाभावे स्कांदेऽपि—

“उदये वाष्टमी किञ्चिन्नवमी सकला यदि । भवेत्तु बुधसंयुक्ता प्राजापत्यर्क्षसंयुता । १०

“अपि वर्षशतेनापि लभ्यते वाऽथ वा न वा ” ॥ इति ।

पारणनिर्णयः । यथोक्तरीत्या विहिततिथावुपवासं कृत्वा परेद्युः

“पूर्वाह्णे पारणं कृत्वा उपवासं समापयेत् । उपवासेषु सर्वेषु पूर्वाह्णे पारणं भवेत् ॥

“पारणान्तं व्रतं श्रेयं व्रतान्ते द्विजभोजनम् । असमाप्ते व्रतं पूर्वं नैव कुर्याद्व्रतांतरम्” ॥ इति स्मृतेः ।

एवं सामान्यतः पूर्वाह्णे पारणप्राप्तौ कचिदपवादः स्मर्यते—

१५

“अष्टम्यामथ रोहिण्यां न कुर्यात्पारणं कचित् ।

“तिथिरष्टगुणं हंति नक्षत्रं तु चतुर्गुणम् । तस्मात्प्रयत्नतः कुर्यात्तिथिभांते च पारणम्” ॥ इति ।

नारदीये—“तिथिनक्षत्रसंयोगे उपवासो यदा भवेत् । पारणं तु न कर्तव्यं यावन्नैकस्य संक्षयः ॥

“सांयोगिके व्रते प्राप्ते यश्चैकोऽपि वियुज्यते । तत्रैव पारणं कुर्यादेवं वेदविदो विदुः ” ॥ इति ।

ब्रह्मकैवर्ते—

२०

“सर्वेष्वेवोपवासेषु दिवा पारणमिष्यते । अन्यथा पुण्यहानिः स्याद्वते धारणपारणम् ” ॥ इति ।

स्मृत्यंतरे—

“तिथ्यर्क्षयोर्यदा च्छेदो नक्षत्रांतमथापि वा । अर्धरात्रेऽपि वा कुर्यात्पारणं च परेऽहनि” ॥ इति ।

उपवासदिनादपरेऽहनि दिवसे यद्युभयांतः तदा पारणमिति मुख्यः कल्पः । नक्षत्रांतमित्यनेन
एकतरांतत्वमभिहितम् । सोऽयमनुकल्पः । यदि रात्रौ निशीथादर्वागुभयांत एकतरांतो वा २५

भवति तदा दिवसे मुख्यानुकल्पयोरुभयोरप्यसंभवाद्वात्रौ पारणस्य निषिद्धत्वाच्च तत्राप्युपवास-

प्रसक्तौ पारणस्य प्रतिप्रसवः क्रियते । “अर्धरात्रेऽपि वा कुर्यात्” इति । अशक्तस्य तिथिनक्षत्रयो-

रुभयोरनुवर्तमानयोरपि प्रातर्देवं संपूज्य क्रियमाणं पारणं नैव दुष्यति

“जयन्त्यां पूर्वविद्धायामुपवासं समाचरेत् । तिथ्यंते वोत्सवांते वा व्रती कुर्वीत पारणम् ” ॥

इति वचनात्—

३०

नवमीनिर्णयः । अथ नवमी निर्णयते । सा च दुर्गासरस्वतीव्रतादौ पूर्वविद्धैव ग्राह्या

“अष्टम्या नवमी युक्ता कर्तव्या फलकांक्षिभिः । न कुर्यान्नवमीं तात दशम्यां तु कदाचन ” ॥

इति स्मरणात् । महानवम्यां तु—

“आश्वयुक्शुक्लनवमी तथा नक्तं चतुर्दशी । जयायुक्ता न कर्तव्या पूर्णायुक्ता प्रशस्यते ” ॥

जया अष्टमी । पूर्णा दशमी ।

३५

श्रीरामनवमीनिर्णयः ।

श्रीरामनवमीव्रतमुक्तमगस्त्यसंहितायाम्—“ श्रीरामनवमी प्रोक्ता कोटिसूर्यग्रहाधिका ।

“ तस्मिन्दिने महापुण्ये राममुद्दिश्य भक्तितः । यत्किञ्चित्क्रियते कर्म तद्भवक्षयकारणम् ।

“ उपोषणं जागरणं पितृनुद्दिश्य तर्पणम् । तस्मिन्दिने तु कर्तव्यं ब्रह्मावाप्तिमभीप्सुभिः ” ॥ इति ।

५ तत्रोपवासो जयंतीवन्नित्यकाम्यरूपः । द्वैरूप्यं च तस्य द्विविधप्रमाणबलादवसीयते । उपवास-
विधिवाक्येषु नित्यशब्दसदाशब्दादीनां नित्यत्वसाधकानां श्रवणान्नित्यत्वसिद्धिः । तानि च
साधकानि संग्रहकारेण संगृहीतानि—“नित्यं सदा यावदायुर्न कदाचिदतिक्रमेत्” इत्युक्त्वाऽ-
तिक्रमे दोषश्रुतेरत्यागचोदनात् । “ फलाश्रुतेर्वीप्सया च तन्नित्यमिति कीर्तितम् ” इति ।

अत्र नित्यादिपदान्यभिधीयंते । अकरणे प्रत्यवायश्च स्मर्यते अगस्त्यसंहितायाम्—

१० “ नित्यमेव तु कर्तव्यं श्रीरामनवमीव्रतम् ।

“ चैत्रे मासि नवम्यां तु शुक्लायां रघुनन्दनः । प्रादुरासीत्पुरा ब्रह्मन् परं ब्रह्मैव केवलम् ॥

“ तस्मिन्दिने तु कर्तव्यमुपवासव्रतं सदा ।

“ प्राप्ते श्रीरामनवमीदिने मर्त्यो विमूढधीः । उपोषणं न कुरुते कुंभीपाकेषु पच्यते ” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरेऽपि—

१५ “ यस्तु रामनवम्यां तु भुङ्क्ते मोहादिमूढधीः । कुंभीपाकेषु घोरेषु पच्यते नात्र संशयः ” ॥ इति ।
काम्यत्वं च फलश्रवणादवसीयते । तथा च तत्रैव—

“ कुर्याद्रामनवम्यां य उपोषणमतन्द्रितः । न मातुर्गर्भमाप्नोति स वै रामो भवेत्स्वयम् ॥

“ तस्मात्सर्वात्मना सर्वे कृत्वैव नवमीव्रतम् । मुच्यंते सर्वपापेभ्यो यांति ब्रह्मसनातनम् ” ॥ इति ।

अन्ये त्वाहुः व्रतमिदं केवलं नित्यं न तु काम्यमपि पशुपुत्रस्वर्गादिफलस्याश्रवणात् ।

२० “ संध्यामुपासते ये तु सततं संशितव्रताः । विधूतपापास्ते यांति ब्रह्मलोकं सनातनम् ” ॥ इति ।
फलश्रवणेऽपि संध्योपासनस्य यथा नित्यत्वं तथा पापक्षयद्वारा मोक्षार्थस्यास्य नित्यत्वमिति ।
अत्र मध्यान्हव्यापिनी तिथिर्ग्राह्या ।

“ इषं पूषणि संप्राप्ते लग्ने कर्कटकाव्हये । आविरासीत्स्वकलया कौसल्यायाः परः पुमान् ॥

“ चैत्रशुद्धा तु नवमी पुनर्वसुयुता यदि । सैव मध्यान्हयोगेन महापुण्यतमा भवेत् ” ॥ इति स्मृतेः ।

२५ यस्मिन्वर्षे पुनर्वसुयोगो नास्ति तस्मिन्वत्सरे केवलनवम्युपोष्या । “ केवलाऽपि सद्योपोष्या नवमी-
शब्दसंग्रहात् ” इति वचनात् । सा च द्विविधा । शुद्धा विद्धा वेति । सूर्योदयमारभ्य प्रवर्त्तमाना
शुद्धा । त्रिमुहूर्तया तदधिकया वाऽष्टम्या युक्ता विद्धा । तत्र शुद्धा त्रिविधा । शुद्धाधिका शुद्धसमा
शुद्धन्यूना चेति ! अत्र नास्ति संशयः । दिनांतरे मध्यान्हव्याप्त्यभावात् । सा च पुनः प्रत्येकं
द्विविधा पुनर्वसुनक्षत्रयुक्ता तद्रहिता चेति । तत्र पुनर्वसुयुक्तशुद्धाधिका त्रिविधा । पूर्वद्युरेव नक्षत्र-
३० युक्ता परेद्युरेव तद्युक्ता उभयत्र तद्युक्ता चेति । तत्र प्रथमद्वितीययोर्नक्षत्रयोगो नियामकः ।

“पुनर्वसुक्षसंयोगः स्वल्पोऽपि यदि दृश्यते । चैत्रशुक्लनवम्यां तु सा तिथिः सर्वकामदा” ॥ इति स्मृतेः ।
तृतीये तु मध्यान्हे पुनर्वसुयुक्तदिनं ग्राह्यम् । तथाऽगस्त्यः—

“ चैत्रशुद्धा तु नवमी पुनर्वसुयुता यदि । सैव मध्यान्हयोगेन महापुण्यतमा भवेत् ” ॥ इति ।

एवं विद्वायामपि कृष्णाष्टम्यादिवत् पक्षभेदो निर्णयश्च द्रष्टव्यः । विद्धानिषेधस्तु वैष्णवविषयः ।
“नवमी चाष्टमी विद्धा त्याज्या विष्णुपरायणैः । तदन्येषां तु सर्वेषां व्रतं तत्रैव निश्चितम्” ॥ इति स्मृतेः ।

दशावतारकालाः । दशावतारकालाः संग्रहकारेण संगृहीताः—

- “चैत्रे मास्यसिते पक्षे त्रयोदश्यां तिथौ विभुः । उदभून्मत्स्यरूपेण रक्षार्थमवनेर्हरिः ॥
“ज्येष्ठमासे तथा कृष्णद्वादश्यां भगवानजः । मंदरं पृष्ठतः कृत्वा कूर्मरूपी हरिर्दधौ ॥ ५
“चैत्रकृष्णे तु पंचम्यां जज्ञे नारायणः स्वयम् । भुवं वराहरूपेण शृंगाभ्यामुदधेर्जलात् ॥
“वैशाखे शुक्लपक्षे तु चतुर्दश्यामिनेऽस्तगे । उद्वभूवासुरद्वेषी वृसिंहो भक्तवत्सलः ॥
“मासि भाद्रपदे शुक्लद्वादश्यां वामनो विभुः । अदित्यां काश्यपाज्जज्ञे नियंतुं बलिमोजसा ॥
“मार्गशीर्षे द्वितीयायां कृष्णपक्षे तु भार्गवः । दुष्टक्षत्रियविद्वेषी रामोऽभूतापसाग्रणीः ॥
“चैत्रशुक्लनवम्यां तु मध्यान्हे रघुनंदनः । दशाननवधाकांक्षी जज्ञे रामः स्वयं हरिः ॥ १०
“वैशाखे शुक्लपक्षे तु तृतीयायां हलायुधः । संकर्षणो बलो जज्ञे रामः कृष्णाग्रजो हरिः ।
“मासि तु श्रावणाष्टम्यां निशीथे कृष्णपक्षके । प्राजापत्यर्क्षसंयुक्ते कृष्णं देवक्यजीर्जनत् ।
“मासे भाद्रपदे शुक्लद्वितीयायां जनार्दनः । म्लेच्छाक्रांते कलावंते कल्किरूपो भविष्यति ।
“अवतारदिने पुण्ये हरिमुद्दिश्य भक्तितः । उपवासादि यत्किञ्चित्तदानं त्याग्य कल्पते ” ॥ इति ।

दशमीनिर्णयः । अथ दशमी निर्णीयते । तस्याश्च न तिथ्यंतरवद्वेयोपादेयविभागोऽस्ति । १५

तथा चांगिराः—

- “संपूर्णा दशमी कार्या परया पूर्वयाऽथवा । युक्ता न दूषिता यस्मात्तिथिः सा सर्वतोमुखी” ॥ इति ।
यथा संपूर्णा तिथिर्दोषरहिता तथा पूर्वविद्धा परविद्धा चेत्यर्थः । अत्र व्यवस्थामाह **शंखः—**
“शुक्लपक्षे तिथिर्ग्राह्या यस्यामभ्युदितो रविः । कृष्णपक्षे तिथिर्ग्राह्या यस्यामस्तमितो रविः” ॥ इति ।
“नवमी दशमी चैव नोपोष्या परसंयुता ” इति वचनं कृष्णपक्षविषयतया योजनीयम् । २०

एकादशीनिर्णयः । अथैकादशी निर्णीयते । तत्रोपवासो नित्यकाम्यरूपः उपवासविधिषु नित्यत्वसाधकानां नित्यादिपदानां श्रवणात् । सायुज्यादिफलश्रवणाच्च ।

नित्यशब्द उदाहृतो गारुडपुराणे—“उपोष्यैकादशी नित्यं पक्षयोरुभयोरपि ” ॥ इति ।
सदाशब्द उक्तः **सनत्कुमारसंहितायाम्—**“एकादशी सदोपोष्या पक्षयोः शुक्लकृष्णयोः ” ॥ इति ।
एवमन्यान्यपि वचनानि—“उपोष्यैकादशी राजन्यावदायुः सुवृत्तिभिः । २५

“न करोति हि यो मूढ एकादश्यामुपोषणम् । स नरो नरकं याति रौरवं तमसा वृतम् ।
“समादाय विधानेन द्वादशीव्रतमुत्तमम् । तस्य भंगं नरः कृत्वा रौरवं नरकं व्रजेत् ॥
“मातृहा पितृहा चैव भ्रातृहा गुरुहा तथा । एकादश्यां तु यो भुंक्ते पक्षयोरुभयोरपि ” ॥
इत्यादीनि नित्यसाधकानि द्रष्टव्यानि । काम्यत्वसाधकं फलं च श्रूयते **विष्णुरहस्ये—**

“यदीच्छेत् विष्णुसायुज्यं सुखं संपदमात्मनः । एकादश्यां न भुंजीत पक्षयोरुभयोरपि ” ॥ इति । ३०

स्कांदेपि—

“यदीच्छेद्विपुलान्भोगान्मुक्तिं चात्यंतदुर्लभाम् । एकादश्यामुपवसेत्पक्षयोरुभयोरपि ” ॥ इति ।

नारदोऽपि—“एकादशीसमं किञ्चित्पापत्राणं न विद्यते ।

“स्वर्गमोक्षप्रदा ह्येषा राज्यपुत्रप्रदायिनी । सुकलत्रप्रदा ह्येषा शरीरारोग्यदायिनी ” ॥ इति ।

कौर्मैऽपि—

“यदीच्छेद्विष्णुसायुज्यं श्रियं संततिमात्मनः । एकादश्यां न भुंजीत पक्षयोरुभयोरपि ” ॥ इति ।

तदेवं नित्यादिशब्दश्रवणान्नित्यत्वं फलश्रवणात् काम्यत्वं च सिद्धम् । उक्तं च कालादर्शे—

“सर्वस्मृतिपुराणोतिहासादिषु विनिश्चितम् । एकादशीव्रतं तच्च नित्यं काम्यमिति द्विधा” ॥ इति ।

५ सर्वासु स्मृतिषु सर्वेषु पुराणेषु इतिहासेषु भारतादिषु च एकादशीव्रतं विनिश्चितं विशेषेण प्रमितम् ।

अनेन निर्मूलत्वभ्रान्त्या ये मूढाः संदिहते निरस्तास्ते वेदितव्याः । स्मृतयस्तावदुदाह्रियन्ते ।

विष्णुस्मृतौ—“एकादश्यां न भुंजीत कदाचिदपि मानवः ” ॥ इति ।

कात्यायनः—“एकादश्यामुपवसेत्पक्षयोरुभयोरपि ” इति ।

कण्वः—“एकादशीमुपवसेन्न कदाचिदतिक्रमेत् ” इति । सनत्कुमारः—

१० “निष्कृतिर्मद्यपस्योक्ता धर्मशास्त्रे मनीषिभिः । एकादश्यन्नकामस्य निष्कृतिः क्वापि नोदिता” ॥ इति ।

नारदेऽपि—“एकादशीसमं किंचित्पापत्राणं न विद्यते ” इति । प्रचेताः—

“एकादशीविबुद्धा चेच्छुक्ले कृष्णे तथैव च । उत्तरां तु यातिः कुर्यात्पूर्वामुपवसेद् गृही ” ॥ इति ।

बृहद्वसिष्ठः—

“द्वादशी घटिकाऽल्पा वा यदि न स्यात्परेऽहनि । दशमामिश्रिता कार्या महापातकनाशिनी” ॥ इति ।

१५ हारीतोऽपि—

“त्रयोदश्यां यदा न स्यात् द्वादशी घटिकाद्वयम् । दशम्यैकादशी विन्द्धा सैवोपोष्या कदाचन” ॥ इति ।

ऋष्यशृंगः—

“एकादशी न लभ्येत सकला द्वादशी भवेत् । उपोष्या दशमी विन्द्धा ऋषिर्दालकोऽब्रवीत्” ॥ इति ।

काम्योपवासमधिकृत्यांगिराः—

२० “सायमाद्यन्तयोरन्होः सायंप्रातश्च मध्यमे । उपवासफलेप्सुर्जह्याद्भक्तचतुष्टयम् ” ॥ इति ।

देवलोऽपि—

“दशम्यामेकभक्ताशी मांसमैथुनवर्जितः । एकादशीमुपवसेत्पक्षयोरुभयोरपि ” ॥ इति ।

पुलस्त्यः—“एकादश्यां न भुंजीत नारी दृष्टे रजस्यपि ” इति ॥ गोभिलः—

“न शंखेन पिबेत्तोयं नाश्रीयत्कूर्मसूकरौ । एकादश्यां न भुंजीत पक्षयोरुभयोरपि ” ॥ इति ।

२५ एवमादीनि स्मृतिवचनानि द्रष्टव्यानि । पुराणवचनान्युदाह्रियन्ते । नारदीये वसिष्ठः—

“एकादशीसमुत्थेन वन्हिना पातकेन्धनम् । भस्मतां याति राजेंद्र अपि जन्मशतोद्भवम् ॥

“नेदृशं पावनं किंचिन्नराणां भूप विद्यते । यादृशं पद्मनाभस्य दिनं पातकहानिदम् ॥

“न गंगा न गया भूप न काशी न च पुष्करम् । न चापि कौरवं क्षेत्रं न देवा न च देविका ॥

“यमुना चंद्रभागा च तुल्या नृप हरेर्दिनात् । अनायासेन राजेंद्र प्राप्यते वैष्णवं पदम् ॥

३० प्रसंगादथवा दंभाछोभाद्वाऽथ नराधिप । एकादश्यामनश्नन्यः सर्वदुःखाद्विमुच्यते ” ॥ इति ।

कौर्मैऽपि—

“वर्दतीह पुराणानि भूयो भूयो वरानने । न भोक्तव्यं न भोक्तव्यं संप्राप्ते हरिवासरे ” ॥ इति ।

विष्णुरहस्येऽपि—

“परमापदमापन्नो हर्षे वा समुपस्थिते । सूतके मृतके चैव न त्यजेत् द्वादशीव्रतम् ” ॥ इति ।

एवमादीन्युपवासपराणि वचनानि बहूनि संति । तानि विस्तरभयान्न लिख्यन्ते ।

वैष्णवानामुपवासाङ्गतिथिनिर्णयः । अथ वैष्णवानामुपवासाङ्गतिथिनिर्णयते । तन्निर्णयस्य च वेधाधीनत्वात्प्रथमं दशमीवेधो निरूप्यते । स च वेधः त्रिविधः । अरुणोदयवेधः सूर्योदयवेधः पंचदशनाडीवेधश्चेति । तत्रारुणोदयवेधो भविष्यत्पुराणे दर्शितः—

“अरुणोदयकाले तु दशमी यदि दृश्यते । सा विद्वैकादशी तत्र पापमूलमुपोषणम्” ॥ इति । अरुणोदयस्य प्रमाणं स्कंदनारदाभ्यामुक्तम्—“उदयात् प्राक्चतस्रस्तु नाडिका अरुणोदयः” इति । ५

गोभिलः—

“अरुणोदयवेलायां दशमीसंयुता यदि । संपृक्तैकादशीं तां तु मोहिन्यै दत्तवान्विभुः” ॥ इति ।

सौरधर्म—

“आदित्योदयवेला या प्राङ्मुहूर्तदयान्विता । सैकादशीति संपूर्णा विद्धाऽन्या परिकीर्तिता” ॥ इति ।

सूर्योदयवेधः कण्वेन दर्शितः—

“उदयोपरि विद्धा तु दशम्यैकादशी यदा । दानवेभ्यः प्रीणनार्थं दत्तवान्पाकशासनः” ॥ इति ।

स्मृत्यंतरेऽपि—

“दशम्याः प्रांतमादाय यत्रोदेति दिवाकरः । तेन स्पृष्टं हरिदिनं दत्तं जंभासुराय तु” ॥ इति ।

पंचदशनाडीवेधस्तु स्कान्दे दर्शितः—

“नागो द्वादशनाडीभिः दिक्पंचदशभिस्तथा । भूतोऽष्टा दशनाडीभिर्दूषयत्युत्तरां तिथिम्” ॥ इति । १५

नागः पंचमी । दिक् दशमी । पंचदशनाडीबोधस्य वेधांतरस्य च विषयव्यवस्था निगमे दर्शिता—

“सर्वप्रकारवेधोऽयमुपवासस्य दूषकः । सार्धः सप्तमुहूर्तं तु वेधोऽयं बाधते व्रतम्” ॥ इति ।

यत्तु स्मर्यते—

“अर्धरात्रात्परा यत्र एकादश्युपलभ्यते । तत्रोपवासः कर्तव्यो दशमी न तु वै कला” ॥ इति ।

न तद्वेधाभिप्रायेण किं तु अर्धरात्रवेधोऽपि यदा वर्ज्यः तदा किमु वक्तव्यमरुणोदयवेध इति २०

कैमुत्यप्रदर्शनपरम् । तथा ब्रह्मकैवर्ते—

“अर्धरात्रे तु केषांचिद्दशम्या वेध इष्यते । अरुणोदयवेलायां नावकाशो विचारणे” ॥ इति ।

विद्वानिषेध उक्तो नारदीये—

“कलावेधेऽपि विप्रेन्द्र दशम्यैकादशीं त्यजेत् । सुराया बिन्दुना स्पृष्टं गंगांभ इव निर्मलम्” ॥ इति ।

स्मृत्यंतरेऽपि—

“कलार्धेनापि विद्धा स्यादशम्यैकादशी यदि । तदाप्येकादशीं त्यक्त्वा द्वादशीं समुपोषयेत्” ॥ इति ।

सोऽयं कलादिवेधः अरुणोदये सूर्योदये च समानः । तत्रारुणोदयवेधे वैष्णवविषयः ।

तच्च गारुडपुराणे स्पष्टमवगम्यते—

“दशमीशेषसंयुक्तो यदि स्यादारुणोदयः । नैवोपोष्यं वैष्णवेन तद्धि नैकादशीव्रतम्” ॥ इति ।

वैष्णवशब्दार्थः । वैस्वानसं पांचरात्रादिवैष्णवागमोक्तदीक्षां प्राप्तो वैष्णवः ।

“पांचरात्राद्यागमोक्तदीक्षां प्राप्तस्तु वैष्णवः” इति स्मृतेः । स्कान्देऽपि—

“परमापद्रमापन्नो हर्षे वा समुपस्थिते । नैकादशीं त्यजेद्यस्तु यस्य दीक्षा तु वैष्णवी ॥

“समात्मा सर्वजीवेषु निजाचाराद्विप्लुतः । विष्णवर्पिताखिलाचारः स हि वैष्णव उच्यते” ॥ इति

उक्तलक्षणं वैष्णवं प्रति तिथिरेवं निर्णेतव्या । एकादशी द्विविधा । अरुणोदयवेधव्रती शुद्धा चेति ।

तत्र वेधवती सर्वथा त्याज्या 'तद्धि नैकादशीव्रतम्' इत्यादिभिः प्रतिषेधात् । तत्रारुणोदयवेधस्य प्रतिषेधे सूर्योदयवेधस्य त्याज्यत्वमर्थसिद्धम् । कण्ववचनं चात्र पूर्वमुदाहृतम् । या तु वेधरहिता अरुणोदयमारभ्य प्रवृत्ता शुद्धैकादशी सा द्विविधा । आधिक्येन युक्ता तद्रहिता चेति । आधिक्यं चतुर्विधम् । एकादश्याधिक्यं द्वादश्याधिक्यमुभयाधिक्यमुभयानाधिक्यं । तत्राद्येषु त्रिषु पक्षेषु ५ शुद्धामप्यरुणोदयमारभ्य प्रवृत्तां परित्यज्य परेद्युपवासः कर्तव्यः । तत्रैकादश्याधिक्ये स्मृत्यन्तरम्—

“एकादशी यदा पूर्णा परतः पुनरेव सा । पुण्यं ऋतुशतस्योक्तं त्रयोदश्यां तु पारणम्” ॥ इति ।
नारदोऽपि—

“संपूर्णैकादशी यत्र द्वादश्यां वृद्धिगामिनी । द्वादश्यां लंघनं कार्यं त्रयोदश्यां तु पारणम्” ॥ इति ।

१० द्वादश्याधिक्ये व्यास आह—

“एकादशी यदा लुप्ता परतो द्वादशी भवेत् । उपोष्या द्वादशी तत्र यदीच्छेत्परमां गतिम्” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरेऽपि—

“एकादशी तु संपूर्णा द्वादशी वृद्धिगामिनी । वंचुळी नाम सा प्रोक्ता कोटियज्ञफलप्रदा ॥

“वंचुळीं द्वादशीं त्यक्त्वा यः कुर्यात्पूर्ववासरे । सप्तजनमार्जितं पुण्यं तत्क्षणादेव नश्यति” ॥ इति ।

१५ उभयाधिक्ये तु नारद आह—

“संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । सर्वैरेवोत्तरा कार्या परतो द्वादशी यदि” ॥ इति ।

गुरुरपि—

“संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । तत्रोपोष्या द्वितीया तु परतो द्वादशी यदि” ॥ इति ।
उभयाधिक्यरहितायां तु शुद्धायां न कोऽपि संदेहः । इति वैष्णवदीक्षायुक्तानामेकादशी निर्णीता ।

२० स्मार्तैकादशीनिर्णयः । अथ श्रौतस्मार्तपर्यवसितानां आगमोक्तदीक्षारहितानामेकादशी निर्णीयते । अरुणोदयवेधस्य वैष्णवविषयत्वे व्यवस्थिते सत्युदयवेधः स्मार्तविषयत्वेन परिशिष्यते । अत एव स्मर्यते—

“अतिवेधा महावेधा ये वेधास्तिथिषु स्मृताः । सर्वेऽप्यवेधा विज्ञेया वेधः सूर्योदये मतः” ॥ इति ।
वेधादीनां स्वरूपमुक्तं ब्रह्मकैवर्ते—

२५ “चतस्रो घटिकाः प्रातररुणोदयसंज्ञिताः । चतुष्टयविभागोऽत्र वेधादीनां किलोदितः ॥

“अरुणोदयवेधः स्यात्सार्धं तु घटिकात्रयम् । अतिवेधोऽपि घटिका प्रभासंदर्शनाद्रवेः ॥

“महावेधोऽपि तत्रैव दृश्यतेऽर्को न दृश्यते । तुरीयस्तत्र विहितो योगः सूर्योदये बुधैः” ॥ इति ।

अरुणोदयकाले घटिकार्धे दशमीसद्भावो वेधः घटिकाव्याप्तिरतिवेधः । उदयात्पूर्वं कृत्स्नारुणोदय-
कालव्याप्तिर्महावेधः । सूर्योदयकाले दशमीसद्भावो योगः उदयवेध इति यावत् । वेधातिवेधमहा-

३० वेधयोगाश्चत्वार उपवासस्य दूषकाः । तत्र

“दशमीशेषसंयुक्तो यदि स्यादरुणोदयः । नैवोपोष्यं वैष्णवेन तद्धि नैकादशीव्रतम्” ॥ इति

वचनात् । अरुणोदयवेधस्य वैष्णवविषयत्वे निश्चिते सति पारिशेष्यात् ‘सर्वेऽप्यवेधा विज्ञेया’ इति

वचनाच्च सूर्योदयवेधः स्मार्तविषय इति निश्चीयते । एवं च सूर्योदयवेधमपेक्ष्य द्वेधा भिद्यते ।

शुद्धा विद्धा चेति । शुद्धैकादशी वृद्धिसाम्यहासैस्त्रिविधा । शुद्धाधिका शुद्धसमा शुद्धहीनेति ।

एवं विद्धापि त्रिधा । विद्धाधिका विद्धसमा विद्धहीनेति । तत्र शुद्धाप्रकारेषु त्रिषु विद्धा-
प्रकारेषु त्रिषु च एकैका एकादशी द्वादशी वृद्धिसाम्यहीनतागुणैर्भूयस्त्रिविधा । शुद्धाधिका
द्वादश्यधिका शुद्धाधिका द्वादशीसमा शुद्धाधिका द्वादशीहीना शुद्धसमा द्वादश्यधिका शुद्धसमा
द्वादशीसमा शुद्धसमा द्वादशीहीना शुद्धहीना द्वादश्यधिका शुद्धहीना द्वादशीसमा शुद्धहीना
द्वादशीहीना विद्धाधिका द्वादश्यधिका विद्धाधिका द्वादशीसमा विद्धाधिका द्वादशीहीना विद्ध- ५
समा द्वादश्यधिका विद्धसमा द्वादशीहीना विद्धहीना द्वादश्यधिका विद्धहीना द्वादशीसमा
विद्धहीना द्वादशीहीनेति । एवमष्टादशधा भिन्नैकादशी । तदुक्तं ब्रह्मसिद्धांते—

“ शुद्धा विद्धा दशम्या कचिदपि च ततो द्वैधमेकादशीयं

“ प्रत्येकं च त्रिधाऽसौ पुनरपि समतान्यूनतथिक्वयोगात् ।

“ पक्षाः प्रत्येकभिन्नाः पुनरपि षडमी द्वादशीन्यूनतायैः

१०

“ संबंधादेवमष्टादश खलु मिलिताः कल्पनाः संभवन्ति ” ॥ इति ।

अष्टादशभेदप्रतिपादनपूर्वकं यथाक्रममुपवासनिश्चयमाह कालादर्शकारः—

“ शुद्धा विद्धा द्विधा वृद्धिसाम्य-हासैः पुनस्त्रिधा । तत्रैकैका द्वादशीस्था वृद्धिसाम्योनतागुणैः ॥

“ आद्योपोष्या परोर्ध्वे द्वे पौर्वपर्यात् व्यवस्थिते । गृहियन्त्योरुत्तरासु षट्सु पूर्वैव संमता ॥

“ तिसृष्वंत्यासु विद्धैव तत्पूर्वं तु व्यवस्थिते । अविद्धैव तु शेषासु तृतीयासु व्यवस्थिता ” ॥ इति । १५

आद्योपोष्या परेति द्वादश्याधिक्ययुक्ता शुद्धाधिकैकादशी परैवोपोष्या । तदाह नारदः—

“ संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । तत्रोपोष्या द्वितीया तु पुत्रपौत्रविवर्धनी ” ॥ इति ।

गारुडपुराणे—“ संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । तत्रोपोष्या परा पुण्या परतो द्वादशी यदि ” ॥

स्मृत्यंतरे—“ संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । वैष्णवी चेन्नयोदश्यां घटिकैकाऽपि दृश्यते ॥

“ गृहस्थोऽपि परां कुर्यात्पूर्वां नोपवसेत्तदा । पूर्णाऽप्येकादशी त्याज्या वर्धतो द्वितयं यदि ” ॥ इति । २०

वैष्णवी द्वादशी । वाराहेऽपि—

“ एकादशी विष्णुना चेत् द्वादशी परतः स्थिता । उपोष्या द्वादशी तत्र यदीच्छेत्परमं पदम् ” ॥ इति ।

ऊर्ध्वं द्वे एकादश्या । द्वादशीसाम्ययुक्ता शुद्धाधिका द्वादशीहानियुक्ता शुद्धाधिकेति द्वे एका-

दश्या पौर्वपर्यात्पूर्वा गृहस्थानां परा यतीनामिति व्यवस्थिते । तदाह स्कंदः—

“ संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । उत्तरां तु यतिः कुर्यात्पूर्वामुपवसेद् गृही ” ॥ इति । २५

स्कांदेऽपि—“ प्रथमेऽहनि संपूर्णा व्याप्त्याऽहोरात्रसंयुता ।

“ द्वादश्यां च तथा किंचिद् दृश्यते पुनरेव च । पूर्वा कार्या गृहस्थैस्तु यतिभिश्चोत्तरा विभो ” ॥ इति ।

स्मृत्यंतरे—“ पुनः प्रभातसमये घटिकैका यदा भवेत् ।

“ अत्रोपवासो विहितः चतुर्थाश्रमवासिनाम् । विधवायाश्च तत्रैव परतो द्वादशी न चेत् ” ॥

गारुडपुराणेऽपि—

३०

“ पुनः प्रभातसमये घटिकैका यदा भवेत् । अत्रोपवासो विहितो वनस्थस्य यतेस्तथा ॥

“ विधवायाश्च तत्रैव परतो द्वादशी न चेत् । पुण्यं क्रतुशतस्योक्तं त्रयोदश्यां तु पारणम् ” ॥ इति ।

मार्कण्डेयः—

“संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । पूर्वामुपवसेत् कामी निष्कामस्तूत्तरां सदा ” ॥ इति ।
कानिपदं गृहस्थोपलक्षणं निष्कामपदं यत्युपलक्षणम् ।

केचिद्गृहस्थस्यापि निष्कामित्वे उत्तरा तिथिरुपोष्येत्याहुः । तथा विष्णुरहस्ये—

५ “निष्कामस्तु गृही कुर्यादुत्तरैकादशीं सदा । सकामस्तु सदा पूर्वामिति बोधायनो मुनिः ” ॥ इति ।
यत्तु स्मृत्यन्तरवचनम्—

“संपूर्णैकादशी यत्र प्रभाते पुनरेव सा । लुप्यते द्वादशी तस्मिन्नुपवासः कथं भवेत् ॥

“उपोष्ये द्वे तिथी तत्र विष्णुप्रीणनतत्परैः ” ॥ इति तत् गृह्यत्योर्व्यवस्थितं यत्पौर्वापर्यं तदभि-
प्रायेण । अत एवोक्तं कालनिर्णये—

१० “एकादशीमात्रवृद्धौ गृह्यत्योर्व्यवस्थितिः । उपोष्या गृहीभिः पूर्वा यतिभिस्तूत्तरा तिथिः ” ॥ इति ।
उत्तरासु षट्सु पूर्वैव द्वादश्याधिक्ययुक्ता शुद्धसमा द्वादशीसाम्ययुक्ता शुद्धसमा द्वादशी-
हानियुक्ता शुद्धसमा द्वादश्याधिक्ययुक्ता शुद्धहीना द्वादशीसाम्ययुक्ता शुद्धहीना द्वादशी-
हानियुक्ता शुद्धहीनेति षट्त्वेकादशीषु पूर्वोपोष्या । तदाह स्कंदः—

“शुद्धा यदा समा हीना समा क्षाणाऽधिकोत्तरा । एकादशीमुपवसेत् शुद्धां वैष्णवीं सदा ” ॥ इति ।

१५ यत्तु स्मृत्यन्तरेऽभिहितम्—“शुद्धाऽप्येकादशी त्याज्या परतो द्वादशी यदि ” इति यदपि वचनांतरं
“द्वादशी तु त्रयोदश्यां कलामात्राणि दृश्यते । द्वादशद्वादशीर्हन्ति पूर्वस्यां पारणं कृतम् ” ॥ इति ।
यदपि स्कांदवचनम्—

“एकादशी भवेत्पूर्णा परतो द्वादशी यदि । तदा ह्येकादशीं त्यक्त्वा द्वादशीं समुपोषयेत् ” ॥ इति ।

यदपि कालिकापुराणवचनम्—

२० “एकादशी यदा पूर्णा परतो द्वादशी भवेत् । उपोष्या द्वादशी तत्र तिथिवृद्धिः प्रशस्यते ” ॥ इति ।
यदपि स्मृत्यन्तरवचनम्—

“एकादशी तु संपूर्णा द्वादशी वृद्धिगामिनी । वंचुली नाम सा प्रोक्ता कोटियज्ञफलप्रदा ॥

“वंचुलीं द्वादशीं त्यक्त्वा यः कुर्यात्पूर्ववासरे । सप्तजन्मार्जितं पुण्यं तत्क्षणादेव नश्यति ” ॥ इति ।

एवमादीनि द्वादशीमात्रवृद्धौ परदिनोपवासविधायीनि वचनानि वैष्णवविषयाणि । स्मार्तानामपि

२५ विद्वैकादशीविषयाणि । तथा च स्मर्यते—

“आदित्योदयमारभ्य भवेदेकादशीतिथिः । परेऽह्नि द्वादशी पूर्णा त्रयोदश्यां च वर्धते ॥

“उपोष्या द्वादशी तत्र वैष्णवैर्मोक्षकाङ्क्षक्षिभिः ” ॥

व्यासः—

“एकादशी यदा लुप्ता परतो द्वादशी भवेत् । उपोष्या द्वादशी तत्र यदीच्छेत्परमां गतिम् ” ॥ इति ।

३० लुप्ता आदौ दशमीमिश्रितत्वात्परतो वृद्धयभावाच्च क्षयं गतेति यावत् । उक्तं च कालनिर्णये—

“द्वादशीमात्रवृद्धौ तु शुद्धाविद्धे व्यवस्थिते । शुद्धा पूर्वोत्तरा विद्धा स्मार्तनिर्णय ईदृशः ” ॥ इति ।
विद्धाधिका द्वादश्यधिका विद्धाधिका द्वादशीसमा विद्धासमा द्वादश्यधिका इति पक्षत्रयेऽपि
परदिन एवोपवासः । तथा भविष्यत्पुराणे—

“एकादशीं दिशायुक्तां वर्धमाने विवर्जयेत् । क्षयमार्गस्थिते सोमे कुर्वीत दशमीयुता ” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरेऽपि—

“एकादशी यद्वा लुता परतो द्वादशी भवेत् । उपोष्या द्वादशी तत्र यदीच्छेत्परमां गतिम् ॥

“कलार्धेनापि विद्धा स्याद्दशम्यैकादशी यद्वा । तदा त्वेकादशीं त्यक्त्वा द्वादशीं समुपोषयेत्” ॥ इति ।

पक्षत्रयेऽपि पूर्वत्रोपवासं निषेधति नारदः—

“नोपोष्या दशमी विद्धा सदैवैकादशी तिथिः । तामुपोष्य नरो जह्यात्पुण्यं वर्षशतोद्भवम्” ॥ इति । ५

तथा—

“दशमीशेषसंयुक्ता गांधार्या समुपोषिता । तस्याः पुत्रशतं नष्टं तस्मात्तां परिवर्जयेत्” ॥ इति ।

एवमन्यान्यपि वचनानि विद्वानिषेधपराण्यत्रैव विषये योजनीयानि ।

विद्धादिका द्वादशीहीनेति पक्षे पूर्ववत् गृह्यत्योर्व्यवस्था द्रष्टव्या । तदाह प्रचेताः—

“एकादशी विवृद्धा चेच्छुक्ले कृष्णे विशेषतः । उत्तरां तु यतिः कुर्यात्पूर्वामुपवसेद्गृही” ॥ इति । १०

न चैतच्छुद्धाधिक्ये चरितार्थमिति शंकनीयं बाधकाभावेन विद्धाधिक्येऽपि तद्वचनप्रवृत्तेर्निवारयितु-

मशक्यत्वात् । विद्धसमा द्वादशीसमा विद्धसमा द्वादशीहीना विद्धहीना द्वादश्यधिका विद्धहीना

द्वादशीसमा विद्धहीना द्वादशीहीनेति पंचसु पक्षेषु विद्धैकादश्येवोपोष्या । तथा च स्मृत्यन्तरे—

“एकादशी न लभ्येत सकला द्वादशी भवेत् । उपोष्या दशमी विद्धा ऋषिरुद्दालकोऽब्रवीत्” ॥ इति ।

ऋष्यशृंगः—

१५

“सर्वत्रैकादशी कार्या दशमीमिश्रिता नरैः । प्रातर्भवतु वाऽमा वा तस्यां नित्यमुपोषणम्” ॥ इति ।

तथा—

“त्रयोदश्यां न लभ्येत द्वादशी यदि किंचन । उपोष्यैकादशी तत्र दशमीमिश्रिता त्वपि” ॥ इति ।

विष्णुरहस्येऽपि—

“एकादशी भवेत्काचिद्दशम्या दूषिता तिथिः । वृद्धिपक्षे भवेद्दोषः क्षयपक्षे तु पुण्यदा” ॥ इति । २०

विद्धैकादश्याः क्षये सति पूर्वोपोष्येत्यर्थः । अत्र पक्षपंचके परदिनोपवासे सति त्रयोदश्यां पारणं

प्रसज्येत । तच्च निषिद्धम् । तथा च भविष्यत्पुराण—

“पारणं तु त्रयोदश्यां यः करोति तपोत्तम । द्वादशद्वादशीर्हिति नात्र कार्या विचारणा” ॥ इति ।

ऋष्यशृंगः—

“पारणाय न लभ्येत द्वादशी यदि कुत्रचित् । तदानीं दशमी विद्धाऽप्युपोष्यैकादशी तिथिः” ॥ इति । २५

विष्णुरहस्येऽपि—

“द्वादशीतिथिरल्पाऽपि यदि न स्यात्परेऽहनि । दशमीमिश्रिता कार्या न दोषोऽस्तीति वेधसः” ॥ इति ।

वचनमिति शेषः । विद्धसमा द्वादशीसमा विद्धसमा द्वादशीहीनेति पक्षद्वये पौर्वापर्येण गृहि-

त्योर्व्यवस्था कालादर्शकारेण प्रतिपादिता ‘तत्पूर्वं तु व्यवस्थिते’ इति । अत्र प्रमाणं चिंत्यम् ।

सर्वमेतत्संगृह्य दर्शयति कालनिर्णयकारः—“शुद्धाविद्धयोरुभयोरप्येष निर्णयसंग्रहः । एका-

दशीद्वादश्योरुभयोरपि वृद्धौ परेयुरुपवासः द्वयोरप्यवृद्धौ पूर्वेषु । एकादशीमात्रवृद्धौ गृह्यत्यो-

र्व्यवस्था पूर्वेषुगृहस्थः उत्तरेषुयतिः । द्वादशीमात्रवृद्धौ शुद्धायां सर्वेषां पूर्वेषु विद्धायां

परेषुसिति । दिनत्रयविषयाणि कानिचिद्वचनान्युपलभ्यन्ते । तदाह नारदः—

“यदि दैवाच्च संसिध्येदेकादश्यां तिथित्रयम् । तत्र क्रतुशतं पुण्यं द्वादशीपारणे भवेत्” ॥ इति ।

कौर्मे—

“ द्विस्पृगेकादशी यत्र तत्र संनिहितो हरिः । तामेवोपवसेत्काममकामो विष्णुतत्परः ” ॥ इति ।
अत्राद्यंतयोर्द्वादशीद्वादशयोर्मध्ये एकादशीत्येतादृशं दिनत्रयं यदा प्राप्नोति तदा परतो द्वादशी
वृद्धिरवृद्धिश्चेत्युभयं संभवति । तत्र यद्यवृद्धिः तदा यथोक्तं दिनत्रयमुपोष्यम् । तदुक्तं पुराणांतरे—

५ “ दिनत्रयमृते देवि नोपोष्या दशमीयुता । सैवोपोष्या सदा पुण्या परतश्चेत्त्रयोदशी ” ॥ इति ।
द्वादशीवृद्धौ एकादशी यदा लुतेत्यनेन व्यासवचनेन परेद्युरपवासः कर्तव्यः । यदा त्वाद्यंतयो-
रेकादशीत्रयोदश्योर्मध्ये द्वादशीत्येतादृशं दिनत्रयं तदा गृहस्थानां पूर्वदिन उपवासः । परदिने
निषेधात् । तथा कौर्मे—

“ एकादशी द्वादशी च रात्रिशेषे त्रयोदशी । उपवासं न कुर्वीत पुत्रपौत्रसमन्वितः ” ॥ इति ।

१० पाद्मेऽपि—

“ एकादशी द्वादशी च रात्रिशेषे त्रयोदशी । ग्रहस्पृक्तदहोरात्रं नोपोष्यं तु सुतार्थिभिः ” ॥ इति ।
पुत्रपौत्रसमन्वितः सुतार्थिभिरिति विशेषणाद्यतीनामत्र विषये परदिन एवोपवासः ।
एतदेवाभिप्रेत्याह नारदः—

“ एकादशी द्वादशी च रात्रिशेषे त्रयोदशी । तत्र क्रतुशतं पुण्यं त्रयोदश्यां तु पारणम् ॥

१५ “ एकादशी द्वादशी च रात्रिशेषे त्रयोदशी । त्रिस्पृशी नाम सा प्रोक्ता ब्रह्महत्यां व्यपोहति ” ॥ इति ।

कौर्मेऽपि—

“ द्विस्पृगेकादशी यत्र तत्र संनिहितो हरिः । पुण्यं क्रतुशतस्योक्तं त्रयोदश्यां तु पारणम् ” ॥ इति ।
वैष्णवानामपि परदिन एवोपवासः “ नैवोपोष्या वैष्णवेन ” इति पूर्वदिनोपवासस्य निषिद्धत्वात् ।
यत्तु स्मर्यते—

२० “ आदित्येऽहनि संक्रांत्यां व्यतीपाते दिनत्रये । पारणं चोपवासं च न कुर्यात्पुत्रवान्गृही ” ॥ इति ।

यदपि मत्स्यवचनम्—

“ दिनक्षये तु संक्रांत्यां ग्रहणे चंद्रसूर्ययोः । उपवासं न कुर्वीत पुत्रपौत्रसमन्वितः ॥

“ द्वौ तिथ्यन्तावेकवारं यस्मिन्स स्याद्दिनक्षयः ” ॥ इति । अत्र दिनक्षयादिषूपवासनिषेधो दिन-
क्षयादिनिमित्तकः नैकादशीनिमित्तकः । तदुक्तं कालादशौ—

२५ “ संक्रात्यादिनिषेधश्च संक्रात्यादिनिमित्तकः । उपवासं निषेधन्ति न ते त्वैकादशीव्रतम् ” ॥ इति ।

कात्यायनः—

“ तत्प्रयुक्तोपवासस्य निषेधोऽयमुदाहृतः । प्रयुक्तच्यंतरयुक्तस्य न विधिर्न निषेधनम् ” ॥ इति ।

जैमिनिरपि—

“ तन्निमित्तोपवासस्य निषेधोऽयमुदाहृतः । नानुषंगकृतो ग्राह्यो यतो नित्यमुपोषणम् ” ॥ इति ।

३० अयमर्थः—एकादश्युपवासस्य नित्यत्वात्संक्रांत्याद्युपवासस्य काम्यत्वात्काम्योपवासनिषेधेन
नित्योपवासनिषेधो न सिध्यतीति । काम्योपवासश्च वसिष्ठेनोक्तः—

“ एकस्मिन्सावने त्वन्हि तिथीनां त्रितयं यदा । तदा दिनक्षयः प्रोक्तस्तत्र साहस्रिकं फलम् ॥

“ अमावास्या द्वादशी च संक्रांतिश्च विशेषतः । एताः प्रशस्तास्तितयो भानुवारस्तथैव च ॥

“ अत्र स्नानं जपो होमो देवतानां च पूजनम् । उपवासस्तथा दानमेकैकं पावनं स्मृतम् ” ॥ इति ।

पितामहस्तु दिनक्षय एकादशुपवासं निषेधति—

“एकादश्यां दिनक्षय उपवासं करोति यः । तस्य पुत्रा विनश्यति मध्यायां पिण्डो यथा ” ॥ इति । ईदृशे विषये व्यवस्था दर्शिता कालनिर्णये—

“उपवासे निषिद्धे तु भक्ष्यं किञ्चित् प्रकल्पयेत् । न दृष्यत्युपवासोऽत्र उपवासफलं भवेत् ॥

“नक्तं हविष्यान्नमनोदनं वा फलं तिलाः क्षीरमथानुवाऽऽज्यम् ।

“यत्पंचगव्यं यदि वाऽपि वायुः प्रशस्तमत्रोत्तरमुत्तरं च ” ॥ इति । स्मृत्यन्तरे—

“अष्टैतान्यव्रतघ्नानि आपो मूलं घृतं पयः । हविर्ब्राह्मणकाम्या च गुरोर्वचनमौषधम् ” ॥ इति ।

एवं कृष्णैकादश्यां गृहस्थस्योपवासे निषिद्धे भक्ष्यं प्रकल्पनीयम् । तत्रोपवासं निषेधति कात्यायनः—

“एकादशीषु कृष्णासु रविसंक्रमणे तथा । चंद्रसूर्योपरागे च न कुर्यात्पुत्रवान्गृही ” ॥ इति । १०

गौतमः—

“आदित्येऽहनि संक्रात्यामसितैकादशीषु च । व्यतीपाते कृते श्राद्धे पुत्री नोपवसेत् गृही ” ॥ इति ।

पाद्मेऽपि—

“संक्रात्यामुपवासेन पारणेन युधिष्ठिर । एकादश्यां च कृष्णायां ज्येष्ठपुत्रो विनश्यति ” ॥ इति ।

नारदेऽपि—

“इदुक्षयेऽर्कसंक्रांतौ एकादश्यसिते रवेः । उपवासं न कुर्वीत यदीच्छेत्संततिं ध्रुवम् ” ॥ इति ।

यत्तु कौर्मवचनम्—“एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि ” ॥ इति । यदपि विष्णुधर्मोत्तरे

वचनम्—

“स ब्रह्महा स गोघ्नश्च स्तेयी च गुरुतल्पगः । एकादश्यां तु यो भुङ्क्ते पक्षयोरुभयोरपि ” ॥ इति ।

यत्तु कौर्मवचनम्—

“यथोत्तरे दक्षिणे वा अयने चैव कीर्तिते । तुल्यं पुण्यमवाप्नोति द्वादशयोरुभयोरपि ” ॥ इति ।

“सायंप्रातर्यथा सन्ध्ये सायंप्रातर्यथाह्वती । तथा सितसिते पुण्ये द्वादश्यां धर्मतः समे ” ॥ इति ।

यानि चान्यान्येतादृशानि शुक्लकृष्णैकादशुपवासप्रतिपादकानि तानि सर्वाणि वानप्रस्थयतिविधवा-विषयाणि । तदुक्तं कालादर्शे—

“उपोष्यैकादशी कृष्णा शुक्लावदिति वादिनः । विधवाविपिनस्थादिविषयत्वेन सार्थकम् ” ॥ इति । २५

कौर्मैऽपि—“एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि । वनस्थयतिधर्मोऽयं शुक्लमेव सदा गृही ” ॥

स्कान्देऽपि—“एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि । वानप्रस्थो यतिश्चैव शुक्लमेव सदा गृही ” ॥ इति

नैमित्तिककाम्योपवासौ कृष्णायामपि कर्तव्यौ । तत्र नैमित्तिकं स्मृत्यन्तरे पठ्यते—

“शयनिबोधनी मध्ये या कृष्णैकादशी भवेत् । सैवोपोष्या गृहस्थेन नान्या कृष्णा कदाचन ” ॥ इति ।

काम्योपवासस्तु मात्स्ये दर्शितः—

“एकादश्यां तु कृष्णायामुपोष्य विधिवन्नरः । पुत्रानायुः समुद्धि च सायुज्यं च समृच्छति ” ॥ इति ।

स्कान्देऽपि—“पितृणां गतिमन्विच्छन् कृष्णायां समुपोषयेत् ” ॥ इति । सनत्कुमारोऽपि—

“भानुवारेण संयुक्ता कृष्णा संक्रातिसंयुता । एकादशी सदोपोष्या सर्वसंपत्करी तिथिः ” ॥ इति ।

श्रवणद्वादशीनिर्णयः । यदा द्वादश्यां श्रवणनक्षत्रं भवेत्तदा शुद्धैकादशीमपि परित्यज्य द्वादश्या-
मेवोपवसेत् । तथा च नारदः—

“ शुक्ला वा यदि वा कृष्णा द्वादशी श्रवणान्विता । तयोरेवोपवासश्च त्रयोदश्यां तु पारणम् ॥

“एकादश्यां त्वविद्वायां द्वादश्यां श्रवणं यदि । उपोष्या द्वादशी पुण्या सर्वपापक्षयावहा” ॥ इति ।

५ स्मृत्यन्तरेऽपि—

“ एकादशीं परित्यज्य द्वादशीं समुपोषयेत् । पूर्वोपवासजं पुण्यं सर्वं प्राप्नोत्यसंशयम् ” ॥ इति ।
शक्तस्तूपवासद्वयं कुर्यात्

“ एकादशीमुपोष्यैव द्वादशीं समुपोषयेत् । तत्र द्विधोपवासः स्यादुभयोर्देवता हरिः ” ॥ इति ।
अत्र देवतैक्यात्पूर्वोपवासस्य पारणं नास्तीत्युक्तं भवति ।

१० विद्वायामपि द्वादश्यां फलाधिक्यमुक्तं स्मृत्यन्तरे—

“ द्वादश्येकादशीयुक्ता तत्र च श्रवणं यदि । सा विष्णुशृङ्खला ज्ञेया सायुज्यफलदायिनी ” ॥

गौतमोऽपि—

“ द्वादशीं श्रवणार्क्षं च स्पृशेदेकादशी यदि । स एव वैष्णवो योगो विष्णुशृङ्खलसंज्ञकः ” ॥ इति ।

इयं च श्रवणद्वादशी नित्या

१५ “द्वादशीं श्रवणोपेतां यो नोपोष्यति दुर्मतिः । पञ्चसंवत्सरकृतं पुण्यं तस्य विनश्यति ” ॥
इत्यकरणे प्रत्यवायस्मरणात् । काम्यत्वमपि मार्कण्डेय आह—

“ द्वादश्यामुपवासेन सिद्धार्थो भूप सर्वशः । चक्रवर्तिवमखिलं संप्राप्नोत्यखिलां श्रियम् ” ॥

यत्तु वचनम्—

“ नभस्यशुक्लद्वादश्यां नक्षत्रं श्रवणं यदि । श्रवणद्वादशी नाम सा प्रोक्ता मुनिपुंगवैः ” ॥ इति ।

२० तद्गामनजयंत्यभिप्रायम्

“ मासि भाद्रपदे शुक्लद्वादशी श्रवणान्विता । उपोष्या वामनप्रीत्यै जातस्तत्र यतो हरिः ” ॥ इति
स्मरणात् । “शुक्ला वा यदि वा कृष्णा द्वादशी श्रवणान्विता” इति वचनाद्यदाकदाचिदपि श्रवण-
द्वादशीसंभवे तत्रोपवासः कार्य एव । एतच्च श्रवणद्वादशीव्रतं न तिथिप्रधानं

“याः काश्चित्तिथयः पुण्याः प्रोक्ता नक्षत्रयोगतः । तास्वेव तद्व्रतं कुर्याच्छ्रवणद्वादशीं विना” ॥ इति स्मृतेः ।

२५ नक्षत्रप्राधान्येऽपि इतरनक्षत्रोपवासवन्नस्तमयव्यापि नक्षत्रं ग्राह्यम्

“ यस्मिन्नस्तंगतः सूर्यो निशि यद्युतमिन्दुना । तदैवोपवसेदृक्षे नक्षत्रं श्रवणं विना ” ॥ इति
श्रवणपर्युदासात् । अतः “ उदये त्रिमुहूर्तस्थं नक्षत्रं व्रतदानयोः ” इति वचनादुदयादित्रिमुहूर्त-
व्यापिश्रवणनक्षत्रं किञ्चित् द्वादशीस्पृष्टं यदि ग्राह्यम् । त्रिमुहूर्तव्याप्यभावे पूर्वद्युरेवोपवासः ।
द्वादशीयुक्तस्य श्रवणस्य दिनद्वये त्रिमुहूर्तव्यापित्वे पूर्वदिन उपवासः । तत्र नक्षत्रस्य पूर्णत्वात् ।

३० श्रवणद्वादश्युपवासे त्रयोदश्यामेव पारणं कार्यं “त्रयोदश्यां तु पारणम् ” इत्युक्तत्वात् ।
एकादश्युपवासे तु हरिवासवर्जितद्वादश्यां पारणं कार्यम्

“ चतुर्मुहूर्तं द्वादश्यामाद्यमेकादशीतिथौ । अन्ते चतुर्मुहूर्तं यत् तत्कालं हरिवासम् ॥

“ महादोषकरं चान्नं संप्राप्ते हरिवासरे । न कार्यं पारणं तत्र विष्णुप्रीणनतत्परैः ” ॥ इति स्मृतेः ।

यदा त्रयोदश्यां द्वादश्याः कलाद्वयं कलात्रयं वा संभवति तदा द्वादशीकाल एव पारणं कुर्यात्तदुक्तं

नारदीये—

“एकादश्याः कला ह्येका द्वादश्यास्तु कलाद्वयम् । द्वादशद्वादशीर्हीति त्रयोदश्यां तु पारणम्” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरेऽपि—

“कलाद्वयं त्रयं वापि द्वादशीं न त्वतिक्रमेत् । पारणे मरणे नृणां तिथिस्तात्कालिकी स्मृता” ॥ इति ।

द्वादश्यां माध्याह्निककालः । द्वादशीकाले यदा पारणं तदा तत्प्रागेव सर्वाः क्रियाः ५ कर्तव्याः । तदुक्तं नारदीये—

“अल्पायामपि विप्रेन्द्र द्वादश्यामरुणोदये । स्नानार्चनक्रियाः कार्या दानहोमादिसंयुताः” ॥ इति ।

गारुडपुराणेऽपि—

“यदा त्वल्पा द्वादशी स्यादपकर्षो भुजेर्भवेत् । प्रातर्मध्याह्निकस्यापि तत्र स्यादपकर्षणम्” ॥ इति ।

स्कांदेऽपि—

१०

“यदा भवेदतीवाल्पा द्वादशी पारणादिने । उषःकाले द्वयं कुर्यात्प्रातर्माध्याह्निकं च तत्” ॥ इति ।
उदितहोमिनोऽग्निहोत्रिणो अग्निहोत्रहोमानंतरं पारणं कार्यम् ‘विप्रतिषेधे श्रुतिलक्षणं बलीय’
इति स्मरणात् । न च वाच्यम्

“आहिताग्निरेद्धांश्च ब्रह्मचारी च ते त्रयः । अश्रंत एव सिध्यन्ति नैषां सिद्धिरनश्नताम्” ॥

*इत्यापस्तंबस्मरणादाहिताग्नेरुपवास एव नास्तीति “ब्रह्मचार्याहिताग्निश्च त्यजेन्नैकादशीव्रतम्” इति १५

स्मृतेः । आपस्तंबवचनस्य एकादशीव्यतिरिक्तविषयत्वावगमात् कालयोर्भोजनमिति वचन-
प्राप्तं यत्कालद्वयभोजनं तत्र नियमाभावप्रतिपादनपरत्वाच्च द्वादशीकाले पारणासंभवे अग्निः
पारणं कुर्यात् । तदाह कात्यायनः—

“संध्यादिकं भवेन्नित्यं पारणं तु निमित्ततः । अद्भिस्तु पारयित्वाऽथ नैत्यकांते भुजिर्भवेत्” ॥ इति ।

देवलोऽपि—

२०

“संकटे विषमे प्राप्ते द्वादश्यां पारणं कथम् । अद्भिस्तु पारणं कुर्यात् पुनर्भुक्तं न दोषकृत्” ॥ इति ।

“अशितानशिता यस्माद्दूपो विद्वद्भिरीरिताः । अम्भसा केवलेनैव करिष्ये व्रतपारणम्” ॥ इति

संकल्प्य गायत्र्या अभिमन्त्र्य त्रिवारं चुलकोदकं “प्रणवेन पिबेत् तोयं जलपारणमुच्यते ॥

“आपः पवित्रममलं पावनाः सर्वकर्मसु । व्रतलोपभयादेतत्पारणार्थं पिबाम्यहम्” ॥ इति ।

एकादश्युपवासे अधिकारिणः । एकादश्युपवासे अधिकारिणं दर्शयति कात्यायनः—

२५

“अष्टवर्षाधिको मर्त्यो ह्यसंपूर्णाशीतिवत्सरः । एकादश्यामुपवसेत्पक्षयोरुभयोरपि” ॥ इति ।

नारदः—

“अष्टाब्दादधिको मर्त्यो ह्यपूर्णाशीतिहायनः । भुंक्ते यो मानवो मोहादेकादश्यां स पापकृत्” ॥ इति ।

पतिमत्या उपवासनिषेधः । पतिमत्यासूपवासं निषेधति विष्णुः (२५।१६)—

“पत्यौ जीवति या नारी उपोष्य व्रतमाचरेत् । आयुष्यं हरते भर्तुर्नरकं चैव गच्छति” ॥ इति । ३०

मनुरपि (५।१५४)—“नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषणम्” ॥ इति ।

पत्युरनुमत्या पत्नी व्रतादिष्वधिकारिणी भवेत् । तदाह कात्यायनः—

“भार्या भर्तुर्भतेनैव व्रतादीनाचरोदिति” ॥ मार्कंडेयः—

“नारी खल्वननुज्ञाता भर्त्रा पित्रा सुतेन वा । निष्फलं तु भवेत्तस्या यत्करोति व्रतादिकम्” ॥ इति ।

पराशरोऽपि—

“अष्टष्टा चैव भर्तारं या नारी कुरुते व्रतम् । सर्वं तद्राक्षसान् गच्छेदित्येवं मनुरब्रवीत् ” ॥ इति ।

उपवासासामर्थ्यविषयः । उपवासासामर्थ्यस्तु एकभक्तादीनि कुर्यात् । तथा च कात्यायनः—

“उपवासे त्वशक्तानामशीतेरूर्ध्वजीविनाम् । एकभक्तादिकं कार्यमाह बोधायनो मुनिः ” ॥ इति ।

५ मार्कण्डेयः—

“एकभक्तेन नक्तेन तथैव याचितेन च । मुन्यन्नेन च दानेन न निर्द्वादशिको भवेत् ” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरेऽपि—

“एकभक्तेन नक्तेन बालवृद्धातुरः क्षपेत् । पयोमूलं फलं वाऽपि न निर्द्वादशिको भवेत् ” ॥

भविष्यत्पुराणेऽपि—

१० “एकादश्यामुपवसेन्नक्तं वापि समाचरेत् । अथवा विप्रमुख्येभ्यो दानं दद्यात्स्वशक्तितः” ॥ इति ।

एकभक्तादावप्यशक्तः प्रतिनिधिना कारयेत् । तथा च विष्णुरहस्ये—

“असामर्थ्ये शरीरस्य व्रते च समुपस्थिते । कारयेद्धर्मपत्नीं वा पुत्रं वा विनयान्वितम् ” ॥ इति ।

पैठानसिः—

“भार्या भर्तुर्व्रतं कुर्याद्भार्यायाश्च पतिर्व्रतम् । असामर्थ्ये परस्ताभ्यां व्रतभंगो न जायते ” ॥ इति ।

१५ स्कान्देऽपि—“पुत्रं वा विनयोपेतं पत्नीं वा भ्रातरं तथा ।

“एषामभाव एवान्यं ब्राह्मणं विनियोजयेत् । भगिनीमथवा शिष्यं ब्राह्मणं दक्षिणादिभिः” ॥ इति ।

कात्यायनः—“पितृमातृस्वसृभ्रातृगुरुर्वर्थे च विशेषतः । उपवासं प्रकुर्वाणः पुण्यं क्रतुशतं लभेत् ॥

“दक्षिणा नात्र दातव्या शुश्रूषा विहिता च सा । नारी च पतिमुद्दिश्य एकादश्यामुपोषिता ॥

“पुण्यं क्रतुशतं प्राहुर्मुनयः पारदर्शनाः । उपवासफलं तस्य पतिः प्राप्नोत्यसंशयम् ” ॥ इति ।

२० स्मृत्यन्तरेऽपि—

“पितृमातृपतिभ्रातृस्वश्रूगुर्वादिभूभुजाय । अष्टष्टार्थमुपोषित्वा स्वयं च फलभाग्भवेत् ॥

“मातामहादीनुद्दिश्य एकादश्यामुपोषणे । कर्त्ता दशगुणं पुण्यं प्राप्नोत्यत्र न संशयः ॥

“यमुद्दिश्य कृतं सोऽपि संपूर्णफलमाप्नुयात् ” ॥ इति । प्रतिनिधौ कश्चिद्विशेषः स्मर्यते—

“काम्ये प्रतिनिधिर्नास्ति नित्ये नैमित्तिके च सः । काम्येऽप्युपक्रमादूर्ध्वं केचित्प्रतिकृतिं विदुः” ॥ इति

२५ उपवासाकरणे प्रायश्चित्तं स्मर्यते—

“अर्के पर्वद्वये रात्रौ चतुर्दश्यष्टमी दिवा । एकादश्यामहोरात्रं भुक्त्वा चांद्रायणं चरेत् ” ॥

सूतकादावुपवासविचारः । सूतकादौ उपवासमात्रं कार्यमाह पुलस्त्यः—

“सूतके च नरः स्नात्वा प्रणम्य मनसा हरिम् । एकादश्यां न भुंजीत व्रतमेतन्न लुप्यते ॥

“मृतकेऽपि न भुंजीत ह्येकादश्यां सदा नरः । एकादश्यां न भुंजीत नारी हृष्टे रजस्यपि” ॥ इति ।

३० काम्येऽपि दानार्चनरहितमुपवासमात्रं कार्यम् । एतदुक्तं कौर्मे—

“काम्योपवासे प्रकृते त्वन्तरा मृतसूतके । तत्र काम्यव्रतं कुर्यात् दानार्चनविवर्जितम् ॥

“सूतकांते नरः स्नात्वा पूजयित्वा जनार्दनम् । दानं दत्वा विधानेन व्रतस्य फलमश्नुते ॥

“संप्रवृत्तेऽपि रजसि न त्याज्यं द्वादशीव्रतम् । पंचमेऽहनि शुद्धा स्यादैवे पित्र्ये च कर्मणि ” ॥

एकादश्यां नित्यनैमित्तिकश्राद्धे उपवासभेदः । एकादश्यां सांवत्सरिकश्राद्धे संप्राप्ते

३५ श्राद्धं कृत्वा पितृसेवितशेषं समाधायोपोषणं कुर्यात् । तदाह कात्यायनः—

“उपवासो यदा नित्यः श्राद्धं नैमित्तिकं भवेत् । उपवासं ततः कुर्यादाधाय पितृसेवितम् ” ॥ इति ।

ननु “ भुंजीतैव कृते श्राद्धे पुत्री नोपवसेद् गृही ” ॥ इति । तथा—

“ श्राद्धं कृत्वा तु यो विप्रो न भुंक्ते तु कदाचन । देवा हव्यं न गृह्णन्ति कव्यानि पितरस्तथा ” ॥
इत्यादिवचनविरोधः स्यात् । मैवम् । आघ्राणेनापि भोजनकार्यस्य सिद्धेः तस्य भोजनकार्ये विधानात् ।
अनुकल्पं कुर्वन्नशक्तस्तु भुंजीत

“अनुकल्पं यदा कुर्वन्नशक्तः पक्षयोर्द्वयोः । एकादश्यां तु भुंजीत श्राद्धं कृत्वा दिवैव च” ॥ इति स्मृतेः । ५
कृष्णैकादश्यां गृहस्थस्य ओदनव्यतिरिक्तपितृशेषभोजनेऽप्यदोषः । तस्य शुक्लैकादश्यामेव
नित्योपवासविधानात् । कृष्णैकादश्यामुपवासनिषेधेन भक्ष्यविधानाच्च । ब्रह्माण्डपुराणे तु—

“ कर्ता नोपवसेच्छ्राद्धे पित्र्येऽप्येकादशीव्रते । तयोरप्यधिकं ब्रूयुः पितृशेषं महर्षयः ” ॥ इति ।
कर्तृग्रहणात् ज्ञातीनामाघ्राणमेव

“ कर्तृभ्योऽन्यैर्न भोक्तव्यं श्राद्धे प्राप्ते हरेर्दिने । पितृशेषं तमाघ्राय उपवासफलाप्तये ” ॥ इति १०
भोक्तुरपि दोषो नास्तीत्युक्तं तत्रैव—

“ पात्राभावे द्विजः श्राद्धे भुञ्जीयाद्धरिवासरे । नोपवासव्रतघ्नं तन्नो चेत्तच्छ्राद्धहा भवेत् ॥

“ परदिने तु कर्तव्या पारणा द्वादशीदिने । उपवासफलं सम्यक् प्राप्नोति व्रतभाङ्ग नरः ॥

“ एकादश्यां न भुंजीत कदाचिदपि मानवः । स्वयं प्रार्थ्यं न भुङ्क्ते चेत् प्रार्थितोऽन्यैर्न दोषभाक् ” ॥ इति ।

काम्यैकादशीव्रतानुष्ठानक्रमः । अयमिह काम्यव्रतानुष्ठानक्रमः । प्रथमं दशम्यामेक- १५
भुक्तं कृत्वा दंतधावनं कुर्यात् । “ दशम्यामेकभुक् भूत्वा स्वादयेदंतधावनम् ” इति स्मरणात् ।
दशम्यां रात्रौ नियम उक्तो ब्रह्मकैवर्ते—

“ प्राप्ते हरिदिने सम्यक् विधाय नियमं निशि । दशम्यामुपवासस्य प्रकुर्याद्वैष्णवं व्रतम् ” ॥

नारदीये—

“ अक्षारलवणाः सर्वे हविष्यान्ननिषेवणाः । अवनीतल्पशयनाः प्रियासंगविवर्जिताः ” ॥ इति । २०
ततः प्रातरुत्थायैकादश्यां बाह्यांतरशुद्धिं विदध्यात् । तत्प्रकारस्तु कालनिर्णयेऽभिहितः—

“ शरीरमंतःकरणोपघातं वाचश्च विष्णुर्भगवानशेषम् ।

“ शमं नयत्वस्तु ममेह शर्म पापादनंते हृदि संनिविष्टे ॥

“ अंतःशुद्धिं बहिःशुद्धिं शुद्धो धर्ममयोऽच्युतः । स करोतु ममैतस्मिन् शुचिरेवास्मि सर्वदा ॥ ।

“ बाह्योपघातादनघो बोद्धा च भगवानजः । शमं नयत्वनंतात्मा विष्णुश्चेतसि संस्थितः ” ॥ इति । २५
अनंतरं व्रतसंकल्पं कुर्यात् । तत्र मंत्रमाह विष्णुः—

“ एकादश्यां निराहारः स्थित्वाऽहमपरेऽहनि । भोक्ष्यामि पुंडरीकाक्ष शरणं मे तवाच्युत ।

“ इत्युच्चार्य ततो विद्वान्पुष्पांजलिमथार्पयेत् ” ॥ इति ।

अनंतरकृत्यमाह कात्यायनः— “ गृहीत्वौदुम्बरं पात्रं वारिपूर्णमुदङ्मुखः ।

“ अष्टाक्षरेण मंत्रेण त्रिजप्तेनाभिमंत्रितम् । उपवासफलप्रेप्सुः पिबेत्पात्रगतं जलम् ” ॥ इति । ३०

औदुम्बरं ताप्रपात्रम् । ब्रह्मपुराणे—

“ संपूज्य विधिवद्विष्णुं श्रद्धया सुसमाहितः । गंधैः पुष्पैस्तथा धूपैर्दीपैर्नैवेद्यकैः वरैः ।

“ एवं संपूज्य विधिवद्वात्रौ कृत्वा तु जागरम् । याति विष्णोः परं स्थानं नरो नास्त्यत्र संशयः ” ॥ इति ।

द्वादश्यां कर्तव्यमाह **कात्यायनः**—“प्रातः स्नात्वा हरिं पूज्य उपवासं समापयेत् ।

“अज्ञानतिमिरांधस्य व्रतेनानेन केशव । प्रसीद सुमुखो नाथ ज्ञानदृष्टिप्रदो भव ॥

“मंत्रं जपित्वा हरये निवेद्योपोषणं व्रती । द्वादश्यां पारणं कुर्याद्वर्जयित्वा ह्युपोतकीम् ” ॥ इति ।

बृहस्पतिः—

५ “सायमाध्वंतयोरन्होः सायं प्रातश्च मध्यमे । उपवासफलप्रेप्सुर्जह्याद्भुक्तचतुष्टयम् ” ॥ इति ।

नित्योपवासविषयः । नित्योपवासप्रकारमाह कात्यायनः—

“नित्योपवासी यो मर्त्यः सायंप्रातर्भुजिक्रियाम् । वर्जयेन्मतिमान्विप्रः संप्राप्ते हरिवासरे ।

“विशेषनियमाशक्तोऽहोरात्रं भुक्तवर्जितम् । शक्तिमांस्तु पुनः कुर्यान्नियमं सविशेषणम् ” ॥ इति ।

कालादर्शोऽपि—“जह्याद्भुक्तं द्वयं नित्ये काम्ये भुक्तचतुष्टयम् ” ॥ इति ।

१० **उपवासे वर्ज्यानि । उपवासे वर्जनाह विष्णुः**—

“असकृज्जलपानं च दिवा स्वापं च मैथुनम् । तांबूलचर्वणं मांसं वर्जयेद्भुतवासरे ” ॥ इति ।

वसिष्ठः—

“उपवासे तथा श्राद्धे न खादेदन्तधावनम् । दंतानां काष्ठसंयोगो हन्ति सप्त कुलानि च ” ॥ इति ।

दंतधावने प्रायश्चित्तमुक्तं **विष्णुरहस्ये**—

१५ “श्राद्धोपवासदिवसे खादित्वा दंतधावनम् । गायत्र्याः शतसंपूतमंबु प्राश्य विशुध्यति” ॥ इति ।

हारीतः—“पतितपाषंडनास्तिकसंभाषणमन्त्रताश्लीलादिकमुपवासे वर्जयेत् ” ॥ इति ।

विष्णुधर्मः—“असंभाष्यांस्तु संभाष्य तुलस्यतसिकादलम् ॥

“द्वादश्यामच्युतफलमागस्त्यं पत्रमेव वा । आमलक्याः फलं वापि पारणे प्राश्य शुध्यति ” ॥ इति ।

बृहस्पतिः—

२० “दिवा निद्रां परान्नं च पुनर्भोजनमैथुने । क्षौद्रं कांस्यामिषे तैलं द्वादश्यामष्ट वर्जयेत् ॥

“कृत्वा चैवोपवासं तु योऽश्नाति द्वादशीदिने । नैवेद्यं तुलसीमिश्रं हत्याकोटिविनाशनम् ॥

“द्वादश्यामाद्यपादस्तु कीर्तितो हरिवासरः ॥

“महादोषकरं चान्नं संप्राप्ते हरिवासरे । न कार्यं पारणं तत्र विष्णुप्रीणनतत्परैः ” ॥

स्मृत्यन्तरे—“चतुर्मुहूर्तं द्वादश्यामाद्यमेकादशीतिथौ । अन्ते चतुर्मुहूर्तं यत् तत्कालो हरिवासरः” ॥ इति ।

२५ **इत्येकादशीनिर्णयः । द्वादशीनिर्णयः । अथ द्वादशी निर्णयते । सा च पूर्वविद्धा ग्रहीतव्या । तदुक्तं स्कांदे**—

“द्वादशी च प्रकर्तव्या एकादश्या युता विभो । सदा कार्या च विद्वद्भिर्विष्णुभक्तैश्च मानवैः” ॥ इति ।

उत्तरविद्धां प्रतिषेधति बृहद्वसिष्ठः—

“द्वितीया पंचमी चैव दशमी च त्रयोदशी । चतुर्दशी चोपवासे हन्युः पूर्वोत्तरे तिथी ” ॥ इति ।

३० **द्वादश्यां च काम्योपवासो मार्कण्डेयेन दर्शितः**—

“द्वादश्यामुपवासेन सिद्धार्था भूप सर्वशः । चक्रवर्तित्वमतुलं संप्राप्तां अतुलां श्रियम् ” ॥ इति ।

त्रयोदशीनिर्णयः । अथ त्रयोदशी निर्णयते । सा च शुक्लकृष्णपक्षभेदेन व्यवतिष्ठते ।

तत्र शुक्लत्रयोदशी पूर्वविद्धा ग्राह्या । तदुक्तं ब्रह्मकैवर्ते—

“त्रयोदशी प्रकर्तव्या द्वादशीसहिता मुने । भूतविद्धा न कर्तव्या दर्शः पूर्णा कदाचन ” ॥ इति ।

निगमे—

“षष्ठ्याष्टमी अमावास्या कृष्णपक्षे त्रयोदशी । एताः परयुताः पूज्याः पराः पूर्वयुतास्तथा ” ॥ इति ।
अत्र कृष्णपक्ष इति विशेषणात् पूर्वविद्धावचनस्य शुक्लपक्षविषयत्वं परिशिष्यते ।

चतुर्दशीनिर्णयः । अथ चतुर्दशी निर्णयते । वृत्सिंहचतुर्दशी रात्रिव्यापिनी ग्राह्या ।
वृत्सिंहस्य सायंकाले आविर्भावात् ।

“मधुश्रवणमासस्य शुक्ला या च चतुर्दशी । सा रात्रिव्यापिनी ग्राह्या परा पूर्वाह्णगामिनी” ॥ इति
वचनात् । परा अनन्तचतुर्दशी । त्रिमुहूर्तमेव पूर्वाह्णः । तत्र शुक्लचतुर्दशी परविद्धा ग्राह्या ।
तथा व्यासः—“शुक्ला चतुर्दशी ग्राह्या परविद्धा सदा व्रते” इति । नारदीयेऽपि—

“वृत्तीयैकादशी षष्ठी शुक्लपक्षे चतुर्दशी । पूर्वविद्धा न कर्तव्या कर्तव्या परसंयुता” ॥ इति ।

अनन्तव्रतम् । यत्तु भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यामनन्तव्रतमुक्तं भविष्योत्तरे—तत्र ‘दैवे
ह्यौदयिकी ग्राह्या’ इति वचनेन युगमशास्त्रादिभिश्चोदयव्यापिनी ग्राह्या । तत्र तिथ्यन्तरव्रत-
त्रिमुहूर्तव्याप्तिर्मुख्यः कल्पः । द्विमुहूर्तव्याप्तिरनुकल्पः । यत्तु—

“मध्याह्ने भोज्यवेलायां समुत्तीर्य सरित्ते । ददर्श लीला सा स्त्रीणां समूहं रक्तवाससाम् ॥

“चतुर्दश्यामर्चयंतं भक्त्या देवं जनार्दनम्” ॥ इति तत्तु अर्थवादत्वान्न स्वातंत्र्येण
कस्यचिदर्थस्य प्रापकं न चात्र मध्याह्नः कर्मगकालो विहितः । सति प्रमाणांतरे तस्योपोद्धलक-
मर्थवादवाक्यं भवति । न चात्र प्रमाणांतरमस्तीति कालनिर्णये निरूपितम् । कृष्णचतुर्दशी तु
पूर्वयुक्तैव ग्राह्या । तथा चापस्तंबः—

“कृष्णपक्षेऽष्टमी चैव कृष्णपक्षे चतुर्दशी । पूर्वविद्धा तु कर्तव्या परविद्धा न कस्यचित्” ॥ इति ।

शिवरात्रिव्रतनिर्णयः । अथ शिवरात्रिव्रतं निर्णयते । शिवस्य रात्रिः शिवरात्रिरिति
तत्पुरुषसमासेन योगेन प्रवर्तमानः शब्दो रूढ्या माघकृष्णचतुर्दशीरूपे कालविशेषे नियम्यते । २०
शिवप्रिया रात्रिर्यस्मिन्व्रत इति बहुव्रीहिसमासेन योगेन प्रवृत्तः शब्दो रूढ्या व्रतविशेषे नियम्यते ।
यथा पंकजशब्दः पंकाज्जायत इति योगं स्वीकृत्य भेकादीष्वतिप्रसंगो रूढिस्वीकारेण निवार्यते
तद्वद्वापि यौगिकत्वे सति शिवव्रतोपेतेषु त्रयोदश्यादितिथ्यंतरेषु शिवरात्रित्वं प्रसक्तं रूढि-
परिग्रहेण निवार्यते । अतः कालविशेषे व्रतविशेषे च योगरूढोऽयं शिवरात्रिशब्दः ।

तथा च स्कांदे—

“माघस्य कृष्णपक्षे या तिथिश्चैव चतुर्दशी । तस्या रात्रिः समाख्याता शिवरात्रिः शिवप्रिया ॥

“तस्यां सर्वेषु लिंगेषु तदा संक्रमते हरः । यानिकान्यत्र लिंगानि चराणि स्थावराणि च ॥

“तेषु संक्रमते देवि तस्यां रात्रौ यतो हरः । शिवरात्रिस्ततः प्रोक्ता तेन सा हरवल्लभे” ॥ इति ।

कामिकेऽपि—

“माघमास्यसिते पक्षे विद्यते या चतुर्दशी । तद्रात्रिः शिवरात्रिः स्यात्सर्वपुण्यशुभावहा” ॥ इति । ३०

ईशानसंहितायाम्—

“शिवरात्रिव्रतं नाम सर्वपापहरं नृणाम् । आचंडालं मनुष्याणां भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्” ॥ इति ।

अनेनास्य सर्वाधिकारित्वमुक्तम् । तच्च शिवरात्रिव्रतमेकादशीवन्नित्यं काम्यं चैत्युभयविधिम् ।

तत्र नित्यत्वमकरणे प्रत्यवायवीसानित्यशब्दैरवगंतव्यम् ।

ते च स्कांदे पठ्यन्ते— “ परात्परतरं नास्ति शिवरात्रिः परात्परा ।

“ न पूजयंति भक्त्येशं रुद्रं त्रिभुवनेश्वरम् । जंतुर्जन्मसहस्रेण भ्रमते नात्र संशयः ॥

“ वर्षे वर्षे महादेवि नरो नारी पतिव्रता । शिवरात्रौ महादेवं कामं भक्त्या प्रपूजयेत् ॥

“ माघकृष्णचतुर्दश्यां यः शिवं संशितव्रतः । मुमुक्षुः पूजयेन्नित्यं स लभेतेप्सितं पदम् ” ॥ इति ।

५ काम्यत्वं च फलश्रवणादवगंतव्यम् । तच्च स्कांदे पठ्यते—

“ शिवं च पूजयित्वा यो जागर्ति च चतुर्दशीम् । मातुः पयोधररसं न पिबेत्स कदाचन ॥

“ सर्वान्भुक्त्वा महाभोगान्स मृतो न प्रजायते ” ॥ इति ।

काम्यव्रतस्येशासनसंहितायां वर्षसंख्या पठ्यते—

“ एवमेतत् व्रतं कुर्यात् प्रतिवत्सरं प्रति । द्वादशाब्दिकमेतत्स्याच्चतुर्विंशाब्दिकं तु वा ॥

१० “ सर्वान्कामानवाप्नोति प्रेत्य चेह च मानवः ” ॥ इति ।

उपवासे जागरणं पूजा चेति त्रयं समप्राधान्येन व्रतस्वरूपम् । तदुक्तं नागरखंडे—

“ उपवासप्रभावेन बलादपि च जागरात् । शिवरात्रेस्तथा तत्र लिंगस्यापि प्रपूजनात् ॥

“ अक्षयांलभते भोगाच्छिवसायुज्यमाप्नुयात् ” ॥ इति ।

यत्तु स्कांदपुराणे द्वयमेकैकं वा पठ्यते “ अथवा शिवरात्रिं च प्रजा जागरणैर्नयेत् ।

१५ “ अखंडितव्रतो यो हि शिवरात्रिमुपोषयेत् । सर्वान्कामानवाप्नोति रुद्रेण सह मोदते ॥

“ कश्चित्पुण्यविशेषेण व्रतहीनोऽपि यः पुमान् । जागरं कुरुते तत्र स रुद्रसमतां व्रजेत् ॥

“ यः पूजयति भक्त्येशमेकफलतां व्रजेत् ” ॥ इति तत् अथवेत्यनुकल्पोपक्रमादशक्तविषयम् ।

प्रदोषनिशीथवेधावत्र ग्राह्यौ । प्रदोषवेधो वायुपुराणे दर्शितः—

“ त्रयोदश्यस्तगे सूर्यं चतसृष्वेव नाडिषु । भूतविद्धा तु या तत्र शिवरात्रिव्रतं चरेत् ” ॥ इति ।

२० कामिकेऽपि—

“ आदित्यास्तमये काले त्वस्ति चेद्या चतुर्दशी । तद्रात्रिः शिवरात्रिः स्यात्सा भवेदुत्तमोत्तमा ” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरेऽपि

“ प्रदोषव्यापिनी ग्राह्या शिवरात्रिश्चतुर्दशी । रात्रौ जागरणं यस्मात्तस्मात्तां समुपोषयेत् ” इति ॥

निशीथवेधो नारदीयसंहितायां दर्शितः—

२५ “ अर्धरात्रियुता यत्र माघकृष्णचतुर्दशी । शिवरात्रिव्रतं तत्र सोऽश्वमेधफलं लभेत् ” ॥ इति ।

ईशानसंहितायाम्—

“ पूर्वयुरपरेयुर्वा महानिशि चतुर्दशी । व्याप्ता सा दृश्यते यस्यां तस्यां कुर्याद्व्रतं नरः ॥

“ मम प्रियकरी हेषा माघकृष्णचतुर्दशी । महानिश्यन्विता यत्र तत्र कुर्यादिदं व्रतम् ” इति ॥

एवं च सति पूर्वयुरेव वाऽपरेयुरेव वा यत्र प्रदोषनिशीथोभयव्याप्तिः तत्र व्रतमाचरणीयम् ।

३० तथा च स्कांदे—

“ त्रयोदशी यदा देवि दिनमुक्तिप्रमाणतः । जागरे शिवरात्रिः स्यान्नशि पूर्णा चतुर्दशी ॥

“ निशाद्वये चतुर्दश्यां पूर्वा त्याज्या शुभान्विता ” ॥ इति दिनमुक्तिरस्तमयः । दिनद्वयेऽप्युभय-

व्याप्तिस्तु न संभाव्यते । यामद्वयवृद्ध्यभावात् । दिनद्वयेऽप्युभयव्याप्त्यभावाऽपि न संभवति

यामद्वयक्षयस्याभावात् । एकैकस्मिन्दिने यथैकैकव्याप्तिः तत्र पूर्वेष्वुनिशीथव्याप्तिः परेषुः प्रदोषव्याप्तिरित्यत्रैकैकव्याप्तेर्दिनद्वये समानत्वेऽपि जयायोगस्य प्रशस्तत्वाद्दर्शयोगस्य निमित्तत्वाच्च पूर्वेष्वुरेवोपवासः । त्रयोदशीयोगप्राशस्त्यं दर्शयोगनिंदा च स्कांदे पठ्यते—

“कृष्णाष्टमी स्कंदषष्ठी शिवरात्रिश्चतुर्दशी । एताः पूर्वयुताः कार्याः तिथ्यन्ते पारणं भवेत् ॥

“महतामपि पापानां दृष्ट्वा वै निष्कृतिः पुरा । न दृष्ट्वा कुर्वतां पुंसां दर्शयुक्तां तिथिं पराम्” ॥ इति । ५

यदा पूर्वेष्वुनिशीथादूर्ध्वं प्रवृत्ता चतुर्दशी परेषुः क्षयवशात् निशीथादवर्गिव समाप्ता तदा पूर्वेष्वुः प्रदोषनिशीथव्याप्त्योरुभयोरप्यसंभवात्परेषुः प्रदोषव्याप्तेरेकस्याः संभवाच्च परविद्भैव ग्राह्या । एतदेवाभिप्रेत्य स्मर्यते—

“माघासिते भूतदिनं कदाचिदुपैति योगं यदि पंचदश्याः ।

“जयाप्रयुक्तां न तु जातु कुर्यात् शिवस्य रात्रिं प्रियकृच्छिवस्य” ॥ इति । १०

यदा पूर्वेष्वुः प्रदोषादूर्ध्वं प्रवृत्ता चतुर्दशी परेषुः क्षयवशात्प्रदोषादवर्गिव समाप्ता तदा परेष्वुव्याप्ति-
द्वयाभावात् पूर्वेष्वुनिशीथव्याप्तेः सद्भावेन जयायोगाच्च पूर्वेष्वुरेवोपवासः ।

अत्रायं विवेकः—दिनद्वयेऽपि निशीथव्याप्तौ तदव्याप्तौ च प्रदोषव्याप्तिर्नियामिका । तथा दिनद्वयेऽपि प्रदोषव्याप्तौ तदव्याप्तौ च निशीथव्याप्तिर्नियामिका । एकैकस्मिन्दिने एकैक-
व्याप्तौ जयायोगो नियामक इति । १५

वारविशेषेण योगविशेषेण च युक्ता त्रिस्पृशी च शिवरात्रिः प्रशस्ता । तथा च स्कांदे—

“माघकृष्णचतुर्दश्यां रविवारो यदा भवेत् । भौमो वाऽथ भवेद्देवि कर्तव्यं व्रतमुत्तमम् ॥

“शिवयोगस्य योगो वै तद्भवेदुत्तमोत्तमम् । त्रयोदशी कलाऽप्येका मध्ये चैव चतुर्दशी ।

“अंते चैव सिनीवाली त्रिस्पृश्यां शिवमर्चयेत्” ॥ इति । ननु यदा पूर्वविद्धायामुपवासः तदा परेषुः किं तिथ्यंते पारणं उत तिथिमध्ये । शास्त्रं तु पक्षद्वयेऽपि समानम् । तत्र तिथ्यंते पारण- २०
वचनानि पूर्वोदाहृतानि । तिथिमध्ये पारणवचनं तु स्कांदे पठ्यते—

“उपोषणं चतुर्दश्यां चतुर्दश्यां तु पारणम् । कृतैः सुकृतलक्षैश्च लभ्यते वाऽथ वा न वा ।

“ब्रह्मांडोदरमध्ये तु यानि तीर्थानि संति वै । संस्थितानि भवन्तीह भूतायां पारणे कृते ।

“तिर्थानामेव सर्वासामुपवासव्रतादिषु । तिथ्यंते पारणं कुर्याद्विना शिवचतुर्दशीम्” ॥ इति ।

बाढं अस्ति द्विविधं शास्त्रम् । तस्य च द्विविधशास्त्रस्य प्रतिपत्प्रकरणोक्तन्यायेन व्यवस्था द्रष्टव्या । २५

यदा यामत्रयादवर्गिव चतुर्दशी समाप्यते तदा तिथ्यंते पारणम् । यदा चतुर्दशी यामत्रयमति-
क्रामति तदा चतुर्दशीमध्ये पूर्वाह्णे पारणं कुर्यात् । इति शिवरात्रिनिर्णयः ।

पञ्चदशीनिर्णयः । अथ पंचदशी निर्णीयते । सा च व्रतादौ परविद्भैव ग्राह्या । तृतीया च
ब्रह्मकैवर्ते—

“भूतविद्धा न कर्तव्या अमावास्या च पूर्णिमा । वर्जयित्वा मुनिश्रेष्ठ सावित्रीव्रतमुत्तमम्” ॥ इति ३०
स्कांदेऽपि—

“भूतविद्धा सिनीवाली न तु तत्र व्रतं चरेत् । वर्जयित्वा तु सावित्रीव्रतं तु शाखिवाहनम्” ॥ इति
सावित्र्या राजकन्याया चीर्णं सावित्रीव्रतम् । तच्च भविष्योत्तरे दर्शितम्—

“कथयामि कुलस्त्रीणां महिम्नो वर्णनं परम् । यथा चीर्णं व्रतं पूर्वं सावित्र्या राजकन्याया” ॥ इति ।

तच्च पौर्णमास्याममावास्यायां च विहितम् । तस्मिन्व्रते पूर्वविद्धा ग्राह्या । ३५

एतदेवाभिप्रेत्य नारदीये—

“दृशी च पौर्णमासं च पितुः सांवत्सरं दिनम् । पूर्वविद्धामकुर्वाणो नरकं प्रतिपद्यते ” ॥ इति ।
दर्शादिश्राद्धकालः श्राद्धकांडे निरूपितः* ।

इष्टिकालनिर्णयः । इष्टिकालस्तु निर्णीयते । अत्र गोभिलः—

५ “पक्षांता उपवस्तव्याः पक्षादयो हि यष्टव्याः” इति । अत्रोपवासशब्देनाग्न्युपस्तरणं विवक्षितम् ।
तस्मिन्क्रियमाणे यजमानसमीपे देवतानां निवासात् । तथा च श्रुतिः (तै. सं. १।६।७)—
“उपास्मिञ्छ्वो यक्ष्यमाणे देवता वसन्ति एवं विद्वानग्निमुपस्तृणाति ” ॥ इति । उपवासशब्दा-
भिधेयाग्न्युपस्तरणांतस्य पूर्वदिनकर्तव्यस्यान्वाधानादेश्चतुरंशवति पर्वणि आद्यास्त्रयोऽंशाः कालाः
पर्वणश्चतुर्थोऽंशः प्रतिपद आद्यास्त्रयोऽंशाश्च यागस्य कालः । तदाह लोकाक्षिः—

१० “त्रिंशानौपसथ्यस्य यागस्य चतुरो विदुः । द्वावंशावत्सृजेदंत्यौ यागे च व्रतकर्मणि ” ॥ इति ।
यागकालं यज्ञपार्श्वोऽप्याह—

“पंचदश्याः परः पादः पक्षादेः प्रथमास्त्रयः । कालः पार्वणयागे स्यादथांते तु न विद्यते ” ॥ इति ।
वृद्धशातातपोऽपि—

“पर्वणो यश्चतुर्थोऽंश आद्याः प्रतिपदस्त्रयः । यागकालः स विज्ञेयः प्रातरुक्तो मनीषिभिः ” ॥ इति ।
१५ अत्र प्रातरिति विशेषणत्वात् “सूर्योदयस्योपरि मुहूर्तत्रयं यागस्य मुख्यः कालः” इति कालनिर्णये ।
प्रतिपदश्चतुर्थांशं निषेधति कात्यायनः—

“न यष्टव्यं चतुर्थेऽंशे यागैः प्रतिपदः क्वचित् । रक्षांसि तद्विलुपन्ति श्रुतिरेषा सनातनी” ॥ इति ।
यदा पर्वप्रतिपदाबुदयमारभ्य संपूर्णतिथी भवतः तदा न कोऽपि संदेहः । यदा तु खंडतिथी तदा
निर्णयमाह गोभिलः—

२० “आवर्तने यदा संधिः पर्वप्रतिपदोर्भवेत् । तदर्हयाग इष्ट्येत परतश्चेत्परेऽहनि ॥
“पर्वप्रतिपदोः संधिरवागावर्तनाद्यदि । तस्मिन्नहनि यष्टव्यं पूर्वेषुस्तदुपक्रमः ॥
“आवर्तनोत्तरः संधिर्यदि तस्मिन्नुपक्रमः । परेषुरिष्टिरित्येष पर्वद्वयविनिश्चयः ” ॥ इति ।

लोकाक्षिरपि—

“पूर्वाह्णे वाऽथ मध्याह्ने यदि पर्व समाप्यते । उपोष्य तत्र पूर्वेषुस्तदहर्याग इष्ट्यते ॥
२५ “अपराणहेऽथ वा रात्रौ यदि पर्व समाप्यते । उपोष्य तस्मिन्नहनि श्वोभूते याग इष्ट्यते ” ॥ इति ।
अन्हो मध्यं मध्याह्न इति व्युत्पत्तेरावर्तनमत्र मध्यान्हशब्देनाभिधीयते । एवमपराह्ण-
शब्दोऽप्यत्र यौगिकः । न तु पंचधाविभागमाश्रित्य प्रवृत्तः । अत एव गोभिलेनावर्तनशब्दः
प्रयुक्तः । शातातपोऽपि—

“पूर्वाह्णे मध्यमे वापि यदि पर्व समाप्यते । तदोपवासः पूर्वेषुः तदहर्याग इष्ट्यते ” ॥ इति ।
३० अह्नः पूर्वो भागः पूर्वाह्णः । अन्होऽपरो भागोऽपराणहः । अतस्ताभ्यां शब्दाभ्यामावर्तनात्
पूर्वोत्तरभागावाभिधीयते कालादर्शोऽपि—“पूर्वप्रतिपदोः संधिर्मध्याह्ने पूर्वतोऽपि वा ।
“अन्वाधानं पूर्वदिने तद्दिने याग इष्ट्यते । परतश्चेत्परेऽह्निः स्यादह्निः स्यादह्निर्भवेत् ” ॥ इति ।
वाजसनेयिनां पौर्णमास्यां विशेष उक्तस्तत्रैव—

“आवर्तनादधः संधिर्यद्यन्वाधाय तद्दिने । परेषुरिष्टिरित्याहुर्विप्रा वाजसनेयिनः ” ॥ इति ।

यदि मध्याह्नात्पूर्वं संधिः स्यात् तदा संधिदिने अन्वाधाय परेद्युरिष्टिः कार्येति वाजसनेयिमतानुवर्तिन आहुरित्यर्थः । तदाह भाष्यार्थसंग्रहकारः—

“ मध्यंदिनात्स्यादहनीह यस्मिन् प्राक्पर्वणः सन्धिरियं तृतीया ।

“ सा खर्विका वाजसनेयिमत्यास्तस्यामुपोष्याथ परेद्युरिष्टिः ” ॥ इति । आवर्तनादूर्ध्वमस्तमयादूर्वाग्यदा संधिर्भवति तदा संधिमती तिथिः प्रथमा रात्रौ संधिश्चेत्सा तिथिर्द्वितीया । ५ ते उभे अपेक्ष्य पूर्वाणहे संधिमतीतिथिस्तृतीया । तत्र पूर्वकालस्याल्पत्वात्सारवर्तिकेत्युच्यते । एवं च सति वाजसनेयिनां न कापि संधिदिनात्पूर्वेद्युरन्वाधानादिकमस्ति । वाजसनेयिव्यतिरिक्तानामावर्तने ततः पूर्वं वा यदा संधिर्भवति तदा संधिदिने पूर्वचतुर्थांशे इष्टिर्भवति । तत्र विशेषमाह गर्गः—

“ प्रतिपद्यप्रविष्टाय यदि चेष्टिः समाप्यते । पुनः प्रणीय कृत्स्नेष्टिः कर्तव्या यागवित्तमैः ” ॥ इति । १० पर्वणश्चतुर्थोऽशप्रतिपदत्रयोऽशाश्च यागकालत्वेन विहिताः । तत्र पर्वचतुर्थांशस्य विषय उदाहृतः । प्रतिपदंशानां तु विषय उदाह्रियते । उषःकाले सन्धौ प्रतिपदः प्रथमांशो यागकालः । निशीथे संधौ द्वितीयांशः । रात्रिप्रारंभे संधौ तृतीयांशः । नन्वनेन न्यायेनापराह्णे संधौ प्रतिपच्चतुर्थांशस्य यागकालत्वं प्राप्नोति । तच्च प्रतिषिद्धं ‘ न यष्टव्यं चतुर्थांशः ’ इति स्मृतेः । अतस्तादृशे विषये याग एव लुप्यते इति चेन्मैवम् । वृद्धशातातपेन प्रतिप्रसवाभिधानात्— १५

“ संधिर्यद्यपराह्णे स्याद्यागं प्रातः परेऽहनि । कुर्वाणः प्रतिपद्भागे चतुर्थेऽपि न दूष्यति ” ॥ इति । कालादर्शेऽपि—

“ चतुर्थः पर्वणो योऽशो येंऽशाः प्रतिपदस्त्रयः । आद्यास्तस्याश्चतुर्थोऽपि यागकाल उदाहृतः ” ॥ इति तस्याः प्रतिपदः चतुर्थोऽप्यंशो यागकाल इत्यर्थः । एवं तर्हि चतुर्थांशे यागप्रतिषेधो निर्विषयः स्यादिति चेन्मैवम् । सद्यःकालविषये चरितार्थत्वात् । तं च विषयं दर्शयति कात्यायनः— २०

“ संधिश्चेत्संगवादूर्ध्वं प्राक्चेदावर्तनाद्रवेः । सा पौर्णमासी विज्ञेया सद्यःकालविधौ तिथिः ” ॥ इति । भाष्यार्थसंग्रहकारोऽपि—

“ अन्वाहितश्चास्तरणोपवासः पूर्वेष्वुरेते खलु पौर्णमास्याम् ।

“ आवर्तनात्प्राग्यदि पर्वसंधिः सद्यस्तदा वा क्रियते समस्तम् ” ॥ इति । कालादर्शेऽपि—

“ पूर्णिमा प्रतिपत्संधिः यदि संगवमंतरा । आवर्तनं च स्यात्तर्हि सद्यस्कालविधिर्भवेत् ” ॥ इति । २५ आपस्तम्बोऽपि—“ पौर्णमास्यां त्वन्वाधानपरिस्तरणोपवासः सद्यो वा सद्यःकालायां सर्वं क्रियते ” इति । संगवावर्तनयोर्मध्ये पौर्णमासी प्रतिपदोः संधौ सति संधिदिनात्पूर्वेद्युर्वा अन्वाधानादिपरिस्तरणांतं संधिदिने वा अन्वाधानादिकं सर्वं क्रियत इत्यर्थः । एवं सति प्रतिपच्चतुर्थांशप्रतिषेधवचनमत्र विषये सावकाशम् । विकृतिरूपाया इष्टेस्तु कालमाह कात्यायनः—

“ आवर्तनात्प्राग्यदि पर्वसंधिः कृत्वा तु तस्मिन्प्रकृतिं विकृत्याः ।

३०

“ तत्रैव यागः परतो यदि स्यात्तस्मिन्विकृत्या प्रकृतेः परेद्युः ” ॥ इति । आवर्तने ततः पुरा वा पर्वसंधौ तस्मिन्संधिदिने प्रथमं प्रकृतियागं कृत्वा पश्चाद्विकृतेः संबन्धि यागः कर्तव्यः । यदि आवर्तनात्परतः संधिः तदा केवलविकृतियागः संधिदिने कर्तव्यः । प्रकृतियागस्तु केवलसंधिदिनात्परेद्युरनुष्ठेय इत्यर्थः । आवर्तने ततः पूर्वकाले ततः परकाले वा संधिरित्येतेषु त्रिष्वपि पक्षेषु संधिदिन एव विकृतेरनुष्ठानं प्रकृतेस्तु पूर्वोक्तरीत्या संधिदिने परेद्युश्चानुष्ठानं व्यवतिष्ठते । ३५

तदेवं संपूर्णतिथौ इष्टिपशुसोमविकृतीनां केवलपूर्वैव कालः । खंडतिथौ तु पूर्वोक्तः कालः । तदेतदापस्तंब आह “यदीष्ट्या यदि पशुना यदि सोमेन यजेतामावास्यायां पौर्णमास्यां वा यजेत” ॥ इति । पर्वप्रतिपदोः संधिमुपजीव्यान्वाधानेष्टिकालौ व्यवस्थापितौ । अत्र तिथिक्षय-वृद्धयोः सन्धिविषयं कंचिद्विशेषमाह कात्यायनः—

- ५ “परेऽन्हि घटिका न्यूनास्तथैवाभ्यधिकास्तु याः । तदर्धकृप्त्या पूर्वस्मिन् हासवृद्ध्या प्रकल्पयेत्” ॥ इति ।
लोकाक्षिरपि—“ तिथेः परस्या घटिकास्तु या स्युर्न्यूनास्तथा वाऽभ्यधिकास्तु तासाम् ।
“अर्थं वियोज्यं च तथा प्रयोज्यं न्हासे च वृद्धौ प्रथमे दिने स्यात्” ॥ इति ।

कालादर्शेऽपि—

- “पर्वणि क्षयगे वृद्धौ परस्यान्हः क्षयोजिती । अर्धकृप्त्या यथान्यायं दिने पूर्वत्र योजयेत्” ॥ इति ।
१० पर्वणि पूर्णिमायाममायां च क्षयगे क्षयगामिनि सति वृद्धौ वृद्धिगामिनि सति परस्याह्नः प्रतिपदः क्षयोजिती न्हासवृद्धौ अर्धकृप्त्या अर्धकल्पनेन यथान्यायं यथासंख्यक्रमेण पूर्वत्रदिने योजये-
दित्यर्थः । पूर्वेषु पूर्णिमा अमावास्या वा पंचदशघटिका परेषु प्रतिपदपि तावती तदा यथास्ति
तामेवोपजीव्य सन्धिविज्ञेयः । यदा तु प्रतिपदि षड्घटिकाः क्षीयन्ते तदा घटिकात्रयक्षयः पर्वणि
योजनीयः । तस्मिन् योजने द्वादशघटिकामावस्या भवति । अनेन न्यायेन षड्घटिकावृद्धौ
१५ घटिकात्रये योजिते अष्टादशघटिका अमावास्या भवति । तथा सत्यावर्तनादूर्ध्वं संधिर्भवति ।
तदेवं संधिं विज्ञाय तदनुसारेणान्वाधानेष्टी अनुष्ठातव्ये ।

बोधायनमतानुसारिणाममावास्यायां विशेषः । बोधायनकात्यायनमतानुसारिणा-
ममावास्यायां विशेषमाह कात्यायनः—

- “सिनीवालयपराह्णे चेदृगापस्तंबसामिनाम् । सायाह्णे द्वित्रिनाडी चेत्सा बोधायनकण्वयोः” ॥ इति ।
२० श्राद्धेऽप्येवमेव तिथिर्ग्राह्या । यतः स एवमाह—
“चतुर्दशीदिनांते तु चतुस्त्रिघटिका यदि । अमाभूते च कर्तव्यं श्राद्धं वाजसनेयिभिः” ॥ इति ।
कालनिर्णये—“अस्तमयादर्वाकृ स्वल्पामावास्योपेतायामपि चतुर्दश्यां श्राद्धान्वाधाने कर्तव्ये” इति ।
एतच्च तिथिसाम्ये द्रष्टव्यम् । तिथिक्षये तु अस्तमयात्परं चतुर्दश्यनुवृत्तावपि तस्मिन्नेव दिने
श्राद्धान्वाधाने । तथा च बोधायनः—

- २५ “चतुर्दशी तु संपूर्णा द्वितीया क्षयकारिणी । चरुरिष्टिरमायां स्याद्भूते कव्यादिका क्रिया” ॥ इति ।
अस्यार्थः—चतुर्दशी संपूर्णा अस्तमयपर्यंतवर्तिनी अधिका वा द्वितीया क्षयकारिणी प्रतिपदिने
सायाह्नवर्तिनी अत्रामायां चरुः स्थालीपाक इष्टिश्च स्याद्भूते चतुर्दश्यां कव्यादिका श्राद्धान्वाधाने
इत्यर्थः । स एव—

- “चतुर्दशीचतुर्यामि त्वमावास्या न दृश्यते । श्वोभूते प्रतिपद्यत्र भूते कव्यादिका क्रिया” ॥ इति ।
३० अस्यार्थः—चतुर्दशीदिनचतुर्थयामे अमावास्या न दृश्यते श्वोभूते अमावास्यायामस्तमयात्प्रागेव
प्रतिपद् दृश्यते । तदा भूते चतुर्दश्यां कव्यादिका क्रियेत्यर्थः । स्मृत्यन्तरेऽपि—

“अमायां तु दिवा युक्ता प्रतिपद्धटिकाऽपि वा । तत्रैवैष्टिसमाप्तिः स्यात्तिथिवृद्धिर्भवेन्न चेत्” ॥ इति ।
“द्वितीयास्तमये काले घटिकैकाऽपि दृश्यते । अत्र यागं न कुर्वति विश्वेदेवाः पराङ्मुखाः ॥

“द्वितीया तु दिवा युक्ता नाड्येका प्रतिपत्तिथौ । अमावास्या चतुर्थेऽंशे यागस्तत्र समाप्यते” ॥ इति ।
पूर्वेद्युन्वाधानं अमावास्यायां यागसमाप्तिरित्यर्थः । बोधायनः—

“यदा चतुर्दशीयामं तुरीयमनुपूरयेत् । अमावास्या क्षीयमाणा तदैव श्राद्धमाचरेत्” ॥ इति ।
अस्यार्थः—चतुर्दश्यास्तुरीयं यामं यदा अमावास्या अनुपूरयेत् स्पृशेत् सा च पुनः क्षीयमाणा परेद्युः
चतुर्थ्यामे प्रतिपद्युका तदैव अमावास्यास्पृष्टचतुर्दशीदिन एव श्राद्धान्वाधाने कुर्यादित्यर्थः । ५
बोधायनवृद्धशातातपौ—

“द्वितीया त्रिमुहूर्ता चेत्प्रतिपद्याऽपराह्निकी । अन्वाधानं चतुर्दश्यां परतः सोमदर्शनात्” ॥ इति ।
प्रतिपद्दिने सोमदर्शनादमायामिष्टिरित्यर्थः । कालादर्शेऽपि—

“द्वितीया त्रिमुहूर्ता चेत् प्रतिपद्यापराह्निकी । भूतेन्वाहतिरिष्टिस्तु श्वश्वन्द्रस्य दर्शनात्” ॥ इति ।
प्रतिपद्यस्तमयात्पूर्वं द्वितीया त्रिमुहूर्ता चेत्तदा भूते चतुर्दश्यामन्वाधानं इष्टिस्तु श्वः चतुर्दश्याः १०
परेद्युर्भवेत् । तस्माच्छ्वश्वन्द्रस्य दर्शनात् चतुर्दश्युत्तरदिने चन्द्रस्य दर्शनात् तत्रेष्टिर्न कर्तव्येत्यर्थः ।
त्रिमुहूर्तेति घटिकामात्रस्याप्युपलक्षणम्—

“अर्वागस्तमयाद्यत्र द्वितीया घटिका भवेत् । तत्र यागं न कुर्वीत तदा चन्द्रस्य दर्शनात्” ॥ इति स्मृतेः ।
चन्द्रदर्शनराहित्यमेवाभिप्रेत्य बोधायनकारिकासु पठ्यते—

“इष्टेरलं प्रतिपदोऽन्हि तदैव नाड्यः सप्ताष्ट वा यत्र भवन्ति तस्मात् ।

१५

“क्षीणासु नाडीषु दिनस्य पूर्वः कल्पोऽथ वृद्धौ तु भवेत् द्वितीया” ॥ इति । अयमर्थः—अमा-
वास्यातिथेः संबंधिनीषु नाडीषु क्षीणासु सतिषु तस्मिन्दिने अस्तमयात्पूर्वं प्रतिपदः संबंधिन्यो
नाड्यः सप्ताष्ट वा यदि भवन्ति तदा तद्दिनमिष्टेरलं योग्यम् । सोऽयमेकः पक्षः । अमावास्याप्रतिपदौ
यदा वर्धते अस्तमयात्परं प्रतिपदमनुवर्तते तदा द्वितीयः कल्पो भवेत् । अमावास्यायामन्वाधाय
सोमदर्शनराहिते प्रतिपद्दिने यागः कर्तव्य इति । एवं च तिथिबुद्धिप्रक्रमे चतुर्दश्यामस्तमयात्पूर्वं २०
ममावास्यायोगे अमावास्यायां चास्तमयात्पूर्वं प्रतिपद्योगे च प्रतिपद्दिने अस्तमयात्परं प्रतिपदनु-
वृत्तौ तिथिवृद्धिर्भवेन्न चेदिति पूर्वोक्तवचनात् प्रतिपद्युतामावास्यायामन्वाधानं प्रतिपदि यागः
कर्तव्यः । तिथिसाम्ये तिथिक्षये च चतुर्दश्यामन्वाधानं पर्वणि यागः । स्मृत्यंतरेऽपि—

“आदित्येऽस्तमिते चंद्रः प्रतीच्यामुदियाद्यदा । प्रतिपद्यतिपत्तिः स्यात्पंचदश्यां यजेत्तदा ॥

“अमावास्याऽस्य पूर्वेषुः अहर्षेणुः प्रशस्यते । दृष्टचंद्रेण कर्तव्यो यागस्तत्र परेऽहनि ॥” २५

“दृष्टचंद्रदिने चेत्स्याद्देवा यांति पराङ्मुखाः” ॥ इति । प्रतिपद्दिने अस्तमयात्पूर्वं
घटिकामात्रद्वितीयासंभवे चन्द्रस्य दर्शनात् तत्र यागो न कर्तव्य इत्यर्थः ।

कात्यायनोऽपि—“अन्वाधानं भूततिथ्यां तु कुर्यात्सायादौ चेत्संप्रविष्टा द्वितीया ।

“तस्यां तिथ्यां दर्शनात्प्रत्यगिदोः पर्वण्युक्तो यागकालो नितांतः” ॥ इति ।

वृद्धवासिष्ठः—

३०

“इंदौ निरुते हविषि पुरस्तादुदिते विधेः । यद्वैगुण्यं हुते तस्मिन्पश्चादपि हि तद्भवेत्” ॥ इति ।

अयमर्थः—संपूर्णचतुर्दश्यामविचारेणामावास्याबुद्धिं कृत्वा हविर्निर्वीप कृते तस्मिन्दिने उषः-
कालेः पूर्वस्यां दिशि चंद्रमा उदेति तदा दर्शकालस्याप्राप्तत्वात्कालापराधं निमित्तीकृत्य दर्शदेवता
अपनीय दात्रादिगुणविशिष्टान्यग्न्यादिदेवतांतराण्युद्दिश्य यागो विहितस्तैत्तिरीयब्राह्मणे-

“ यस्य हविर्निरुप्तं पुरस्ताच्चंद्रमा अभ्युदेति त्रेधा तंडुलान्निभजेधे मध्यमाः स्युस्तानग्रये दात्रे पुरोडाशमष्टाकपालं कुर्यात् ” इत्यादिना (तै. सं. २।५।५) । सोऽयं दृष्टान्तः । हविषि निरुप्ते सति तत ऊर्ध्वं पूर्वस्यां दिशि चंद्रमस्यभ्युदिते यद्वैगुण्यं तदेव वैगुण्यं होमदिने पश्चिमदिशि चंद्रोदये भवतीति । एतदेव बोधायनमतमुपोद्धलयति श्रुतिः—“यस्मिन्नहनि पुरस्तात्पश्चात्सोमो न दृश्यते

५ तदहर्हजेत ” इति । चंद्रदर्शनेपेतायां शुक्लप्रतिपदि यागानुष्ठाने प्रायश्चित्तमाह कात्यायनः—

“यजनीयेऽन्हि सोमश्चेत् वारुण्यां दिशि दृश्यते । तत्र व्याहृतिभिर्हुत्वा दंडं दद्यात् द्विजातयः” ॥ इति । यत्तु बोधायनवचनम्—

“ मध्याह्नात्परतो यत्र चतुर्दश्यनुवर्तते । सिनीवाली तु सा ज्ञेया पितृकार्ये तु निष्फला ” ॥ इति तद्बोधायनीयव्यतिरिक्तविषयम् । अन्यथा पूर्वोक्तवचननिचयविरोधः स्यात् । पौर्णमासे

१० बोधायनमतावलंबिनां विशेषादर्शनात् वाजसनेयिनामेव विशेषदर्शनात् वाजसनेयिव्यतिरिक्तानां सर्वेषां पूर्वोक्त एव प्रकारोऽवगंतव्यः । इति इष्टिनिर्णयः—

नक्षत्रादिनिर्णयः । अथ नक्षत्रादिनिर्णयः । तत्र मार्कंडेयः—

“ तन्नक्षत्रमहोरात्रं यस्मिन्नस्तमितो रविः । यस्मिन्नुदेति सविता तन्नक्षत्रं दिनं भवेत् ” ॥ इति । अयमर्थः—द्विविधो नक्षत्रसंबंधिकालविशेषः । अहोरात्रौ दिनं च । अनुष्ठेयं कर्मापि द्विविधम् ।

१५ अहोरात्रसाध्यं दिनसाध्यं च । उपवासैकभक्तादिकमहोरात्रसाध्यम् । यद्यप्यल्पकालनिष्पाद्यं भोजनमेकभक्तनक्तयोः स्वरूपं तथाप्यहोरात्रे भोजनांतरस्य एकभुक्तादिनिघातितया भोजनांतर-परित्यागसहितस्यैव भोजनस्यैकभक्तादिस्वरूपत्वादहोरात्रसाध्यत्वं विरुद्धम् । दानव्रतश्राद्धा-नामहन्त्येव कर्तव्यतया दानादिकं दिनसाध्यम् । तत्रोपवासादौ निशीथव्यापि अस्तमयव्यापि वा नक्षत्रं ग्राह्यम् । व्रतदानादौ तु सूर्योदयव्यापि नक्षत्रं ग्राह्यमिति । तदुक्तं स्कान्दपुराणे—

२० “ तत्रैवोपवसेदृक्षे यन्निशीथे यदा भवेत् । उपोषितव्यं नक्षत्रं यस्मिन्वास्तमियाद्रविः ॥

“ उपवासे यदृक्षं स्यात् तद्धि नक्तैकभुक्तयोः ” ॥ इति । अस्तमययोगो मुख्यः । निशीथ-योगोऽनुकल्पः । विष्णुधर्मोत्तरे—

“ सा तिथिस्तच्च नक्षत्रं यस्मिन्नभ्युदितो रविः । तथा कर्माणि कुर्वीत हासवृद्धी न कारणम् ” ॥ इति ।

एतदुपवासाव्यतिरिक्तव्रतादिविषयम् । यद्यप्यत्र सूर्योदयकाले नक्षत्रसद्भावमात्रं प्रतीयते न तु परिमाण-

२५ विशेषः तथापि त्रिमुहूर्तपरिमाणस्य तिथिषु कृत्तत्वात् तन्न्यायेनोदये ‘ त्रिमुहूर्तस्थं नक्षत्रं व्रत-दानयोः ’ इति वचनेन चोदयादित्रिमुहूर्तव्यापि नक्षत्रं ग्राह्यम् । नक्षत्रश्राद्धे तु अपराह्नस्य पार्वण-श्राद्धकालत्वेन तद्व्यापिराश्रयणीया । एवं विष्कम्भादियोग उपवासादौ अस्तमयव्यापी ग्राह्यः । दानव्रतयोरुदयादित्रिमुहूर्तव्यापी ग्राह्यः । श्राद्धे तु कर्मकालव्यापी ग्राह्यः । एवं बवादिकरणानां तिथ्यर्थपरिमितत्वेन दिनद्वयव्यापित्वसंदेहाभावादुदयेऽस्तमये वा यस्मिन्दिने करणसद्भावस्तस्मि-

३० न्नैव दिने तत् कर्मानुष्ठेयम् । संक्रांतिग्रहणादिकालो नैमित्तिकस्नानादिप्रकरणे निरूपितः । ॥

इति वैद्यनाथदीक्षितविरचे स्मृतिमुक्ताफले कालनिरूपणं नाम पंचमः परिच्छेदः

तिथिनिर्णयकाण्डः समाप्तः ॥ हरिः ओम् ।

(श्रीयवतेश्वरार्पणमस्तु । शके १७६७ विश्वावसूनामाब्दे भाद्रपदकुष्णदशम्यां भृगुवासरे तद्दिने इदं पुस्तकं यवतेश्वरस्थशङ्करनारायणद्रविडेन लिखितम् । स्वार्थपरार्थं च । यदक्षरप)

प्रायश्चित्तकाण्डः षष्ठः ।

॥ शुभमस्तु ॥

श्रीरामचरणाम्भोजलीनमानसषट्पदः । वैद्यनाथाध्वरी प्रायश्चित्तं संगृह्य भाषते ॥

अथ प्रायश्चित्तकाण्डमारभते । प्रायो नाम तपः चित्तं निश्चयः । अनुष्ठितेन द्वादश-
वार्षिकादिना अवश्यं पापं निवर्तत इति विश्वासयुक्तव्रतानुष्ठानलक्षणं तपः प्रायश्चित्तम् । ५
तदाहाङ्गिराः—

“ प्रायो नाम तपः प्रोक्तं चित्तं निश्चय उच्यते । तपो निश्चयसंयुक्तं प्रायश्चित्तमिहोच्यते ” ॥ इति ।
तच्च विहिताकरणादिनिमित्तवन्तं प्रति चोदनानैमित्तिकम् । तथा च बृहस्पतिः—

“ विहितस्यानुष्ठानान्निन्दितस्य च सेवनात् । प्रायश्चित्तं यत्क्रियते तन्नैमित्तिकमुच्यते ” ॥ इति ।
विज्ञानेश्वरः (पृ. २३५ पं. २४)—“प्रायश्चित्तशब्दः पापक्षयार्थं नैमित्तिके कर्मविशेषे रूढः” इति । १०
तदेवं प्रायश्चित्तशब्दः योगेन रूढ्या च पापनिवर्तनक्षमं धर्मविशेषमाचष्टे ।

प्रायश्चित्तधिकारिनिरूपणम् । तत्र अधिकारिणं दर्शयति मनुः (११।४४)—

“ अकुर्वन्विहितं कर्म निन्दितं च समाचरन् । प्रसृजंश्चेन्द्रियार्थेषु प्रायश्चित्तीयते नरः ” ॥ इति ।
याज्ञवल्क्योऽपि (प्रा. २१९-२२०)—

“ विहितस्यानुष्ठानान्निन्दितस्य च सेवनात् । अनिग्रहाच्चेन्द्रियाणां नरः पतनमृच्छति ” ॥ १५
प्रत्यवायीभवति ।

“ तस्मात्तेनेह कर्तव्यं प्रायश्चित्तं विशुद्ध्ये । एवमस्यान्तरात्मा च लोकश्चैव प्रसीदति ” ॥
एवं प्रायश्चित्ते कृते अस्यान्तरात्मा शुद्धतया प्रसीदति लोकश्च संव्यवहर्तुं प्रसीदतीत्यर्थः ।

एकविंशति नरकाः । प्रायश्चित्ताकरणे दोषमाह स एव (प्रा. २२१-२२५)—

“ प्रायश्चित्तमकुर्वाणाः पापेषु निरता नराः । अपश्चात्तापिनः कष्टान्नरकान्यान्ति दारुणान् ॥ २०

“ तामिस्रं लोहशङ्कुं च महानिरयशल्मली । रौरवं कुङ्कुमलं पूर्तिं मृत्तिकां कालसूत्रकम् ॥

“ संधातं लोहितोदं च सविषं संप्रतापनम् । महानरककौकोलं सज्जीवनमहार्पणम् ॥

“ अवीचिमन्धतामिस्रं कुम्भीपाकं तथैव च । असिपत्रवनं चैव तपनं चैकविंशकम् ” ॥

“ महापातकजैर्धौरेरुपपातकजैस्तथा । अन्विता यान्त्यचारितप्रायश्चित्ता नराधमाः ” ॥ इति ।

एकविंशकमित्येतत् प्रधाननरकापेक्षयोक्तम् । महापातकजैरिति उर्पपापमात्रोपलक्षणम् । २५

तथा च पापतारतम्यात् फलतारतम्यं दर्शितं विष्णुधर्मोत्तरे—

“ अष्टाविंशतिकोऽयः स्युर्धोराणि नरकाणि वै । महापातकिनश्चात्र सर्वे स्युर्नरकविधिषु ॥

“ आ चन्द्रतारकं यावत्पीड्यन्ते विविधैर्वधैः । अतिपातकिनश्चान्ये निरयार्णवकोटिषु ॥

“ एकविंशतिसंख्येषु पादोनब्रह्मकल्पकम् । चतुर्दशसु पच्यन्ते कल्पार्धं समपापिनः ॥

“ उपपातकिनश्चापि तदर्धं यान्ति मानवाः । शेषैः पापैस्तदर्धं च कालकृत्तिरियं स्मृता ” ॥ इति । ३०

१ ग-अय । २ ग-सक्त । ३ क-कश्मल । ४ ग-पूतिमृत्तिकं । ५ क्ष-लोकं च । ६ क्ष-वशि ।

७ तापनमिति मुद्रिते पाठः । ८ ग-पाप ।

रहस्यकृतपापफलानिरूपणम् । रहस्यकृतपापफलमाह पराशरः—

“पातके तु सहस्रं स्यान्महति द्विगुणं तथा । उपपातके तु रीयं स्यान्नरकं वर्षसंख्यया” ॥ इति ।

नरकानुभवानन्तरं तिर्यगादिजन्मनिरूपणम् । एवं नरकमनुभूय कर्मशेषात्पुनरिह

संसारे दुःखबहुलतिर्यगादिषु योनिषु जायन्ते । तदाह याज्ञवल्क्यः (प्रा. २०६-२०८)—

५ “महापातकजान् घोरान्नरकान्प्राप्य दारुणान् । कर्मक्षयात्प्रजायन्ते महापातकिनस्त्विह ॥

“भृगुश्वसूकरोष्ट्राणां ब्रह्महा योनिमृच्छति । खरपुल्कसवेणानां सुरापो ब्राह्मणो व्रजेत् ॥

“कुमिकीटपतङ्गत्वं स्वर्णहारी समाप्नुयात् । वृणगुल्मलतात्वं च क्रमशो गुरुतल्पगः” ॥

एतच्चाकामकारविषयम् । कामकारे तु अन्यास्वपि दुःखबहुलयोनिषु संसरति ।

यथाह मनुः (१२।२४-२८)—

१० “बहुवर्षगणान् सर्वान्नरकान्प्राप्य तत्क्षणात् । संसारान्प्रतिपद्यन्ते महापातकिनस्त्विह ॥

“श्वसूकरखरोष्ट्राणां गोमायुमृगपक्षिणाम् । चण्डालपुल्कसानां च ब्रह्महा योनिमृच्छति ॥

“कुमिकीटपतङ्गानां विट्भुजां चैव पक्षिणाम् । हिंसाणां चैव सत्त्वानां सुरापो ब्राह्मणोऽसकृत् ॥

“लूताहिसरटानां च तिरश्चां चांबुचारिणाम् । हिंसाणां च पिशाचानां स्तेनो विप्रः सहस्रशः ॥

“वृणगुल्मलतानां च ऋव्यादां दंष्ट्रिणामपि । क्रूरकर्मकृतां चैव शतैशो गुरुतल्पगः” ॥ इति ।

१५ लूता ऊर्णनाभिः । सरटः कृकलासः । एवं रौरवादिनरकेषु श्वसूकरादियोनिषु च दारुणं दुःख-
मनुभूयानन्तरं दुरितशेषेण जननमरणसमय एव क्षयरोगादिलक्षणयुक्तो दुःखप्रचुरेषु मानुषशरीरेषु
संसरति । तथा च याज्ञवल्क्यः (प्रा. २०९-२१०)—

“ब्रह्महा क्षयरोगी स्यात्सुरापः श्यावदन्तकः । हेमहारी तु कुनस्वी दुश्कर्मा गुरुतल्पगः ॥

“यो येन संवसत्येषां स तल्लिङ्गो हि जायते” ॥ इति । श्यावदन्तकः स्वभावतः कृष्ण-

२० दशनः । दुश्कर्मा कुष्टी । एतेषां ब्रह्महादीनां मध्ये येन पुरुषेण यः संवसति स तल्लिङ्गो जायते
इत्यर्थः । एवं महापातकव्यतिरिक्तेष्वन्येष्वपि पापेषु अकृतप्रायश्चित्तानां नरकानुभवानन्तरं
तिर्यगादिषु जननम् । स एवाह (प्रा. २१७)—

“यथाकर्मफलं प्राप्य तिर्यकृत्वं कालपर्ययात् । जायन्ते लक्षणभ्रष्टा दरिद्राः पुरुषाधमाः” ॥ इति ।
तथान्यत्र—

२५ “चरितव्यमतो नित्यं प्रायश्चित्तं विशुद्धये । निन्वैर्हि लक्षणैर्युक्ता जायन्तेऽनिष्कृतैर्नसः” ॥ इति ।
मनुरपि (११।४८)—

“इह दुश्चरितैः केचित् केचित्पूर्वकृतैस्तथा । प्राप्नुवन्ति दुरात्मानो नरा रूपविपर्ययम्” ॥ इति ।

इह दुश्चरितैस्मिन् जन्मन्यार्जितैः उत्कटैः पापैरिह तत्फलं पूर्वमनुभूय पश्चान्नरकादिकमनुभवन्ति ।

“अत्युत्कटैः पुण्यपापैरिहैव फलमश्नुते । त्रिभिर्वर्षैस्त्रिभिर्मासैस्त्रिभिः पक्षैस्त्रिभिर्दिनैः” ॥ इति स्मृतेः ।

३० पूर्वकृतैस्तु पापैर्नरकाद्यनुभवानन्तरं रूपविपर्ययं प्राप्नुवन्तीत्यर्थः । स एव (१२।६०-६८)—

“संयोगं पतितैर्गत्वा परस्यैव च योषितम् । ब्रह्मस्वमपहृत्यापि भवन्ति ब्रह्मराक्षसाः ॥

“पिशुनः पूतिनासत्वं सूचकः पूतिवक्रताम् । धान्यचोरोऽङ्गहीनत्वमातिरेक्यं तु मिश्रतः” ॥

“अन्नहतामयावित्वं मत्स्यं वागपहारकः । वस्त्रापहारकः श्वैर्घ्नं पशून्तामश्वहारकः ॥

“एवं कर्मविशेषेण जायन्ते सद्भिर्गर्हिताः । जडमूकान्धबधिरा विकृताकृतयस्तथा ॥

३५ “मणिमुक्ताप्रवालानि हत्वा लोभेन मानवाः । विविधानि च रत्नानि जायन्ते लोहकवृषु ॥

१ क्ष-त्ययं । २ क्ष-कृमि । ३ ग-क्रमशः, क्ष-चमरो । ४ ग-भः । ५ ग-पतितेन ।

६ अ. १।१५०-५२; ६१-६८; ७ क-न्यः, क्ष-वयं । ८ ग-पङ्गु ।

“ धान्यं हत्वा भवत्यासुः कांस्यं हंसो जलं प्लवः । मधुदंशः पयः काको रसं श्वा नकुलो घृतम् ॥
 “ मांसं गृध्रो वसां महुस्तैलं तैलपकः खगः । चिरैवाकस्तु लवणं बलाकः शकुनिर्दधि ॥
 “ कौशेयं तिचिरिहत्वा क्षौमं हत्वा तु दुर्दुरः । कार्पासं तान्तवं क्रौञ्चो गोधा गां वाग्गदो गुडम् ॥
 “ चुचुन्दरिः शुभान् गन्धान् पत्रशाकं तु बर्हिणः । श्वावित् कुतान्नं विविधमकृतान्नं तु शल्यकः ॥
 “ बको भवति हत्वाग्निं गृहकारी ह्युपस्करम् । रक्तानि हत्वा वासांसि जायते जीवजीवकः ॥ ५
 “ वृको मृगेभं व्याघ्रोऽश्वं फलपुष्पं तु मर्कटः । स्त्रीमृक्षस्तोकको वारि यानान्युष्ट्रः पशूनजः ॥
 “ यद्वा तद्वा परद्रव्यमपहृत्य बलाघ्नरः । अवश्यं याति तिर्यक्त्वं जग्ध्वा चैवाहुतं हविः ” ॥
 “ यादृशेन हि भावेन यद्यत्कर्म निषेवते । तादृशेन शरीरेण तत्तत्फलमुपाश्रुते ” (१२।८१) ॥ इति ।

याज्ञवल्क्योऽपि (प्रा. २१०-२१५)—“ अन्नहर्ताऽमयावी स्यान्मूको वागपहारकः ।
 “ धान्यहर्ताऽतिरिक्ताङ्गः पिशुनः पूतिनासिकः । तैलहृत्तैलपायी स्यात् पूतिवक्रस्तु सूचकः ॥ (२१०) १०
 “ हीनजातौ प्रजायेत रत्नानामपहारकः ॥ (२१३)
 “ श्वित्री वस्त्रं श्वा रसं तु चीरी लवणहारकः । आमयावी अजीर्णान्नो मौक्यं वागपहारकः ” ॥
 पुस्तकहारी अननुज्ञाताध्यायी च । तैलपायी कीटविशेषः । सूचकः सद्दोषसंकीर्तकः ।
 “ पत्रशाकं शिखी हत्वा गन्धान् चुचुन्दरी शुभान् ।
 “ मूषको धान्यहारी स्याद्यानमुष्ट्रः फलं कपिः । जलं प्लवः पयः काको गृहकार्पासं ह्युपस्करम् ॥ (११४) १५
 “ मधु दंशः फलं गृध्रो गां गोधाग्निं बकस्तथा ” । चुचुन्दरिः राजदुरिताख्यो मूषकविशेषः । गृहकारि
 कीटविशेषः । उपस्करः मुसलादि । चीरी उच्चैस्वरः कीटविशेषः । शङ्खो विशेषमाह—
 “ ब्रह्महा कुष्ठी तैजसहारी मण्डली देवब्राह्मणाक्रोशकः खलतिर्गदाग्निदाबुन्मतौ गुरुप्रति-
 हन्तापस्मारी गोघ्नश्चान्धः धर्मपत्नीमृतौ त्यक्त्वाऽन्यत्र प्रवृत्तः शब्दवेधी प्राणिविशेषः । कुण्डाशी
 दंशभक्षः । देवब्राह्मणस्वापहारी पाण्डुरोगी । न्यासापहारी काणः । स्त्रीवर्षयोपजीवः षण्डः २०
 कौमारदारत्यागी दुर्भगो मृष्टैकाशी वातगुल्मी अभक्ष्यभक्षको गण्डमाली ब्राह्मणीगामी निर्वाजः
 क्रूरकर्मा वामनः वस्त्रापहारी पतङ्गः शय्यापहारी क्षपणकः शङ्खशुक्यहारी कपाली दीपापहारी
 कौशिकः मित्रधृक् क्षयी मातापित्रोराक्रोशकः कारण्डकः ” इति ।

वृद्धगौतमोऽपि क्वचित् विशेषमाह—“ अन्तवाक् खलः मुहुर्मुहुः संचलनवाक् जलोदरो
 दारत्यागी श्लीपदी कूटसाक्षी उच्छ्रितजंघाचरणः । विवाहविघ्नकर्ता छिन्नोष्ठः गोररक्षणे च्छिन्न- २५
 हस्तः मातृघ्नोऽन्धः । स्नुषागामी वातवृषणः । चतुष्पथे विण्मूत्रविसर्जनो मूत्रकुच्छ्री । कन्यादूषकः
 षण्डः । ईर्ष्यालुः मशकः । पित्रा विवदमानोऽपस्मारी । न्यासापहारी अनपत्यः । रत्नापहारी
 अत्यन्तदरिद्रः । विद्याविक्रयी पुरुषमृगः । वेदविक्रयी दीपी । बहुवाचको जलप्लवः । अयाज्य-
 याजको वराहः । अनिर्मन्त्रितभोजी वायसः । मृष्टैकभोजी वानरः । यतस्ततोऽन्नमश्वन्माज्जरः । कक्ष-
 वनदाहकः स्वद्योतः । दारकाचार्यो मुखविद्गन्धः । पर्युषितभोजी कृमिः । अदत्तादायी बलीवर्दः । ३
 मत्सरी भ्रमरः । अग्न्युत्सादी मण्डलकुक्षी । शूद्राचार्यः श्वपाकः । गोहती सर्पः । स्नेहापहारी क्षयी ।
 अन्नापहारी अजीर्णी । ज्ञानापहारी मूकः । चण्डालीपुल्कसीगर्भकः रजकः । प्रव्रजितागमने मरुपिशाचः
 शूद्रागमने दीपधृष्टः । सवर्णागमने दरिद्रः । जलहारी मत्स्यः । पञ्चमहापातकानि मिथ्यः । क्षारहारी

१ ग-काश; 'चीरी' मु. पाठः । २ 'छुछु' । ३ क्ष-त्ना । ४ 'मूलं' क्ष-मु । ५ क्ष-धा;
 ग-धान्या । ६ 'मिश्रो' मु. पाठः । ७ क्ष-रिरुप । ८ क्ष-नि । ९ ग-वाक्यो । १० ग-गोरवगूर ।
 ११ ग-द्वि । १२ ग-याज । १३ क्ष-य । १४ ग-ष्टी । १५ ग-गामी । १६ ग-दीर्घकीटः ।

बलाकः । वार्षिकोऽङ्गहीनः । अविक्रेयविक्रयी गृध्रः । राजमहिषीगामी नपुंसकः । दुराक्रोशी गर्दभः । गोगामी मण्डूकः । अनध्यायाध्यायी मृगालः । परद्रव्यापहारी परप्रेष्यः । मत्स्यवेधो गर्दभः ” इति ।
स्त्रियोऽप्येतेषु पूर्वोक्तास्वेव जातिषु स्त्रीत्वमनुभवन्ति । यथाह **मनुः** (१२।६९)—
“ स्त्रियोऽप्येतेन कल्पेन हत्वा दोषमवाप्नुयुः । एतेषामेव जन्तूनां भार्यात्वमुपयान्ति ताः ” इति ।

५ स एव (१२।७८-८१)—

“ असकृत् गर्भवासेषु वसन् जन्म च दारुणम् । बन्धनानि च कष्टानि परप्रेष्यत्वमेव च ” इति ।

“ बन्धुप्रियवियोगं च संसर्गं चाप्रियैर्जनैः । द्रव्यं जनं च नाशं च मित्रामित्रस्य चार्जनः ॥

“ जरां चैवाप्रतीकारां व्याधिभिर्चोपपीडनम् । क्लेशांश्च विविधांस्तान्स्तान्मुमेव च दुर्जयम् ॥

“ यादृशेन हि भावेन यद्यत्कर्म निषेवते । तादृशेन शरीरेण तत्तत्फलमुपाप्नुते ” इति ।

१० दुर्लक्षणमनुष्यजन्मानन्तरं प्राक्भवीयसुकृतविशेषेण महाकुले भोगविद्याधनधान्यसंपन्नो जायते । तदाह **याज्ञवल्क्यः** (प्रा. २१८)—

“ ततो निष्कल्मषीभूताः कुले महति भोगिनः । जायन्ते विद्ययोपेता धनधान्यसमन्विताः ” इति ।

निष्कल्मषीभूताः नरकाद्युपभोगद्वारेण क्षीणपापा इत्यर्थः ।

नवविधपापानि । प्रायश्चित्तनिमित्तानि तानि पापानि नवविधानि । महापातकान्यति-

१५ पातकानि समपातकान्युपपातकानि सङ्करीकरणानि लिनीकरणान्यपात्रीकरणानि जातिभ्रंशकराणि प्रकीर्णकानीति । यथाह **विष्णुः** (३३।१-५) “ पुरुषस्य कामक्रोधलोभाख्यं रिपुत्रयं सुधोरं भवति तेनायमाक्रान्तो महापातकातिपातकसमपातकोपपातकेषु प्रवर्तते सङ्कीर्णकरणेषु मलापहेषु अपात्रीकरणेषु जातिभ्रंशकरणेषु प्रकीर्णकेषु च ” इति ।

ब्रह्महत्यादिमहापातकानि । तत्र महापातकान्याह **मनुः** (११।५४)—

२० “ ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः । महान्ति पातकान्याहुः संयोगैश्चैव तैः सह ” इति ।

याज्ञवल्क्योऽपि (प्रा. २२७)—

“ ब्रह्महा मद्यपः स्तेनः तथैव गुरुतल्पगः । एते महापातकिनो यश्च तैः सह संवसेत् ” इति ।

यथापारसमनन्तरं वा कालान्तरे वा कारणान्तरनिरपेक्षः प्राणवियोगो भवति स ब्राह्मणं हतवानिति

ब्रह्महा । मद्यपः निषिद्धसुरायाः पाता । स्तेनो ब्राह्मणस्वर्णहारी । गुरुतल्पगो गुरुभार्यागामी । यश्च

२५ तैर्ब्रह्महादिभिः प्रत्येकं संवत्सरं सह वसति सोऽपि महापातकीत्यर्थः ।

प्रयोजकादीनां फलतारतम्यम् । अनुग्राहकस्यापि हिंसाफलसंबन्धमाह **मनुः**—

“ बहूनामेककार्याणां सर्वेषां शस्त्रधारिणाम् । यद्येको घातयेत्तत्र सर्वे ते घातकाः स्मृताः ” इति ।
विष्णुः—

“ आकृष्टस्ताडितो वापि धनैर्वा विप्रयोजितः । यमुद्दिश्य त्यजेत्प्राणांस्तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ॥

३० “ ज्ञातिमित्रकलत्रार्थं सुहृत्क्षेत्रार्थमेव च । यमुद्दिश्य त्यजेत्प्राणान् तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ॥

“ रागद्वेषात्प्रमादाद्वा स्वतः परत एव वा । घातयेत् ब्राह्मणं कंचित्स भवेत् ब्रह्मघातकः ।

“ भृतको यस्य तं हन्यात्सोऽपि च ब्रह्मघातकः ” इति ।

हेमाद्रौ—“ धनार्थं क्षेत्रद्वारार्थं पश्वर्थं वा जनेश्वर । यमुद्दिश्य त्यजेत्प्राणान् तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ॥

“ नारी वा पुरुषो वाऽथ विधवा वा मनस्विनी । यमुद्दिश्य त्यजेत्प्राणान् तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ” इति ।

स्मृत्यन्तरेऽपि—

- “हन्ता मन्त्रोपदेष्टा च तथा संप्रतिपादकः । प्रोत्साहकः सहायश्च तथा मार्गानुदेशकः ॥
- “आश्रयः शस्त्रदाता च भक्तदाता च कर्मिणाम् । उपेक्षकः शक्तिमांस्तु दोषवक्ताऽनुमोदकः ॥
- “अकार्यकारिणां तेषां प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत्” ॥ इति । आपस्तम्बः (२।१।२९।१-२)—
- “प्रयोजयिता मन्ता कर्तेति स्वर्गनरकफलेषु कर्मसु भागिनो यो भूय आरभते तस्मिन् फलविशेषः” ॥ इति । ५
- प्रयोजकादीनां प्रत्यासत्तिव्यवधानापेक्षया व्यापारगतगुरुलाघवापेक्षया च फले गौरवलाघवात् प्रायश्चित्तेऽपि गौरवलाघवं बोध्यम् । तथा सुमन्तुः—
- “तिरस्कृतो यदा विप्रो हत्वाऽऽत्मानं मृतो यदि । निर्गुणः सहसा क्रोधात् गृहक्षेत्रादिकारणात् ॥
- “त्रैवार्षिकं व्रतं कुर्यात्प्रतिलोमां सरस्वतीम् । गच्छेद्वाऽपि विशुद्धचर्यं तत्पापस्येति निश्चितम् ॥
- “क्रोधाद्वै म्रियते यस्तु निर्निमित्तं च भर्त्सितः । वत्सरत्रितयं कुर्यान्नरः कुच्छ्रं विशुद्धये ॥ १०
- “भर्त्सको यः स विद्वांश्चेद्वर्षेणैकेन शुध्यति । केशश्मश्रुनसादीनामकृत्वा वपनं वने” ॥ इति ।
- उपकारार्थं प्रवृत्तौ दोषाभावः । परोपकारार्थं प्रवृत्तौ दोषाभावमाह संवर्तः—
- “औषधं स्नेहमाहारं ददद्ब्राह्मणादिषु । दीयमाने विपत्तिः स्यान्न स पापेन लिप्यते ॥
- “दाहच्छेदसिराभेदप्रत्यनैरुपकुर्वताम् । प्राणसन्त्राणसिद्धचर्यं प्रायश्चित्तं न विद्यते” ॥ इति ।
- एतच्च निपुणभिषग्विषयम् । इतरस्तु ‘भिषङ्मिथ्याचारं दाप्य’ इति दोषस्मरणात् । १५
- यत्र मन्युनिमित्ताक्रोशादिकमकुर्वतोऽपि नाम गृहीत्वा उन्मादादिना आत्मानं व्यापादयति तत्रापि न दोषः
- “अकारणात्तु यः कश्चित् द्विजः प्राणान्परित्यजेत् । तस्यैव तत्र दोषः स्यान्न तु यं परिकीर्तयेत्” ॥ इति स्मरणात् । तथा यत्राक्रोशादिजनितमन्युतात्मानं सद्वादिना प्रहृत्य मरणाद्वर्गाक्रोशादिकर्त्रा धनादिना सन्तोषितो यदि जनसमक्षमुच्चैः श्रावयति नात्राक्रोशकस्यापराध इति तत्रापि वचनाच्च २०
- दोषः । यथाह विष्णुः—
- “उद्दिश्य कुपितो भूत्वा तोषितः श्रावयेत्पुनः । तस्मिन् मृते न दोषोऽस्ति तस्य चोच्छ्रावणे कृते” ॥ इति ।
- अतिपातकानि । अतिपातकान्याह मनुः (१।१।८७-८८)—
- “हत्वा गर्भमविज्ञातमेतदेव व्रतं चरेत् । राजन्यवैश्यावीजानावात्रेयीमेव च स्त्रियम् ॥
- “उक्त्वा चैवानृतं साक्ष्ये प्रतिरुद्धं गुरुं तथा । अपहृत्य च निक्षेपं कृत्वा च स्त्रीसुहृद्वधम्” ॥ २५
- ईजानौ यागदीक्षामध्यवर्तिनौ । आत्रेयी अत्रिगोत्रजानिक्षेपं ब्राह्मणसंबन्धिनम् । स्त्री आहिताग्नि-पत्नी पातिव्रत्यादिगुणयुक्ता वा । अविज्ञातगर्भहननादीनामतिपातकत्वम्
- “अतिदिष्टं तु यत्पापमतिपातकमुच्यते । अतिदुष्टेषु सर्वत्र पादोऽनं तत् व्रतं चरेत्” ॥ इति वचनादवगम्यते । यमः—
- “मातृष्वसा मातृसखी दुहिता च पितृष्वसा । मातुलानी स्वसा इवश्रूर्गत्वा सद्यः पतेत् द्विजः” ॥ इति । ३०
- गौतमः (२।१।२-२)—“मातृपितृयोः संबन्धागस्तेन नास्तिकनिदितकर्माभ्यासपतितात्याग्यपतित-त्याग्निः पतितापातकसंयोजकाश्च” इति । बोधायनोऽपि (२।१।४१)—“अथ पतनीयानि । समुद्रयानं ब्रह्मस्वन्यासापहरणं भूम्यन्तवदनं सर्वापण्यैर्व्यवहरणं शूद्रसेवनं शूद्राभिगमनं यश्च शूद्रायामभिप्रजयते तदपत्यं च भवति” इति । आपस्तम्बोऽपि (१।१।३४।२३)—
- “धर्मार्थसंनिपातेऽर्थग्राहिण एतदेव” इति

याज्ञवल्क्यः (प्रा. २५२)—“ चरेद्व्रतं महत्त्वापि घातार्थं चेत्समाहितः ।

“ पितुः स्वसारं मातुश्च मातुलानीं स्नुषामपि । मातुः सपत्नीं भगिनीमाचार्यतनयां तथा ।

“ आचार्यपत्नीं स्वसुतां गच्छंस्तु गुरुतल्पगः ” ॥ इति (प्रा. २३२-२३३) ।

विष्णुः (३४।१)—“ मातृगमनं दुहितृगमनं स्नुषागमनम् ” इति अतिपातकानीति ।

५ नारदः (१२।७३-३५)—

“ माता मातृष्वसा श्वश्रूमातुलानी पितृष्वसा । पितृव्यसखिशिष्यस्त्री भगिनी तत्सखी स्नुषा ॥

“ दुहिताचार्यभार्या च सगोत्रा शरणागता । राज्ञी प्रवाजिता साध्वी धात्री वर्णोत्तमा च या ॥

“ आसामन्यतमां गच्छन् गुरुतल्पग उच्यते । आश्रितां विदुषः पत्नीमाहिताग्नेश्च योगिनः ॥

“ एषां पत्नीं स्वपुत्रीं च गत्वा तल्पव्रतं चरेत् । चण्डाल्यां गर्भमाधाय गुरुतल्पव्रतं चरेत् ” ॥ इति ।

१० अत्र माता मातृसपत्नी । भविष्यत्पुराणे—

“ अग्निहोत्रार्थकपिलां हत्वा ब्रह्महणो व्रतम् । दुस्थितं संस्थितं वापि शिवलिङ्गं न चालयेत् ॥

“ अन्यथा तु कृते लिङ्गे अतिपातकमाप्नुयात् । उत्तमानां चामराणामन्यथाकरणे सति ॥

“ विप्रस्यैव व्रतं कुर्यात् विप्रदेवौ समौ स्मृतौ ।

“ गर्भिण्युदक्या विज्ञाताः कन्यामातामनिच्छतीम् । गुरुतल्पं चरेत् गत्वा गामयोनिं सखीं स्त्रियम् ” ॥ इति ।

१५ याज्ञवल्क्यः (प्रा. २९८)—

“ नीचाभिगमनं गर्भघातनं भर्तृनाशनम् । विशेषपतनीयानि स्त्रीणामेतान्यपि ध्रुवम् ” ॥

व्याघ्रपादः—

“ अतिदेशस्योपदेशान्न्यूनत्वात्तद्व्रतं न हि । अतिदिष्टेषु सर्वत्र पादोनं तद्व्रतं चरेत् ” ॥ इति ।

एवं महापातकातिदेशादन्यान्यप्यतिपातकानि द्रष्टव्यानि ।

२० ब्रह्महत्यासमपातकानि । ब्रह्महत्यासमपातकान्याह मनुः (११।५५)—

“ अमृतं च समुत्कर्षे राजगामि च पैशुनम् । गुरोश्चालीकनिर्वन्द्वः समानि ब्रह्महत्त्यया ” ॥

याज्ञवल्क्यः (प्रा. २२८)—

“ गुरूणामध्यधिकेपो वेदनिन्दा सुहृद्वधः । ब्रह्महत्यासमं ज्ञेयमधीतस्य च नाशनम् ” ॥ इति

गुरूणामाधिक्येनाधिकेपोऽवृताभिर्शंसनं “कौटसाक्ष्यं राजगामि च पैशुनं गुरोरवृताभिर्शंसनं पातक-

२५ समानि ” इति गौतमस्मरणात् (२१।१०) । एतच्च लोकाविदितदोषाभिर्शंसनविषयम् । “दोषं

बुद्ध्वा न पूर्वः परेभ्यः पतितस्य समाख्याने स्यात् ” इत्यापस्तम्बस्मरणात् (१।७।२१।२०) ।

नास्तिक्याभिनिवेशेन वेदकुत्सनं सुहृन् मित्रं तस्याब्राह्मणस्यापि वधः । अधीतस्य वेदस्या-

सच्छास्त्रविनोदेनालस्यादिना वा नाशनं विस्मरणम् । पराशरः—

“ भुञ्जानेषु तु विप्रेषु योऽग्रे पात्रं परित्यजेत् । स मूढः स च पापिष्ठः ब्रह्मघ्नः स खलूच्यते ” ॥ इति ।

३० विष्णुधर्मोत्तरे—

“ यस्तु विद्याभिमानेन नीचो जयति सद्भिजम् । उदासीनं सभामध्ये ब्रह्महा स प्रकीर्तितः ॥

“ परदोषमविज्ञाय नृपकर्णे जपेत्तु यः । पापीयान् पिशुनः क्षुद्रः स चैवं ब्रह्महा स्मृतः ।

“ देवद्विजगतां भूमिं पूर्वभुक्तां हरेत् यः । प्रणष्टमपि कालेन तमाहुर्ब्रह्मघातकम् ” ॥ इति ।

विष्णुः (३३।१)—“यागस्थस्य क्षत्रियस्य वैश्यस्य रजस्वलायाश्चान्तर्वत्न्याश्चात्रिगोत्रजाया अविज्ञातगर्भस्य शरणागतस्य च घातनं ब्रह्महत्यासमम्” इति ।

यागस्थक्षत्रियादीनामतिपातकत्वेन परिगणितानां समपातकत्वाभिधानमकामकृताभिप्रायम् । कामकारे तु तेषामतिपातकत्वम् ।

सुरापानसमपातकानि । सुरापानसमान्याह **मनुः** (११।५६)

५

“ब्रह्मोज्झता वेदनिन्दा च कौटसाक्ष्यं सुहृद्वधः । गर्हितानाद्ययोर्जग्धिः सुरापानसमानि षट्” ॥ इति । गर्हितं लशुनादि । अनाद्यममेध्यादि । **याज्ञवल्क्यः** (प्रा. २२९)—

“ निषिद्धभक्षणं जैह्वमुत्कर्षे च वचोऽनृतम् । रजस्वलामुखास्वादसुरापानसमानि तु ” ॥ इति । निषिद्धं लशुनादिकं तस्य मतिपूर्वभक्षणम् । ‘पलाण्डुं गुञ्जनं चैव मत्या जग्ध्वा पतेद्विजः’ इति स्मरणात् । जैह्वं कौटिल्यम् । अन्याभिसंधानेनान्यवादीत्वमन्यकर्तृत्वं च । तच्च गुरुविषयमिति ^{१०} **विज्ञानेश्वरः** (पृ. २४०, पं. २४-२५) । तथा समुत्कर्षनिमित्तं राजकुलादावचतुर्वेद एव चतुर्वेदोऽहमित्यनृतभाषणम् । स्मृत्यन्तरे—

“ नालिकेरोदकं कांस्ये गोक्षीरं लवणान्वितम् । स्नानं रजकतीर्थे च ताम्रे गव्यं सुरासमम् ” ॥ इति । **अत्रिः**—

“ तोयं पाणिनखाग्रेषु ब्राह्मणो न पिबेत् क्वचित् । सुरापानेन तत्तुल्यमित्येवं मनुरब्रवीत् ” ॥ १५ **शातातपोऽपि**—

“ उद्धृत्य वामहस्तेन यत्तोयं पिबति द्विजः । सुरापानेन तत्तुल्यं मनुराह प्रजापतिः ” ॥ इति ।

स्वर्णस्तेयसमपातकानि । स्वर्णस्तेयसमान्याह **मनुः** (११।५७)—

“ निक्षेपस्यापहरणं नराश्वरजतस्य च । भूमिवस्त्रमणीनां च रुक्मस्तेयसमं स्मृतम् ” ॥ इति । **याज्ञवल्क्यः** (प्रा. २३०)—

२०

“ अश्वरत्नमनुष्यस्त्रीभूधेनुहरणं तथा । निक्षेपस्य च सर्वं हि स्वर्णस्तेयसमं मतम् ” ॥ इति ।

विष्णुः (३३।३)—“ ब्राह्मणभूम्यपहरणं स्वर्णस्तेयसमम् ” इति ।

हेमाद्रौ—“ हत्वा शतपलं ताम्रं स्वर्णस्तेयसमं विदुः ” ॥ इति ।

गुरुतल्पसमपातकानि । गुरुतल्पसमान्याह **मनुः** (११।५८)—

“ रेतःसेकः स्वयोनीषु कुमारीष्वन्त्यजासु च । सख्युः पुत्रस्य च स्त्रीषु गुरुतल्पसमं विदुः ” ॥ २५ **स्वयोनिषु भगिनीषु । याज्ञवल्क्यः** (प्रा. २३१)—

“ सखिभार्याकुमारीषु स्वयोनिष्वन्त्यजासु च । सगोत्रासु सुतस्त्रीषु गुरुतल्पसमं स्मृतम् ” ॥ इति । **पुराणसारे**—

“ अपि वा मातरं गच्छेन्न गच्छेद्देवदारिकाम् । यदि गच्छेत्प्रमादेन गुरुदारसमं स्मृतम् ” ॥ इति ।

विष्णुः (३३।४-७)—“ पितृव्यमातामहमातुलश्चशुरनृपपत्न्यभिगमनं गुरुदारगमनसदृशम् । पितृष्वसृ- ^{३०} मातृष्वसृगमनं च । श्रोत्रियकृत्विगुपाध्यायमित्रपत्न्यभिगमनं च । स्वसुः सख्युः पत्न्याः सगोत्राया उत्तमवर्णायाः कुमार्याः रजस्वलायाः शरणागतायाः प्रव्रजितायाः निक्षिप्तायाश्च गमनम् ” इति । अतिपातकेषु परिगणितानां केषाञ्चिदिह ग्रहणमकामकारविषयम् ।

उपपातकानि । उपपातकान्याह याज्ञवल्क्यः (प्रा. २३४-२४२)

- “ गोवधो ब्रात्यता स्तेयमृणानां चानपक्रिया । अनाहिताग्निता पण्यविक्रयः परिवेदनम् ॥
 “ भूतादध्ययनादानं भूतकाध्यापनं तथा । पारदार्यं पारिवित्त्यं वार्धुष्यं लवणक्रिया ॥
 “ स्त्रीशूद्रविद्वक्षत्रवधो निन्दिताधोपजीवनम् । नास्तिक्यं व्रतलोपश्च सुतानां चैव विक्रयः ॥
 ५ “ धान्यकुप्यपशुस्तेयमयाज्यानां च याजनम् । पितृमातृगुरुत्यागस्तटाकारामविक्रयः ॥
 “ कन्याया दूषणं चैव परिविन्दकयाजनम् ।
 “ आत्मनोऽर्थे क्रियारम्भो मद्यपस्त्रीनिषेवणम् । स्वाध्यायाग्निसुतत्यागो बान्धवत्याग एव च ॥
 “ इन्धनार्थं द्रुमच्छेदः स्त्रीहिंसौषधजीवनम् । हिंस्रयन्त्रविधानं च व्यसनान्यात्मविक्रयः ॥
 “ शूद्रप्रेष्यं हीनसरस्यं हीनयोनिनिषेवणम् । तथैवानाश्रमे वासः परान्नपरिपुष्टता ॥
 १० “ असच्छास्त्राधिगमनमाकरेणधिकारिता । भार्याया विक्रयश्चैषामेकैकमुपपातकम् ” ॥ इति ।
 काले अनुपनीतत्वं ब्रात्यता । सत्यधिकारेऽनाहिताग्निता । ज्येष्ठे सति कनीयसो दाराग्निहोत्रसंयोगः परिवेदनम् । गुरुदारव्यतिरिक्तं पारदार्यम् । कनीयसि कृतविवाहे ज्येष्ठस्य विवाहराहित्यं पारिवित्त्यम् । वार्धुष्यं निषिद्धवृद्धिप्रयोगः । लवणक्रिया लवणोत्पादनम् । निन्दिताधोपजीवनम् अराजस्थापिताधोपजीवनम् । व्रतलोपः ब्रह्मचारिणः छयादिप्रसङ्गः । कन्याया दूषणं
 १५ अङ्गुल्यादिना योनिविदारणं न तु संयोगः । हिंस्रयन्त्रस्य तिलेक्षुपीडाकरस्य प्रवर्तनम् । व्यसनानि मृगयादीनि अष्टादश । आकरेषु स्वर्णाद्युत्पत्तिस्थानेषु । **मनुरपि** (११।५९-६६)—
 “ गोवधोऽयाज्यसंयाज्यं पारदार्यात्मविक्रयौ । गुरुमातृपितृत्यागः स्वाध्यायाग्न्योः सुतस्य च ॥
 “ परिवित्ता चानुजेन परिवेदनमेव च । तयोर्दानं च कन्यायास्तयोर्याजनमेव च ॥
 “ कन्याया दूषणं चैव वार्धुषिक्यं व्रताच्च्युतिः । तटाकारामदाराणामपत्यस्य च विक्रयः ॥
 २० “ ब्रात्यता बान्धवत्यागो भूताध्यापनमेव च । भूत्या चाध्ययनादानमपण्यानां च विक्रयः ॥
 “ सर्वाकरेष्वधीकारो महायन्त्रप्रवर्तनम् । हिंस्रौषधस्युपजीवोऽभिचारो मूलकर्म च ॥
 “ इन्धनार्थमशुष्काणां द्रुमाणामवपातनम् । आत्मार्थे च क्रियारम्भो निन्दितान्नादनं तथा ॥
 “ अनाहिताग्निता स्तेयमृणानामनपक्रिया । असच्छास्त्राधिगमनं कौटिल्यं व्यसनक्रिया ॥
 “ धान्यरौप्यपशुस्तेयं मद्यपस्त्रीनिषेवणम् । स्त्रीशूद्रविद्वक्षत्रवधो नास्तिक्यं चोपपातकम् ” ॥ इति ।
 २५ **बोधायनः** (२।१।४३-४४)—“ अथोपपातकान्यगम्यागमनं गुर्वीं सखीं गुरुसखीमपपात्रां पतितां च गत्वा भैषज्यकरणं ग्रामयाजनं रङ्गौपजीवनं नाट्याचार्यता गोमहिषरक्षणं यच्चान्यदप्येवमयुक्तं कन्यादूषणमिति ” । **स्मृत्यन्तरेऽपि**—“ विद्वद्ब्राह्मणव्रतभेदाचरणविधवादेवदासीविश्यावार्धकी-दासीगमनान्युपपातकानि ” इति । **शङ्खललिखितौ**—“ कृतघ्नः कूटव्यवहारी ब्राह्मणवृत्तिघ्नो मिथ्याभिज्ञंसी पतितात्यागी अभोज्यभोजी असत्प्रतिग्रही ” इति । **बृहद्विष्णुः**—“ अभोज्यानां
 ३० च भक्षणं परस्वापहरणं परदाराभिगमनमयाज्यानां च याजनं द्रुमगुल्मलतोषधीनां हिंसया जीवन-मभिचारमूलकर्मसु प्रवृत्तिर्देवर्षिपितृणां मृणानपक्रिया कुशीलवता ” इति ।
संकीर्णकरणादीन्याह मनुः (११।६८)—
 “ खरोद्वाश्वमृगेभाणामजाविक्रवधस्तथा । संकीर्णकरणं ज्ञेयं मीनाहिमहिषस्य च ॥
 “ क्रिमिकीटवधोहत्यामथानुगतभोजनम् । फलैधःकुसुमस्तेयमधैर्यं च मलावहम् ॥ (७०)

“निन्दितेभ्यो धनादानं वाणिज्यं शूद्रसेवनम् । अपात्रीकरणं ज्ञेयमसत्यस्य च भाषणम् ॥ (६९)
“ब्राह्मणस्य रुजः कृत्याघ्रातिरभ्रेयमद्योः । जैह्वयं च पुंसि मैथुन्यं जातिभ्रंशकरं स्मृतम्” (६७) ॥ इति ।
विष्णुः—(३८।१-६) “ब्राह्मणस्य रुजः करणमभ्रेयमद्योः प्रातिः जैह्वयं पशुष्वयोनिषु पुंसि च मैथुनम्”
इति । एतानि जातिभ्रंशकराणि । ग्रामारण्यपशूनां हिंसनं संकरीकरणं निन्दितेभ्यो धनादानं
वाणिज्यं कुसीदजीवनमसभ्यभाषणं शूद्रसेवनमित्यपात्रीकरणानि । पक्षिणां जलचराणां जलजानां
च घातनं किमिकीटघातनं मधानुगतभोजनमिति मलावहानि । यदनुक्तं तत् प्रकीर्णकम्” (३९-१;
४०।१, ४१।१-४।४२।१) इति । तदेवं नवविधानि पापानि । यत्तु कात्यायनेनोक्तम्—

“महापापं चातिपापं तथा पातकमेव च । प्रासङ्गिकोपपापमित्येवं पञ्चको गणः” ॥ इति ।
अत्र पातकमिति समपातकान्युक्तानि । उपपातकेषु कानिचिदगम्यागमनादीन्यवान्तरभेदाविवक्षया
प्रासङ्गिकमित्युक्तानि । अतिपातकाद्यवान्तरभेदाविवक्षया त्रैविध्यमुक्तं विज्ञानेश्वरीये (पृ. १०
२४२ पं. १९-२०) —

“महापातकतुल्यानि पापान्युक्तानि यानि वै । तानि पातकसंज्ञानि तन्मूलमुपपातकम्” ॥ इति ।

कामाकामकृतपापविचारः । अकामकृतानां पापानां प्रायश्चित्तैर्नाश इह व्यवहारश्च
भवति । कामकृतानां त्विह व्यवहार्यत्वमात्रम् । तथा च याज्ञवल्क्यः (प्रा. २२६) —

“प्रायश्चित्तैरपैत्येनो यदज्ञानकृतं भवेत् । कामतो व्यवहार्यस्तु वचनादिह जायते” ॥ १५
छागलेयः—“प्रायश्चित्तमकामानां कामावाप्तौ न विद्यते” ।

वसिष्ठोऽपि (१८।१) —“नाभिसन्धिकृते प्रायश्चित्तम्” इति । मनुः (११।४६) —

“अकामतः कृते पापे प्रायश्चित्तं विदुर्बुधाः । कामकारकृतेऽप्याहुरेके श्रुतिनिदर्शनात्” ॥

जाबालिः—

“अकामकृतपापानां ब्रुवन्ति ब्राह्मणा व्रतम् । कामकारकृतेऽप्येके द्विजानां वृषलस्य च” ॥ इति । २०

देवलोऽपि—

“अभिसन्धिकृते पापेऽसकृद्वा नेह निष्कृतिः । अपरे निष्कृतिं ब्रूयुरभिसन्धिकृतेऽपि च” ॥

अङ्गिरास्तु कामकृते द्विगुणं प्रायश्चित्तमाह—

“अकामतः कृते पापे प्रायश्चित्तं न कामतः । स्यादकामकृते यत्तत् द्विगुणं बुद्धिपूर्वकम्” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरेऽपि—“विहितं यदकामानां कामात्तु द्विगुणं भवेत्” ॥ इति । तथा—

“म्लेच्छेनाधिगता शूद्रा ह्यज्ञानात्तु कथंचन । कृच्छ्रत्रयं प्रकुर्वीत ज्ञाने तु द्विगुणं भवेत्” ॥ इति ।

अत्र माधवीये व्यवस्थापितम्—अकामकृते न विप्रतिपत्तिः । कामकृतस्य तु विप्रतिपत्तौ केचि-

न्निर्णयमाहुः । द्विविधा पापस्य शक्तिः । नरकोत्पादिका व्यवहारनिरोधिका चेति । तन्निवर्तकस्यापि

प्रायश्चित्तस्य शक्तिर्द्विविधा । नरकनिवारिका व्यवहारजननी चेति । तत्र प्रायश्चित्ताभाव-

वादिनां मुनीनां नरकनिवारणाभावः अभिप्रेतः । सद्भाववादिनां तु व्यवहारजननी शक्तिरभिप्रेता । ३०

द्विगुणप्रायश्चित्तेन इह लोके व्यवहारः सिध्यति । अपरे पुनः—“कामतोव्यवहार्यस्तु वचनादिह

जायते” (प्रा. २२६) इति याज्ञवल्क्यवचने अव्यवहार्य इति पदं छित्वा कृतप्रायश्चित्तोऽपि

अव्यवहार्यः नरकस्य निवृत्तिरस्तीति वदन्ति । अत्र चोपोद्बलकं मनुवचनम् (११।१९०) —

“बालघ्नां च कृतघ्नांश्च विशुद्धावपि धर्मतः । शरणागतहन्तृश्च स्त्रीहन्तृश्च न संवसेत्” ॥ इति ।

अन्ये तु पूर्वोक्ताङ्गिरःस्मृत्यन्तरवचने कामकृते विशेषेण द्विगुणप्रायश्चित्तावगमात् मनुना (११।४५)—“ कामकारकृतेऽप्याहुरेके श्रुतिनिदर्शनात् ” इति । तत्र विशेषेण प्रायश्चित्ताङ्गीकारात्, आपस्तम्बेन च (१।९।२६।७)—“ दोषवच्च कर्माभिसन्धिपूर्वं कृत्वानभि-सन्धिपूर्वं वाऽब्लिङ्गाभिरप उपस्पृशेद्वारुणीभिर्वा ” इति व्यवहारादिविशेषानभिधानेन कामा-
 ५ कामयोः शुध्यभिधानात्, गौतमेन च (१०।२-९) “ शिष्टस्याक्रियाप्रतिषिद्धसेवनमिति च । तत्र प्रायश्चित्तं कुर्यान्न कुर्यादिति मीमांसते न कुर्यादित्याहुः । न हि कर्म क्षीयत इति । कुर्यादित्यपरे । पुनःस्तोमेनेष्ट्वा पुनस्सवनमायान्तीति विज्ञायते । ब्रात्यस्तोमैश्चेष्ट्वा तरति सर्वं पाप्मानं तरति ब्रह्महत्यां योऽश्वमेधेन यजते ” इति पूर्वोत्तरपक्षभंग्या पापक्षयस्य दर्शितत्वात्, अकामकृतानां सर्वेषां पापानां तत्तदुक्तप्रायश्चित्तैरिहामूत्र च शुद्धिर्भवति । कामकृतानां च
 १० पतनीयव्यतिरिक्तानां द्विगुणप्रायश्चित्तैर्नरकनिवृत्तिरिह व्यवहारश्च सिध्यति । “ नाभिसन्धिकृते प्रायश्चित्तम् ” इति वसिष्ठादिस्मरणं (१।८।१) पतनीयपापविषयम् । तथा च मनुः (११।४६)—
 “अकामतः कृतं पापं वेदाभ्यासेन शुध्यति । कामतस्तु कृतं मोहात्प्रायश्चित्तैः पृथग्विधैः ॥
 “इयं विशुद्धिरदिता प्रमाप्याकामतो द्विजम् । कामतो ब्राह्मणवधे निष्कृतिर्न विधीयते” (८९) ॥ इति ।
 ब्राह्मणवध इति सुरापानादेरप्युपलक्षणम्

१५ “ब्रह्महत्यासुरापानस्वर्णस्तेयेषु कामतः । कृतेषु निष्कृतिर्नास्ति विहितान्मरणादृते” (५५) ॥ इति ।
 “यः कामतो महापापं नरः कुर्यात्कथञ्चन । न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा भृग्वग्निपतनादृते” ॥ इति स्मृतेः ।
 एवं च पतनीये कर्मणि कामकृते मरणान्तिकप्रायश्चित्तेषु कल्मषक्षयो भवत्येव । फलान्तराभावात्
 “नास्यास्मिन् लोके प्रत्यापत्तिर्विद्यते । कल्मषं तु निर्हणयत” (१।९।२४।२५) इत्यापस्तम्बस्मरणात् ।
 एतच्च मरणान्तिकप्रायश्चित्तं ब्राह्मणानां कलौ निषिद्धम्

२० “ प्रायश्चित्तविधानं च विप्राणां मरणान्तिकम् । भृग्वग्निपतनं चैव वृद्धदिमरणं तथा ” ॥ इति
 कलियुगनिषिद्धधर्ममध्ये परिगणनात् । “ मिथ्यैतदिति ह्यारीतः । यो ह्यात्मानं परं वाभिमन्यते
 अभिशस्त एव स भवति ” इत्यापस्तम्बस्मरणात् (१।१०।२।१६-१७) । अयमर्थः—एतन्मरणान्तिक-
 प्रायश्चित्तं मिथ्या न कर्तव्यम् । य आत्मानं परं वाऽभिमन्यते मारयति सोऽभिशस्त एव ब्रह्महैव
 भवतीति । अतः कामकृतमहापातकानां मरणान्तिकप्रायश्चित्तस्य कलौ निषेधात् द्वादशवार्षिकादि-

२५ प्रायश्चित्तैः पापक्षयाभावादिह व्यवहार्यत्वमात्रं सिध्यति । “ कामतो व्यवहार्यस्तु ” इति
 याज्ञवल्क्यवचनं च महापापविषयम् । उपपातकादावपतनीये पुनः कामकृतेऽपि प्रायश्चित्ते कृते
 पापक्षयो भवत्येव मनुवचनात् (११।४६)—

“अकामतः कृतं पापं वेदाभ्यासेन शुध्यति । कामतस्तु कृतं पापं प्रायश्चित्तैः पृथग्विधैः” ॥ इत्याहुः ।

प्रकाशरहस्यपापप्रायश्चित्तम् । द्विविधानि पापानि । प्रकाशकृतानि रहस्यकृतानि चेति ।

३० तत्र प्रकाशकृतानां परिषदोऽनुमत्या प्रायश्चित्तं कार्यम् । तथा च याज्ञवल्क्यः (प्रा. ३०१)—

“ विख्यातदोषः कुर्वीत परिषदोऽनुमते व्रतम् ” ॥ इति । पराशरः (८।१२)—

“ वेदवेदाङ्गविदुषां धर्मशास्त्रं विज्ञानताम् । स्वकर्मरतविप्राणां स्वकं पापं निवेदयेत् ” ॥ इति ।

यत्पापं कर्तव्यतिरिक्तेन केनचिदपि न ज्ञातं तद्रहस्यं तस्य प्रायश्चित्तमपि रहस्येव कर्तव्यम् ।

तथा च हारीतः—“रहस्ये रहस्यं प्रकाशे प्रकाशम्” इति । रहस्यत्वादेव नास्ति तत्र परिषदनु-
मत्यपेक्षा । मनुः (११।२२६-२२९)—

“ एतौर्द्विजातयः शोष्या व्रतैराविष्कृतैर्नसः । अनाविष्कृतपापांस्तु मन्त्रैर्हैमैश्च शोधयेत् ॥

“ स्थापनेनानुतापेन तपसाऽध्ययनेन च । पापकृन्मुच्यते पापात्तथा दानेन चापदि ॥

“ यथा यथा नरोऽधर्मं स्वयं कृत्वाऽनुभाषते । तथा तथा त्वचेवाहिस्तेनाधर्मेण मुच्यते ॥ ५

“ यथा यथा मनस्तस्य दुष्कृतं कर्म निन्दति । तथा तथा शरीरं हि तेनाधर्मेण मुच्यते” ॥ इति ।

परिषद्क्षणमाह मनुः (१२।११०-११३)—

“ दशावरा वा परिषद् धर्मं परिकल्पयेत् । ज्यवरा वापि वृत्तस्था तद्धर्मं न विचालयेत् ।

“ त्रैविद्यो हैतुक्स्तर्का नैरुक्तो धर्मपाठकः । त्रयश्चाश्रमिणः पूर्वं परिषत्स्यात् दशावरा ॥

“ ऋग्वेदविद्यजुर्विच्च सामवेदविदेव च । ज्यवरा परिषत् ज्ञेया धर्मसंशयनिर्णये ॥ १०

“ एकोऽपि वेदविद्धर्मं यं व्यवस्योद्विचक्षणः । स विज्ञेयः परो धर्मो नाज्ञानां गदितोऽयुतैः” ॥ इति ।

याज्ञवल्क्यः (आ. ९)—

“ चत्वारो वेदधर्मज्ञाः पर्षद्वैविध्यमेव वा । सा ब्रूते यं स धर्मः स्यादेको वाऽध्यात्मवित्तमः” ॥ इति ।

पराशरः (८।१५-३४)—

“ चत्वारो वा त्रयो वापि यं ब्रूयुर्वेदपारगाः । स धर्म इति विज्ञेयो नेतैरेस्तु सहस्रशः ॥ (१५) १५

“ चत्वारो वा त्रयो वापि वेदवन्तोऽग्निहोत्रिणः । ब्राह्मणानां समर्था ये परिषत्सा विधीयते ॥

“ अनाहिताग्नयो येऽन्ये वेदवेदाङ्गपारगाः । पञ्च त्रयो वा धर्मज्ञाः परिषत्सा प्रकीर्तिता ॥ (१९)

“ मुनीनामात्मविद्यानां द्विजानां यज्ञयाजिनाम् । वेदव्रतेषु स्नातानामेकोऽपि परिषत् भवेत् ॥ (२०)

“ प्रमाणमार्गं मार्गान्तो यं धर्मं प्रवदन्ति ये । तेषामुद्विजते पापं सद्भार्वगुणवादिनाम् ॥ (१६)

“ यथाश्मनि स्थितं तोयं मारुतार्केण शुष्यति । एवं परिषदादेशान्नाशयेत्तत्र दुष्कृतम् ॥ (१७) २०

“ नैव गच्छति कर्तारं नैव गच्छति पर्षदम् । मारुतार्कादिसंयोगात्पापं नश्यति तोयवत् ॥ (१८)

“ अमेध्यानि तु सर्वाणि प्रक्षिप्यन्ते यथोदके । तथैव किल्बिषं सर्वं प्रक्षिपेच्च द्विजानले ॥ (३०)

“ ये पठन्ति द्विजा वेदं पञ्चयज्ञरताश्च ये । त्रैलोक्यं तारयन्त्येते पञ्चेन्द्रियरता अपि ॥ (२८)

“ धर्मशास्त्ररथारूढा वेदखड्गधरा द्विजाः । क्रीडार्थमपि यं ब्रूयुः स धर्मः परमो मतः ॥ (३३)

“ चातुर्विद्यो विकल्पी चाङ्गविद्धर्मपाठकः । वृद्धाश्चाश्रमिणो मुख्याः पर्षदेषा दशावरा” ॥ (३४) इति । २५

चतुर्णां वेदानां पारगश्चातुर्वेद्यः । विकल्पादिकस्वरूपमुक्तमङ्गिरसा—

“ धर्मस्य संपदश्चैव प्रायश्चित्तक्रमस्य च । त्रयाणां यः प्रमाणज्ञः स विकल्पी भवेत् द्विजः ॥

“ शब्दे छन्दसि कल्पे च शिक्षायां च सुनिश्चितः । ज्योतिषां गणिते चैव स नैरुक्तोऽङ्गविद्धवेत् ॥

“ वेदविद्याव्रतस्नातः कुलशीलसमन्वितः । अनेकधर्मशास्त्रज्ञः पठ्यते धर्मपाठकः” ॥ इति ।

“ ब्रह्मचर्याश्रमादूर्ध्वं विप्रो वृद्धः प्रकीर्त्यते” । चातुर्वेद्यत्वादिकथितविशेषविशिष्टा गृहस्थाश्रम- ३०

वर्तिनो दशसंख्याकः पर्षच्छब्दवाच्याः । चत्वारो वापीति ये पूर्वपक्षाः पूर्वमुक्ताः ते सर्वे महा-

पापेभ्योऽर्वाचीनविषया वा युगान्तरविषया वा । यदाह देवलः—

“ पापानां तारतम्येन विप्राणां गुरुलाघवम् । एको नार्हति तत्कर्तुमनूचानोऽप्यनुग्रहम् ॥

“ रुशान्तानां च विदुषां कलौ सङ्घः प्रशस्यते । धर्मज्ञा बहवो विप्राः कर्तुमर्हन्त्यनुग्रहम् ” ॥

यचूक्तमङ्गिरसा—

“ पातके तु शतं पर्षत्सहस्रं महदादिषु । उपपातके तु पञ्चाशत् स्वल्पे स्वल्पं तथा भवेत् ” ॥ इति तदभ्यासविषयम् । अङ्गिराः—

५ “ आर्तानां मार्गमाणानां प्रायश्चित्तानि ये द्विजाः । जानन्तो न प्रयच्छन्ति ते तेषां समभागिनः ॥

“ तस्मादार्तं समासाद्य ब्राह्मणं तु विशेषतः । जानद्भिर्धर्मपन्थानं न भाव्यं तु पराङ्मुखैः ॥

“ अनर्थितैरनाहूतैरपृष्टैश्चैव संसदि । प्रायश्चित्तं न दातव्यं जानद्भिरपि सर्वदा ॥

“ यत्पुण्यमुद्धृते विप्रे प्रियमाणे जलादिषु । तत्पुण्यं तारिते पापात्प्रायश्चित्तैस्तु मानवैः ॥

“ प्रायश्चित्तविधानेन दुष्कृतान्मोचयेन्नरम् । इहामुत्र सुखं विन्देद्विद्वानायुर्यशो बलम् ” ॥ इति ।

१० परिषदयोग्याः ।

नामधारकविप्राणां परिषत्त्वं नास्तीत्याह पराशरः (८।१२)—

“ अत ऊर्ध्वं तु ये विप्राः केवलं नामधारकाः । परिषत्त्वं न तेष्वस्ति सहस्रगुणितेष्वपि ” ॥ इति ।

अत ऊर्ध्वं वर्णितेभ्यो गुणवद्भ्यो ब्राह्मणेभ्यः ऊर्ध्वं तद्व्यतिरिक्ता गुणवद्भ्य ऊर्ध्वमन्ये गुणरहिता इति यावत् । स एव (८।११)

१५ “ सावित्र्याश्चापि गायत्र्याः सन्ध्योपास्त्याग्निकार्ययोः । अज्ञानात्कृषिकतरौ ब्राह्मणा नामधारकाः ॥

“ यथा काष्ठमयो हस्तिर्यथा चर्ममयो मृगः । ब्राह्मणोऽप्यनधीयानस्त्रयस्ते नामधारकाः ॥

“ प्रायश्चित्तं प्रयच्छन्ति ये द्विजा नामधारकाः । ते द्विजाः पापकर्माणः समेता नरकं ययुः ” ॥

ययुः यान्तीत्यर्थः । स एव (८।१२-१४, ३५)—

“ अव्रतानाममन्त्राणां जातिमात्रोपजीविनाम् । सहस्रशः समेतानां परिषत्त्वं न विद्यते ॥

२० “ यद्वदन्ति तमोमूढा मूर्खा धर्ममतद्विदः । तत्पापं शतधा भूत्वा तद्वक्तृनधिगच्छति ।

“ अज्ञात्वा धर्मशास्त्राणि प्रायश्चित्तं ददाति यः । प्रायश्चित्ती भवेत् पूतः किल्बिषं पार्षदं व्रजेत् ॥

“ राज्ञश्चानुमते स्थित्वा प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् । स्वयमेव न कर्तव्यं कर्तव्या स्वल्पनिष्कृतिः ” ॥

प्रायश्चित्तविधानस्थलम् । स एव (८।३७)—

“ प्रायश्चित्तं यदा दद्याद्देवतायतनाग्रतः । आत्मकुच्छ्रं ततः कृत्वा जपेद्वै वेदमातरम् ” ॥ इति ।

२५ देवतायतनाग्रत इति शैवस्य वैष्णवस्य वा पुरः स्थित्वा निर्देष्टव्यम् । एतत् पुण्यतीर्थोद्दिश्युपलक्षणम्

“ देवालये नदीतीरे शुचौ देशे सभास्थले । उपाविश्य यथाशास्त्रं प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ” ॥ इति स्मृत्यैः ।

एवं प्रायश्चित्तं विनिर्दिश्यानन्तरं निर्देष्टारः सर्वे स्वात्मशुद्ध्यर्थं तत्प्रायश्चित्तानुसारेण किञ्चित् कुच्छ्रं चरित्वा अनन्तरं वेदमातरं गायत्रीं यथाशक्ति जपेयुः । अङ्गिराः—

“ उपस्थानं व्रतादेशः चर्याशुद्धिः प्रकाशनम् । प्रायश्चित्तं चतुष्पादं विहितं धर्मकर्तृभिः ” ॥ इति ।

३० पराशरः—“ पापं प्रख्यापयेत्पापी दत्त्वा धेनुं तथा वृषम् । तिस्रो धेनुर्महापापे दत्त्वा प्रख्यापयेन्नरः ॥

“ द्विगुणे व्रत आदिष्टे दक्षिणा द्विगुणा भवेत् । यावद्व्रतं तु कर्तव्यं दक्षिणा तावती भवेत् ॥

“ वित्तशाय्यं न कुर्वीत सति द्रव्ये फलप्रदम् । विज्ञाप्य पापं संभ्यानां किञ्चिद्दत्त्वा व्रतं चरेत् ” ॥ इति ।

ब्रह्महत्याप्रायश्चित्तम् । अथ प्राणिहननप्रायश्चित्तमुच्यते । तत्र ब्रह्मवधस्य महापातकस्य प्रायश्चित्तमाह पराशरः (१२।५८)—

“चातुर्विधोपपन्नस्तु विधिवद्ब्रह्मघातके । समुद्रसेतुगमनं प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत्” ॥ इति । चातुर्विधोपपन्नः वेदाध्ययनानुष्ठानवान् । अनेन सर्वा परिषदुपलक्ष्यते । समुद्रे दाशरथिना बद्ध-
सेतुः समुद्रसेतुः । तथात्रां ब्राह्मणघातके पुरुषे यथाविध्यनुष्ठेयत्वेन निर्दिशेदिति विधिवदित्युक्तम् ।
कोऽसौ विधिरित्याकांक्षायां तदतिकर्तव्यतामाह स एव (१२।५९-६३)—

“सेतुबन्धपथे भिक्षां चातुर्विण्यात् समाचरेत् । वर्जयित्वा विकर्मस्थां छत्रोपानद्विवर्जितः ॥

“अहं दुष्कृतकर्मा वै महापातककारकः । गृहद्वारेषु तिष्ठामि भिक्षार्थी ब्रह्मघातकः ॥

“गोकुलेषु वसेच्चैव ग्रामेषु नगरेषु च । तपोवनेषु तीर्थेषु नदीप्रस्रवणेषु च ॥

“एतेषु ख्यापयन्नेनः पुण्यं गत्वा तु सागरम् ।

“दशयोजनविस्तीर्णं शतयोजनमायतम् । रामचन्द्रसमादिष्टं नलसञ्चयसञ्चितम् ॥

“सेतुं दृष्ट्वा समुद्रस्य ब्रह्महत्यां व्यपोहति । सेतुं दृष्ट्वा विशुद्धात्मा अवगाहेत सागरम्” ॥ इति ।

छत्रोपानद्विवर्जित इति न केवलं भिक्षावेलायां किन्तु मार्गगमनेऽपीति द्रष्टव्यम् । अहं दुष्कृत-
कर्मेति भिक्षमानेन वक्तव्य इति उक्तिप्रकारोऽभिहितः । अध्वशान्तः तपोवनादिषु निवसेत् ।
तत्र व्याघ्रादिभये सति ग्रामे नगरे वा प्रविश्य गोशालादेवतायतनादौ पुण्यप्रदेशे निवसेत् ।
एतेषु ख्यापयन्निति न केवलं भिक्षागृहेष्वेव पापप्रख्यापनं किन्तु निवासस्थानेष्वपीत्यर्थः ।
सेतुयात्रां समाप्य पुनः कर्तव्यमाह स एव (१२।६४-६६)—

“पुनः प्रत्यागतो वेष्ट्म वासार्थमुपसर्पति । सपुत्रः सह भृत्यैश्च कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥

“गाश्चैवैकशतं दद्याच्चतुर्वेद्येऽथ दक्षिणाम् । ब्राह्मणानां प्रसादेन ब्रह्महा तु विमुच्यते” ॥ इति ।

सेतुं द्रष्टुमशक्नुवतो भूपतेः प्रायश्चित्तान्तरमाह स एव (१२।६४)—“यजेत वाश्वमेधेन ३०
राजा तु पृथिवीपतिः” इति । कलौ पराशरोक्तं प्रायश्चित्तमेव मुख्यम् (१२।२३)—

“कुते तु मानवा धर्मास्त्रेतायां गौतमाः स्मृताः । द्वापरे शंखलिखिताः कलौ पाराशराः स्मृताः” ॥

इति स्मरणात् । व्यासोऽपि—

“गत्वा सेतुं समुद्रस्य स्नात्वा तत्र महोदधौ । दृष्ट्वा रामेश्वरं लिङ्गं ब्रह्महा तु विशुध्यति” ॥ इति ।

श्रीरामायणे—

“सेतुबन्ध इति ख्यातं त्रैलोक्येनाभिपूजितम् । एतत्पवित्रं परमं महापातकनाशनम्” ॥ इति ।

प्रायश्चित्तान्तरमाह याज्ञवल्क्यः (प्रा. २४३)—

“शिरःकपाली ध्वजवान् भिक्षाशी कर्म वेदयन् । ब्रह्महा द्वादशाब्दानि मितभुक् शुद्धिमाप्नुयात्” इति ।

मनुः (११।७२)—

“ब्रह्महा द्वादशसमाः कुटीं कृत्वा वने वसेत् । भैक्षार्यात्मविशुद्ध्यर्थं कृत्वा शवशिरोध्वजम्” ॥ इति ।

हेमाद्रौ—

“अज्ञानात् ब्राह्मणं हत्वा चीरवासा जटी भवेत् । स्वेनैव हतविप्रस्य कपालं धारयेन्मुदा ॥

“तदभावेऽन्यदीयं वा पानार्थं बिभृयात्सदा । तद्वस्त्रं ध्वजदण्डे तु धृत्वा वनचरो भवेत् ॥

“वन्याहारो भवेन्नित्यमेकाहारो मिताशनः । सम्यक् सन्ध्यामुपासीत त्रिकालं स्नानमाचरेत् ॥

- “अध्यापनं चाध्ययनं वर्जयन् संस्मरेद्भारिम् । ब्रह्मचर्यव्रतं नित्यं चरेत् गन्धादिवर्जितः ॥
 “तीर्थान्युपवसेच्चैव पुण्यक्षेत्राश्रमाणि च । यदि वन्यैर्न जीवेत ग्रामे भिक्षां समाचरेत् ॥
 “अखण्डेन शरावेण रक्तवर्णेन वर्णतः । वदेच्च ब्रह्महाऽस्मीति सर्वांगाराणि पर्यटेत् ॥
 “चतुर्वर्णेषु वा भैक्षं त्रिवर्णेष्वथ वा चरेत् । मृष्टामृष्टाविवेकेन तदन्नं चाविकुत्सयन् ॥
 ५ “द्वादशाब्दं व्रतं कुर्यादेवं हरिपरायणः । व्रतमध्ये मृगैर्वाऽपि रोगैर्वाऽपि हतो यदि ॥
 “गोनिमित्तं द्विजार्थं वा नार्यर्थं यदि वा म्रियेत् । ब्रह्महा शुद्धिमाप्नोति द्वादशाब्दव्रतेन वै ” ॥ इति ।
आपस्तम्बः (१।९।२४।२०)—“द्वादशवर्षाणि चरित्वा सिद्धः सद्भिः संप्रयोगः ” ॥ इति ।
 अत्र **हरदत्तः**—सद्भिः संप्रयुज्यते येन विधिना स कर्तव्यः स उच्यते । कृतप्रायश्चित्तः स्वहस्ते यवसं
 गृहीत्वा गामाह्वयेत् । सायमागत्य श्रद्धाधाना भक्षयति तदा सम्यग्नेन व्रतं चरितमिति जानीयात् ।
 १० अन्यथा नेति । प्रायश्चित्तान्तरमाह **मनुः** (१।१।७६-७९)—
 “सर्वस्वं वा वेदविदे ब्राह्मणाया उपपादयेत् । धनं वा जीवनायालं गृहं वा सपरिच्छदम् ।
 “ब्राह्मणार्थं गवार्थं वा सम्यक् प्राणान् परित्यजेत् । मुच्यते ब्रह्महत्याया गोप्ता गोब्राह्मणस्य च” ॥ इति ।
 स्वमरणमभ्युपगम्य गोब्राह्मणरक्षणे प्रवृत्तो यदि कथञ्चिज्जीवेत्तदा गोब्राह्मणयोः स गोप्ता जीवन्नपि
 ब्रह्महत्याया मुक्तो भवति । **स एव** (१।१।७४-७५, ७७)—
 १५ “यजेत वाऽश्वमेधेन स्वर्जिता गोसेवेन वा । अभिजिद्विश्वजिद्भ्यां वा त्रिवृताग्निष्ठुतापि वा ॥
 “जपन्वान्यतमं वेदं योजनानां शतं व्रजेत् । ब्रह्महत्यापनोदाय मितभुङ्क्ष्यतेन्द्रियः ॥
 “हविष्यभुग्वा सुतेरत्प्रतिस्रोतां सरस्वतीम् । जपेद्वा नियताहारस्त्रिवे वेदस्य संहिताम् ” ॥
याज्ञवल्क्यः (प्रा. २।४४-४५)—
 “ब्राह्मणस्य परित्राणाद्गवां द्वादशकस्य वा । तथाऽश्वमेधावभृथस्नानाद्वा शुद्धिमाप्नुयात् ॥
 २० “दीर्घतीव्रामयग्रस्तं ब्राह्मणं गामथापि वा । दृष्ट्वा पथि निरातङ्कं कृत्वा वा ब्रह्महा शुचिः ” ॥ इति ।
 आवृत्त्या ब्रह्मवधे आचतुर्थीद्व्रतमावर्तनीयम् । तदाह **तुर्मनुगालवौ**—
 “वधे” प्राथमिकादस्मात् द्वितीये द्विगुणं चरेत् । तृतीये त्रिगुणं चैव चतुर्थे नास्ति निष्कृतिः” ॥ इति ।
वधोद्यमे प्रायश्चित्तम् । वधोद्यमेऽपि^१ वधप्रायश्चित्तमाह **याज्ञवल्क्यः** (प्रा. २।५२)—
 “चरेद्भ्रतमहत्याऽपि घातार्थं चेत्समाहितः ” ॥ इति । **स्मृत्यन्तरेऽपि**—“अहत्वाऽपि यथावर्णं
 २५ ब्रह्महत्याव्रतं चरेत् ” ॥ इति । यत्तु **वशिष्ठवचनं** ‘द्वादशरात्रमब्रूमक्षो द्वादशरात्रमुपवसेत्’ इति,
 तन्मनोध्यवसितब्रह्महत्यास्य तदैवोपरतजिघांसस्य वेदितव्यमिति **माधवीये** ।
उक्तप्रायश्चित्ताकरणे राजकृत्यमुक्तम्—
 “पट्टेण वा स्वराष्ट्रे वा यो विप्रो ब्रह्महा भवेत् । ब्रह्महत्यां विनिश्चित्य त्रुटित्वा तच्छिखां ततः ॥
 “ब्रह्मसूत्रं तथा छित्वा पिशित्ताशनवाहनम् । आरोहयित्वा तु तत्काले शवं तप्तमयं लिखेत् ॥
 ३० “गुरुतले भगः कार्यः सुरापाने सुराध्वजः । स्तेये तु श्वपदं कार्यं ब्रह्महण्यशिराः पुमान् ॥
 “एवं कृत्वा तु शास्त्रेण निर्वास्यो विषयाद्बहिः ।
 “तत्पुत्रा ब्रह्महन्ते सहायास्ते यदाऽभवन् । तानप्येवं पुनः कृत्वा निर्वास्याः पूर्ववद्बहिः ॥
 “तत्क्षेत्रं बहुलं धान्यं पश्वारामादिकं च यत् । तत्सर्वं देवताप्रीत्यै राजा कुर्यात्समाहितः ॥

१ ग-सा । २ ग-नुसरेत् । ३ क्ष-कृत्वा । ४ कगध-विधेः । ५ क्ष-विविध । ६ ग-त्तने ।

७ क्ष-विहित । ८ क्ष-तले श्वानं ।

“ विचार्य बहुधा राजा तत्पत्नी पुत्रकान् बहून् । दोषवन्तस्तथा तेऽपि कर्तव्या राजवल्लभैः ॥
 “ नो चेत्तद्वृत्तिधान्यादीन् तेभ्यो दत्त्वाऽथ शिक्षयेत् ” ॥ इति । पुत्रादीनां दोषाभावे तद्वृत्त्यं तेभ्य
 एव दत्त्वा ब्रह्महन्त्रा सह संभाषणादिकं न कार्यमिति पुत्रादीन् शिक्षयेदित्यर्थः । स्मृत्यन्तरे—
 “ अयोरूपं द्विजं कृत्वा मूर्धहीनं प्रतापयेत् । अङ्कयित्वा ललटे तु देशाग्निर्वासयेद्ब्रह्महिः ॥
 “ द्वादशाब्दविधानेन शुद्धो भवितुमर्हति । अशक्तो व्रतमाचर्तुमेवं कृत्वा विशुध्यति ” । ५
 जनकादिहत्यायां प्रायश्चित्तान्तरमुक्तम् स्कान्दे—

“ अज्ञानाज्जनकं हन्यान्निमित्तैर्बहुभिर्द्विजः । चतुर्विंशति वर्षाणि व्रतं कृत्वा विशुध्यति ॥
 “ द्विगुणं च गवां दानं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् । दीक्षितं ब्राह्मणं हत्वा द्विगुणं व्रतमाचरेत् ॥
 “ मातामहं मातुलं च स्यालं जामातरं तथा । आचार्यस्य वधे चैव व्रतमुक्तं चतुर्गुणम् ” ॥ इति ।
 स एव—“ स्नातकं ऋत्विजं हत्वा द्विगुणं व्रतमाचरेत् ” ॥ इति । चत्वारिंशत्संस्कारपूतः १०
 स्नातकः । उत्पाद्य पुत्रं संस्कृत्येत्युक्तलक्षण आचार्यः । दक्षः (३२६)—

“ सममब्राह्मणे देयं द्विगुणं ब्राह्मणबुधे । आचार्ये शतसाहस्रं सोदर्ये दत्तमक्षयम् ” ॥ इति
 प्रतिपाद्योक्तवान्
 “ समद्विगुणसाहस्रमानन्त्यं च यथाक्रमम् । दाने फलविशेषः स्याद्विंशत्यां तद्वदेव हि ” ॥ इति ।
 आपस्तम्बः (१।१।२४।२४)—“ गुरुं हत्वा श्रोत्रियं वा कर्मसमाप्तमेतेनैव विधिनोत्तमादुच्छ्रा- १५
 साचरेन्नस्यास्मिन् लोके प्रत्यापत्तिर्विद्यते कल्मषं तु निर्हण्यते ” इति । गुरुः पित्राचार्यादिः ।
 श्रोत्रियोऽधीतवेदः । सोमान्तानि कर्माणि समाप्तानि यस्य स कर्मसमाप्तः । तौ हत्वा एतेन कुटिं
 कृत्वेत्यनन्तरोक्तेन । ओत्तमादुच्छ्रासादाप्राणवियोगादित्यर्थः । भ्रूणहत्याया अपि यावज्जीवं
 व्रतधारणमुक्तमापस्तम्बेन (१।१।२४।२४)—“ एतेनैव विधिनोत्तमादुच्छ्रासाचरेत् ” । इति ।
 “ भ्रूणहा द्वादशसमाः कपाली ” बोधायनवचनं भ्रूणहत्यासमपापविषयम् । भ्रूणः साङ्गवेदीति निश्चयः । २०

क्षत्रियादिकृतब्रह्महत्याप्रायश्चित्तम् । क्षत्रियादीनां ब्राह्मणवधे प्रायश्चित्तमाह व्यासः—

“ अज्ञानात् बाहुजो विप्रं हत्वा विविधसाधनैः । पश्चात्तापसमायुक्तो द्विगुणं व्रतमाचरेत् ॥
 “ अज्ञानाद्भूजो हत्वा ब्राह्मणं त्रिगुणं चरेत् । पादजो ब्राह्मणं हत्वा मुसलैर्वधमर्हति ॥
 “ केचित्कारीषदाहेन वधमिच्छन्ति पावनम् । ब्राह्मणीं स्थविरां हत्वा विधवां च सुवासिनीम् ॥
 “ बालं कन्यां यदा हन्यात्कारीषेणैव दाहयेत् ” ॥ स्मृत्यन्तरेऽपि— २५

“ द्विगुणं क्षत्रियस्योक्तं त्रिगुणं तद्विशः स्मृतम् । ब्राह्मणं हन्ति यः शूद्रस्तस्य दण्डो वधः स्मृतः ॥
 “ कन्याबालवधे गर्भबाधने विप्रयोषिताम् । पूर्ववद्दण्डयेद्राजा ह्यन्यथा नरकं व्रजेत् ” ॥ इति ।
 गौतमः (१२।१)—“ शूद्रो द्विजातीनतिसन्धायाभिहत्य च वाक्दण्डपारुष्याभ्यामंगमोच्यो
 येनोपहन्त्यात् ” ॥ इति । क्षत्रियादिवधे प्रायश्चित्तमाह मनुः (१।१।२६—१३०)—

“ तुरीयो ब्रह्महत्यायाः क्षत्रियस्य वधे स्मृतः । वैश्येऽष्टमांशो वृत्तस्थे शूद्रे ज्ञेयस्तु षोडशः ॥ ३०
 “ अकामतस्तु राजन्यं विनिपात्य द्विजोत्तमः । ऋषभैकसहस्रां गां दद्याच्छुद्ध्यर्थमात्मनः ॥
 “ प्रमाप्य वैश्यं वृत्तस्थं दद्याच्चैकशतं गवाम् । एतदेव व्रतं कृत्स्नं षाण्मासाच्छूद्रहा चरेत् ॥
 “ ऋषभैका दशा वापि दद्याद्विप्राय गास्तथा ” ॥ इति ।

अज्ञानादपहृतस्य सुवर्णस्य पुनर्दानं तु प्रायश्चित्तं स एवाह—

“ब्रह्मस्वं यस्तु हत्वा च पश्चात्तापमवाप्य च । पुनर्दत्त्वा तु विप्रेभ्यः प्रायश्चित्तमिदं चरेत् ॥

“कृच्छ्रं सान्तपन्नं कृत्वा द्वादशाहोपवासतः । शुद्धिमाप्नोति विप्रेन्द्र अन्यथा पतितो भवेत्” ॥ इति ।

क्षत्रियादीनां स्तेयप्रायश्चित्तम् । राज्ञां स्तेयप्रकारोऽभिहितः शिवरहस्ये—

५ “अन्यायाद्विप्रग्रामेषु अनाथेभ्यो धनं च यत् । अदण्डचेभ्योऽपि यद्वित्तं स्तेयं तद्भूभुजामिह ॥

“स्तेयं कृत्वा सुरां पीत्वा मृत्वा राजा विशुध्यति” । नागरखण्डे—

“ऊरुजस्तु सुरां पीत्वा हत्वा स्वर्णं द्विजन्मनाम् । राजा च शुद्धिमाप्नोति यच्छेद्धा ब्रूयुतं गवाम् ।

“पादजस्तु सुरां पीत्वा हत्वा हेमं द्विजन्मनाम् । राज्ञा दण्ड्यः स्वधर्मेण मुसलेन हतः शुचिः” ॥ इति ।

कात्यायनः—

१० “विप्रादीनां तु नारीणां स्तेयं वा पानमेव वा । संभवेद्यदि दैवेन नेच्छन्ति मरणं बुधाः ॥

“त्याज्या एव स्त्रियस्ताश्च न पोष्या धर्मलिप्सुभिः” ॥ इति ।

रजतस्तेयप्रायश्चित्तम् । रजतस्तेये नारदः—

“सुवर्णमानं यस्मिन्चै रजतं स्तेयकर्मणि । कुर्यात्सान्तपन्नं सम्यगन्यथा पतितो भवेत् ॥

“दशानिष्कान्तपर्यन्तमूर्ध्वनिष्कचतुष्टयात् । हत्वा तु रजतं विद्वान् कुर्याच्चान्द्रायणं द्विजः ॥

१५ “ततो विंशतिनिष्कान्तं रजतस्तेयकर्मणि । चान्द्रायणद्वयं प्रोक्तं तत्पापं परिशोधनम् ॥

“शतादूर्ध्वं सहस्रान्तं प्रोक्तं चान्द्रायणद्वयम् । सहस्रादधिकस्तेये ब्रह्महत्याव्रतं चरेत्” ॥

ताम्रस्तेये प्रायश्चित्तम् । ताम्रस्तेये हैमाद्रौ—

“पलद्वये पञ्चगव्यं पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् । प्राजापत्यं पञ्चपले तप्तं दशपले स्मृतम् ।

“विंशतपले तु चान्द्रं स्यात्स्यात्पञ्चाशति तु त्रयम् । ताम्रं षष्टिपले प्रोक्तं मांसं कृत्वाऽधमर्षणम् ॥

२० “कण्ठदध्नजले स्थित्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः । ताम्रेऽशीतिपले तत्र स्तेयं कृत्वा तु पूर्वजः ॥

“भूपरिक्रमणं कृत्वा भूयश्चान्द्रं ततः परम् । हत्वा शतपलं ताम्रं स्वर्णस्तेयसमं विदुः” ॥ इति ।

स्वर्णचतुष्टयपरिमितं पलम्

“पलं सुवर्णं चत्वारि तच्चत्वारि भुवो भवेत् । चत्वारिंशद्भुवाणां च भार इत्युच्यते बुधैः” ॥ इति स्मृतैः ।

कांस्यादिस्तेये प्रायश्चित्तम् । चतुर्विंशतिमते—

२५ “कांस्यपित्तलमुख्येष्वयस्कान्तेषु पञ्चसु । सहस्रनिष्कमानं तु पारक्यं परिकीर्तितम् ॥

“प्रायश्चित्तं तु लोहानां स्तेये रजतवत्स्मृतम्” ॥ इति ।

धनधान्यादिस्तेयप्रायश्चित्तम् । मनुः (११।१६२-१६९)—

“धान्यान्नधनचौर्याणि कृत्वा कामाद् द्विजोत्तमः । स्वजातीयगृहादेव कृच्छ्राब्देनैव शुध्यति ॥

“मनुष्याणां तु हरणे स्त्रीणां क्षेत्रगृहस्य च । कूपवापीजलानां च शुद्धिश्चान्द्रायणं स्मृतम् ॥

३० “द्रव्याणामल्पसाराणां स्तेयं कृत्वाऽन्यवेश्मनः । चरेत्सान्तपन्नं कृच्छ्रं निर्यात्यात्मविशुद्ध्ये ॥

“भक्ष्यभोज्यापहरणे यानशय्यासनस्य च । पुष्पमूलफलानां च पञ्चगव्यं विशोधनम् ॥

“तृणकाष्ठद्रुमाणां च शुष्कान्नस्य गुडस्य च । चेलचर्माभिषाणां च त्रिरात्रं स्याद्भोजनम् ॥

“मणिमुक्ताप्रवालानां ताम्रस्य रजतस्य च । अयःकांस्योपलानां च द्वादशाहं कणान्नता ॥

“कार्पासकीटजीर्णानां द्विखुरैकखुरस्य च । पक्षिगन्धौषधीनां च रज्ज्वाश्च त्रिरहः पयः ॥

३५ “एतैर्व्रतैरपोहेत पापं स्तेयकृतं द्विजः” ॥

भूम्यपहारप्रायश्चित्तम् । भूम्यपहारे दोषाधिक्यमाह पराशरः (७५)—

“वापिकूपतटाकाथैर्वाजपेयशतैरपि । गवां कोटिप्रदानेन भूमिहर्ता विशुध्यति ” ॥

नारदः—“केदारे तप्तकृच्छ्रं स्याद्ब्रह्मदेवान्द्रमीरितम् ” ॥ इति ।

राजदण्डमाहापस्तम्बः (२।१०।२७।१६-१७) “अयमस्य दण्डः । पुरुषवधे स्तेये भूम्यादान इति । चक्षुर्निरोधस्त्वेतेषु ब्राह्मणस्य ” इति । भूम्यादानं भूम्यपहारः । पुरुषवधादिषु शूद्रो वध्यः । ५
ब्राह्मणस्य तु पट्टबन्धादिना चक्षुषी निरोद्धव्ये न तत्पाटयितव्ये ‘न शारीरो ब्राह्मणे दण्ड’ इति
‘अक्षतौ ब्राह्मणो व्रजेत्’ इत्यादिस्मरणात् । वस्त्रादिस्तेयप्रायश्चित्तम् । देवस्वामी—

“स्थूलतन्तुकृते वस्त्रे स्तेयं कृत्वा तु पूर्वजः । पश्चात्तापसमायुक्तः प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

“सूक्ष्मतन्तुकृते वस्त्रे पराकं मुनिचोदितम् । पीतवस्त्रं मुषित्वा तु तप्तकृच्छ्रद्वयं चरेत् ॥

“नीलमये सूक्ष्मवस्त्रे चरेच्चान्द्रायणत्रयम् ।

“मूल्याधिके पट्टवस्त्रे कौशेये च मुनीश्वराः । सद्यः पतति पापात्मा घृताक्तोऽग्निं विशेत्तदा ” ॥ १०

अजादिहरणे प्रायश्चित्तम् । जाबालिः—

“अजं वस्तं गृहेऽरण्ये पारक्यं गर्वितो द्विजः । मुषित्वा निष्कृतिं तत्र प्राजापत्यं समाचरेत् ” ॥

मार्कण्डेयः—

“मार्जारं नकुलं सर्पं भारद्वाजं कपिं तथा । कृच्छ्रार्धमाचरेद्धृत्वा ज्ञात्वा तद्विगुणं चरेत् ॥ १५

“द्विजानां तल्पहरणे प्रायश्चित्तं प्रजापतिः । प्राह चान्द्रं पराकं च तप्तं चैव यथाक्रमम् ” ॥ इति ।

मरीचिः—

“यो विप्रः पापमज्ञात्वा उपानत्पादुके हरेत् । स तु देहविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

“छत्रं हरेद्विजो यस्तु महातपनिवारणम् । वस्त्रावृते पराकं स्यात्केतकीपर्णसंवृते ॥

“यावकं तालपत्रैश्च निर्मितं राजवंलभे । पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चात्सर्वपापविनाशनम् ॥ २०

“पुष्पजालं हि पारक्यं देवपूजार्थमीदरात् । सुगन्धिकरवीरादि हृत्वा विप्रः स पापभाक् ॥

“देवार्थं पुष्पहरणे चान्द्रं वत्सरसेवनात् । पराकं ब्रह्मनिर्माणे कायं क्षत्रियवैश्ययोः ” ॥ इति ।

देवलः—

“कदलीमातुलुङ्गं च नालिकेरं च पानसम् । द्राक्षाखर्जूरजम्बीरचूतजम्बूफलानि च ॥

“फलानि विविधानीह देवप्रियकराणि वै । हृत्वा विप्रस्तु पारक्यं प्रायश्चित्तमिदं चरेत् ॥ २५

“ऋतुत्रये पराकं स्याद्वत्सरे चान्द्रमुच्यते ” ॥ इति ।

गृहोपकरणहरणे प्रायश्चित्तमाह गौतमः—“मुसलं दृषदं चैव ह्यलूखलमनन्तरम् ।

“वेणुपात्रं तथा शूर्पं मृन्मयं भाण्डमेव च । गृहोपकरणं हृत्वा पुनः संस्कारमर्हति ” ॥ इति ।

सालग्रामादेः पूजोपकरणस्य च हरणे प्रायश्चित्तम् । देवलः—

“सालग्रामं शैवल्लिङ्गं प्रतिमां चक्रपाणिनः । घण्टामुपस्करं विप्रो यो हरेत्पापवृद्धिमान् ॥ ३०

“सालग्रामे तु चान्द्रं स्याच्छैवल्लिङ्गे तथैव च । प्राजापत्यं चक्रपाणे रितरेषु तथैव च ॥

“शतादूर्ध्वं तु रुद्राक्षं हृत्वा चान्द्रत्रयं स्मृतम् । शते पराकमल्पे तु गायत्रीजपमाचरेत् ” ॥

नारदः—“लेखनीं बन्धसूत्रं च पुस्तकं फलकं तथा ।

“हृत्वा दत्त्वा तु तद्द्रव्यं पश्चात्तापसमन्वितः । प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रं तदा देहविशुद्ध्ये ” ॥

माध्यस्थ्येन धनग्रहणे प्रायश्चित्तम् ।

३५

देवलः—“व्यवहारादिकलहे प्रायश्चित्तादिकर्मसु । धनं गृहीत्वा यो विप्रः कौटसाक्ष्यं वदेत् चेत् ॥

“तस्य पुत्राश्च पौत्राश्च तदा नाशमवाप्नुयुः । तस्य देहविशुद्ध्यर्थं महाचान्द्रमुदीरितम् ” ॥ इति ।

बुद्धिः कामः । व्यर्थचिन्तामात्रकामः । ताभ्यामुत्पादितः । क्रोधो यस्यासौ दण्डादिभिर्यदि हन्यात्तदा मरणमन्तरेण केवलं प्रहृता स्यात् कामकृतस्संप्रहारो घातः । अकामकृतं तु मारणं घात इत्यर्थः । दण्डलक्षणमुक्तं तेनैव (९।२)—

“ अङ्गुष्ठमात्रस्थूलस्तु बाहुमात्रप्रमाणकः । आर्द्रस्तु स पलाशश्च दण्ड इत्यभिधीयते ” ॥

५ अधिकप्रमाणदण्डादिभिर्मरणे तु प्रायश्चित्तद्वैगुण्यमाह स एव (९।३)—

“ दण्डादूर्ध्वं यदाऽन्येन प्रहाराद्यदि पातयेत् । प्रायश्चित्तं तदा प्रोक्तं द्विगुणं गोवधे चरेत् ” ॥
दण्डाधिकमानेन लगुडादिना मारणे अकामकृतेऽपि द्विगुणं चरेदित्यर्थः ।

द्विगुणस्य प्रायश्चित्तस्य निमित्तान्तरमाह स एव (९।४६)

“ व्यापन्नानां बहूनां च बन्धने रोधनेऽपि च । द्विगुणं विहितं तस्य प्रायश्चित्तं विशुद्ध्ये ” ॥ इति ।

१० कामकृते गोवधे निमित्तविशेषानुपजीव्यप्रायश्चित्तविशेषान् दक्षिणासहितानाह स एव (९।२०)—

“ काष्ठलोष्ठकपाषाणैः शस्त्रेणैवोद्धतो बलात् । व्यापादयति यो गां तु तस्य शुद्धिं विनिर्दिशेत् ॥

“ चरेत्सान्तपनं काष्ठे प्राजापत्ये तु लोष्ठके । तप्तकुच्छं तु पाषाणे शस्त्रपातेऽतिकुच्छकम् ।

“ पञ्च सान्तपने गावः प्राजापत्ये तथा त्रयः । तप्तकुच्छे भवत्यष्टावतिकुच्छे त्रयोदश ” ॥ इति ।

सान्तपनादीनां स्वरूपमग्रे वक्ष्यते ।

१५ गृहे बन्धस्य गोर्बन्धनिमित्ते मरणे प्रायश्चित्तमाह स एव (९।३२)—

“ बन्धपाशनिबद्धो म्रियेत यदि गोपशुः । भवने तस्य पापी स्यात् प्रायश्चित्तार्धमर्हति ” ॥ इति ।

शृङ्गभङ्गादौ स एवाह (९।१७)—

“ पाषाणेनैव दण्डेन गावो येनाभिघातिताः । शृङ्गभङ्गे चरेत्पादं द्वौ पादौ नेत्रघातने ॥

“ लाङ्गुले पादकुच्छं तु द्वौ पादावस्थिभञ्जने । त्रिपादं चैव कर्णे तु चरेत्सर्वं निपातने ॥

२० “ अतिदाहे चरेत्पादं द्वौ पादावतिवाहने । नासिक्ये पादहीनं तु चरेत्सर्वं निपातने ॥

“ एका चेद्बहुभिः काचिद्वैवाभ्यापादिता यदि । पादं पादं तु हत्यायाश्चरेयुस्ते पृथक् पृथक् ॥

“ वाहेनात्तु विपद्येत अनङ्गान्योक्तत्रयन्त्रितः । उक्तं पराशरेणैव हेक्कं पादं यथाविधि ॥

“ प्रेरयन् कूपवापीषु वृक्षछेदेषु पातयन् । गवाशनेषु विक्रीणन् ततः प्राप्नोति गोवधम् ” ॥ इति ।

अङ्गुष्ठप्रमाणदण्डेन सञ्चारणाय प्रहारे कचित्प्रायश्चित्ताभावमाह स एव (९।११)—

२५ “ मूर्च्छितः पतितो वापि दण्डेनाभिहतः स तु । उत्थितस्तु यदा गच्छेत्पञ्च सप्त दशैव वा ॥

“ ग्रासं वा यदि गृह्णीयात्तोयं वापि पिबेद्यदि । पूर्वं व्याध्युपसृष्टश्चेत्प्रायश्चित्तं न विद्यते ” ॥ इति ।

अन्यत्रापि कचित्प्रायश्चित्ताभावमाहङ्गिराः—“ सायं सङ्गोपनार्थं तु न दूष्येद्रोधबन्धयोः ” इति ।

पराशरोऽपि (९।१)—

“ गवां संरक्षणार्थाय न दूष्येद्रोधबन्धयोः । तद्वधं तु न तं विद्यात्कामाकामकृतं तथा ॥

३० “ कूपस्त्रौ तटस्त्रौ नदीस्त्रौ तथैव च । अन्येषु धर्मस्त्रौतेषु प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥

“ सङ्ग्रामप्रहृता ये च ये दग्धा वैश्मकेषु च । द्वाग्निग्रामघातेषु प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥

“ ग्रामघाते शरौघेण वैश्मभङ्गान्निपातने । अतिवृष्टिहतानां च प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥

“ यन्त्रिता गौश्चिकित्सार्थं गृहगर्भविमोचने । यत्ने कृते विपद्येत्तु प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥

“ केशानां रक्षणार्थाय द्विगुणं व्रतमाचरेत् । द्विगुणे व्रत आदिष्टे द्विगुणां दक्षिणां भवेत् ॥

“ राजा वा राजमात्रो वा ब्राह्मणो वा बहुश्रुतः । अकृत्वा वपनं तस्य प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥
 “ सर्वान् केशान् समुच्छित्य छेदयेदङ्गुलिद्वयम् । एवं नारीकुमारीणां शिरसो मुण्डनं स्मृतम् ॥
 “ न स्त्रिया केशवपनं न दूरे शयनासनम् । गृहेषु नियतं तिष्ठेच्छुचिर्नियममाचरेत् ।
 “ इह यो गोवधं कृत्वा प्रच्छादयितुमिच्छति । स याति नरकं घोरं कालसूत्रमसंशयः ॥
 “ विमुक्तो नरकात्तस्मान्मर्त्यलोकेषु जायते । क्लीबो दुःखी च कुष्ठी च सप्तजन्मनि वै नरः ॥ ५
 “ तस्मात्प्रकाशयेत्पापं स्वधर्मं सततं चरेत् । स्त्रीबालनृपगोविप्रेष्वतिकोपं विवर्जयेत् ” ॥
 हेमाद्रौ—“ यो विप्रो वृषभं हन्याच्छिवलिङ्गाङ्कितं तनौ । त्रिवारं क्ष्मां परिक्रम्य ब्रह्मचर्यव्रते स्थितः ॥
 “ धनुष्कोटिं ततो गत्वा गन्धमादनपर्वते । तत्र स्नात्वा त्रिरात्रं च रामलिङ्गं निरीक्ष्य च ॥
 “ कृत्वा चान्द्रायणं कृच्छ्रमथ शुध्येन्न संशयः ” ॥ तत्रैव—
 “ अनङ्गान् हन्यते विप्रैरङ्गमदण्डशिलादिभिः । तप्तकृच्छ्रत्रयं कृत्वा पिबेयुः पञ्चगव्यकम् ॥ १०
 “ शुद्धिमाप्नुयुरेतेन नान्यथा शुद्धिरिष्यते ” ॥ इति ।

प्राण्यन्तरहनने प्रायश्चित्तम् । प्रसङ्गात्प्राण्यन्तरहननस्यापि प्रायश्चित्तमुच्यते ।
 तत्र मनुः (११।१३१-१३२, १४०)—

“ मार्जारनकुलौ हत्वा चाषं मण्डूकमेव च । श्वगोघोलूककाकांश्च शूद्रहत्याव्रतं चरेत् ॥
 “ पयः पिबेत् त्रिरात्रं वा योजनं वा वने व्रजेत् । उपस्थशेत्स्रवन्त्यां वा सूक्तं वाग्दैवतं जपेत् ॥ १५
 “ अस्थिमतां तु सत्त्वानां सहस्रस्य प्रमापणे । पूर्णं चानस्यानस्थानां तु शूद्रहत्याव्रतं चरेत् ” ॥
 पक्षिषु कुम्यादिषु च अस्थिमत्सहस्रवधे शकटपरिमितानस्थिमद्वधे च शूद्रहत्याव्रतं चरेदित्यर्थः ।
 आपस्तम्बः—(१।१।२५।१३) “ वायसप्रचलाकबर्हिणचक्रवाकहंसभासमण्डूकनकुलडेरिका-
 श्वर्हिंसायां शूद्रवत्प्रायश्चित्तम् ” इति । प्रत्येकवधे तु स एव—

“ किञ्चिदेव तु विप्राय दद्यादस्थिमतां वधे । अनस्थानां चैव हिंसायां प्राणायामेन शुध्यति ” ॥ २०
 पराशरः (६।३)—

“ हत्वा मूषिकमार्जारसर्पाजगरडुण्डुमान् । कृसरं भोजयेद्विप्रां लोहदण्डश्च दक्षिणा ” ॥ इति ।
 कृसरं तिलमुद्गमिश्रमन्नम् । लोहं कृष्णायसम् । याज्ञवल्क्यः (प्रा. २७०-२७६)—
 “ मार्जारगोधानकुलमण्डूकांश्च पतत्रिणः । हत्वा ज्यहं पिबेत्क्षीरं कृच्छ्रं वा पादकं चरेत् ॥
 “ गजे नीलवृषाः पञ्च शुकवत्सो द्विहायनः । खराजमेषेषु वृषो देयः क्रौञ्चे द्विहायनः ॥ २५
 “ हंसश्च्येनकपिकव्याज्जलस्थलशिसण्डिनः । भासं च हत्वा गां दद्यात्कव्यादां तु सवत्सकाम् ॥
 “ उरगेष्वायसो दण्डः पण्डके त्रपुसीसकम् । कोले घृतघटो देय उष्ट्रे कुञ्जो हर्येऽशुकम् ॥
 “ तित्तिरौ तु तिलद्रोणं गजादीनामशकुवन् । दातुं दानं चरेत्कृच्छ्रमेकैकस्य विशुद्धये ॥
 “ किञ्चित्सास्थिवधे देयं प्राणायामस्त्वनस्थिके । वृक्षगुल्मलतावीरुच्छेदने जप्यमृकशतम् ॥
 “ स्यादौषधिवृथाच्छेदे क्षीराशीगोनुगो दिनम् ” ॥ इति । ३०

पराशरः—“ गजस्य चतुरङ्गस्य महिषोष्ट्रनिपातने । प्रायश्चित्तमहोरात्रं त्रिसन्ध्यामवगाहनम् ॥
 “ कुरङ्गं वानरं सिंहं चित्रं व्याघ्रं तु घातयन् । शुध्यतेऽथ त्रिरात्रेण विप्राणां तर्पणेन च ॥
 “ वृकजम्बूकक्षणाणां तरक्षुश्वानघातकः । तिलप्रस्थं द्विजे दद्याद्वायुमक्षो दिनत्रयम् ॥
 “ भृङ्गरोहिड्वाराणां वैधे बस्तस्य घातकः । अफालकृष्टमश्रीयादहोरात्रमुपोष्य सः ॥

- “ शिंशुमारं तथा गोधां हत्वा कूर्मं च शल्यकम् । वृन्ताकफलभक्षी चाप्यहोरात्रेण शुध्यति ॥
 “ एवं चतुष्पदानां च सर्वेषां वनचारिणाम् । अहोरात्रोषितस्तिष्ठेज्जपन्वै जातवेदसम् ॥
 “ क्रौञ्चसारसहंसांश्च चक्रवाकांश्च कुक्कुटम् । जालपादं च शरभमहोरात्रेण शुध्यति ॥
 “ वलांकटिद्विभौ वापि शुक्रपारावतावपि । अहिनक्रैर्विधाती च शुध्यते नक्तभोजनात् ॥
 ५ “ वृककाककपोतानां शारीतिचिरिघातकः । अन्तर्जले उभे सन्ध्ये प्राणायामेन शुध्यति ॥
 “ गृध्रस्थेनशशादानामुलूकस्य च घातकः । अपक्वाशी दिनं तिष्ठेन्निकालं मारुताशनः ॥
 “ वल्गुलीटिद्विभानां च कोकिलाखञ्जरीटके । लाविकारक्तपक्षेषु शुध्यते नक्तभोजनात् ॥
 “ कारण्डवचकरोणां पिङ्गलाकुररस्य च । भारद्वाजादिकं हत्वा शिवं पूज्य विशुध्यति ॥
 “ भेरुण्डचाषभासांश्च पारावतकपिञ्जलौ । पक्षिणां चैव सर्वेषामहोरात्रमभोजनम् ” ॥
 १० हेमाद्रौ—“महिषीहनने विप्रो महासान्तपनं चरेत् । स चेद्गोक्षी बालवत्सा महासान्तपनद्वयम् ” ॥

वृक्षच्छेदादिप्रायश्चित्तम् ।

- “ इन्धनार्थं द्रुमच्छेदी तद्दोषस्योपशान्तये । प्राजापत्यं सकृत्कृत्वा शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥
 “ कृष्यर्थमिन्धनार्थं वा यज्ञवृक्षविभेदने । पराकं तत्र कुर्वीत शुद्धो भवति वृक्षहा ॥
 “ विल्वाश्वत्थौ यदा छिन्नास्तदा चान्द्रायणं चरेत् । पुष्पारामस्य विच्छेदी वनद्रोहीति गद्यते ॥
 १५ “ तद्दोषपरिहारार्थं गायत्र्या लक्षमुच्यते ।
 “ तित्तिणीचूतयोश्छेदे बहुजन्तूपकारकात् । कपित्थामलकच्छेदे सम्यक् चान्द्रायणं चरेत् ॥
 “ कोविदारतरौ निम्बे प्राजापत्यं विशेषनम् । खजूरे नालिकेरे च तालहिन्तालयोस्तथा ॥
 “ तप्तकृच्छ्रं चरेद्विद्वान् छेददोषोपशान्तये ।
 “ जम्बीरमातुलङ्गादि च्छित्त्वा पापविशुद्ध्ये । सम्यक् स्नात्वा शुचिर्भूत्वा गीताशास्त्रं पठेत्कृत्वा ॥
 २० “ तटाककूपकासारच्छेदने विप्रसत्तमः । पूर्ववत्तं दृढं कृत्वा प्राजापत्यं समाचरेत् ।
 “ विष्णुवाल्यादिविच्छेदे तद्द्रव्यैर्द्रवमाचरेत् । शून्यालयस्य विच्छेदे पराकं द्विजसत्तमः ” ॥ इति ।
 याज्ञवल्क्यः (प्रा. २९६)—
 “ वृक्षगुल्मलतानां तु छेदने जप्यमृकशतम् । स्याद्दोषधीवृथाछेदी क्षीराशी गोतुगो दिनम् ” ॥ इति ।
 अत्र वृथाछेदीति विशेषणायज्ञार्थछेदने न दोषः । यत्तु शङ्खवचनम्—“ संवत्सरं व्रतं कुर्या-
 २५ च्छित्त्वा वृक्षं फलप्रदम् ” इति तत् छेदनावृत्तिविषयम् । दृष्टार्थत्वेऽपि कर्षणाङ्गभूतहलाद्यर्थत्वे
 न दोषः । “ फलपुष्पोपवनादीन् हिंस्यात् । पादपान् कर्षणार्थमुपहन्यात् ” इति स्मृतेः ।
 महातटाकछेदे विशेषमाह वैचलः—“ बहुधान्योद्भवस्याथ तटाकस्य विभेदने ।
 “ ब्रह्महत्याव्रतं कृत्वा कपालध्वजवर्जितः । पुनः संस्कारकृतपश्चाच्छुद्धिमाप्नोत्यसंशयः ” ॥

सुरापानादिप्रायश्चित्तम् । अथ सुरापानादेः प्रायश्चित्तमुच्यते । पिष्टादिजन्यो द्रव्य-

- ३० विशेषः सुरा । तथा च मनुः (११।९४, ९३, ९५)—

“ गौडी पैथी च माध्वी च विज्ञेया त्रिविधा सुरा । यथैवैका न पातव्या तथा सर्वा द्विजोत्तमैः ॥
 “ सुरा वै मलमन्त्रानां पाप्मा च मलमुच्यते । तस्माद्ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्च न सुरां पिबेत् ॥
 “ यक्षरक्षःपिशाचान्नं मद्यं मांसं सुरासवम् । तद्ब्राह्मणेन नात्तव्यं देवानामन्नमर्हति ॥ इति ।

राजन्यवैश्ययोः सुरापाननिषेधः पैथीविषयः । गौडीमाध्योरेकादशसु मध्येष्वनुक्रमणात्तत्पाने तयो-
र्दोषाभावात् । अत एव 'सुरासवं सुरारूपं मयं ब्राह्मणेन नाक्तव्यम्' इति ब्राह्मणस्य तन्निषेधः ।
पैथ्या अकामकृते सकृत्पाने गौडीमाध्योरसकृत्पाने कामकृते च ब्राह्मणस्य प्रायश्चित्तं तुल्यम् ।
श्रुतिरपि—“न सुरां पिबेत् न कलञ्जं भक्षयेत् । न तस्य वै प्रायश्चित्तम् । मरणान्तमेव” इति ।
मरणान्तमेव प्रायश्चित्तमन्यत्तु नास्तीत्यर्थः । तथा चापस्तम्बः (१।९।२५।३)—“सुरापोऽग्नि- ५
स्पर्शा सुरां पिबेत् मृतः शुद्धो भवति ” इति । पराशरः—

“सुरापानं सकृत्कृत्वाऽग्निवर्णी सुरां पिबेत् । स पावयेदथात्मानमिह लोके परत्र च ” ॥ इति ।
मनुः (१।१।९०-९१)—

“सुरां पीत्वा द्विजो मोहादग्निवर्णी सुरां पिबेत् । तथा काये विनिर्दग्धे मुच्यते किल्बिषात्ततः ॥
“गोमूत्रमग्निवर्णी वा पिबेदुदकमेव वा । पयोघृतं वा मरणात् गोशकुद्रसमेव वा ” ॥ इति । १०
कलौ मरणान्तप्रायश्चित्तस्य निषिद्धत्वात् तदभिप्रायेण प्रायश्चित्तान्तरमाह स एव (१।१।९२)—
“कणान्वा भक्षयेद्वदं पिण्याकं वा सकृन्निशि । सुरापानापनुत्यर्थं वालवासा ध्वजी जटी ” ॥
एतज्जिह्वास्पृष्टमात्रविषयमित्यन्ये । याज्ञवल्क्यः (प्रा. २।५३-२५६)—

“सुराम्बुधृतगोमूत्रपयसामग्निसन्निभम् । सुरापोऽन्यतमं पीत्वा मरणच्छुद्धिमाप्नुयात् ॥
“वालवासा जटी वापि ब्रह्महत्याव्रतं चरेत् । पिण्याकं वा कणान्वापि भक्षयेत्तु समाग्निशि ॥ १५
“अज्ञानात् सुरां पीत्वा रेतोविण्मूत्रमेव च । पुनः संस्कारमर्हन्ति त्रयोवर्णा द्विजातयः ॥
“पतिलोकं न सा याति ब्राह्मणी या सुरां पिबेत् । इहैव सा शुनी गृध्री सूकरी वापि जायते” ॥ इति ।
गौतमः (२।३।१-३)—“सुरापस्य ब्राह्मणस्योष्णामासिञ्चैयुः सुरामास्ये मृतः शुद्धेदमत्या
पाने पयोघृतमुदकम् ” इति । “ततोऽस्य संस्कारो मूत्रपुरीषरेतसा च प्राशने ” इति च ।
यत्बद्धिरोवचनम्— २०

“भूमिप्रदानं कुर्यात्तु सुरां पीत्वा द्विजोत्तमः । पुनर्न च पिबेज्जातु संस्कृतः स विशुध्यति” ॥ इति
तत् गौडीमाध्योः सकृत्पानविषयमिति माधवीये । यत्तु बृहस्पतिनोक्तम्—
“गौडीं माध्वीं सुरां पीत्वा पैथीं विप्रः समाचरेत् । तत्कृच्छ्रं पराकं च चान्द्रायणमनुकृमात्” ॥ इति
तत्सङ्कल्पमात्रविषयम् । प्रायश्चित्ताकरणे दण्डनमुक्तं हेमाद्रौ—

“सुरापं दण्डयेद्राजा मरणं यदि नेच्छति । ब्रह्मसूत्रं शिखां सम्यक् त्रुटित्वा वापयेच्छिरः ॥ २५
“सुराभाण्डं ललाटे तु तापयित्वाऽङ्कयेत्सुधीः । आनीय मृन्मयं भाण्डं सुरापूरितमादरात् ॥
“बध्वा कण्ठे खरं यानमारोप्य नगरात्ततः । निस्सार्य ध्वनयन् भृत्यैरटित्वा नगराद्बहिः ।
“प्रतार्य सद्यो निर्वास्य शुद्धिमाप्नोति नान्यथा” ॥ इति । “प्रोत्सार्य सहसा राजानं दुष्टस्तेन कर्मणा ॥
“स पापी द्वादशब्दं तु कपालध्वजवर्जितम् । ब्रह्महत्याव्रतं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति नान्यथा ” ॥
तत्रैव—“यदि रोगनिवृत्त्यर्थमौषधार्थं सुरां पिबेत् । ३०

“रोगे तस्मिन्निवृत्ते तु तस्य चान्द्रद्वयं विदुः । उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति ” ॥ इति ।
पराशरः (१०-२७)—

“पतत्यर्थं शरीरस्य यस्य भार्या सुरां पिबेत् । पातितार्थशरीरस्य निष्कृतिर्न विधीयते ” ॥ इति ।
उक्तादन्येन शुद्धिरित्यर्थः ।

प्रायश्चित्तमाह स एव (१०।२८)—

“ गायत्रीं जपमानस्तु कृच्छ्रं सान्तपनं चरेत् । गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् ॥

“ एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रं सान्तपनं स्मृतम् ” । इति । एतच्च त्रिविधसुरापानविषयम् ।

मद्यपाने तु प्रायश्चित्तमाह बृहस्पतिः—

५ “ पीत्वा प्रमादतो मद्यमतिकृच्छ्रं चरेद्विजः । कारयेत्तस्य संस्कारं शक्त्या विप्रांस्तु भोजयेत् ” ॥

कामकारे पराशरः (१२।६७)—

“ मद्यपश्च द्विजः कुर्यान्नदीं गत्वा समुद्रगाम् । चान्द्रायणे ततश्चरिष्ये कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥

“ अनदुत्सहितां गां च दद्याद्विप्रेषु दक्षिणाम् ” ॥ इति ।

पनसादिजन्यमदकरणद्रव्यं मद्यम् । तदाह पुलस्त्यः—“ पानसद्राक्षमाधूकसार्जूरं तालमैक्षवम् ।

१० “ मधूत्थं सैरमारिष्टं मेरेयं नालिकेरजम् । समानानि विजानीयान्मद्यान्यकोदशैव तु ” । इति ।

द्विजो ब्राह्मणः ।

“ कामादपि च राजन्यो वैश्यो वाऽपि कथंचन । मद्यमेव सुरां पीत्वा न दोषं प्रतिपद्यते ” ॥ इति ।

बृहद्याज्ञवल्क्यस्मरणात् । मद्यं सुरा गौडी माध्वी च पैष्टी निषिद्धैव । एकादशानामन्यतमपाने विप्रो महानदीतीरे चान्द्रायणं चरित्वा ब्राह्मणभोजनं कृत्वा दक्षिणां दद्यात् । हेमाद्रौ—

१५ “ माधूकं शैलमारिष्टमैरेयं नालिकेरजम् । तालं हिन्तालजं चैव द्राक्षासर्जूरसंभवम् ॥

“ वृक्षोद्भवमिदं मद्यं नवधा परिकीर्तितम् । एषामन्यतमं पीत्वा द्विजो गच्छेन्महानदीम् ॥

“ चान्द्रायणं चरित्वाऽथ कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् । सुरापस्पृष्टमन्नं च सुराभाण्डौदकं तथा ॥

“ सुरापानसमं प्राहुः तत्र चान्द्रस्य भक्षणम् । तस्योपनयनं भूयो पञ्चगव्यस्य सेवनम् ” ॥ इति ।

मनुः (११।९७)—

२० “ यस्य कायगतं ब्रह्म मद्येनाप्लव्यते सकृत् । तस्य व्यपैति तद्ब्रह्म शूद्रत्वं च स गच्छति ॥

“ अज्ञानाद्धारुणीं पीत्वा संस्कारेणैव शुध्यति । मतिपूर्वमनिर्देश्यं प्राणान्तिकमिति स्थितिः ॥

“ अपः सुराभाजनस्था मद्यभाण्डस्थितास्तथा । पञ्चरात्रं पिबेत्पीत्वा शंखपुष्पीशृतं पयः ॥

“ स्पृष्ट्वा दत्त्वा च मदिरां विधिवत् प्रतिगृह्य च । शूद्रोच्छिष्टाश्च पीत्वाऽपः कुशवारि पिबेन्न्यहम् ॥

“ ब्राह्मणस्य सुरापस्य गन्धमाग्राय सोमपः । प्राणानप्सु त्रिरायम्य घृतं प्राश्य विशुध्यति ॥

२५ “ अज्ञानात्प्राश्य विण्मूत्रसुरासंसृष्टमेव च । पुनस्संस्कारमर्हन्ति त्रयो वर्णा द्विजातयः ” ॥

देवलः—

“ हिन्तालतालखर्जूरनालिकेरमधूद्भवम् । गन्धं वायुवशात्प्राप्तं घ्रात्वा विप्रस्य दक्षिणम् ॥

“ हस्तमाग्राय सहसा शुद्धिमाप्नोति तत्क्षणात् । अभावे भास्करं दृष्ट्वा स्पृष्ट्वा कर्णं स्मरेद्धरिम् ” ॥

विण्मूत्रादिभक्षणप्रायश्चित्तम् । पराशरः (१२।२-३)—

३० “ अज्ञानात्प्राश्य विण्मूत्रं सुरासंसृष्टमेव च । पुनस्संस्कारमर्हन्ति त्रयो वर्णा द्विजातयः ॥

“ अजिनं मेखला दण्डो भैक्षचर्या व्रतानि च । निवर्तन्ते द्विजातीनां पुनस्संस्कारकर्मणि ॥

“ विण्मूत्रस्य च शुद्ध्यर्थं प्राजापत्यं समाचरेत् । पञ्चगव्यं प्रकुर्वीत स्नात्वा पीत्वा शुचिर्भवेत् ” ॥

स्नात्वा पञ्चगव्येन । एतच्च पुनस्संस्कारात्प्रागेव कार्यम् । कामकारे तु स एव (११।१)—

“ अमेध्यरेतो गोमांसं चण्डालान्नमथापि वा । यदि भुक्तं तु विप्रेण कृच्छ्रं चान्द्रायणं चरेत् ” ॥

३५ अमेध्यं विण्मूत्रादि । तथा च मनुः (११।१५४)—“ प्राश्य मूत्रपुरीषादि द्विजश्चान्द्रायणं चरेत् ” ।

यत्तु चतुर्विंशतिमतेऽभिहितम्—

“विण्मूत्रमक्षणे विप्रश्चरेच्चान्द्रायणद्वयम् । श्वादीनां चैव विण्मूत्रं चरेच्चान्द्रायणत्रयम्” ॥ इति ।
तदेतदभ्यासविषयमिति माधवीये ।

यमः—“द्विजोऽज्ञानान्मलं मूत्रं खरमानुषयोः कपोः । मयूरहंसगृध्राणां सकृत् भुक्त्वा तु पातकी ॥

“पुनःकर्म प्रकुर्वीत तत्तत्कुच्छं विशोधनम् ।

“रोगिणो न पुनःकर्म कुच्छमात्रमुदीरितम् । सुखी भूत्वा पिबेद्गव्यं नारीणामर्धमीरितम्” ॥ इति ।

चंडालघटस्थजलपाने प्रायश्चित्तम् ।

पराशरः (६।२३, २६)—

“चंडालघटसंस्थं तु यत्तोयं पिबति द्विजः । तत्क्षणात् क्षिपते यस्तु प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

“यदि न क्षिप्यते तोयं शरीरे यस्य जीर्यते । प्राजापत्यं न दातव्यं कुच्छं सान्तपनं चरेत्” ॥ इति । १०

प्रथममज्ञानात्पीत्वा पश्चात्तदानीमेव यदि वमेत् तदा प्राजापत्यम् । तज्जरणे सान्तपनं कुच्छं परिषदा दातव्यम् । न तु प्राजापत्यम् ।

बुद्धिपूर्वं तत्पाने वर्णभेदेन प्रायश्चित्तभेदमाह स एव (६।२७)—

“चरेत्सान्तपनं विप्रः प्राजापत्यमनन्तरः । तदर्धं तु चरेद्द्वैश्यः पादं शूद्रस्य दापयेत्” ॥ इति ।

रजकाद्यन्त्यजभांडोदकादिपाने प्रायश्चित्तमाह स एव (६।२८)—

“भाण्डस्थमन्त्यजानां तु जलं दधि पयः पिबेत् । ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्चैव प्रमादतः ॥

“ब्रह्मकूर्चोपवासेन द्विजातीनां तु निष्कृतिः । शूद्रस्य चोपवासेन तथा दानेन शक्तिः” ॥ इति ।

ब्रह्मकूर्चस्वरूपमग्रे वक्ष्यते । तत्सहित उपवासः त्रैवर्णिकस्य चतुर्थस्य ब्रह्मकूर्चस्थाने दानं द्रष्टव्यम् ।

चण्डालवाप्यादिजलपाने प्रायश्चित्तम् ।

पराशरः (६।२३, २४)—

“चण्डालखातवापीषु पीत्वा सलिलमग्रजः । अज्ञानालोकभुक्तेन त्वहोरात्रेण शुध्यति ।

“चण्डालभाण्डसंस्पृष्टं पीत्वा कूपगतं जलम् । गोमूत्रयावकाहारः त्रिरात्राच्छुद्धिमाप्नुयात्” ॥ इति ।

चण्डालस्वामिकवाप्युदकपाने एकभुक्तं कामकारे तु उपवासः । चण्डालभाण्डसंस्पृष्टकूपस्थजलपाने गोमूत्रसहितयवपिष्टादिकं दिनत्रयमाहारत्वेन स्वीकुर्यादित्यर्थः ।

उच्छिष्टविषयतदुपवादौ ।

देवलः—

“विप्रस्य पीतशेषं यत्तोयमन्यः पिबेद्यदि । मद्यपानसमं प्रोक्तं तत्तोयं मुनिपुंगवैः ॥

“पीत्वाऽज्ञानात् द्विजः कुर्यात्प्राजापत्यं विशुद्धये” ॥ इति । पृथक्पात्राभावे तु मार्कण्डेयः—

“पात्राभावे वृषार्तस्तु पीतशेषं पिबेत् द्विजः । भूमौ किञ्चिन्निपात्याथ पीत्वा विप्रो न दोषभाक्” ॥ इति ।

बुद्धशातातपः—

“पीतशेषं तु यत्किञ्चित् भाजने मुखनिःसृतम् । अभोज्यं तत् विजानीयात् भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥

“पीतोच्छिष्टं च पानीयं पीत्वा तु ब्राह्मणः कचिद् । त्रिरात्रं तु व्रतं कुर्याद्दामहस्तेन वा पुनः” ॥ इति ।

एतत् स्त्रोच्छिष्टविषयम् । हारीतः—

“रुयुच्छिष्टस्थिता आपो यदि कश्चित्पिबेत् द्विजः । शंस्रपुण्या विपक्वेन त्र्यहं क्षीरेण शुध्यति ॥

“शूद्रोच्छिष्टजलं पीत्वा त्रिरात्रं यावकं पिबेत्” ॥

निषिद्धक्षीरपानप्रायश्चित्तम् । स एव—

“मृतवत्सापयः पीत्वा मुखेनापि जलं द्विजः । उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुद्ध्यति” ॥ इति ।
चतुर्विंशतिमते—

“स्त्रीक्षीरं तु द्विजः पीत्वा कथञ्चित्काममोहितः । पुनः संस्कृत्य चात्मानं प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

५ “अजोष्ट्रीसंधिनीक्षीरं मृगाणां वनचारिणाम् । अनिर्दशाया गोश्चैव पीत्वा दिनमभोजनम्” ॥ इति ।
अत्रिः—

“अविकोष्ट्र्याश्च यत्क्षीरं मृगाणां वनचारिणाम् । छागजं गर्दभं क्षीरं भुक्त्वा दिनमभोजनम्” ॥ इति
विष्णुः (५१-३८)—“गोऽजामहिषीवर्जं सर्वपयांसि प्राश्योपवसेत्” ॥ इति ।

अयं चैकदिनोपवासो ज्ञानकृते सकृत्पाने वेदितव्यः । असकृत्पाने तु पराशरः (११।१०)—

१० “पीयूषं श्वेतलशुनं वृन्ताकफलशृङ्गनम् । पलाण्डुं वृक्षनिर्यासं देवस्वकवकानि च ॥

“उष्ट्रीक्षीरमविक्षीरमज्ञानाद्भुजते द्विजः । त्रिरात्रमुपवासेन पञ्चगव्येन शुद्ध्यति” ॥ इति ।

पीयूषः अभिनवं पयः । पयसोऽभिनवत्वं दशाहान्तःपातित्वम् । कामकृते तु शंखः—

“क्षीराणि यान्यपेयानि तद्विकाराशने बुधः । सप्तरात्रं व्रतं कुर्यात्पयत्नेन समाहितः” ॥ इति ।
कामतोऽभ्यासे तु—

१५ ज्ञातातपः—“सन्धिन्या अन्तर्दशाहाया अब्रत्सायाश्च गोक्षीरप्राशने वृथामांसे प्राजापत्यमुष्ट्री-
खरीमानुषीक्षीरप्राशने चान्द्रायणं पुरुषस्य पुनरुपनयनं च” ॥ इति ।

स्मृतिसारे—“क्षीरं लवणसम्मिश्रमुच्छिष्टेऽपि च यत् घृतम् । पानं रजकतीर्थेषु ताम्रे गव्यं सुरासमम्” ॥

यमः—“ताम्रपात्रस्थितं गव्यं नालिकेरोदकं तथा । लवणाक्तं पयश्चैव मद्यगन्धं तथैव च ॥

“पीत्वा द्विजश्चरेच्चान्द्रं प्राजापत्यमकामतः” ॥ इति ।

२० पराशरः—

“सकांस्यं नालिकेराम्बु कांस्ये च रसमैक्षवम् । नालिकेररसं पक्कमभूमिष्ठं जलं तथा ॥

“नालिकेरोदकं ताम्रपात्रस्थं गव्यमेव च । लवणाक्तं पयश्चैव मद्यग्राणं तथैव च ॥

“द्विजः कामाच्चरेच्चान्द्रं पीत्वा ज्ञानात्प्राजापतिम्” ॥

देवलः—“ताम्रपात्रस्थितं दुग्धं गोमूत्रं तक्रमेव च । नालिकेरोदकं तत्स्थं पीत्वा चान्द्रायणं चरेत्” ॥

२५ निमित्तान्तरे च भोजनप्रकरणे प्रायश्चित्तमुक्तम् ।

सुवर्णादिस्तेयप्रायश्चित्तम् । अथ स्तेयप्रायश्चित्तमुच्यते ।

तत्र स्वर्णस्तेयप्रायश्चित्तमाह मनुः (११।१९-१०२)—

“सुवर्णस्तेयकृद्भिरो राजानमभिगम्य तु । स्वकर्म ख्यापयन् ब्रूयान्मां भवाननुशास्तिवति ॥

“गृहीत्वा मुसलं राजा सकृद्धन्यात्तु तं स्वयम् । वधेन शुद्ध्यति स्तेनो ब्राह्मणस्तपसैव वा ॥

३० “तपसापनुनुस्तु सुवर्णस्तेयजं मलम् । चीरवासा द्विजोऽण्ये चरद्ब्रह्महणो व्रतम् ॥

“एतैर्व्रतैरपोहेत तत्पापं स्तेयकृत् द्विजः” ॥ वधपक्षो नामधारकमात्रविप्रविषयः तपःपक्षस्तु
वनस्थत्वादिगुणोपेतब्राह्मणविषय इति माधवीये ।

अत्र सुवर्णशब्दः परिमाणविशेषोपेतहेमवचनः । तथा च याज्ञवल्क्यः (आ. ३६२-३६३)—

“जाळसूर्यमरीचिस्थं त्रसरेणुरजः स्मृतम् । तेऽष्टौ लीक्षा तु तास्तिस्रो राजसर्षप उच्यते ।

“ गौरस्तु ते त्रयः षट् ते यवमध्यस्तु ते त्रयः । कुष्णलः पञ्च ते माषस्ते सुवर्णं तु षोडश ” ॥ इति ।

स्तेयस्वरूपमाह व्यासः—

“ समक्षं वा परोक्षं वा बलाच्चौर्येण वा पुनः । परस्वानामुपादानं स्तेयमित्युच्यते बुधैः ” ॥

अपहृतं धनं स्वामिने दत्तवैव स्तेयप्रायश्चित्तं कर्तव्यम्

“ स्तेये ब्रह्मस्वभूतस्य सुवर्णदिः कृते पुनः । स्वामिनेऽपहृतं दत्त्वा हत्यानिष्कृतिमाचरेत् ” ॥ इति ५
स्मरणात् ।

यदा सुवर्णमपहृत्य तदभुक्त्वा तदानीमेवानुतापेन प्रत्यर्पयेत् तदा आपस्तम्बोक्तं
द्रष्टव्यम् (१।२५।१०)—“ चतुर्थकालं मिताशनेन त्रिवर्षमवस्थानम् ” इति ।

मनसापहारे तु सुमन्तुराह—“ स्वर्णस्तेयी द्वादशरात्रं वायुभक्षः पूतो भवति ” ॥ इति ।

याज्ञवल्क्यः (प्रा. २५७-२५८)—

“ ब्राह्मणः स्वर्णहारी तु रात्रौ मुसलमर्पयेत् । स्वकर्म स्यापयंस्तेन हतो मुक्तोऽपि वा शुचिः ॥

“ अनिवेद्य वृषे शुध्येत् सुरापव्रतमाचरेत् । आत्मतुल्यं सुवर्णं वा दद्यादिप्राय तुष्टिकृतम् ” ॥ इति ।

पराशरः (१।२।६९-७०)—

“ अपहृत्य सुवर्णं तु ब्राह्मणस्य ततः स्वयम् । गच्छेन्मुसलमादाय राजानं स्वयमेव तु ॥

“ ततः शुद्धिमवाप्नोति राज्ञाऽसौ मुक्त एव च । कामतस्तु कृतं यत्स्यान्नान्यथा वधमर्हति ” ॥ इति । १५

आपस्तम्बः (१।१।२५।४)—“ स्तेनः प्रकीर्णकेशोऽसे मुसलमादाय राजानं गत्वा कर्माचक्षीत ।
तेनैनं हन्याद्वधे मोक्षः ” ॥ इति ।

हेमाद्रौ—“ हत्वा ब्रह्मस्वमज्ञात्वा द्वादशाब्दं तु पूर्ववत् । कपालध्वजहीनं तु ब्रह्महत्याव्रतं चरेत् ॥

“ यद्वाऽसे मुसलं धृत्वा विप्रस्यात्मशिरोरुहान् । गत्वा राजानमाचष्टे प्रहृतस्तेनमस्तके ॥

“ मृत्वा शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

“ गुरूणां यज्ञकर्तृणां धर्मिष्ठानां तथैव च । श्रोत्रियाणां द्विजानां तु हत्वा हेम कथं भवेत् ॥

“ तच्छुद्ध्यर्थं स्वदेहे तु संपूर्णं लेपयेत् घृतम् । कारीषाच्छादितो दग्धः स्तेयपापात्प्रमुच्यते ” ॥

अल्पस्वर्णापहरणे प्रायश्चित्तमाह गौतमः—

“ त्रसरेणुसमं हेम हत्वा कुर्यात्समाहितः । प्राणायामद्वयं सम्यक् तेन शुध्येन्न संशयः ॥

“ प्राणायामत्रयं कृत्वा हत्वा लीक्षाप्रमाणकम् । प्राणायामाश्च चत्वारो राजसर्षपमात्रतः ॥

“ गौरसर्षपमात्रं तु हत्वा हेम विचक्षणैः । स्नात्वा च विधिवत्कार्यं गायत्र्यष्टसहस्रकम् ॥

“ यवमध्यसुवर्णस्य स्तेये शुद्धौ जपेद्विजः । आ सायं प्रातरारभ्य गायत्रीं वेदमातरम् ॥

“ हेमनः कुष्णलमात्रस्य हत्वा सान्तपनं चरेत् । माषमात्रसुवर्णस्य प्रायश्चित्तं तु कथ्यते ॥

“ गोमूत्रपक्ववभुक् देवार्चनपरायणः । मासत्रयेण शुद्धिः स्यान्नारायणपरायणः ॥

“ रूप्यमात्रसुवर्णस्य स्तेयं कृत्वा प्रमादतः । जपेद्वै लक्षगायत्रीमन्यथा दोषमानुयात् ॥

“ निष्कमात्रस्य हेमस्तु हरणे विप्रसत्तमः । ब्रह्महत्याव्रतं कृत्वा षडब्दं शुद्धिमानुयात् ॥

“ किञ्चिन्न्यूनसुवर्णस्य स्तेये तु द्विजसत्तमः । गोमूत्रपक्ववभुगब्देनैकेन शुद्ध्यति ।

“ संपूर्णस्य सुवर्णस्य स्तेयं कृत्वा मुनीश्वरं । ब्रह्महत्याव्रतं कुर्याद्द्वादशाब्दान्समाहितः ” ॥

अज्ञानादपहृतस्य सुवर्णस्य पुनर्दाने तु प्रायश्चित्तं स एवाह—

“ब्रह्मस्वं यस्तु हत्वा च पश्चात्तापमवाप्य च । पुनर्दत्त्वा तु विप्रेभ्यः प्रायश्चित्तमिदं चरेत् ॥

“कृच्छ्रं सान्तपनं कृत्वा द्वादशाहोपवासतः । शुद्धिमाप्नोति विप्रेन्द्र अन्यथा पतितो भवेत्” ॥ इति ।

क्षत्रियादीनां स्तेयप्रायश्चित्तम् । राज्ञां स्तेयप्रकारोऽभिहितः शिवरहस्ये—

५ “अन्यायाद्विग्रामेषु अनाथेभ्यो धनं च यत् । अदण्डचेभ्योऽपि यद्वित्तं स्तेयं तद्भुजामिह ॥

“स्तेयं कृत्वा सुरां पीत्वा मृत्वा राजा विशुध्यति” । नागरखण्डे—

“ऊरुजस्तु सुरां पीत्वा हत्वा स्वर्णं द्विजन्मनाम् । राजा च शुद्धिमाप्नोति यच्छेद्वा ब्रूयुतं गवाम् ।

“पादजस्तु सुरां पीत्वा हत्वा हेमं द्विजन्मनाम् । राजा दण्डयः स्वधर्मेण मुसलेन हतः शुचिः” ॥ इति ।

कात्यायनः—

१० “विप्रादीनां तु नारीणां स्तेयं वा पानमेव वा । संभवेद्यदि दैवेन नेच्छन्ति मरणं बुधाः ॥

“त्याज्या एव स्त्रियस्ताश्च न पोष्या धर्मलिप्सुभिः” ॥ इति ।

रजतस्तेयप्रायश्चित्तम् । रजतस्तेये नारदः—

“सुवर्णमानं यस्मिन् रजतं स्तेयकर्मणि । कुर्यात्सान्तपनं सम्यगन्यथा पतितो भवेत् ॥

“दशानिष्कान्तपर्यन्तमूर्ध्वनिष्कचतुष्टयात् । हत्वा तु रजतं विद्वान् कुर्याच्चान्द्रायणं द्विजः ॥

१५ “ततो विंशतिनिष्कान्तं रजतस्तेयकर्मणि । चान्द्रायणद्वयं प्रोक्तं तत्पापं परिशोधनम् ॥

“शतादूर्ध्वं सहस्रान्तं प्रोक्तं चान्द्रायणद्वयम् । सहस्रादधिकस्तेये ब्रह्महत्याव्रतं चरेत्” ॥

ताम्रस्तेये प्रायश्चित्तम् । ताम्रस्तेये हैमाद्रौ—

“पलद्वये पञ्चगव्यं पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् । प्राजापत्यं पञ्चपले तप्तं दशपले स्मृतम् ।

“विंशतपले तु चान्द्रं स्यात्स्यात्पञ्चाशति तु त्रयम् । ताम्रं षष्टिपले प्रोक्तं मासं कृत्वाऽधमर्षणम् ॥

२० “कण्ठदध्नजले स्थित्वा शुद्धिमाप्नोति पूर्वजः । ताम्रेऽशीतिपले तत्र स्तेयं कृत्वा तु पूर्वजः ॥

“भूपरिक्रमणं कृत्वा भूयश्चान्द्रं ततः परम् । हत्वा शतपलं ताम्रं स्वर्णस्तेयसमं विदुः” ॥ इति ।

स्वर्णचतुष्टयपरिमितं पलम्

“पलं सुवर्णं चत्वारि तच्चत्वारि ध्रुवो भवेत् । चत्वारिंशद्भुवाणां च भार इत्युच्यते बुधैः” ॥ इति स्मृतेः ।

कांस्यादिस्तेये प्रायश्चित्तम् । चतुर्विंशतिमते—

२५ “कांस्यपित्तलमुख्येष्वयस्कान्तेषु पञ्चसु । सहस्रनिष्कमानं तु पारक्यं परिकीर्तितम् ॥

“प्रायश्चित्तं तु लोहानां स्तेये रजतवत्स्मृतम्” ॥ इति ।

धनधान्यादिस्तेयप्रायश्चित्तम् । मनुः (११।१६२-१६९)—

“धान्यान्नधनचौर्याणि कृत्वा कामाद् द्विजोत्तमः । स्वजातीयगृहादेव कृच्छ्राब्देनैव शुध्यति ॥

“मनुष्याणां तु हरणे स्त्रीणां क्षेत्रगृहस्य च । कूपवापीजलानां च शुद्धिश्चान्द्रायणं स्मृतम् ॥

३० “द्रव्याणामल्पसाराणां स्तेयं कृत्वाऽन्यवेश्मनः । चरेत्सान्तपनं कृच्छ्रं निर्यात्यात्मविशुद्धये ॥

“भक्ष्यभोज्यापहरणे यानशय्यासनस्य च । पुष्पमूलफलानां च पञ्चगव्यं विशोधनम् ॥

“वृणकाष्ठद्रुमाणां च शुष्कान्नस्य गुडस्य च । चेलचर्ममिषाणां च त्रिरात्रं स्यादभोजनम् ॥

“मणिमुक्ताप्रवालानां ताम्रस्य रजतस्य च । अयःकांस्योपलानां च द्वादशाहं कणाक्षता ॥

“कापसिकीटजीर्णानां द्विद्वारैकद्वारस्य च । पक्षिगन्धौषधीनां च रज्ज्वाश्च त्रिराहः पयः ॥

३५ “एतैर्व्रतैरपोहेत पापं स्तेयकृतं द्विजः” ॥

भूम्यपहारप्रायश्चित्तम् । भूम्यपहारे दोषाधिक्यमाह पराशरः (७५)—

“ वापिकूपतटाकाद्यैर्वाजपेयशतैरपि । गवां कोटिप्रदानेन भूमिहर्ता विशुध्यति ” ॥

नारदः—“ केदारे तप्तकृच्छ्रं स्याद्गृहादेश्वान्द्रमीरितम् ” ॥ इति ।

राजदण्डमाहापस्तम्बः (२।१०।२७।१६-१७) “ अयमस्य दण्डः । पुरुषवधे स्तेये भूम्यादान इति । चक्षुर्निरोधस्वेतेषु ब्राह्मणस्य ” इति । भूम्यादानं भूम्यपहारः । पुरुषवधादिषु शूद्रो वध्यः । ५
ब्राह्मणस्य तु पट्टबन्धादिना चक्षुषी निरोद्धव्ये न तत्पाटयितव्ये ‘ न शरीरो ब्राह्मणे दण्ड ’ इति ‘ अक्षतौ ब्राह्मणो वजेत् ’ इत्यादिस्मरणात् । वस्त्रादिस्तेयप्रायश्चित्तम् । देवस्वामी—

“ स्थूलतन्तुकृते वस्त्रे स्तेयं कृत्वा तु पूर्वजः । पश्चात्तापसमायुक्तः प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

“ सूक्ष्मतन्तुकृते वस्त्रे पराकं मुनिचोदितम् । पीतवस्त्रं मुषित्वा तु तप्तकृच्छ्रद्वयं चरेत् ॥

“ नीलमये सूक्ष्मवस्त्रे चरेच्चान्द्रायणत्रयम् ।

“ मूल्याधिके पट्टवस्त्रे कौशेये च मुनीश्वराः । सद्यः पतति पापात्मा घृताक्तोऽग्निं विशेत्तदा ” ॥ १०

अजादिहरणे प्रायश्चित्तम् । जावालिः—

“ अजं वस्तं गृहेऽरण्ये पारक्यं गर्वितो द्विजः । मुषित्वा निष्कृतिं तत्र प्राजापत्यं समाचरेत् ” ॥

मार्कण्डेयः—

“ मार्जारं नकुलं सर्पं भारद्वाजं कपिं तथा । कृच्छ्रार्धमाचरेद्दृष्ट्वा ज्ञात्वा तद्विगुणं चरेत् ॥ १५

“ द्विजानां तल्पहरणे प्रायश्चित्तं प्रजापतिः । प्राह चान्द्रं पराकं च तप्तं चैव यथाक्रमम् ” ॥ इति ।

मरीचिः—

“ यो विप्रः पापमज्ञात्वा उपानत्पादुके हरेत् । स तु देहविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यं समाचरेत् ॥

“ छत्रं हरेद्विजो यस्तु महातपनिवारणम् । वस्त्रावृते पराकं स्यात्केतकीपर्णसंवृते ॥

“ यावकं तालपत्रैश्च निर्मितं राजवंछभे । पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चात्सर्वपापविनाशनम् ॥ २०

“ पुष्पजालं हि पारक्यं देवपूजार्थमीदरात् । सुगन्धिकरवीरादि हत्वा विप्रः स पापभाक् ॥

“ देवार्थं पुष्पहरणे चान्द्रं वत्सरसेवनात् । पराकं ब्रह्मनिर्माणे कायं क्षत्रियवैश्ययोः ” ॥ इति ।

देवलः—

“ कदलीमातुलुङ्गं च नालिकेरं च पानसम् । द्राक्षाखर्जूरजम्बीरचूतजम्बूफलानि च ॥

“ फलानि विविधानीह देवप्रियकराणि वै । हत्वा विप्रस्तु पारक्यं प्रायश्चित्तमिदं चरेत् ॥ २५

“ ऋतुत्रये पराकं स्याद्वत्सरे चान्द्रमुच्यते ” ॥ इति ।

गृहोपकरणहरणे प्रायश्चित्तमाह गौतमः—“ मुसलं दृषदं चैव ह्युलूखलमनन्तरम् ।

“ वेणुपात्रं तथा शूर्पं मृन्मयं भाण्डमेव च । गृहोपकरणं हत्वा पुनः संस्कारमर्हति ” ॥ इति ।

सालग्रामादेः पूजोपकरणस्य च हरणे प्रायश्चित्तम् । देवलः—

“ सालग्रामं शैवलिङ्गं प्रतिमां चक्रपाणिनः । घण्टामुपस्करं विप्रो यो हरेत्पापबुद्धिमान् ॥ ३०

“ सालग्रामे तु चान्द्रं स्याच्छिवलिङ्गे तथैव च । प्राजापत्यं चक्रपाणेरितरेषु तथैव च ॥

“ शतादूर्ध्वं तु रुद्राक्षं हत्वा चान्द्रत्रयं स्मृतम् । शते पराकमल्पे तु गायत्रीजपमाचरेत् ” ॥

नारदः—“ लेखनीं बन्धसूत्रं च पुस्तकं फलकं तथा ।

“ हत्वा दत्त्वा तु तद्द्रव्यं पश्चात्तापसमन्वितः । प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रं तदा देहविशुद्ध्ये ” ॥

माध्यस्थ्येन धनग्रहणे प्रायश्चित्तम् ।

देवलः—“ व्यवहारादिकलहे प्रायश्चित्तादिकर्मसु । धनं गृहीत्वा यो विप्रः कौटसाक्ष्यं वदेत् चेत् ॥

“ तस्य पुत्राश्च पौत्राश्च तदा नाशमवाप्नुयुः । तस्य देहविशुद्ध्यर्थं महाचान्द्रमुदीरितम् ” ॥ इति ।

मनुः—“द्विजवादे महाचान्द्रं धर्मशास्त्रे तदर्धतः । इतरेषु विवादिषु कायकुच्छ्रं समाचरेत् ” ॥ इति ।

देवलः—“ग्रामणीः प्राद्विवाकश्च राजद्वारे पुरोहितः ।

“प्रजाभ्यः कार्यसिद्धयर्थं यो हरेत्तस्य निष्कृतिः । एकवारे तु चान्द्रं स्यान्महाचान्द्रं द्विवारतः” ॥ इति ।

मनुः (८१४०)—

५ “वानस्पत्यं फलं मूलं दार्वग्न्यर्थं तृणानि च । तृणं च गोभ्यो गृह्यार्थमस्तेयं मनुरब्रवीत् ॥

“चणकव्रीहिगोधूमयवानां मुद्गमाषयोः । अनिषिद्धो ग्रहीतव्यो मुष्टिरेकोऽध्वनिस्थितैः ” ॥ इति ।

आपस्तम्बः (१११०२८१-५)—“यथाकथा च परपरिग्रहमभिमन्यते स्तेनोह भवतीति कौत्सहारीतौ तथा कण्वपौष्करसादी । सन्त्यपवादाः परिग्रहेष्विति वार्ष्ण्यायिणिः । शम्योषा युग्य-घासो न स्वामिनः प्रतिषेधयन्त्यभिव्यपहारो भवति । सर्वत्रानुमतिपूर्वमिति हारीतः ” इति ।

१० शम्योषाः कोशधान्यानि माषमुद्गादयः । ध्वनिस्थितैः गौतमः (१२१२५)—

“गोन्यर्थे तृणमेधान्वीरुदनस्पतीनां च पुष्पाणि स्ववदाद्रीत फलानि चापरिवृतानाम् ” ॥ इति ।

मनुः (८१४२)—

“द्विजोऽध्वगः क्षीणवृत्तिर्दाविष्कृ द्वे च मूलके । आददानः परक्षेत्रान्न हस्तच्छेदमर्हति ” ॥ इति ।

अत्र द्विज इति विशेषणाच्छूद्रस्तु दण्ड्य एव । तथा च स्मृत्यन्तरेऽपि—

१५ “तृणं वा यदि वा काष्ठं मूलं वा यदि वा फलम् । अनापृष्टस्तु गृह्णानो हस्तच्छेदनमर्हति” ॥ इति ।

अथागम्यागमनप्रायश्चित्तम् । गुरुतल्पगमने प्रायश्चित्तम् ।

गुरुतल्पगमनस्य प्रायश्चित्तमाह मनुः (१११०३-१०७)—

“गुरुतल्प्यभिभाष्यैनस्तप्ते स्वप्यादौमये । सूर्मां ज्वलन्तीमाश्लिष्य मृत्युना स विशुध्यति ॥

“स्वयं वा शिश्रवृषणावुत्कृत्याधाय चाञ्जलौ । नैऋतीं दिशमातिष्ठेदा निपातादजिह्वगः ॥

२० “खट्वाङ्गी चौरवासा वा इमश्रुलो निर्जने वने । प्राजापत्यं चरेत् कुच्छ्रमब्दमेकं समाहितः ॥

“चान्द्रायणं वा त्रीन्मासानभ्यस्येन्नियतेन्द्रियः । हविष्येण यवाग्वा वा गुरुतल्पापनुत्तये ॥

“एतैर्व्रतैरपोहेयुर्महापातकिनो मलम् ” ॥ इति । याज्ञवल्क्यः (प्रा. २५९-२६०)—

“तप्तेऽयःशयने सार्धमायस्या योषिता स्वपेत् । गृहीत्वोत्कृत्य वृषणौ नैऋत्यां वोत्सृजेत्तनुम् ॥

“प्राजापत्यं चरेत्कुच्छ्रं समा वा गुरुतल्पगः । चान्द्रायणं वा त्रीन्मासानभ्यसेद्वेदसंहिताम् ” ॥ इति ।

२५ पराशरः (१०१०-११)—

“मातरं यदि गच्छेत् भगिनीं स्वसुतां तथा । एतास्तु मोहितो गत्वा त्रीणि कुच्छ्राणि सञ्चरेत् ।

“चान्द्रायणत्रयं कुर्यात् शिश्नच्छेदेन शुध्यति ” ॥ एतद्व्याख्यातं माधवीये—मातरं जननीं

भगिनीमेकोदराम् । अत्र त्रीणि प्रायश्चित्तानि । प्राजापत्यत्रयमेकं चान्द्रायणत्रयं द्वितीयं शिश्नच्छेदस्तृतीयम् । तच्च त्रयं मैथुनप्रकारभेदविषयतया योजनीयम् । मैथुनं चाष्टविधम्—

३० “स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम् । सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृत्तिरेव च ॥

“एतन्मैथुनमष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः ” ॥ इति स्मरणात् । तत्र आद्यं व्रतमल्पत्वादप्रवर्तक-

स्मरणादिपञ्चविधापराधविषयम् । द्वितीयं तु सङ्कल्पाध्यवसायविषयम् । तृतीयं त्वतिमहत्वात् क्रियानिर्वृत्तिविषयम् इति । रेतस्सेकात्पूर्वं तु निवृत्तौ ब्रह्महत्याव्रतं कार्यम्

“रेतःसेकात्पूर्वमेव निवृत्तौ यदि मातरम् । ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात् कपालध्वजवर्जितम् ॥

“रेतस्सेकान्तनिर्वृत्तौ मुष्कच्छेदनमर्हति” । इति स्मृतेः । वसिष्ठः (अ. २० सू. १३)—
 “सवृषणं शिश्रमुत्कृत्याञ्जलावाधाय दक्षिणामुखो गच्छेत् यत्रैव प्रतिहतस्तत्रैव तिष्ठेदाप्रलयात्” इति ।
 आपस्तम्बः (१।१।२५।१)—“गुरुतल्पगामी सवृषणं शिश्रं परिवास्याञ्जलावाधाय दक्षिणां दिश-
 मनावृत्तिं व्रजेत् ज्वलितां वा सूर्मिं परिष्वज्य समाप्नुयात्” इति । अत्र हरदत्तः—गुरुरत्र पिता
 नाचार्यादिः । तल्पशब्देन शयनवाचिना भार्या लक्ष्यते । सा च साक्षाज्जननी । न तत्सपत्नी ।
 तां गत्वा साण्डं शिश्रं क्षुरादिना छित्वाञ्जलावाधाय दक्षिणां दिशमनावर्तमानो गच्छेत् । आयसी
 ताम्रमयी वाऽन्तस्सुषिरा स्त्रीप्रतिकृतिसूर्मिः । तामग्नौ ततां परिष्वज्य समाप्नुयात् त्रिधेत वा ।
 संवर्तः—

“पितृदारान् समारुह्य मातृवर्जं नराधमः । भगिनीं मातुरातां वा स्वसारं वाऽन्यमावृजाम् ॥
 “एतां गत्वा स्त्रियो मोहात् तप्तकुच्छं समाचरेत्” इति । पराशरः (१०।१३-१४)—
 “पितृदारान् समारुह्य मातुरातां च भ्रातृजाम् । गुरुपत्नीं स्नुषां चैव भ्रातृभार्यां तथैव च ॥
 “मातुलानीं सगोत्रां च प्राजापत्यत्रयं चरेत् । गोद्वयं दक्षिणां दत्त्वा शुध्यते नात्र संशयः” ॥ इति ।
 माधवीये व्याख्यातमेतत्—मातुराता मातुः सखी । भ्रातृजा ज्येष्ठस्य कनिष्ठस्य वा सुता । गुरवः
 आचार्यविद्यादातृज्येष्ठभ्रातृकृत्विजः । अभयदाताऽन्नदाता च । अकामतः सकृत् गमने इदं
 प्रायश्चित्तमिति । अकामकृतगमने रेतस्सेकात् प्राङ्निवृत्तौ तु शंखः—
 “चण्डालीं पुल्कसीं म्लेच्छीं स्नुषां च भगिनीं सखीम् । मातापित्रोः स्वसारं च निक्षिप्तां शरणागताम् ॥
 “मातुलानीं प्रव्रजितां सगोत्रां नृपयोषितम् । शिष्यभार्यां गुरोर्भार्यां गत्वा चान्द्रायणं चरेत्” ॥ इति ।
 कामकृतगमने रेतःसेकान्तनिर्वृत्तौ नारदः (१२।७३-७५)—
 “माता मातृष्वसा श्वश्रूमातुलानी पितृष्वसा । पितृव्यसखिशिष्यस्त्री भगिनी तत्सखी स्नुषा ॥
 “हुहिताचार्यभार्या च सगोत्रा शरणागता । राज्ञी प्रव्रजिता धात्री साध्वी वर्णोत्तमा च या ॥
 “आसामन्यतमां गत्वा गुरुतल्पग उच्यते । शिश्रस्योत्कर्तनं तत्र नान्यो दण्डो विधीयते” ॥ इति ।
 पराशरोऽपि—

“मातृष्वसृगमेऽप्येवमात्ममेढनिकृन्तनम् । अज्ञानेन तु यो गच्छेत् चरेच्चान्द्रायणद्वयम् ॥
 “दश गोमिथुनं दद्याच्छुद्धिं पाराशरोऽब्रवीत्” । इति । अत्र मातृष्वसृग्रहणं श्वश्रवादे-
 रुपलक्षणम् । कलौ मरणान्तप्रायश्चित्तस्य निषेधात् । “स्रष्टाङ्गी चीरवासा वा” इति (११।१०५) २५
 मन्वाद्युक्तं प्रायश्चित्तान्तरं कर्तव्यम् ।

सवर्णागमने प्रायश्चित्तम् । सवर्णागमने प्रायश्चित्तमाह आपस्तम्बः (२।१०।२५।१-१३)—
 “सवर्णायामन्यपूर्वायां सकृत्सन्निपाते पादः पततीत्युपदिशन्त्येवमभ्यासे पादः पादश्चतुर्थे सर्वमिति” ॥
 अत्र हरदत्तः—अन्यः पूर्वः पतिर्यस्याः सा अन्यपूर्वा परभार्या । तस्यां सवर्णायां सकृदभिगमने
 पादः पतति । पतितस्य द्वादशवार्षिकं प्रायश्चित्तम् । तस्य तुरीयोऽशस्त्रीणि वर्षाणि । एतच्च
 श्रोत्रियभार्यायां ऋतुकाले कामतः प्रथमदूषकस्य ब्राह्मणस्य । एवमभ्यासे प्रत्यभ्यासं पादः पादः
 पतति । अतश्चतुर्थे सन्निपाते सर्वमेव पतति । ततश्च पूर्णं द्वादशवार्षिकं कर्तव्यम् । तृतीये
 नववर्षाणि द्वितीये षडिति” । संवर्तः—

“ब्राह्मणो ब्राह्मणीं गत्वा प्राजापत्यं समाचरेत् । एवं शुद्धिः समाख्याता संवर्तवचनं यथा” ॥ इति ।

व्याघ्रः—“ब्राह्मणो ब्राह्मणीं गच्छेदकामां यदि कामतः । कुच्छ्रं चान्द्रायणं कुर्यादर्धमेव प्रमादतः ॥

“अर्धकुच्छ्रं सकामायां तप्तकुच्छ्रं सकृद्गतौ । अर्धमर्धं नृपादीनां दारेषु ब्राह्मणश्चरेत् ॥

“एतद्व्रतं चरेत्सार्धं श्रोत्रियस्य परिग्रहे । अश्रोत्रियश्चेद्विगुणमगुप्तार्थमेव च” ॥

क्षेत्रिणः प्रायश्चित्तविशेषानादेशात्सामान्यप्रायश्चित्तं द्रष्टव्यम् । तच्च याज्ञवल्क्येन दर्शितम्

५ (प्रा. ३०६)—

“प्राणायामशतं कुर्यात्सर्वपापापनुत्तये । उपपातकजातानामनादिष्टस्य चैव हि” ॥ इति ।

सम्बन्ध्यादिस्त्रीगमने प्रायश्चित्तम् ।

चतुर्विंशतिमते—“सम्बन्धिनः स्त्रियं गत्वा सपादं कुच्छ्रमाचरेत् ॥

“विधवागमने कुच्छ्रमहोरात्रसमन्वितम् । व्रतस्थागमने कुच्छ्रं सपादं तु समाचरेत् ॥

१० “सखिभार्या समारुह्य ज्ञातिस्वजनयोषितः । स कृत्वा प्राकृतं कुच्छ्रं पादं कुर्यात्ततः पुनः ।

“कुमारीगमने विप्रश्चरेच्चान्द्रायणं व्रतम् । पतितां तु द्विजो गत्वा तदेव व्रतमाचरेत्” ॥

स्वैरिणीगमने प्रायश्चित्तम् । स्वैरिणीगमने शंखलिखितौ—“स्वैरिण्यां वृषल्यामवकीर्णः

सचेलः स्नात उदकुंभं दद्यात् । ब्राह्मणाय वैश्यायां चतुर्थकालाहारो ब्राह्मणान् भोजयेत् ।

क्षत्रियायां त्रिरात्रोषितो यवादकं दद्यात् । ब्राह्मण्यां त्र्यहमुपोष्य घृतपात्रं दद्यादिति” ॥

१५ वर्धकीगमने षड्विंशे प्रायश्चित्तमुक्तम्—

“ब्राह्मणीं वार्धकीं गत्वा किञ्चिद्दद्यात् द्विजातये । राजन्यां तु धनुर्दद्यात् वैश्यां गत्वा तु चेलकम् ।

“शूद्रां गत्वा तु वै विप्र उदकुंभं द्विजातये । दिवसोपोषितो वा स्यात् दद्याद्विप्राय भोजनम्” ॥ इति ।

तल्लक्षणं स्मृत्यन्तरेऽभिहितम्—“चतुर्थे स्वैरिणीं प्रोक्ता पञ्चमे वर्धकी भवेत्” ॥ इति । इदं च

गर्भानुत्पत्तिविषयम् । तदुत्पत्तौ तु उशनाः—“गमने तु व्रतं यत्स्यात् गर्भे तद् द्विगुणं चरेत्” ॥

२० गर्भोत्पादने प्रायश्चित्तम् । जातिभेदेन गर्भाधाने चतुर्विंशतिमतेऽभिहितम्—

“ब्राह्मणीगमने कुच्छ्रं गर्भे सान्तपनं स्मृतम् । राज्ञीगर्भे पराकं स्याद्विड्गर्भे तु त्र्यहधिकम् ॥

“शूद्रागर्भे द्विजः कुर्यात्तद्वच्चान्द्रायणव्रतम् । चण्डाल्यां गर्भमारोप्य गुरुतल्पव्रतं चरेत्” ॥ इति ।

चण्डाल्यादिगमने प्रायश्चित्तम् । चण्डालीगमने पराशरः (५।१०)—

“चण्डालीं वा श्वपाकीं वाऽप्यनुगच्छति यो द्विजः । त्रिरात्रमुपवासित्वा विप्राणामनुशासनात् ॥

२५ “सशिसं वपनं कृत्वा प्राजापत्यद्वयं चरेत् । गोद्वयं दक्षिणां दद्याच्छुद्धिं पराशरोऽब्रवीत्” ॥ इति ।

ब्राह्मण्यां शूद्राज्जाता चण्डाली । आरूढपतिताज्जाता सगोत्राज्जाता च । एतत्त्रिविधचण्डाल-

सन्ततौ जाता स्त्री चण्डाली । उग्रौ क्षत्रायां जाता श्वपाकी । द्विजो ब्राह्मणः । यमः—

“चण्डालपुल्कसानां तु गत्वा भुक्त्वा च योषितम् । कुच्छ्रगब्दमाचरेत् ज्ञानादज्ञानादैन्दवद्वयम्” ॥

एतदभ्यासविषयम् । नारदः—

३० “चण्डालीं तु द्विजः पूर्वमज्ञात्वा कामपीडितः । पश्चात् ज्ञात्वा तु चण्डालीं शुद्धिमिच्छन्मनस्यथ ॥

“रामसेतुमुपागम्य चापाग्रे प्रत्यहं शुचिः । प्रातः स्नात्वा मासमात्रं पूर्ववच्छुद्धिमानुयात्” ॥ इति ।

गौतमः—“द्विजः कामातुरो गच्छन्नविचार्य च सङ्गमम् ॥

“पश्चाच्चाण्डालजातीयां ज्ञात्वा शुद्धिं परायणः । रामेश्वरधनुष्कोट्यां प्रातः स्नात्वा विशुध्यति” ॥

यमः—

“रेतः सिक्त्वा कुमारीषु स्वयोनिष्वन्त्यजासु च । सपिण्डापत्यदारेषु प्राणत्यागो विधीयते” ॥ इति ।
एतत्संवत्सराभ्यासविषयम् । जाबालिः—

“चण्डालीं रूपसंपन्नां दृष्ट्वा विप्रोऽसकृद् व्रजन् । स चण्डालसमो ज्ञेयः कारीषवधमर्हति ॥

“चापाग्रे मासमात्रं तु प्रातःस्नानाद्विशुध्यति । तद्गर्भधारणे विप्रो मुष्कच्छेदनमर्हति” ॥ इति । ५

देवलः—

“चण्डालश्च तुलुष्कश्च द्वावेतौ तुल्यपापिनौ । तदङ्गना तथा ज्ञेया विप्रैः पापभयातुरैः ॥

“ज्ञात्वाऽज्ञात्वा तुलुष्कीं यो द्विजः कामातुरः सकृत् । गत्वा शुद्धिमवाप्नोति चण्डालीगमने यथा” ॥ इति ।

संवर्तः—

“पुल्कसीगमनं कृत्वा कामतोऽकामतोऽपि वा । कुच्छ्रं चान्द्रायणं कुर्यात्ततो मुच्येत किल्बिषात् ॥ १०

“नटीं शैलूषकीं चैव रजकीं बुरुडीं तथा । एतासु गमनं कृत्वा चरेच्चान्द्रायणद्वयम्” ॥

चान्द्रायणद्वयमभ्यासविषयं बलात्कारविषयं च । तथा जाबालिः—

“द्विजः कामातुरो ग्रामचण्डालीं रजकाह्वयाम् । अज्ञानाद्रमयेत्पापी प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

“उभयोरैकमन्यं चेत्तत्र चान्द्रं विदुर्बुधाः । बलात्कारेण द्वैगुण्यमभ्यासे च तथा स्मृतम्” ॥ इति ।

“रेतःसेकात्पूर्वमेव प्राजापत्यं विशेषनम् । नटिनीं च द्विजो गच्छन् चरेच्चान्द्रायणव्रतम् ॥ १५

“तां गत्वाऽनेकवारं तु चरेच्चान्द्रायणद्वयम् । केशसंवपनं कृत्वा पुनः संस्कारमर्हति ॥

“वर्षादूर्ध्वं तु पतितः स्यादेवात्र न संशयः” ॥ नटिनीस्वरूपमुक्तं हेमाद्रौ—

“देवालये राजगृहे गृहीत्वा भूतिमादरात् । मासि मासि च वर्षे वा प्रत्यहं वाऽथ नृत्यति ॥

“सोऽयं नट इति ख्यातः सर्वधर्मबहिष्कृतः । तस्य संबन्धिनी नारी नटिनीति स्मृता जनैः” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरे—

“अपि वा मातरं गच्छेन्न गच्छेद्देवदारिकाम् । तां गत्वा तु सकृन्मोहाद्विजश्चान्द्रायणं चरेत्” ॥

नागरखण्डे—

“ये वै कटकुटीरस्था भाषावर्णविभेदिनः । मद्यमांसं निषेवन्ते बुरुडास्ते समीरिताः ॥

“तदङ्गनेयं बुरुडी सर्वपापालया सदा । एकवारं द्विवारं वा दिनत्रयमथापि वा ॥

“तां गत्वा मासमात्रं वा वत्सरं वा विशेषतः । यावकं तप्तकुच्छ्रं च प्राजापत्यं तथैन्दवम् ॥ २५

“वत्सरे पतितो भूयाद्गर्भे तद्दर्शवान् भवेत्” ॥ इति ।

षोडशविधग्रामचण्डालीगमने प्रायश्चित्तम् । पराशरः—

“रजकश्चर्मकारश्च नटो बुरुड एव च । कैवर्तमेदमिल्लाश्च स्वर्णकारश्च सौचिकः ॥

“तक्षकस्तिलयन्त्री च सूनश्चक्री तथा ध्वजी । नापितः कारुकश्चैवं षोडशैते जघन्यजाः ॥

“तत्स्त्रियो ग्रामचण्डाल्यो विप्रैर्वर्ज्याः प्रयत्नतः” ॥ इति ।

तत्र चर्मकारस्त्रीगमने देवस्वामी—

“चर्मकारस्त्रियं गत्वा पराकं दिनमात्रतः । दिनत्रये तु चान्द्रं स्यात् षण्मासात् त्रिंशदाचरेत् ॥

“वत्सरे पतितं विद्यात्कुर्यात्पतितवत्तदा । गर्भे तु निष्कृतिर्नास्ति कारीषदहनादृते” ॥

मार्कण्डेयः—

“कैवर्तस्य स्त्रियं गत्वा बुरुडीगमनोदितम् । प्रायश्चित्तं द्विजः कुर्यात्पुनः संस्कारमर्हति ॥

“मेदस्त्रीगमनेऽप्येवं प्रायश्चित्तं समाचरेत्” । मेदः वेणुकारः ।

नागरखण्डे—

“चण्डालवत्पशून् निघ्नन् प्रत्यहं भावभेदनः । स भिल्ल इति विख्यातः सर्ववर्णबहिष्कृतः ॥

“भिल्लस्त्रियं द्विजो गत्वा चण्डालीगन्तृवच्चरेत् ।

५ “स्वर्णकारस्त्रियं गच्छेत् यो विप्रः काममोहितः । एकवारं द्विवारं वा त्रिवारं मासमेव वा ॥

“यावकं च पराकं च प्राजापत्यं तथैन्दवम् । यथाक्रमं योजनीयं देहशुद्ध्यर्थमादरात् ॥

“तस्योपनयनं भूयो वर्षान्ते पतितो भवेत्” ॥ इति । **नारदः—**

“सौचिको वस्त्रसन्धानी यदि तस्य स्त्रियं रमेत् । दिनं दिनत्रयं मासं वर्षं वा गर्भधारणात् ॥

“यावकं च पराकं च तप्तमैन्दवमेव च । यथाक्रमं प्रकुर्वीत पतितो गर्भधारणे” ॥ इति ।

१० **जाबालिः—**“तक्षा च तिलयन्त्री च ग्रामचण्डालसंज्ञिकौ ॥

“तयोर्यदि रमेन्नारी ब्राह्मणः कामपीडितः । रामचन्द्रधनुष्कोट्यां स्नानान्मासेन शुद्ध्यति” ॥

मार्कण्डेयः—

“सौचिकस्य स्त्रियं गत्वा प्राजापत्यं समाचरेत् । मासत्रये तु चान्द्रं स्यात्तदूर्ध्वं पतितो भवेत् ॥

“कुलालस्य स्त्रियं गच्छेद्विजो यः काममोहितः । तस्यैषा निष्कृतिर्दृष्टा पूर्ववन्मुनिसत्तमैः ॥

१५ “मद्यविक्रयिणो नारीं यो द्विजः कामपीडितः । तस्योपनयनं भूयः प्राजापत्यं दिनत्रये ॥

“मासे चान्द्रमृतौ तत्तु द्विगुणं मुनिभिः स्मृतम् । अतः परं न शुद्धिः स्यात्कारीषदहनादृते ॥

“अयस्कारस्त्रियं गत्वा क्षौरकस्य तथैव च” ॥ इति ।

ब्रह्मचण्डालीगमने प्रायश्चित्तम् । ब्रह्मचण्डालस्त्रीगमने प्रायश्चित्तमाह मनुः—

“अस्थीनि परकीयानि भृत्यर्थं यो हरेद्विजः । प्रादप्रस्थानमात्रेण स चण्डालसमो भवेत् ॥

२० “मूल्यं गृहीत्वा दाहादिप्रेतकृत्यं करोति यः । काशीं गच्छेत्परार्थं यस्तौ चण्डालसमौ स्मृतौ ॥

“एतेषां यः स्त्रियो गच्छेच्चण्डालीगमनोदितम् । प्रायश्चित्तं प्रकुर्वीत कारीषवधवर्जितम् ॥

“पुनःसंस्कारविधिना कर्तव्यं विधिचोदनात्” ॥ इति ।

रजस्वलागमने प्रायश्चित्तम् । रजस्वलागमने पराशरः (७।१९)—

“प्रथमेऽहनि चण्डाली द्वितीये ब्रह्मघातिनी । तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थेऽहनि शुध्यति” ॥

२५ चण्डाल्यादिगमने यदुक्तं तदुदक्यागमनेऽपीत्यर्थः । तथा च **मार्कण्डेयः—**

“यो विप्रः पञ्चवाणार्तो यमेत्पत्नीं रजस्वलाम् ॥

“प्रथमेऽहनि चेत् गच्छेच्चण्डालीगमने च यत् । तत्कृत्वा शुद्धिमाप्नोति ह्यन्यथा दोषभाक् भवेत् ॥

“द्वितीयेऽहनि ब्रह्मघ्नी गमने यदुदाहृतम् । तदत्रापि नियोक्तव्यं नान्यथा शुद्धिमाप्नुयात् ॥

“तृतीये रजकी सङ्गे प्रायश्चित्तं तदत्र हि । कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति इह लोके परत्र च” ॥ इति

३० अज्ञानकृते रजस्वलागमने **मनुः (१।१।७३)—**

“अमानुषीषु पुरुषे उदक्यायामयोनिषु । रेतः सिकत्वा जले चैव कुच्छ्रं सान्तपनं चरेत् ।

संवर्तः—

“रजस्वलां च यो गच्छेत् गर्भिणीमष्टमासिकीम् । तस्य पापविशुद्ध्यर्थमतिकुच्छ्रं विशोधनम्” ॥ इति ।

गौतमः—

३५ “यदा रहः पुष्पवतीं द्विजस्तामुदहेद्यदि । कालान्तरे यदा गच्छेत्तदा तां पारिवर्जयेत् ॥

“यद्देहे तन्मनःशुद्धिं तदा चान्द्रायणं चरेत् । कामातुरस्तदा वर्तेत्स चण्डालसमो भवेत् ॥
“पुत्रोत्पत्तिर्यदा भूयात्तदा पतित एव सः । माता पिता च पुत्रश्च त्रयस्ते वृषलाः स्मृताः” ॥

विधवागमने प्रायश्चित्तम् । विधवागमने देवलः—

“ब्राह्मणो मदलोभेन विधवां विप्रनन्दिनीम् । यमेत्कामातुरः पश्चात् ज्ञात्वाऽसौ पतिवर्जिता ॥
“इति तत्र व्रजेद्वन्धमादनं पर्वतोत्तमम् । तत्र चापाग्रमासाद्य प्रातः स्नायाद्दिनेदिने । ५
“मासमात्रेण शुद्धिः स्यादन्यथा दोषभाक् भवेत्” ॥ ज्ञानपूर्वके तु गमने पराशरः—
“ज्ञात्वा विप्रः सकृद्वत्वा विधवां कामपीडितः । न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा कारीषदहनान्नृते ॥
“उभयोरपि सम्मत्या गच्छेत्तु विधवां द्विजः । त्रिवारं क्ष्मां परिक्रम्य पुनस्संस्कारपूर्वकम् ॥
“पञ्चगव्यं पिबेत् पश्चाच्छुद्धिमाप्नोति पौर्विकीम्” ॥
एतद्गर्भानुत्पत्तिविषयम् । गर्भोत्पाते तु पतितप्रायश्चित्तम् । तथा हेमाद्रौ—

“यो विप्रो विधवां साध्वीं गच्छेद्वा गर्भधारणात् । स चण्डालसमो ज्ञेयः पतितः स्यान्न संशयः” ॥
यत्तु चतुर्विंशतिमतेऽभिहितम्— “विधवागमने कुच्छ्रमहोरात्रसमन्वितम्” इति तद्वेतः-
सेकात्प्राङ्निवृत्यभिप्रायम् । मार्कण्डेयः—

“दासी मानधनं हन्ति वेद्या हन्ति वर्धो यशः । विधवाऽऽयुः श्रियं हन्ति सर्वं हन्ति पराङ्मना” ॥
दास्यादिगमने प्रायश्चित्तम् । १५

“एकस्मिन्नह्नि यो दासीं यमेत्कामातुरः सकृत् । यावकं तत्र कर्तव्यं पराकं तु दिनत्रये ॥
“प्राजापत्यं तथा मासे वर्षे चान्द्रं प्रकल्पितम् । अतःपरमवाप्नोति चण्डालत्वं विगर्हितम् ॥
“द्विजः कामातुरोऽभीक्ष्णं वेद्यां यदि यमेद्भुवि । यदीच्छेच्छुद्धिमनुलां षडब्दं कुच्छ्रमाचरेत् ॥
“पाषण्डशूद्रैरपतितबौद्धैस्त्रीभिर्यमेद्यदि । दिनत्रये यावकं स्यात्तप्तं मासे प्रकीर्तितम् ॥
“गर्भे वा पुत्रजनने बहिष्कारो विधीयते । मद्यपानरतां नारीं द्विजः कामातुरो यमेत् ॥ २०
“मासमात्रे तु चान्द्रं स्यात् षण्मासे तु षडब्दकम् । वत्सरे पतितो भूयात्तत्प्रायश्चित्तमाचरेत् ॥
“तस्योपनयनं भूयः प्रायश्चित्तं ततः परम्” ॥ इति । प्रायश्चित्ताकरणे आपस्तम्बः (२।१०।२७।८)—
“नाश्य आर्यः शूद्रायाम्” इति । आर्यस्त्रैवर्णिकः शूद्रायां परभार्यायां प्रसक्तो नाश्यः
राज्ञा राष्ट्राभिर्वास्य इत्यर्थः । संवर्तः—

“शूद्री तु ब्राह्मणो गत्वा मासं मासार्धमेव वा । गोमूत्रयावकाहारो मासार्धेन विशुध्यति” ॥ २५
आपस्तम्बः (१।१०।२७।१०)—

“अनार्या शयने बिभ्रद्दद्वृद्धिं कषायपः । अब्राह्मण इव वन्दित्वा तृणेष्व्वासीत् पृष्ठतः” ॥
अनार्या शूद्रामुपगच्छन् दद्वृद्धिं वृद्ध्या जीवन् सुराव्यतिरिक्तं मद्यं कषायः तस्य पाता कषायपः ।
यश्चाब्राह्मण इव सर्वान् वन्दित्वा स्तौति सः सर्वोऽपि तृणेषूदयादारभ्यासीत् यावदादित्यः पृष्ठं
तपति पश्चाद्भागं तपतीत्यर्थः । अभ्यासे एवमभ्यासो यावता शुद्धिं मन्यते । ३०

मुखमैथुने प्रायश्चित्तम् । मुखमैथुने उशनाः—“यस्तु ब्राह्मणो धर्मपत्नीं मुखे मैथुनं
सेवेत स दुष्यति प्राजापत्येन शुध्यति” ॥

पश्वादिगमने प्रायश्चित्तम् ॥ पश्वादिगमने पराशरः (१०।१५)—

“पशुवेद्यादिगमने महिष्युष्ट्रीकपीस्तथा । कौरिणीं सूकरीं गत्वा प्राजापत्यं समाचरेत्” ॥ इति ।

सकृद्गमने त्वाह स एव (१०।१६)—“ महिष्युष्ट्रीखरीगामी त्वहोरात्रेण शुध्यति ” ॥ इति ।
स एव (१०।१६)—“ गोगामी च त्रिरात्रेण गामेकां ब्राह्मणे ददत् ” ॥ इति ।
इदं रेतःसेकात्पूर्वनिवृत्तौ वेदितव्यम्

“ रेतःसेकान्तगमने कुर्यात्सान्तपनं बुधः । तप्तकुच्छं चरेद्वत्वा गां द्विजो मदनातुरः ” ॥ इति
५ स्मरणात् । मनुः (११।१७४)—

“ मैथुनं तु समासेव्यं पुंसि योषिति वा द्विजः । गोयानेऽप्सु दिवा चैव सवासा स्नानमाचरेत् ” ॥ इति ।
गोयाने शकटादौ रेतःस्खलने प्रायश्चित्तम् । रेतःस्खलने पराशरः (१२।५७)—

“ गृहस्थः कामतः कुर्यात् रेतसः स्खलनं भुवि । सहस्रं तु जपेद्देव्याः प्राणायामैस्त्रिभिः सहः ” ॥ इति ।
भुवीत्येतद्वस्त्रादेरुपलक्षणम्

१० “ वस्त्रे जले तथा मार्गे कटादौ रेत उत्सृजेत् । परेद्युर्वा तदानीं वा सचेत् स्नानमाचरेत् ॥
“ जपेत्सहस्रं गायत्रीं ततः शुद्धिमवाप्नुयात् ” ॥ इति स्मृतेः । अकामकृते याज्ञवल्क्यः (प्रा. २७८)—
“ यन्मेऽद्य रेत इत्याभ्यां स्कन्नं रेतोऽभिमन्त्रयेत् । स्तनान्तरं भ्रुवोर्मध्यं तेनानामिकया स्पृशेत् ” ॥ इति ।
“ यन्मेऽद्य रेतः पुनर्मामैत्विन्द्रियम् ” इति द्वाभ्यामनामिकया रेत आदाय स्तनयोर्भ्रुवोर्मध्यमुपस्पृशेत् ।
कण्वः—“ यत्नोत्सर्गं गृहीत्वा च वारुणीभिरुपस्पृशेत् । वानप्रस्थो यतिश्चैव चरेच्चान्द्रायणव्रतम् ” ॥

१५ शाण्डिल्यः—

“ वानप्रस्थो यतिश्चैव स्खलने सति कामतः । पराकत्रयसंयुक्तमवकीर्णिव्रतं चरेत् ” ॥ इति ।

काश्यपः—

“ सूर्यस्य त्रिर्नमस्कारं स्वप्ने सिक्त्वा गृही चरेत् । वानप्रस्थो यतिश्चैव त्रिः कुर्यादधमर्षणम् ” ॥ इति ।
अवकीर्णिप्रायश्चित्तम् । ब्रह्मचारिणो रेतःस्खलने मनुः (११।१२०-१२२-१२३)—

२० “ कामतो रेतसः सेकं व्रतस्थस्य द्विजन्मनः । अतिक्रमं व्रतस्याहुर्धर्मज्ञा ब्रह्मवादिनः ॥
“ एतस्मिन्नेनसि प्राप्ते वसित्वा गर्दभाजिनम् । सप्तागारं चरेद्भैक्षं स्वकर्म परिकीर्तयन् ॥
“ तेभ्यो लब्धेन भैक्षेण वर्तयन्नैककालिकम् । उपस्पृशंस्त्रिषवणमब्देनैकेन शुध्यति ॥
“ अवकीर्णीविशुद्ध्यर्थं चान्द्रायणमथापि वा ” ॥ (११७)
“ अवकीर्णी तु काणेन गर्दभेन चतुष्पथे । स्थालीपाकविधानेन यजन्नैर्नैतिभिर्निशि ” ॥ (११८) इति ।

२५ संवर्तः—

“ ब्रह्मचारी तु यः स्कन्देत् कामतः शुक्लमात्मनः । अवकीर्णीव्रतं कुर्यात्स्नात्वा शुद्धयेदकामतः ” ॥ इति ।
बोधायनः (२।१।२९-३१)—“ यो ब्रह्मचारी स्त्रियमुपेयात्सोऽवकीर्णी । स गर्दभं पशुमालभेत ।
नैर्ऋतः पशुः पुरोडाशश्च रक्षोदैवतो यमदैवतो वा ” ॥ इति । जातुकर्णिः—

“ खण्डितं व्रतिना रेतो येन स्यात् ब्रह्मचारिणा । कामतोऽकामतः प्राहुरवकीर्णीति तं बुधाः ॥

३० “ आलभेत विशुद्ध्यर्थं नैर्ऋतं गर्दभं पशुम् ” इति ।

कौशिकस्तु नैष्ठिकादीनां कृतप्रायश्चित्तानामपि इह व्यवहारो नास्तीत्याह—

“ नैष्ठिकानां व्रतस्थानां यतीनां चावकीर्णिनाम् । शुद्धानामपि लोकेऽस्मिन्प्रायःपत्तिर्न विद्यते ” ॥ इति ।

ऋतुकालातिक्रमे प्रायश्चित्तम् । ऋतुकालातिक्रमे पराशरः (४।१४)—

“ ऋतौ न गच्छेद्यो भार्या सोऽपि कुच्छार्धमाचरेत् ” ॥

कात्यायनः—

“ऋतुस्नातां द्विजो भार्या व्रतश्राद्धविवर्जितः । स्वयं च रोगरहितो यमेत्सन्तानकाम्यया ॥
“अनिमित्ततया विप्रः पत्नीमृतुमतीं त्यजेत् । भ्रूणहत्यामवाप्नोति प्राजापत्यार्थमाचरेत् ” ॥ इति ।

बोधायनः—

“ऋतौ न गच्छेद्यो भार्या नियतां धर्मचारिणीम् । नियमातिक्रमे तस्य प्राणायामशतं स्मृतम्” ॥ इति । ५
कृच्छ्रार्थप्रत्याम्नायत्वेन प्राणायामशतं कार्यमिति भावः ।

स्त्रीबालवृद्धातुराणामर्धप्रायश्चित्तम् ।

ऋतुस्नातायाः स्त्रिया अनुपसर्पणे तदर्थं प्रायश्चित्तमुन्नेयम् । तथा च भृगुः—

“अशीतिर्यस्य वर्षाणि बालो वाऽप्यूनषोडशः । प्रायश्चित्तार्धमर्हन्ति स्त्रियो व्याधित एव च” ॥ इति ।
शपथोल्लङ्घने प्रायश्चित्तम् । ११

“केनचिन्निमित्तेन शपथमुल्लंघितवतः प्रायश्चित्तमाह पराशरः (१३।५०-५२)—

“यस्तु क्रुद्धः पुमान् ब्रूयात् जायायास्तु अगम्यताम् । पुनरिच्छति चेदेनां विप्रमध्ये तु श्रावयेत् ॥

“श्रान्तः क्रुद्धस्तमोऽन्धो वा क्षुत्पिपासाभयादितः । दानं पुण्यं कृतं कृत्वा प्रायश्चित्तं दिनत्रयम् ॥

“उपस्पृशेत्त्रिषवणं महानद्युपसङ्गमे । चीर्णान्ते चैव गां दद्यात् ब्राह्मणान् भोजयेद्दश ” ॥ इति ।

विप्रमध्ये परिषन्मध्ये स्वपापं निवेदयेत् । अहं शपथप्रतिज्ञावेलायां श्रान्त आसन् । अतः श्रमादि- १५

दोषप्रयुक्तमिदम् । अगम्यता प्रतिज्ञानं न तु विवेकपूर्वकम् । तस्मादस्य पापस्य प्रायश्चित्तमनु-

गृह्णन्तु भवन्त इति । यश्च दानं काशीयात्रादिपुण्यं च प्रतिज्ञाय पश्चादश्रद्धया न करोति तेषु

त्रिषु निमित्तेषु विप्रैर्निर्दिष्टमिदं प्रायश्चित्तं कुर्यादित्यर्थः ।

क्षत्रियादीनां ब्राह्मणीगमने प्रायश्चित्तम् । क्षत्रियादीनां ब्राह्मणीगमने संवर्तः—

“कथञ्चित् ब्राह्मणीं गच्छेत्क्षत्रियो वैश्य एव वा । गोमूत्रयावकाहारो मासार्धेन विशुध्यति ॥ २०

“शूद्रस्तु ब्राह्मणीं गत्वा कथञ्चित्काममोहितः । गोमूत्रयावकाहारो मासेनैकेन शुध्यति ” ॥

एतदत्यन्तव्यभिचारिब्राह्मणीविषयम् । इतरविषये वधस्मरणात् । तथा च वसिष्ठः (२१।१)—

“शूद्रेष्वेत ब्राह्मणीमुपगच्छेद्दीरर्णैर्वेष्टयित्वा शूद्रमग्नौ प्रास्येत् । ब्राह्मण्याः शिरसि वपनं कारयित्वा

सर्पिषाऽभ्यज्य नग्नां कृष्णं खरमारोप्य महापथमनुसंभ्राजयेत् पूता भवतीति विज्ञायते ” ॥

आपस्तम्बः (२।१०।२७।६)—“वध्यः शूद्र आर्यामिति ” । त्रैवर्णिकायामित्यर्थः । एतच्च २५

योऽन्तःपुरादिष्वधिकृतो भवति रक्षकस्ताद्विषयम् । अन्यत्र शिश्रच्छेदनम् । तथा च गौतमः

(१२।२-३)—“आर्यस्यभिगमने लिङ्गोद्धारः स्वहरणं च गोप्ता चेद्दधोऽधिकः ” इति ।

कात्यायनः—“वर्णत्रयस्य विप्राणां भार्यामातेति गीयते । तद्वारे यदा गच्छेद्दर्पणत्रयमकामतः ॥

“शिङ्गनछेदस्वहरणं कार्यं क्षत्रियवैश्ययोः । शूद्रस्य मौसलं प्राहुरिति शास्त्रेषु निश्चितम्” ॥ इति ।

स्त्रियाः परपुरुषगमने प्रायश्चित्तम्—

३०

स्त्रियाः परपुरुषगमने प्रायश्चित्तमुक्तं चतुर्विंशतिमते—

“रजसा शुध्यते नारी परपुंसाभिगमिनी । तथापि मुनिना प्रोक्तं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

“कृच्छ्रार्थं ब्राह्मणी कुर्याद्विप्रस्य गमने सति । क्षत्रियस्य चरेत्कृच्छ्रं वैश्ये सान्तपनं चरेत् ॥

“शूद्रस्य गमने चैव परार्कं च समाचरेत् ” ॥ इति । एतत्सकुद्रमनविषयम् ।

अभ्यासे तु उशनाः—“व्यभिचारिणीं भार्या कुचेलपिण्डपरिभूतां निवृत्ताधिकारां चान्द्रायण- ३५

प्रायश्चित्तं प्राजापत्यं वाचारयेत् ” ॥ इति ।

मनुः (११।१७६।१७७)—

“ विप्रदुष्टां स्त्रियं भर्ता निरुन्व्यादेकवेश्मनि । यत्पुंसः परदारेषु तच्चैनां चारयेतद्रम् ॥

“ सा चेत्पुनः संप्रदुष्येत्सदृशेनोपमान्त्रिता । कुच्छ्रं चान्द्रायणं चैव तदस्याः पावनं स्मृतम् ” ॥ इति ।
संवर्तः—

५ “ ब्राह्मण्याः शूद्रसंपर्के कथंचित्समुपागते । कुच्छ्रं चान्द्रायणं तस्याः पावनं परमं स्मृतम् ” ॥
याज्ञवल्क्यः (व्य. २८६)—“ प्रातिलोभ्ये वधः पुंसां स्त्रीणां नासादिकुन्तनम् ” ॥

मनुः (१।१५५)—

“ ब्राह्मणक्षत्रियविशां स्त्रियः शूद्रेण सङ्गताः । अप्रजाता विशुध्यन्ति प्रायश्चित्तेन नेतराः ” ॥

गर्भे पाते च ब्राह्मण्याः प्रायश्चित्तम् । स्मृत्यन्तरेऽपि—

१० “ विप्रगर्भे पराकं स्यात् ब्राह्मण्या क्षत्रियस्य तु । गर्भे चान्द्र वैश्यगर्भे पराकेण समन्वितम् ॥

“ चान्द्रायणं शूद्रगर्भे तस्यास्त्यागो विधीयते ” ॥ इति । गर्भो द्विविधः । पतिजन्योऽन्य-
जन्यश्च । सर्वर्णजोऽसर्वर्णजश्च । तत्र सर्वत्र गर्भपाते प्रायश्चित्तमुक्तं चतुर्विंशतिमते—

“ गर्भपाते समुद्दिष्टं यथावर्णविधिव्रतम् । राजगर्भे विशेषः स्यात् यथोक्तमृषिभिः पुरा ॥

“ ब्रह्मगर्भवधे कुच्छ्रमब्दं सान्तपनादिकम् । क्षत्रगर्भवधे चैव चरेच्चान्द्रायणद्वयम् ॥

१५ “ वैश्यस्य चैन्दवं प्रोक्तं पराकं शूद्रघातने । प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं गर्भपाते विशेषतः ” ॥ इति ।

व्यभिचारिस्त्रीणां त्यागविचारः । याज्ञवल्क्यः (आ. ७२)—

“ व्यभिचारकृतौ शुध्येत् गर्भे त्यागो विधीयते । गर्भभर्तृवधादौ च तथा महति पातके ” ॥

ऋतौ शुद्धिरिति मानसव्यभिचाराभिप्रायम् । “ रजसा स्त्री मनोदुष्टा ” इति स्मृतैः । शूद्रगर्भे
तस्यास्त्यागः । तथा गर्भवधे भर्तृवधे महापातके च । आदिग्रहणेन शिष्यादिगमने च त्यागः ।

२० तथा च वसिष्ठः (२१।१०)—

“ चतस्रस्तु परित्याज्याः शिष्या गुरुणा च या । पतिघ्नी तु विशेषेण जुद्धितोपगता च या ” ॥ इति ।

जुद्धितः श्वपाकादिः । चतुर्विंशतिमते—

“ चतस्र एव सन्त्याज्याः पतने सत्यपि स्त्रियः । श्वपाकोपहताया तु भर्तृघ्नी पितृपुत्रगा ” ॥ इति ।

त्यागश्च उपभोगधर्मकार्ययोः । न तु सर्वथा तस्याः । तथा चतुर्विंशतिमते—

२५ “ स्त्रीणां नास्ति परित्यागो ब्रह्महत्यादिभिर्विना । तत्रापि ग्रहमध्ये तु प्रायश्चित्तानि कारयेत् ॥

“ परित्यक्ता चरेत्पापं ब्रह्मघ्नं वापि किञ्चन । तत्पापं शतधा भूत्वा बान्धवानधिगच्छति ” ॥

माधवीये तु परित्यागनिषेधोऽनुतापोपेतप्रायश्चित्ताधिकारिस्त्रीविषयः ‘ प्रायश्चित्तानि कारयेत् ’
इत्यभिधानात् । अनुतापरहितायाः शूद्रगर्भादौ सर्वथा त्याग एवेत्युक्तम् ।

अनिमित्ततया भर्तृभार्यान्यतरपरित्यागे प्रायश्चित्तम् । अनिमित्ततया भार्यापरित्यागे

३० भर्तृपरित्यागे चापस्तम्बः (१।१०।२८।१९-२०)—“ दारव्यतिक्रमी खराजिनं बहिलोम परि-
धाय दारव्यतिक्रमिणे भिक्षामिति सप्तागाराणि चरेत् । सा वृत्तिः षाण्मासान् । स्त्रियास्तु भर्तृ-
व्यतिक्रमे कुच्छ्रद्वादशरात्राभ्यासः तावन्तं कालम् ” ॥ इति । षाण्मासान्प्राजापत्याभ्यासः इत्यर्थः ।

आपन्नायाः बलाच्छ्रद्वादसिपर्के सति रेतःसेकासेकयोः प्रायश्चित्तद्वयमाह पराशरः

(१०।२५-२६)—

३५ “ बन्दीग्रहणे या भुक्ता हत्वा बध्वा भयाद्वलात् । कुत्वा सान्तपनं कुच्छ्रं शुध्येत्पाराशरोऽब्रवीत् ” ॥ इति ।

“सकृन्नुक्ता तु या नारी नेच्छन्ती पापकर्मभिः । प्राजापत्येन शुद्ध्येत क्रतुप्रस्रवणेन च” ॥
इति भयाद्भयमुत्पाद्येत्यर्थः ।

विधवाया गर्भे त्यागः । विधवागमने पुरुषस्य यत्प्रायश्चित्तं तदर्थं विधवायाः द्रष्टव्यम् ।
विधवायाः गर्भधारणे परित्यागमाह **पराशरः** (१०।२०)—

“जारेण जनयेद्गर्भं मृते व्यक्ते गते पतौ । तां त्यजेदपरे राष्ट्रे पतितां पापकारिणीम्” ॥ इति । ५

नागरखण्डे—

“वर्णत्रयाद्वा विधवा स्ववर्णाद्वाऽथ गर्भिणी । विप्रैस्तस्याः परित्यागः कार्यो धर्मपरायणैः ॥

“तद्दर्शनान्महापापमवाप्नोतीह पूर्वजः” ॥

विष्णुधर्मे—

“वर्णत्रयात्स्ववर्णाद्वा गर्भिणी विधवा यदि । तस्या दर्शनमात्रेण ब्रह्महत्यामवाप्नुयात् ॥ १०

“अतस्त्यागो मुनिश्रेष्ठैर्विधवाया विधीयते” ॥ इति ।

शङ्कितव्यभिचारे स्त्रीणां कर्तव्यम् । शङ्कितव्यभिचारां ब्राह्मणीं प्रत्याह **पराशरः** (१०।३५)—

“ब्राह्मणी तु यदा गच्छेत्परपुंसा समन्विता । सा तु नष्टा विनिर्देश्या न तस्या गमनं पुनः” ॥ इति ।
पित्रादिभ्यो व्यतिरिक्तः पुमान्पर इत्युच्यते । तेन पुंसा समन्विता प्रीत्यतिशयोक्तकहास्यादि-
पुरस्सरं सम्यगन्विता ब्राह्मणस्त्री केनचिद्वाजेन ग्रामान्तरं देशान्तरं वा गत्वा चिरं निवसेत् ॥ १५
सा बन्धुमध्ये नष्टेति प्रख्यापनीया । न तस्याः पुनः गृहगमनमस्ति । स्वगृहं प्रत्यागतापि
निर्वासनीयेत्यर्थः ।

परपुरुषेण यथोक्तसमन्वयाभावेऽपि स्वातन्त्र्येण चिरं निर्गता स्त्री परित्याज्येत्याह **स एव** (१०।३२)—

“कामान्मोहात्तु या गच्छेत्त्यक्त्वा बन्धून्सुतान् पतिम् । सा तु नष्टा परे लोके मानुषेषु विशेषतः” ॥ इति ।
बन्ध्वादीनामन्यतमस्य समीपे स्थातव्यं इति स्त्रीधर्मः । तथा च **याज्ञवल्क्यः** (आ. ८६)— २०

“पितृमातृसुतभ्रातृश्वश्रूश्वशुरमातुलैः । हीना न स्याद्विना भर्त्रा गर्हणीयाऽन्यथा भवेत्” ॥ इति ।
एवं च सति या स्त्री कामाद्वा यथोक्तस्त्रीधर्मपरिज्ञानाद्वा बन्ध्वादीन्परित्यज्य ग्रामान्तरादौ चिरं
वस्तुं गच्छेत्सा परलोके नष्टा नरकं प्राप्नोति । बन्ध्वादिषु च प्रवेशं न लभते ।

बन्धुराहित्येन गमनेऽपि त्यागापवादः । उक्तार्थस्य निमित्तविशेषेणापवादमाह
स एव—“मदमोहहता नारी क्रोधाद्दण्डादिताडिता । अद्वितीयागता चैव पुनरागमनं भवेत्” ॥ इति । २५
मदः पतिश्वशुरादितिरस्कारजनको मानसो दोषः । पतिशुश्रूषणं स्त्रीणां परमो धर्म इति
विवेकाभावो मोहः । उक्तदोषद्वयोपेतां नारीं शिक्षितुं पत्यादयो यदा दण्डादिभिस्ताडयेयुः
तदा व्यथिता सा यथोक्तबन्ध्वादिसहायं विना स्वयमेकाकिन्येव यद्यपि निर्गच्छेत्तथापि स्वगृहे
पुनरागमनं प्राप्नुयादित्यर्थः । पुनरागमने प्रतीक्षणकालविधिमाह **पराशरः** (१०।३३)—

“दशमे तु दिने प्राप्ते प्रायश्चित्तं न विद्यते । दशाहं न त्यजेन्नारीं त्यजेन्नष्टश्रुतां तथा” ॥ इति । ३०
पुनरागमने प्रतीक्षां दश दिनानि कुर्यात् । दशमदिने तया गृहे प्राप्ते सति नेयं प्रायश्चित्तभागभवेत् ।
ऊर्ध्वं तु व्यभिचारोचितप्रायश्चित्तभागभवति । दशाहमध्ये तदीयव्यभिचाराश्रवणे तां न परित्यजेत् ।
यदि नष्टत्वेन सा श्रूयेत् तदा दशाहमध्ये त्वकृतप्रायश्चित्तां तां परित्यजेदित्यर्थः ।

स्वातन्त्र्येण गताया अत्यागे भर्त्रादीनां प्रायश्चित्तम् । नष्टां श्रुत्वापि यदि भर्त्रादयस्तां
न परित्यजेयुः तदा तेषां प्रायश्चित्तमाह **स एव** (१०।३४)—“भर्ता चैव चरेत्कुच्छ्रं कुच्छ्रार्थं चैव ३५

बान्धवाः” इति । अकृतप्रायश्चित्तानां तेषां गृहे भोजनादिकमाचरन्नुपवासेन शुध्यतीत्याह स एव (१०।३४)—“ तेषां भुक्त्वा च पीत्वा चाहोरात्रेण शुध्यति ” ॥ इति ।

ताडनादिना निर्गच्छन्त्याः त्यागविचारः । ताडनादिना निर्गच्छन्त्याः पुरुषान्तर-समन्वयाभावेऽपि दशाहादूर्ध्वं त्यागे को हेतुरित्यत आह स एव (१०।३५)—

५ “ ब्राह्मणी तु यदा गच्छेत्परपुंसा विवर्जिता । गत्वा पुंसः शतं याति त्यजेद्युस्तां तु गोत्रिणः ” ॥ इति । यद्यपि क्रोधादिना निर्गच्छन्ती न तदानीं पुरुषान्तरेण समवैति तथापि गत्वा कालान्तरेण शत-संख्याकेषु पुरुषेषु सञ्चरतीति मत्वा बान्धवास्तां परित्यजेयुः । ब्राह्मण्या अपि बहुपुरुषसञ्चारिण्या गणिकात्वं भवति । तदाह प्रजापतिः—

“अभिगच्छति या नारी बहुभिः पुरुषैर्मिथः । व्यभिचारिणीति सा ज्ञेया प्रत्यक्षं गणिकेति च ” ॥ इति ।

१० व्यभिचारिण्या गृहप्रवेशे शुद्धिप्रकारः । सा यद्गृहं प्रविशति तस्य शुद्धिप्रकारमाह पराशरः (१०।३६-४२)—

“ पुंसां यदि गृहं गच्छेत्तद्गृहं गृहं भवेत् । पितृमातृगृहं यच्च जारस्येव तु तद्गृहम् ॥

“ उल्लिख्य तद्गृहं पश्चात्पञ्चगव्येन सेचयेत् । त्यजेच्च मृन्मयं पात्रं वस्त्रं काष्ठं च शोधयेत् ॥

“ संभारान् शोधयेत्सर्वान् गोवालैश्च फलोद्भवान् । ताम्राणि पञ्चगव्येन कांस्यानि दश भस्मभिः ॥

१५ “ प्रायश्चित्तं चरेद्विप्रो ब्राह्मणैरुपपादितम् । गोद्वयं दक्षिणां दद्यात्प्राजापत्यद्वयं चरेत् ॥

“ इतरेषामहोरात्रं पञ्चगव्येन शोधनम् ॥

“ उपवासैर्व्रतैः पुण्यैः स्नानसन्ध्याचर्चनादिभिः । जपहोमदयादानैः शुध्यन्ते ब्राह्मणादयः ॥

“ आकाशं वायुरग्निश्च मेध्यं भूमिगतं जलम् । न दुष्यन्ति च दर्भाश्च यज्ञेषु चमसा यथा ” ॥ इति ।

सेयं दुर्ब्राह्मणी स्वनिवासाय पत्युर्मातुर्वा जारस्य वाऽन्यस्य वा दाक्षिण्यवतः यस्य कस्यचिद्गृहं

२० प्रविशति तद्गृहं चण्डालाध्युषितगृहमिवात्यन्तमपवित्रं भवति । तत्रोल्लेखनं भूमेस्तेन कुड्यादिलेपना-दिकमुपलक्ष्यते । वस्त्रकाष्ठयोर्धन्यादीनां संभाराणां च यथोक्तं शोधनं कुर्यात् । नालिकेरादिफल-संभूतानां पात्राणां गोवालैर्मार्जनम् । ताम्रस्याम्लादिना शुद्धिरुक्ता पूर्वम्* । अत्र तु पञ्चगव्येनेति विशेषः । कांस्यपात्राणां दशकुत्वो भस्मनाऽवषर्मणम् । गृहस्वामी तु परिषन्निर्दिष्टं सदक्षिणं प्राजापत्य-द्वयं चरेत् । अन्येषां तु तद्गृहवासिनामुपवासः पञ्चगव्यप्राशनं च । तद्गृहवासिभिः सह व्यवहर्तृणां

२५ गृहान्तरवासिनां निर्दिष्टेनोपवासादीनामन्यतमेन शुद्धिः । तद्गृहसंबन्धिनामाकाशादीनां निर्लेपत्वात् न यत्नसंपादनीया शुद्धिः । तत्र दृष्टान्तो यज्ञेष्विति । चिरकालवासविषयमिदं परिशोधनम् । सकृत्प्रवेशे तु मार्जनादिभिः शुद्धिरिति माधवीये ।

ब्राह्मण्याश्चण्डालादिगमने प्रायश्चित्तम् । अकामकृते चण्डालसंसर्गे ब्राह्मण्याः प्रायश्चित्तमाह पराशरः (१०।१८-२३)—

३० “ चण्डालैः सह संपर्कं या नारी कुरुते ततः । विप्रान् दशावरान् कृत्वा स्वकं दोषं प्रकाशयेत् ॥

“ आकण्ठसम्मिते कूपे गोमयेदककर्दमे । तत्र स्थित्वा निराहारा त्वहोरात्रेण निष्क्रमेत् ॥

“ सशिखं वपनं कृत्वा भुञ्जीयाद्यावकोदनम् । त्रिरात्रमुपवासित्वा त्वेकरात्रं जले वसेत् ॥

“ शङ्खपुष्प्यालतामूलं पत्रं च कुसुमं फलम् । सुवर्णं पञ्चगव्यं च काथयित्वा पिबेज्जलम् ॥

“एकभुक्तं चरेत्पश्चाद्वावत्पुष्पवती भवेत् । व्रतं चरति तद्यावत्तावत्संवसते बहिः ॥
 “प्रायश्चित्ते ततश्चोर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् । गोद्वयं दक्षिणां दद्याच्छुद्धिं पराशरोऽब्रवीत्” ॥ इति ।
 कामकृते सकृद्गमने त्वद्दुकृच्छ्रमसकृद्गमने अग्निप्रवेशः ।
 “सकृच्चण्डालगमने कामतस्तु कृते स्त्रियः । अब्दकृच्छ्रं स्मृतं तस्या अभ्यासेऽग्निप्रवेशनम्” ॥ इति
 स्मृतेः ।

५

रेतस्सेकान्तचण्डालगमनस्य प्रायश्चित्तमभिधाय रेतस्सेकात्प्राङ्निवृत्तौ प्रायश्चित्तमाह
 पराशरः (१०१२४)—

“चातुर्वर्ण्यस्य नारीणां कृच्छ्रं चान्द्रायणं स्मृतम् । यथा भूमिस्तथा नांरी तस्मात्तां न तु दूषयेत्” ॥
 दूषणं त्यागः । चातुर्वर्ण्यस्येति ब्राह्मणीव्यतिरिक्तस्त्रीविषयम्
 “रेतस्सेकात्प्राङ्निवृत्तौ चण्डालगमने सति । ब्राह्मणी निष्कृतिं कुर्याच्चान्द्रायणचतुष्टयम्” ॥ इति १०
 स्मृतेः ।

ब्राह्मण्या म्लेच्छरजकादिगमने प्रायश्चित्तम् । संवर्तस्तु—

“चण्डालं पुल्कसं म्लेच्छं श्वपाकं पतितं तथा । एतान् श्रेष्ठा तु या गच्छेत्कुर्याच्चान्द्रायणत्रयम् ॥
 “रजकव्याधशैलूषवेणुचर्मोपजीविनः । ब्राह्मण्येतान् समागच्छेत्कुर्याच्चान्द्रायणत्रयम्” ॥ इति ।
 गर्भधारणे जाबालिः—

१५

“विप्राङ्गनायाश्चण्डालगर्भे तां दण्डयेन्नृपः । निकृत्य कर्णनासं तु निर्वास्य पतनाद्बहिः ॥
 “राज्ञा कार्यस्त्याग एव न वधस्त्रीषु सम्मतः । क्षत्रवैश्यस्त्रियो राजा कारीषवधमाचरेत्” ॥ इति ।
 तदेवं ब्रह्महत्यासुरापानस्वर्णस्तेयगुरुतल्पगमनानां महापातकानां प्रायश्चित्तानि निरूपितानि ।
 प्रसङ्गादितरहननस्यापेयान्तरपानस्य स्तेयान्तरस्यागम्यागमनमात्रस्य च प्रायश्चित्तमुक्तम् ।

अथ संसर्गस्य महापातकत्वविचारः । महापातकिसंसर्गस्य प्रायश्चित्तमुच्यते । तस्य च २०
 महापातकित्वमुक्तं मनुयाज्ञवल्क्यादिभिः (मनुः ११।५४)—

“ब्रह्महत्यासुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः । महान्ति पातकान्याहुः संयोगं चैव पञ्चमम्” ॥ इति ।
 “संवत्सरेण पतति पतितेन समाचरन् (१८०) । ब्रह्महा मध्यपस्तेनस्तथैव गुरुतल्पगः ॥
 “एते महापातकिनो यश्च तैः सह संवसेत्” ॥ इति । तत्तत्प्रायश्चित्तं च संसर्गिण उक्तम् ॥
 “यो येन पतितैर्नैषां संसर्गं याति मानवः । स तस्यैव व्रतं कुर्यात्संसर्गस्य विशुद्ध्ये” ॥ (१८१) इति । २५
 एतद्युगान्तरविषयम् । अत एव कलियुगधर्माभिधाने प्रवृत्तः पराशरः ब्रह्महत्यादिमहापातक-
 चतुष्टयस्य प्रायश्चित्तमुक्तवान् । कलियुगे संसर्गदोषाभावमभिप्रेत्य संसर्गप्रायश्चित्तं नाभ्यधात् ।

कर्मण एव पातित्यहेतुत्वम् । तथा कर्मणा पातित्यं कण्ठरेवेणाह पराशरः (१।२५)—

“कृते संभाषणादेव त्रेतायां स्पर्शनेन च । द्वापरे त्वन्नमादाय कलौ पतति कर्मणा ॥
 “त्यजेद्देशं कृतयुगे त्रेतायां ग्राममुत्सृजेत् । द्वापरे कुलमेकं तु कर्तारं तु कलौ युगे” ॥ इति । ३०
 सुमन्तुः—“ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः । महापातकसंज्ञानि चत्वार्येव कलौ युगे” ॥ इति ।

अत्र चतुर्थहणादेवकाराच्च संसर्गिणो न महापातकित्वम् । स्मृतिकामधेनौ—

“संसर्गदोषो नैव स्यान्महापातकिभिः कलौ । संसर्गदोषः स्तेनार्थैर्न महापापनिष्कृतिः” ॥
 तथा स्मृत्यन्तरे कलौ वर्जनीयानामनुक्रमे संसर्गदोषः पापेष्विति पठितम् ।

कलौ संसर्गस्य पापमात्रहेतुत्वम् । संसर्गदोषस्य पातित्यापादकत्वाभावेऽपि पाप-
मात्रापातकमस्तीत्याह पराशरः (१२।७१)—

“आसनाच्छयनाद्यानात्संभाषात्सहभोजनात् । सङ्कामन्ति हि पापानि तैलबिन्दुरिवांभसि” ॥ इति ।
तत्र प्रायश्चित्तमाह स एव (४।८)—

- ५ “ यो वै समाचरेद्विप्रः पतितादिष्वकामतः । पञ्चाहं वा दशाहं वा द्वादशाहमथापि वा ॥
“ मासार्धमासमेकं वा मासद्वयमथापि वा । अर्द्धार्धमर्द्धमेकं वा तदूर्ध्वं चैव तत्समः ॥
“ त्रिरात्रं प्रथमे पक्षे द्वितीये कुच्छ्रमाचरेत् । तृतीये चैव पक्षे तु कुच्छ्रं सान्तपनं चरेत् ॥
“ चतुर्थे दशरात्रं स्यात्पराकः पञ्चमे ततः । कुर्याच्चान्द्रायणं षष्ठे सप्तमे चैन्दवद्वयम् ॥
“ शुद्ध्यर्थमष्टमे चैव षण्मासान् कुच्छ्रमाचरेत् । पक्षसंख्याप्रमाणेन सुवर्णान्यपि दक्षिणा” ॥ इति ।

१० समाचरणं सहशयनादि ।

“ एकशय्यासनं पङ्क्तिभाषणपङ्क्त्यन्नमिश्रणम् । याजनाध्यापने योनिस्तथैव सहभोजनम् ॥

“ नवधा सङ्करः प्रोक्तो न कर्तव्योऽधमैः सह ” ॥ इति बृहस्पतिस्मरणात् । पतितादिष्वित्यादि-
शब्देन तत्पुत्रादयो गृह्यन्ते “ पतितोत्पन्नः पतितो भवति ” इति वसिष्ठेन (१३।५१)
तन्निन्दनात् । प्रथमः पक्षः पञ्चाहसंसर्गः । तत्र त्रिरात्रोपवासमाचरेत् । द्वितीये पक्षे प्राजापत्यम् । तृतीये

१५ सान्तपनम् । अत्र सान्तपनं सप्तरात्रं गृह्यते । अर्धमाससंसर्गश्चतुर्थः पक्षः । तत्र दशरात्रोपवासमाचरेत् ।
ऐन्दवद्वयं चान्द्रायणद्वयम् । किञ्चिदूनसंवत्सरसंसर्गः अष्टमः पक्षः । अत्र षण्मासान् कुच्छ्र-
माचरेत् । षट्सु मासेषु प्राजापत्यकुच्छ्राणि पञ्चदश संपद्यन्ते । तदूर्ध्वं संसर्गे समपापे ‘तदूर्ध्वं स्यात्’
इति वचनेन तत्तत्प्रायश्चित्तार्थं द्रष्टव्यम् । सर्वेषु पक्षेषु यथोक्तं प्रायश्चित्तमनुष्ठाय तदङ्गत्वेन
दक्षिणा दातव्या । तत्र प्रथमपक्षे सुवर्णमेकम् । एवमपरेष्वपि पक्षेष्ववगन्तव्यम् । कूर्मपुराणेऽपि—

२० “ सङ्गं कृत्वाऽर्धमासे तु उपवासान् दशाचरेत् । पराकं माससंसर्गे चान्द्रं मासत्रये व्रतम् ।

“ कृत्वा षण्माससंसर्गं कुर्याच्चान्द्रायणद्वयम् । किञ्चिन्न्यूनाब्दसंसर्गे षण्मासं कुच्छ्रमाचरेत्” ॥ इति ।

गोचर्मक्षेत्रलक्षणम् । महापातकानां साधारणं प्रायश्चित्तमाह पराशरः (१२।४३)—

“ गवां शतं सैकवृषं यत्र तिष्ठत्ययन्त्रितम् । तत्क्षेत्रं दशगुणितं गोचर्मपरिकीर्तितम् ॥

“ ब्रह्महत्यादिभिर्युक्तो मनोवाक्कायकर्मजैः । एतद्गोचर्मदानेन मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ” ॥ इति ।

२५ एकवृषेण सहितं गोशतं यन्त्रणा रहितं विश्रमाय यावन्तं प्रदेशमाक्रम्य व्यवतिष्ठते तावान्
भूप्रदेशो दशगुणितः सन् गोचर्मशब्देनाभिधीयते ।

मिथ्याभिर्शंसनप्रायश्चित्तम्—अभिर्शंसने दोषं प्रायश्चित्तं च दर्शयति याज्ञवल्क्यः
(प्रा. २८५—२८७)—

“ मिथ्याभिर्शंसने दोषो द्विः समोऽनृतेवादिनः । मिथ्याभिर्शस्तदोषं च समादत्ते मृषा वदन् ॥

१० “ महापापोपपापाभ्यां योऽभिर्शंसन्मृषा परम् । अब्भक्षो मासमासीत स जापी नियतेन्द्रियः ॥

“ अभिर्शस्तो मृषा कुच्छ्रं चरेदाग्नेयमेव वा । निर्वपेत्तु पुरोडाशं वायव्यं पशुमेव वा ” ॥ मनुः—

“ पतितं पतितेत्युक्त्वा जारं चोरेति वा पुनः । वचनात्तुल्यदोषः स्यान्मिथ्या द्विर्दोषभागभवेत्” ॥

गौतमः (२१।१७—१९)—

“ ब्राह्मणस्याभिर्शंसने दोषस्तावान् । द्विरेनेनसि । दुर्बलहिंसायां चाविमोचने शक्तश्चेत्” ॥ इति ।

बोधायनः—“ मिथ्याभिंशंसने कृच्छ्रस्तदर्थमभिंशंसितुः ” ॥ इति । **मरीचिः**—

“ स्तेयं वा व्यभिचारो वा हत्या वाऽप्यस्ति सर्वदा । इति यो वदते साधून् स मिथ्यावादवान् द्विजः ॥

“ देवकार्येषु पित्र्येषु निर्गह्यो मिथ्यया वदन् । अस्ति चेत्तुल्यपापी स्यान्मिथ्यात्वे द्विगुणं भवेत् ॥

“ तस्य पापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं महत्तरम् । विप्रेषु तप्तकृच्छ्रं स्यादङ्गनास्त्वह च कायिकम् ॥

“ बालावृद्धातुरेष्वेवं वदन्पाराकमाचरेत् । क्षत्रियादिषु सर्वेषु प्राजापत्यमुदीरितम् ” ॥ इति । ५

गालवः—

“ मिथ्यापापेन वा बद्धो ह्यभिश्चस्त इतीरितः । पापमस्ति न वा लोके वार्ता सर्वत्र गण्यते ।

“ अयोग्यो हव्यकव्येषु निन्दितः सर्वदा जनैः । तस्माद्देहविशुद्ध्यर्थं प्राजापत्यं चरेद्विजः ।

“ ततः शुद्धो भवत्येवं मिथ्यात्वे विप्रपुङ्गवः । दोषस्तु विद्यते यत्र तत्रोक्तां निष्कृतिं चरेत् ” ॥ इति ।

दोषस्य सत्वे प्रतिपदोक्तं प्रायश्चित्तं कुर्यादित्यर्थः । असकृदभिंशंसने **शङ्खः**—“ नास्तिको १०

नास्तिकवृत्तिः कुतश्च कूटव्यवहारो मिथ्याभिंशंसीत्येते पञ्चवत्सरं ब्राह्मणगृहे भैक्षं चरेयुः ” ॥ इति ।

यन्तु नास्तिकविषये वसिष्ठवचनम् (२१।२९-३०) “ नास्तिकः कृच्छ्रद्वादशरात्रं चरित्वा विरमेन्नस्ति क्यन्नानास्तिकवृत्तिस्त्वनिकृच्छ्रम् ” । इति तत्सकृत्करणाविषयमिति **माधवीये** ।

ब्राह्मणापगुरणादि प्रायश्चित्तम् । ब्राह्मणापगुरणादौ पराशरः (११।५१)—

“ अपगूर्य त्वहोरात्रं त्रिरात्रं क्षितिपातने । अतिकृच्छ्रं च रुधिरं कृच्छ्रोऽभ्यन्तरशोणिते ” ॥ इति । १५

अपगूर्य वधार्थं दण्डमुग्र्यस्य दिनमेकमुपवसेत् । भूमौ निपात्य त्रिरात्रं उपवसेत् । प्रहारे रुधिरे

निर्गते अतिकृच्छ्रं चरेत् । निर्गतं रुधिरमन्तरेव एकत्र घनीभूतं चेत्कृच्छ्रं चरेदित्यर्थः ।

एतत्कलियुगाभिप्रायम् । “ कलौ पाराशराः स्मृताः ” इति **स्मरणात्** ।

युगान्तरे तु मनुः (११।२०६-२०८)—

“ अपगूर्य त्वद्दशतं सहस्रमभिहत्य तु । जिघांसया ब्राह्मणस्य नरकं प्रतिपद्यते ॥

२०

“ शोणितं यावतः पांसून् संगृह्णाति द्विजन्मनः । तावन्त्यद्दशसहस्राणि तत्कर्ता नरके वसेत् ॥

“ अपगूर्य चरेत्कृच्छ्रमतिकृच्छ्रं निपातने । कृच्छ्रातिकृच्छ्रे कुर्वीत विप्रस्योत्पाद्य शोणितम् ” ॥

याज्ञवल्क्यः (प्रा. २९३)—

“ विप्रदण्डोद्यमे कृच्छ्रो ह्यतिकृच्छ्रो निपातने । कृच्छ्रातिकृच्छ्रोऽमुकृपाते कृच्छ्रोऽभ्यन्तरशोणिते ” ॥ इति ।

बोधायनोऽपि (२।१।७)—

२५

“ अपगूर्य चरेत्कृच्छ्रमतिकृच्छ्रं निपातने । कृच्छ्रं चान्द्रायणं चैव लोहितस्य प्रवर्तने ॥

“ तस्मान्नैवापगुर्वीत न च कुर्वीत शोणितम् ” ॥ इति ।

ब्राह्मणतिरस्कारे प्रायश्चित्तम् । ब्राह्मणस्य तिरस्कारे पराशरः (११।४९)—

“ हुङ्कारं ब्राह्मणस्योक्त्वा त्वंकारं च गरीयसः । स्नात्वा तिष्ठन्नहःशेषमभिवाद्य प्रसादयेत् ” ॥

ब्रह्मविदं प्रति हुङ्कारं यः प्रयुङ्क्ते यश्च वयसा विद्यया वा ज्येष्ठं प्रति त्वमित्येकवचनं प्रयुङ्क्ते ३०

तावुभौ स्नात्वा यावदस्तमयं निराहारौ स्थित्वा रात्रावभिवादनेन तं क्षमापयेतामित्यर्थः ।

ब्राह्मणताडनादौ प्रायश्चित्तम् । ताडनादौ प्रायश्चित्तमाह स एव (११।५०)—

“ ताडयित्वा वृणेनापि कण्ठे बद्धा च वाससा । विवादेन विनिर्जित्य प्रणिपत्य प्रसादयेत् ” ॥ इति ।

प्रणिपातेन उपवासोऽप्युपलक्ष्यते । तथा च मनुः (११।२०४-२०५)—

“ हुंकारं ब्राह्मणस्योक्त्वा त्वंकारं च गरीयसः । स्नात्वाऽनश्नन्नहःशेषमभिवाद्य प्रसादयेत् ॥

“ ताडयित्वा तृणेनापि कण्ठे वाऽवध्य वाससा । विवादे वा विनिर्जित्य तमुपोष्य प्रसादयेत् ” ॥

याज्ञवल्क्यः (प्रा. २९२)—

५ “ गुरुं त्वंकृत्य हुंकृत्य विप्रं निर्जित्य वादतः । बद्धा वा वाससा क्षिप्रं प्रसाद्योपव सेद्दिनम् ” ॥ इति

गुरुपित्राद्यधिक्षेपप्रायश्चित्तम् । पित्राद्यधिक्षेपे स्कान्दे—

“ पुत्रादिर्जनकं ज्येष्ठं गुरुं वापि न पीडयेत् । एकशब्देन नामोक्त्या त्वंकारं हुंकृतिं च वा ।

“ तद्दोषपरिहारार्थं नाचिकेतव्रतं चरेत् ॥

“ नाचिकेतः पुरा राजन् गुरुमुद्दालकं प्रति । परिभाष्य ततो गत्वा दृष्ट्वा यमपुरं महत् ॥

१० “ पुनर्गत्वा भुवः पृष्ठं पितरं प्रणिपत्य च । तद्वाक्येन ततः पश्चाद्देहशुद्ध्यर्थमादरात् ॥

“ अपिबन्मण्डलं तत्र गवां क्षीरं दिने दिने । पीत्वा शुद्धिमनुप्राप्तो मण्डलाद्विप्रसूतम् ॥

“ असकृत् गुर्वधिक्षेपे व्रतमेतच्चरोद्विजः । अथवा देहशुद्ध्यर्थं षडब्दं कृच्छ्रमाचरेत् ” ॥ इति ।

वसिष्ठः (२१।२८)—“ गुरोरलीकनिर्वन्धे कृच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा सचैलस्नातो गुरु-
प्रसादात्पूतो भवति ” ॥ इति । तदेतदमतिपूर्वं मतिपूर्वं सकृदनुष्ठाने वेदितव्यम् इति माधवीये ।

१५ विष्णुः (५४।१४)—“ समुत्कर्षे गुरोरलीकनिर्वन्धे क्षीरेण पयसा वा मांसं वर्तेत ” ॥ इति ।

पतनीये समुद्रयानादौ प्रायश्चित्तम् ।

पतनीयानां प्रायश्चित्तमाह—बोधायनः (२।१।४१)—

“ समुद्रयानं ब्रह्मस्वन्यासापहरणं भूम्यपां हरणमनृतवदनं सर्वापण्यैर्व्यवहरणं शूद्राभिर्गमनं यश्च

“ शूद्रायामभिप्रजायते तदपत्यं च भवति तेषां निर्वेशः चतुर्थकालं मितभोजिनः स्थुरपोभ्यपेयुः

२० “ सवनानुकल्पम् । स्थानासनाभ्यां विहरन्त एते त्रिभिर्वर्षैस्तदपहन्ति पापम् ” इति । चतुर्थः

कालो येषां तथाथ दिवा भुक्त्वा श्वो रात्रौ भुञ्जते तथोक्ताः । तथा मितभोजिनः अमुष्टाशिनः ।

अपोभ्यपेयुः भूमिगतास्त्रप्सु स्नानं कुर्युः । सवनानुकल्पं त्रिषवणं स्थानासनाभ्यां तिष्ठेयुः । अहनि

रात्रौ चासीरन् । एवं विहरन्तः कालं क्षिपन्तः एते त्रिभिर्वर्षैस्तत्पापमपनुदन्तीत्यर्थः ।

शूद्राभिर्गमने इदं महत्प्रायश्चित्तं ऋतूपगमने अपत्योत्पत्तौ द्रष्टव्यम्

२५ “ वृषलीफेनपीतस्य निश्वासोपहतस्य च । तस्यां चैव प्रसूतस्य निष्कृतिर्न विधीयते ” ॥ इति स्मृतेः ।

दुर्जनसेवाप्रायश्चित्तम् । दुर्जनसेवायां प्रायश्चित्तमाह—देवलः—

“ पिशुनश्च खलश्चैव मद्यपः कितवस्तथा । स्तेयी च दुर्जना एते सेवामेषां करोति यः ॥

“ पराकस्त्वेकदिवसे पक्षे तप्तमुद्गीरितम् । प्राजापत्यं ततो मासे वर्षे चान्द्रस्य भक्षणम् ॥

“ कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति वर्षादूर्ध्वं पतत्यसौ ” ॥ इति ।

३० “ शूद्रसेवाप्रायश्चित्तम् । शूद्रसेवायां बोधायनापस्तम्बौ (आप. १।९।१०।११; बोधा. २।१।४२)—

“ यदेकरात्रेण करोति पापं कृष्णं वर्णं ब्राह्मणः सेवमानः ॥

“ चतुर्थकाल उदकाभ्यवायी त्रिभिर्वर्षैस्तदपहन्ति पापम् ” ॥ इति । कृष्णवर्णः शूद्रः तदाज्ञा-

करो भूत्वा वृत्त्यर्थं सेवमानो ब्राह्मणः त्रिभिर्वर्षैर्मितमेव चतुर्थकाले मितं भुञ्जानः त्रिषवणस्नायी

३५ एकदिनसेवाकृतं पापं हन्तीत्यर्थः । बोधायनः (२।१।४४-४५)—“ भैषज्यकरणं ग्रामयाजनं

रङ्गोपजीवनं नाट्याचार्यता गोमहिषैरक्षणं यच्चान्यदप्येवं युक्तं कन्यादूषणमिति । तेषां तु निर्वेशः पतितवृत्तिर्दोषं संवत्सराविति ” अन्यदप्येवं युक्तमिति अन्यदपि उपपातकमित्यर्थः ।

अशुचिकराणां प्रायश्चित्तम् । स एव (२।१।४६-४८) “ अथाशुचिकराणि । ब्रूत-
मभिचारोनाहिताग्नेरुच्छवृत्तिता समावृत्तस्य भैक्षचर्या तस्य चैव गुरुकुले वास ऊर्ध्वं चतुर्भ्यो
मासेभ्यस्तस्य चाध्यापनं नक्षत्रनिर्देशश्चेति । तेषां तु निर्वेशो द्वादशमासान् द्वादशार्धमासान् ५
द्वादशद्वादशाहान् द्वादशषडहान् द्वादशत्र्यहान् द्वादशाहं षडहं त्र्यहमहोरात्रमेकाहमिति यथा-
कर्माभ्यासः ” इति । द्वादशमासाद्येकाहान्तकालविकल्पः यथाकर्माभ्यासः तथा वेदितव्यः ।
बुद्धिपूर्वं सानुबन्धेऽभ्यासे च भूयांसं कालं प्रायश्चित्तं कुर्याद्विपरीते विपर्यय इत्यर्थः ।

अभिचारशापादिप्रायश्चित्तम् । आपस्तम्बः—(१।१०।१९।१५-१६) “ अभीचारानु-
व्याहारावशुचिकरावपतनीयौ पतनीयाविति हारीतः ” ॥ इति । अभिचारः इयेनेनेत्यादि । अनु- १
व्याहारः शापः । तौ ब्राह्मणविषये क्रियमाणावित्यर्थः । स एव (१।१०।२९।१७-१८)—
“ पतनीयवृत्तिस्त्वशुचिकराणां द्वादशमासान् द्वादशार्धमासान् द्वादशद्वादशाहान् द्वादशसप्ताहान्
द्वादशत्र्यहान् द्वादशषडहान् द्वादशाहं सप्ताहं त्र्यहव्यहमेकाहमिति ” । अशुचिकराणां कर्मणां
येषां प्रातिस्विकं प्रायश्चित्तं नोक्तं तेषामपि कर्मणां पतनीयेषु कर्मसु या वृत्तिः प्रायश्चित्तं सैव ।
शिष्टं स्पष्टम् । अशुचिकराणि तेनोक्तानि (१।७।११।१२-१७)—“ अथाशुचिकराणि शूद्र- १५
गमनमार्थस्त्रीणां प्रतिषिद्धानां मांसभक्षणं शुनो मनुष्यस्य च कुक्कुटसूकराणां ग्राम्याणां क्रव्यादसां
मनुष्याणां मूत्रपुरीषप्राशनं शूद्रेच्छिष्टमपपात्रागमनं चार्याणामिति ” । क्रव्यादसः गुश्चादयः ।
शूद्रेच्छिष्टं भुक्तमशुचिकरम् । अपपात्राः प्रतिलोमस्त्रियः । मनुः (१।१।१९७-१९८, १९९)—
“ वात्यानां याजनं कृत्वा परेषामन्यत्कर्म च । अभिचारमहीनं च त्रिभिः कुच्छ्रैर्विशुध्यति ॥
“ शरणागतं परित्यज्य वेदं विष्णव्य च द्विजः । संवत्सरं यवाहारस्तत्पापमपसेधति ॥ २०
“ येषां द्विजानां सवित्री नानूच्येत यथाविधि । तांश्चारयित्वा त्रीन् कुच्छ्रान्यथाविध्युपनाययेत् ” ॥
याज्ञवल्क्यः (प्रा. २८९)—

“ त्रीन् कुच्छ्रानाचरेद्वात्ययाजकोऽभिचरन्नपि । वेदप्लावी यवाश्यब्दं त्यक्त्वा च शरणागतम् ” ॥ इति ।

पैठीनसिः—“ शूद्रयाजकः तद्द्रव्यत्यागात्पूतो भवति । प्राणायामसहस्रेषु दशकुत्वोऽभ्यस्तेष्विति ॥

यत्तु मनुराह—

“ पुरोधाः शूद्रवर्णस्य ब्राह्मणो यः प्रवर्तते । स्नेहादर्थप्रसङ्गाद्वा तत्तत्कुच्छ्रं विशोधनम् ” ॥ इति
तदशक्तविषयम् । **पराशरः—**

“ गृहीत्वा दक्षिणां यस्तु शूद्रस्य जुहुयाद्धविः । ब्राह्मणस्तु भवेच्छूद्रः शूद्रस्तु ब्राह्मणो भवेत् ” ॥ इति ।
जुहुयात् वैदिकैर्मन्त्रैः । “ शूद्रस्तु ब्राह्मणो भवेत् ” इति तत्कर्मफलप्राप्नोतीत्यर्थः ।

भृतकाध्यापनाध्ययनप्रायश्चित्तम् । भृतकाध्यापनं निन्दति शौनकः—

“ वेदाक्षराणि यावन्ति नियुक्ते त्वर्थकारणात् । तावतीर्भूणहत्या वै लभते नात्र संशयः ” ॥ इति । ३०

व्यासोऽपि—

“ यो विप्रो भृतकं हृत्वा मासि मासि प्रचोदितम् । शिष्यानध्यापयेद्वेदं साक्षान्नायणात्मकम् ॥

“ स वै नारायणद्रोही सर्वदा सूतकी भवेत् । अयोग्यो हव्यकव्येषु सर्वथा तं परित्यजेत् ” ॥ इति ।

तस्य प्रायश्चित्तमाह **जाबालिः**—

“अब्दं यो भूतकं हत्वा वेदपाठं द्विजातये । तस्य चान्द्रत्रयं प्रोक्तमब्दमात्रप्रपूर्णे ॥

“अब्दद्वयं नदेद्यस्तु हत्वा मूल्यं द्विजन्मने । तस्य पापविशुद्ध्यर्थं प्रोक्तं चान्द्रचतुष्टयम् ॥

“अब्दत्रये चान्द्रषट्कं कुर्याद्देहविशुद्धये ।

५ “अत ऊर्ध्वं ब्रह्महन्ता ललाटे तापवर्जितः । ब्रह्महत्याव्रतं कुर्यात्किपालध्वजवर्जितः ” ॥ इति ।

भूतकाध्ययने **व्यासः**—

“भूतकाध्यापितो यश्च भूतकाध्यापकश्च यः । अनुयोगप्रदानेन त्रीन् पक्षांस्तु पयः पिबेत् ” ॥

ब्रह्मोज्झप्रायश्चित्तम् । ब्रह्मोज्झे **वसिष्ठः** (२०।१२)—“ ब्रह्मोज्झः कृच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा पुनरुपयुज्यते वेदमाचार्यात् ” इति । एतत्प्रामादिकत्यागविषयम् । नास्तिकतया त्यागे

१० सुरापानसमामिति मनोर्मतम् ।

अनाश्रमवासे प्रायश्चित्तम् । अनाश्रमवासे **हारीतः**—“ अनाश्रमी संवत्सरं प्राजापत्यं चरित्वाऽऽश्रममुपगच्छेत् । द्वितीयेऽतिकृच्छ्रं तृतीये कृच्छ्रातिकृच्छ्रमत ऊर्ध्वं चान्द्रायणम् ” इति ।

गौतमः—

“अग्निपूतो गृहस्थः स्यात्सोमयाजी विशेषतः । तयोर्यादि मृता भार्या तज्जन्म विफलं भवेद् ॥

१५ “अनाश्रमी द्विजो यस्तु यावज्जीवति भूतले । मासि मासि स कुर्वीत प्राजापत्यं विशुद्धये ॥

“अशक्तश्चेत्तथा कर्तुं कुर्याद्वा मृत्युनन्तरम् । मासि मासीह तावन्ति गणयित्वा तदात्मजः ॥

“ततः शुद्धिमवाप्नोति परलोकं च विन्दति ” ॥

पञ्चाशद्वत्सराहुपरि विवाहनिषेधः । स एव—

“ पञ्चाशद्वत्सरादूर्ध्वं न कार्यं पाणिपीडनम् । कलैर्युगस्य दुष्टत्वात् त्याज्यमाहुर्मनीषिणः ॥

२० “युवानं प्रेक्षते नारी स्वयं जीर्णापि सर्वदा । व्यभिचारात्कुलं नश्येत्कुलनाशात्कुलाङ्गनाः ॥

“भ्रश्यन्ति सङ्करो भूयात्सङ्करो नरकाय च ” ॥ इति ।

“यस्तु सन्त्यज्य गार्हस्थ्यं वानप्रस्थो न जायते । परिव्राट्वापि मैत्रेय स नग्नः परिकीर्तितः ” ॥ इति **विष्णुपुराणवचनमधिकारिविषयम्** ।

ऊढायाः पुनरुद्वाहे प्रायश्चित्तम् । ऊढायाः पुनर्विवाहे जाबालिः—

२५ “पूर्वमुद्वाहितां कन्यां पिता भ्राता धनेच्छया । अन्यस्मै चेत्पुनर्दद्यात्पितरो यान्त्यधोगतिम् ॥

“सा कन्या पांसुला ज्ञेया तत्पुत्राः कुण्डसंज्ञिताः । एतद्दोषविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

“दाता रामधनुष्कोट्यां प्रत्यहं स्नानमाचरेत् । वर्षमात्रेण संशुद्धो नान्यथा शुद्धिरिष्यते ॥

“तद्भर्ता तां परित्यज्य कुर्याच्चान्द्रायणत्रयम् । तस्योपनयनं भूयः शुद्धिमाप्नोति पौर्विकीम् ॥

“सा कन्या पूर्वकं चान्यं त्यक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् । पुत्रोत्पादे तु पुत्राणां तस्यां च त्याग इष्यते ” ॥ इति

३० **सगोत्रादिविवाहे प्रायश्चित्तम् । सगोत्रविवाहे बोधायनः** (२।१।३८)—“ सगोत्रां

“चेदमत्योपयच्छेन्मातृवदेनां विभूयात् । प्रजाता चेत् कृच्छ्राब्दपादं चरित्वा यन्म आत्मनो

“मिन्दाभूत्पुनरग्निश्चक्षुरादित्येताभ्यां जुहुयात् ” इति । **कल्पसारः**—

“अमत्योढा सगोत्रा चेन्मातृवद्विभूयात्ताम् । चान्द्रायणं चरित्वाऽन्यामुपयच्छेत् कन्यकां ॥

“कृच्छ्राब्दपादं कुर्वीत प्रजाता यदि सा भवेत् । मिन्दाहुती द्वे जुहुयात्तस्यान्ते चरितव्रतः ॥

“तस्यां प्रसूतो निर्दोषः काश्यपो गोत्रतः स्मृतः ।

“ऊढा चेद्बुद्धिपूर्वं स्याद्गुरुतल्पव्रतं चरेत् । तस्यां प्रसूतश्चण्डालः सर्वकर्मबहिष्कृतः” ॥
स्मृत्यर्थसारे—

“यदि कश्चित् ज्ञानतस्तां कन्यामूढोपगच्छति । गुरुतल्पव्रताच्छुद्धो गर्भस्तज्जोऽऽन्त्यतां व्रजेत् ॥

“भोगतस्तां परित्यज्य पालयेज्जननीमिव । अज्ञानाच्चैन्दवेन शुद्धचेद्वर्भस्तु काश्यपः” ॥ इति । ५
ज्ञातातपः—

“समानप्रवरां कन्यां सगोत्रामुपयम्य च । उत्सृज्य तां ततो भार्या मातृवत्परिपालयेत् ॥

“कृत्वा तस्यां समुत्सर्गमतिकृच्छ्रं विशोधनम्” इति । देवलः—

“समानगोत्रजामूढा समानप्रवरां तथा ।

“यदि पुष्पवतीं गच्छेद्भोक्ताकामातुरः सकृत् । मातृगामी स विज्ञेयः सर्वकर्मबहिष्कृतः” ॥ १०

“गुरुतल्पव्रतं कुर्यान्मुष्कच्छेदविवर्जितम् । पुत्रोत्पत्तौ तयोः पुत्रा अन्त्यजत्वमवाप्नुयुः” ॥ इति ।

परिविचयादेः प्रायश्चित्तम् । परिवेदनादौ पराशरः (४।२०-२१)—

“परिवित्तिः परिवेत्ता च यया च परिवेद्यते । सर्वे ते नरकं यान्ति दातृयाजरूपश्चमाः ॥

“द्वौ कृच्छ्रौ परिवित्तेस्तु कन्यायाः कृच्छ्र एव च । कृच्छ्रादिकृच्छ्रौ दातुस्तु होता चान्द्रायणं चरेत्” ॥ इति ।

यत्र ज्येष्ठो नोद्वहति कनिष्ठश्च उद्वहति तत्र ज्येष्ठः परिवित्तिः कनिष्ठः परिवेत्ता कन्या परिवेदिनी १५

तस्याः पित्रादिर्दाता याजको विवाहहोमस्य कारयिता अत्र परिवित्तेः परिवेत्तुश्च द्वौ कृच्छ्रौ । यत्र

कुब्जादौ विषयविशेषे पूर्वमपवादा उक्ताः तत्र न प्रायश्चित्तापेक्षा । बोधायनस्तु (२।१।३९)—

“परिवित्तिः परिवेत्ता दाता यश्चापि याजकः । कृच्छ्रद्वादशरात्रेण त्रिरात्रेण विशुध्यति” ॥ इति ।

शङ्खलिखितौ—“परिवित्तिः परिवेत्ता च संवत्सरं ब्राह्मणगृहे भैक्षं चरेयुः” इति ।

अत्र ज्ञाताज्ञातभेदेन प्रायश्चित्तगौरवलाघवव्यवस्था ।

२०

प्रायश्चित्तानन्तरं परिवेत्तुः कर्तव्यमाह वसिष्ठः (२०।८)—“परिविविदानः कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ चरित्वा

तस्मै दत्त्वा निवेद्य पुनस्तामेवोपयच्छेत्” ॥ इति । तस्मै ज्येष्ठाय निवेद्य पुनस्तामेवोद्वहेदित्यर्थः ।

अयमेव न्याय आधानव्युत्क्रमे भगिन्योर्विवाहव्युत्क्रमे चेति माधवीये ।

उष्ट्रादियुक्तयानारोहणे प्रायश्चित्तम् । उष्ट्रादियुक्तशकटाद्यारोहणे मनुः (११।२०१)—

“उष्ट्रयानं समारुह्य खरयानं च कामतः । स्नात्वा च विप्रो दिग्वासाः प्राणायामेन शुद्ध्यति” ॥ इति । २५

यानवल्क्यः (प्रा. २९१)—

“प्राणायामं जले स्नात्वा खरयानोष्ट्रयानगः । नम्रः स्नात्वा च भुक्त्वा च गत्वा चैव दिवा स्त्रियम्” ॥ इति ।

खराद्यारोहणे प्रायश्चित्तम् । खराद्यारोहणे मार्कण्डेयः—

“खरमारुह्य विप्रोऽसौ योजनं यदि गच्छति । तप्तकृच्छ्रत्रयं कुर्याच्छुद्धिमाप्नोति वै द्विजः ॥

“उष्ट्रं च महिषं चैव ह्यनद्वाहं द्विजः सकृत् । आरुह्य योजनं गच्छेत्प्राजापत्यमुदीरितम्” ॥ इति । ३०

“अजं वस्तं समारुह्य पूर्ववद्यदि गच्छति । तत्र सान्तपनं प्रोक्तं शरीरस्य विशोधनम् ॥

“पुनः कर्म प्रकुर्वीत तेन शुद्ध्येन्न संशयः” ॥ इति । पुनःकर्म पुनरुपनयनम् ।

कारागृहवासप्रायश्चित्तम् । कारागृहवासे गौतमः—

“बलाद्धन्दीकृतो यस्तु म्लेच्छचण्डालदस्युभिः ।

“कारागृहे मासमात्रमुषित्वा कायमाचरेत् । प्राजापत्यं च चान्द्रं च चरेत्संवत्सरोषितः” ॥ ३५

यमः—“कारागृहादिनिर्गत्य प्रायश्चित्तं यथोदितम् । कृत्वा विप्रः पुनः कर्म कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

“बलाद्वन्दीकृता नारी तत्रैव निवसेद्यदि । पक्षमासमृतुं चाब्दमुत्सृष्टा चेत्तदा पतिः ॥

“षष्ठिभिर्मृत्तिकाभिश्च धृतशौचमनन्तरम् । कारयित्वा विधानेन स्नापयित्वा नदीजलैः ॥

“कारयेत्पूर्ववद्विप्रः प्रायश्चित्तमनुक्रमात् ॥

५ “अर्धमुक्तं तु नारीणां प्रायश्चित्तं विशोधनम् । तस्या दोषनिवृत्तिः स्यात् जनयोगेन हीयते ॥

“अतस्तत्पोषणं कुर्यात्संसर्गादिन् न कारयेत् । तत्रैव गर्भसंपत्तौ परित्यागो विधीयते ” ॥ इति ।

कुग्रामवासप्रायश्चित्तम् । कुग्रामवासे मरीचिः—

“श्रोत्रियश्च तटाकादिस्तृणं पर्णं तथेन्धनम् । बान्धवः स्वकुलीनाश्च विद्या चैवोपकारिणी ॥

“न सन्ति यत्र ग्रामे तु स कुग्राम इतीरितः ॥

१० “तत्र ग्रामे द्विजो यस्तु हव्यकव्यपराङ्मुखः । एकत्र दिवसे तिष्ठन्महाचान्द्रायणं चरेत् ” ॥

दुर्देशगमने प्रायश्चित्तम् । दुर्देशगमने बोधायनः (१।१।२९)—

“सिन्धुसौवीरसौराष्ट्रांस्तथा प्रत्यन्तवासिनः । अङ्गवङ्गकलिङ्गांश्च गत्वा संस्कारमर्हति ” ॥

प्रत्यन्तवासिनः चण्डालादिवासप्रदेशान् । स एव (१।१।३०)—

“पश्चां स कुरुते पापं यः कलिङ्गान्प्रपद्यते । ऋषयो निष्कृतिं तस्य प्राहुर्वैश्वानरं हविः ” ॥ इति ।

१५ **श्वशृगालादिर्दंशने प्रायश्चित्तम् । श्वादिदंशे याज्ञवल्क्यः (आ. २७७)—**

“पुंश्चलीवानरैस्खैर्दंशः श्वोष्ट्रादिवायसैः । प्राणायामं जले कृत्वा घृतं प्राश्य विशुध्यति ” ॥

मनुः (१।१।९९)—

“श्वशृगालखैर्दंष्ट्रो ग्राम्यैः क्रव्याद्भिरेव च । नराश्वोष्ट्रैर्वराहैश्च प्राणायामेन शुध्यति ॥

एतन्नदीस्नानादेरप्युपलक्षणम् । तथा च **बोधायनः (१।५।१२६)—**

२० “शुना दष्टस्तु यो विप्रो नदीं गत्वा समुद्रगाम् । प्राणायामशतं कृत्वा घृतं प्राश्य विशुध्यति ॥

“सुवर्णरजताभ्यां वा गवां शृङ्गोदकैश्च वा । नवैर्वा कलशैः स्नात्वा सद्य एव शुचिर्भवेत् ” ॥ इति ।

हारीतः—“श्वानो वा क्रोष्टुको वापि नारी वा यदि वानरः । आसुर्नकुलमार्जारवायसग्राम्यसूकराः ॥

“एतैर्दंष्ट्रे द्विजस्याङ्गे प्रायश्चित्तं कथं भवेत् ॥

“स्नानं कृत्वा सचेलं तु विप्राणामनुशासनात् । प्रोक्षणीभिः त्रिभिर्वीग्भिः कारयेन्मार्जनं द्विजः ॥

२५ “प्राणायामत्रयं कुर्यात् दद्याद्भोग्यस्तृणं नरः । सह द्विजैश्च भुक्तेन शुध्यते नात्र संशयः ” ॥ इति ।

अङ्गिराः—

“ब्रह्मचारी शुना दष्टस्त्यहं सायं पयः पिबेत् । गृहस्थस्तु द्विरात्रं वा एकाहं वाऽग्निहोत्रवान् ॥

“नाभेरूर्ध्वं तु दष्टस्य तदेव द्विगुणं भवेत् । स्यादेतत्त्रिगुणं वक्त्रे मस्तके तु चतुर्गुणम् ॥

“अव्रती सव्रती वापि शुना दष्टस्तथा द्विजः । दृष्ट्वाऽग्नीन् हूयमानांस्तु सद्य एव शुचिर्भवेत् ” ॥ इति ।

३० **पराशरः (५।१-९)—**

“वृकश्चानशृगालाद्यैर्दंष्ट्रो यस्तु द्विजोत्तमः । स्नात्वा जपेत्स गायत्रीं पवित्रां वेदमातरम् ॥

“गवां शृङ्गोदकस्नानं महानद्योस्तु सङ्गमे । समुद्रदर्शनाद्वापी शुना दष्टः शुचिर्भवेत् ॥

“वेदविद्याव्रतस्नातः शुना दष्टो द्विजो यदि । सहिरण्योदकैः स्नात्वा घृतं प्राश्य विशुध्यति ॥

“ सव्रतस्तु शुना दष्टः यस्त्रिरात्रमुपावसेत् । घृतं कुशोदकं पीत्वा व्रतशेषं समापयेत् ॥
 “ अव्रतः सव्रतो वापि शुना दष्टो भवेत् द्विजः । प्रणिपाताद्भवेत्पूतो विप्रैश्चक्षुर्भिरक्षितः ॥
 “ शुनाव्रातावलीढस्य नखैर्विलिखितस्य वा । अद्भिः प्रक्षालनं प्रोक्तमग्निना चोपचूलनम् ॥
 “ शुना तु ब्राह्मणी दष्टा जम्बुकेन वृकेण वा । उदितं ग्रहनक्षत्रं दृष्ट्वा सद्यः शुचिर्भवेत् ॥
 “ कुष्णपक्षे यदा सोमो न दृश्येत कदाचन । यां दिशं व्रजते सोमस्तान्दिशं वाऽवलोकयेत् ॥ ५
 “ असद्ब्राह्मणके ग्रामे शुना दष्टो भवेद्विजः । वृक्षं प्रदक्षिणीकृत्य सद्यः स्नात्वा विशुध्यति ” ॥ इति ।
 वृकशुनोरारण्यकत्वग्राम्यत्वाभ्यां भेदः । शृगालो जम्बुकः । आदिशब्देन वराहोदया गृह्यन्ते । तैर्दष्टः
 स्नात्वा गायत्र्यष्टशतं जपेत् । जपसंख्याविशेष उशनसा दर्शितः ‘ दंष्ट्रादिदष्टे गायत्र्यष्टशतं
 प्राणायामशतं वा ” इति । एतच्चासमर्थविषयम् । समर्थस्तु गोशृङ्गोदकस्नानादिकमाचरेत् । तत्र
 गोशृङ्गोदकस्नानं नाम शृङ्गपूरितेनोदकेन गायत्र्या शतवारमभिमन्त्रितेन सेचनम् ‘ गोशृङ्गेण शतं १०
 स्नानम् ” इति हारीतस्मरणात् । शृङ्गोदकस्नानसङ्गमस्नानसमुद्रदर्शनानामधमध्यमोत्तमाङ्ग-
 भेदेन वा दंशतारतम्येन वा व्यवस्था । वेदाध्ययनं वा सौम्यप्राजापत्यादिव्रतानि वा समाप्य स्नातो
 वेदविद्याव्रतस्नातः । स यदि शुना दष्टः तथा हिरण्यमुदके निधाय तेनोदकेन स्नात्वा घृतं प्राश्य
 विशुध्यति । तत्रापि ब्राह्मणश्चेत् गायत्रीं शतकृत्वो जपेत् । तदाह बोधायनः—

“ वेदविद्याव्रतस्नातः शुना दष्टस्तु ब्राह्मणः । शतपर्यायमावृत्य गायत्रीं शुद्धिमाप्नुयात् ” ॥ इति । १५
 चान्द्रायणादिव्रतेन सहितः सव्रतः । स त्रिरात्रमुपोष्य चतुर्थेऽह्नि घृतं प्राश्य कुशोदकं च पीत्वा
 पश्चाद्व्रतशेषं समापयेत् । सव्रताव्रताबुभावपि विप्रान् प्रणिपत्य तैर्निरीक्षितौ यथोक्तप्रायश्चित्ता-
 चरणेन पूतौ भवतः । यदा ब्राह्मणी श्वादिभिर्दष्टा तदा सा रात्रावुदितान् ग्रहान् सोमादीन्क्षत्राणि
 कृत्तिकादीनि दृष्ट्वा शुद्धा स्यात् । सोमदर्शनासंभवे तदवस्थितियोग्यां दिशां वा पश्येत् । तच्च
 दर्शनं पञ्चगव्यप्राशनस्य चोपलक्षणम् । अत एवाङ्गिराः—

“ ब्राह्मणी तु शुना दष्टा सोमे दृष्टिर्निपातयेत् । समुद्रदर्शनाद्वाऽपि शुना दष्टा शुचिर्भवेत् ॥
 “ सोममार्गेण सा पूता पञ्चगव्येन शुध्यति ” ॥ इति । सोमादर्शनासंभवे समुद्रदर्शनं दिगवलोकनं
 वा कार्यम् । यत्र ब्राह्मणा न सन्ति तत्र ब्राह्मणप्रणिपातनिरीक्षणयोः स्थाने वृषभप्रदक्षिणं
 द्रष्टव्यम् । एतेषु वचनेषु यत्र यत्र प्रायश्चित्तबाहुल्यं तत्रोत्तमाङ्गविषयत्वं दंशनावृत्तिविषयत्वं
 चोहनीयम् । ब्रह्मचारिगृहस्थाग्निहोत्रिषूत्तरोत्तरं तपोबाहुल्यात्प्रायश्चित्तहास इति माधवीये । २५

शरीरे क्रम्युत्पत्तौ प्रायश्चित्तम् । शरीरे किमिजनने शातातपः—

“ ब्राह्मणस्य व्रणद्वारे यदा संपद्यते क्रिमिः । प्रायश्चित्तं तदा कार्यमिति शातातपोऽब्रवीत् ” ॥ इति ।
 “ गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् । स्नात्वा दत्त्वा च भुक्त्वा च क्रिमिदष्टा शुचिर्भवेत् ” ॥ इति ।
 बोधायनः (१।५।१२३)—

“ ब्राह्मणस्य व्रणद्वारे पूयशोणितसंभवे । क्रिमिरुत्पद्यते तत्र प्रायश्चित्तं कथं भवेत् ॥ ३०
 “ गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् । त्र्यहं स्नात्वा च पीत्वा च क्रिमिदष्टः शुचिर्भवेत् ” ॥
 एतच्च नाभेरधोभागे द्रष्टव्यम् । उपरिभागे तु भानुराह । नाभेरपरिचेद्भानुराह—
 “ नाभिकण्ठान्तरोद्भूते व्रणे चोत्पद्यते क्रिमिः । षड्रात्रं तु तदा प्रोक्तं प्राजापत्यं शिरोव्रणे ” ॥

दुर्ब्राह्मणगृहभोजने प्रायश्चित्ताम् । अभोज्यभोजने प्रायश्चित्तमुच्यते । तत्र दुर्ब्राह्मणगृहे भोजने भरद्वाजः—

“ निराचारस्य विप्रस्य निषिद्धाचरणस्य च । अन्नं भुक्त्वा द्विजः कुर्याद्दिनमेकमभोजनम् ” ॥ इति । तदशक्तौ पराशरः (१२।५४)—

५ “ सदाचारस्य विप्रस्य तथा वेदान्तवेदिनः । भुक्त्वाऽन्नं मुच्यते पापादहोरात्रान्तरान्नरः ” ॥ इति । एतदनभ्यासविषयम् । अभ्यासे तु स एव (११।४३)—

“ परपाकनिवृत्तस्य परपाकरतस्य च । अपचस्य च भुक्त्वाऽन्नं द्विजश्चान्द्रायणं चरेत् ” ॥ इति । तेषां लक्षणं स एवाह (११।४५-४७)—

“ गृहीत्वाऽग्निं समारोप्य पञ्चयज्ञान् निर्वपेत् । परपाकनिवृत्तौऽसौ मुनिभिः परिकीर्तितः ।

१० “ पञ्चयज्ञान् स्वयं कृत्वा पराच्चेनोपजीवति । सततं प्रातरुत्थाय परपाकरतस्तु सः ।

“ गृहस्थधर्मा यो विप्रो ददातिः परिवर्जितः । ऋषिभिर्धर्मतत्त्वज्ञैरपचः परिकीर्तितः ” ॥ इति । ददातिरन्नदानपरः । तद्वर्जितः स्वयमेव यो भुङ्क्ते सोऽपच इत्युच्यते । तस्य निन्दा प्रत्यक्षश्रुता-
वाम्नायते (उदकशान्तिः)—‘ नार्यमणं पुष्यति नो सखाऽयं केवलबो भवति केवलादी ’ ॥
शातातपबृहस्पती—

१५ “ यो हि हित्वा विवाहाग्निं गृहस्थ इति मन्यते । अन्नं तस्य न भोक्तव्यं वृथापाको हि स स्मृतः ॥
“ वृथापाकस्य भुञ्जानः प्रायश्चित्तं चरेद्विजः । प्राणायामशतं कृत्वा घृतं प्राश्य विशुध्यति ” ॥ इति ।
वृथापाके यत्प्रायश्चित्तं तदेव ब्राह्मणनिन्दकादावपि द्रष्टव्यम् । निन्दावचनेन सह पाठात् । तथा च
व्यासः—“ पङ्क्तिभेदी वृथापाकी नित्यं ब्राह्मणनिन्दकः । आदेशी वेदविक्रेता पञ्चैते ब्रह्मघातकाः ” ॥ इति ।
शौनकः—“ कनिक्रदं जपेन्मन्त्रं दशवारं यदा तदा । वेदविक्रयिणो गेहे भुक्त्वा पापात्प्रमुच्यते ” ॥ इति ।

२० हारीतः—

“ यदन्नं प्रतिलोमस्य शूद्रजस्योत्तमस्त्रियाम् । महापातकिर्नां चैव यदन्नं स्त्रीकृतघ्नयोः ॥

“ आरूढपतितस्यैव सगोत्राभर्तुरेव च । पाषण्डानाश्रितानां च यतेश्चैव तथैव च ॥

“ अतिकृच्छ्रं चरेद्भुक्त्वा प्रमादाद्ब्राह्मणः सकृत् । मत्या चान्द्रायणं कुर्यादामं चेदधमेव च ॥

“ तद्धस्तभोजने वापि त्रिगुणं सह भोजने । चतुर्गुणं तदुच्छिष्टे पानीये त्वर्धमेव च ॥

२५ “ कृच्छ्राब्दपादमुद्दिष्टमभ्यासात् ज्ञानभोजने । मत्याभ्यासे तथा कुर्यात् त्रिंशत्कृच्छ्रं द्विजोत्तमः ” ॥
उत्तमस्त्री ब्राह्मणी । तस्यां प्रातिलोम्येन शूद्रादुत्पन्नश्चण्डालः । सत्यपि सामर्थ्ये नास्तिक्येन किञ्चि-
दप्याश्रममप्राप्तः अनाश्रितः ।

राजाद्यन्नभोजनफलानि । सुमन्तुः—

“ राजान्नं तेज अदत्ते शूद्रान्नं बह्वचर्वसम् । आयुः सुवर्णकारान्नं यशश्चर्मविकृतिर्नः ।

३० “ कारुकाञ्चं प्रजा हन्ति बलं निर्णेजकस्य च । गणाञ्चं गणिकाञ्चं च लोकेभ्यः परिकुन्तति ॥

“ रूपं चिकित्सकस्यान्नं पुंश्चल्यास्त्वन्नमिन्द्रियम् । विष्टा वार्धुषिकस्यान्नं शस्त्रविक्रयिणो मलम् ॥

“ एवमेते त्वभोज्यान्नाः क्रमशः परिकीर्तिताः ॥

“ भुक्त्वाऽतोऽन्यतमस्यान्नममत्या क्षपणं व्यहम् । मत्या भुक्त्वाऽऽचरेत्कृच्छ्रं रेतोविण्मूत्रमेव च ” ॥ इति ।

विष्णुः (४८।२१)—“गणकगणिकास्तेनगायकान्नानि भुक्त्वा सप्तरात्रं पयसा वर्तेत । तक्ष्णोऽन्नं चर्मकर्तुंश्च स्वपाकवार्धुषिककदर्यदीक्षितबद्धनिगलाभिः शस्तपाषण्डानां च पुंश्चलीदांभिक-चिकित्सकलुब्धकक्रूरोच्छिष्टभोजिनां चावीरस्त्रीसुवर्णकारसपत्नपतितानां च ऋतुधर्मसोमविक्रयिणां च शैलूषतन्तुवायकृतघ्ननिषादरङ्गावतारिवेदशस्त्रविक्रयिणां च श्वजीविशौण्डिकतैलिकचेल-निर्णेजकानां च रजकानां च रजस्वलासहोपपतिवैश्मनां च भ्रूणघ्नोक्षितमुदक्यासंस्पृष्टं पतत्रिणा-वलीढं शुना स्पृष्टं गोघ्रातं च कामतः पादस्पृष्टमवक्षतं च मत्तकुद्धातुराणां चानार्चितं वृथा-मांसं च त्रिरात्रमुपवसेत् ” इति । त्रिरात्रोपवासः अकामकृतसकृद्भोजनविषयः ।

अत्रैव विषये लिखितोऽपि—

“भुक्त्वा वार्धुषिकस्यान्नं सव्रतस्थैर्व्रतस्य वा । शूद्रस्य च तथा भुक्त्वा त्रिरात्रं स्यादभोजनम्” ॥ इति । अस्मिन्नेव विषये अशक्तस्य पराशरः (११।४-५)—

१०

“शूद्रान्नं सूतकस्यान्नमभोज्यस्यान्नमेव च । शङ्कितं प्रतिषिद्धान्नं शूद्रोच्छिष्टं तथैव च ॥

“यदि भुक्तं तु विप्रेण चाज्ञानादापदापि वा । ज्ञात्वा समाचरेत्कुच्छ्रं ब्रह्मकूर्चं तु पावनम्” ॥ इति । अज्ञाने आपदि च ब्रह्मकूर्चमेव ज्ञाने प्राजापत्यमिति योज्यम् ।

अकामकृतसकृद्भोजनविषये अशक्तस्य हारीतः—

“मृतसूतकशूद्रान्नं सदोषेणापि संस्कृतम् । शङ्कितं प्रतिषिद्धान्नं विद्विषोऽन्नमथापि वा ॥

१५

“यदि भुङ्गीत विप्रो यः प्रायश्चित्तं कथं भवेत् । एकारात्रोपवासश्च गायत्र्यष्टशतं भवेत् ।

“प्राशयेत्पञ्चभिर्मन्त्रैः पञ्चगव्यं पृथक् पृथक् । एतेन शुद्ध्यते विप्रो ह्यन्यैश्चाभोज्यभोजनैः ” ॥

अकामकृताभ्यासे तु विष्णुनोक्तं सप्तरात्रं पयोव्रतम् । मनुस्तु यवयवागूपानमाह (११।१५२)—

“अभोज्यानां तु भुक्त्वाऽन्नं स्त्रीशूद्रोच्छिष्टमेव च । जग्ध्वा मांसमभक्ष्यं च सप्तरात्रं यवान् पिबेत्” ॥ इति ।

कामकृताभ्यासे हारीतोक्तं चान्द्रायणम् । तथा शंखोऽपि—

२०

“शूद्रान्नं ब्राह्मणो भुक्त्वा तथा रङ्गावतारिणः । चिकित्सकस्य क्रूरस्य तथा स्त्रीमृगजीविनः ॥

“अभिः शस्तस्य चोरस्य अवीरायाः स्त्रियस्तथा । चर्मकारस्य वैणस्य क्लीबस्य पतितस्य च ॥

“रुक्मकारस्य तक्ष्णश्च रजकस्य च वार्धुषेः । कदर्यस्य वृशंसस्य वेद्यायाः कितवस्य च ॥

“गणान्नं भूमिपालान्नं मृगजीविश्ववृत्तिनाम् । सौनिकान्नं सूतकान्नं भुक्त्वा मासव्रतं चरेत् ॥

“गणान्नं सूतकान्नं च भुक्त्वा मासव्रतं चरेत्” ॥ मासव्रतं चान्द्रायणमित्यर्थः ।

२५

शुक्तादिभक्षणे मनुः (११।१५३)—

“शुक्तानि च कषायांश्च भुक्त्वाऽमेध्यान्यपि द्विजः । तावद्भवत्यप्रयतो यावत्तन्न व्रजत्यधः ” ॥

आपस्तम्बः (१।९।२७।३-४)—“अभोज्यं भुक्त्वा नैष्परीष्यन्तत्सप्तरात्रेण वाप्यतः ” इति ॥

अभोज्यमांसादिभक्षणे निष्पुरीषभावः कर्तव्यः । यावदुदरं निष्पुरीषं भवति तावदुपवस्तव्यम् ।

तच्च सप्तरात्रेणावाप्यते । येषां त्रिरात्रेण नैष्पुरीष्यं तेषां तावदेव शुद्धिः ॥ तथा च ३०

गौतमः (२३।२३-२४)—

“अभोज्यभोजने निष्पुरीषभावस्त्रिरात्रमभोजनं सप्तरात्रं वा ” ॥ इति ।

व्यतीपातादिभोजने प्रायश्चित्तम् । व्यतीपातादिभोजने देवलः—

“व्यतीपाते यदन्नं च महापुरुषभोजनम् । कर्मण्यरिजने भुक्तिर्दशाहे बलिभोजनम् ॥

“भूतप्रेतपिशाचानां यदन्नं परिकल्पितम् । कलुषं वर्जनीयं तत् ब्रह्मराक्षसभोजनम् ॥

३५

- “ एतेष्वदंस्तु यो विप्रो धनलोभपरायणः । तदानीं मृत्युमाप्नोति जीवेद्वा पापकार्यसौ ॥
 “ तत्र दोषोपशान्त्यर्थं प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् ।
 “ प्राजापत्यद्वयं कृत्वा पुनस्संस्कारपूर्वकम् । पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चाच्छुद्धो भवति भूतले ” ॥

अयुतसहस्रभोजने प्रायश्चित्तम् । अयुतसहस्रभोजनादौ मार्कण्डेयः—

- ५ “ अयुते वा सहस्रे वा द्विजो ब्राह्मणभोजने । जिह्वाचापल्यतः क्षिप्रं भुञ्जीतापः पिबेत्तु वा ॥
 “ पक्षं वा मासमथ वा भुक्त्वा विप्रो निरन्तरम् । कृच्छ्रं पराकं चान्द्रं च कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥
 “ वर्षोपरीहं शूद्रत्वमवाप्नोतीति निश्चितम् ” ॥
 देवलः—“ अयुते वा सहस्रे वा नानावर्णसमागमे । पतितक्रीबबैडालवात्यतस्करपूरिते ॥
 “ कुण्डगोलकसंधर्तं नटगायकसङ्कुले । पाषण्डजनसंसर्गं सर्वपातकिसङ्कुले ॥
 १० “ भाण्डोच्छिष्टस्वयंपाके स्त्रीजनैरुपशोभिते । यो विप्रो लोभमन्विच्छन्नभुञ्जीयात्कदाचन ” ॥
 सत्रभोजनेऽप्येवम् । दीर्घसत्रे तु देवलः—
 “ वर्षद्वयं वा वर्षं वा यो वा को वा द्विजो भुवि । सङ्कल्प्य भोजयेद्विप्रान् तदीर्घं सत्रमुच्यते ॥
 “ विप्रसत्रं न भुञ्जीयात् पूर्ववत् दुष्टसंगमात् । पक्षं वा मासमथवा भुक्त्वा निष्कृतिमाचरेत् ॥
 “ पक्षभुक्तौ पराकं स्याच्चान्द्रं स्यान्मासभोजने ।

१५ शूद्रसत्रे तु स एव—

- “ शूद्रसत्रे न भुञ्जीत प्राणैः कण्ठगतैरपि । भुञ्जन्नरकमासाद्य वायसत्वमवाप्नुयात् ॥
 “ पक्षे मासे ऋतावद्धे भोजने तु यथाक्रमम् । यावकं तप्तकृच्छ्रं च प्राजापत्यमथैन्दवम् ॥
 “ कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति द्विजः पापक्रियाक्रमात् ” इति ।

शूद्रादिगृहे स्वयंपाकादिना भोजनेऽपि प्रायश्चित्तम् । शूद्रादिगृहे स्वयं पक्त्वा भोजने

२० पराशरः—

- “ शूद्रालये वा वैश्या वा गृहे वाऽन्नं तदर्पितम् । पक्त्वा भुक्त्वा स पापीयान्महान्तं नरकं व्रजेत् ॥
 “ तद्दोषपरिहारार्थं प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् ॥
 “ परेद्युर्वा तदानीं वा वापयित्वा शिरोरुहान् । स्नानं कृत्वा ततः पश्चात्तप्तकृच्छ्रं समाचरेत् ॥
 “ पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चाच्छुद्धो भवति नान्यथा ” ॥ इति ।

२५ सङ्घान्नभोजने प्रायश्चित्तम् । सङ्घान्नभोजने गौतमः—

- “ सङ्घीभूय द्विजा ये तु मार्गे तीर्थगमेऽपि वा । स्वद्रव्यमेलनं कृत्वा पक्त्वा भुक्त्वैकदेशतः ॥
 “ ते सर्वे नरकं यान्ति शूद्रतुल्या न संशयः । तेषामिदं मुनिप्रोक्तं प्रायश्चित्तं विशुद्धिदम् ॥
 “ एकरात्रे पञ्चगव्यं द्विरात्रे यावकं पिबेत् । प्राजापत्यं त्रिरात्रे च पक्षे चान्द्रायणं स्मृतम् ॥
 “ मासे तु शूद्रतुल्याः स्युः स्त्रीणामर्थं समीरितम् ” ॥

३० क्रीतान्नभोजने प्रायश्चित्तम् । क्रीतान्नभोजने देवलः—

- “ देवालयेषु मार्गेषु ग्रामेषु नगरेषु च । विप्रः क्रीतान्नभोक्ता चेत्तदा नरकमाप्नुयात् ” ॥
 महाभारतेऽपि—

- “ क्रीतान्नं देवतागारे ग्रामे वा पत्नौ पथि । यो भुङ्क्ते पूर्वजो ज्ञानान्नरकं स समाप्नुयात् ” ॥

हेमाद्रौ—

- “ विप्रः कण्ठगतप्राणः क्रीतान्नं यदि भुञ्जते । ग्रामे वा नगरे तीर्थे महादेवालयेऽपि वा ॥
 “ स गत्वा नरकं घोरं नानायोनिषु जायते । तस्मात्तस्य विशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमुदीरितम् ।
 “ त्रिरात्रभोजने कायं पक्षे तप्तं समाचरेत् । महातप्तं तु मासे च वत्सरे चान्द्रमुच्यते ॥
 “ अतः परं शूद्रतुल्यो विद्वानपि न संशयः । विप्रस्त्रीणामेतदर्थं यतीनां द्विगुणं भवेत् ॥

५

यागान्नभोजने प्रायश्चित्तम् । यागान्नभोजने कण्वः—

- “ यज्ञेषु पशुबन्धेषु अन्नमस्ति यदा द्विजः । स वै नरकमाप्नोति स विडालसमो भवेत् ॥
 “ भुङ्क्ते यदि वपाहोमान्प्राक् पापं महदश्रुते । पुनस्तस्योपनयनं प्राजापत्येन शुद्ध्यति ॥
 “ वपायागात्परं विप्रो यो भुङ्क्ते दीक्षितालये । प्राजापत्यं विशुद्ध्यर्थं मुनिभिः परिकीर्तितम् ” ॥ इति ।

कात्यायनः—

१०

- “ ऋत्विजां च परस्त्रीणां भोक्तृणां यागसन्नानि । उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥
 “ सुवासिनी चेत्तद्भर्तुः पिबेत्पादोदकं तथा । विधवा वपनं कृत्वा प्रपिबेद्ब्रह्मकूर्चकम् ॥
 “ यतिश्च ब्रह्मचारी च पूर्वं यागान्नभक्षणे । चान्द्रं कुर्याद्वपाहोमात्परं कायं समाचरेत् ” ॥

अस्नात्वा भोजने प्रायश्चित्तम् । अस्नात्वा भोजने गौतमः—

- “ अस्नात्वा भोजनं विप्रो नीरोगः कुरुते यदि । स मलाशी सदा ज्ञेयः सर्वकर्मवहिष्कृतः । १५
 “ श्राद्धकालेषु चान्द्रं स्यात् ग्रहणे तद्द्वयं स्मृतम् । पञ्च पर्वसु तप्तं स्यादितरत्र तु यावकम् ॥
 “ द्विगुणं विधवानां तु यतीनां ब्रह्मचारिणाम् ” ॥

अशुचिकालभोजने प्रायश्चित्तम् । शातातपः—

- “ मूत्रोच्चारं द्विजः कृत्वा शौचहीनः कथंचन । मोहाद्भुक्त्वा त्रिरात्रं स्यान्मत्या सांतपनं चरेत् ॥
 “ मूत्रयित्वा ब्रजन्मार्गं स्मृतिभ्रंशाज्जलं पिबेत् । अहोरात्रोषितः स्नात्वा जुहुयात्सर्पिषा हविः ” ॥ २०

व्याघ्रः—

- “ असृष्ट्यस्पर्शनं कृत्वा यदा भुङ्क्ते गृहाश्रमी । अकामतस्त्रिरात्रं स्यात् षड्वारात्रं कामतश्चरेत् ” ॥

प्रजापतिः—“ अस्नात्वा तु यदा भुङ्क्ते पिण्डं दत्वा पितुर्व्रती ॥

- “ स्पृष्ट्वा शवमुदक्यां वा चण्डालं सूतिकां तथा । अकामतस्त्रिरात्रं स्यान्मत्या सांतपनं चरेत् ” ॥

पिण्डं प्रेतपिण्डम् ।

२५

पर्युषितान्नभोजने प्रायश्चित्तम् । पर्युषितभोजने स एव—

- “ जले निधाय पूर्वयुयदन्नं पिठरोद्धृतम् । तत्पर्युषितसंज्ञं स्याद्भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥
 “ त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा भुक्त्वा पर्युषितं द्विजः । तस्योपनयनं भूयश्चान्द्रायणमथाचरेत् ॥
 “ हिङ्गुजीरकसंमिश्रं तन्तिणीरसवेष्टितम् । दुर्गन्धरहितं यत्तु भोक्तव्यं द्विजपुङ्गवैः ॥
 “ दध्ना घृतेन तैलेन यदन्नं संस्कृतं भवेत् । दुर्गन्धरहितं भोज्यमन्यथा चान्द्रमुच्यते ” ॥ ३०

ओदनवटकमाषवटकादिभक्षणे प्रायश्चित्तम् । गालवः—

- “ ओदनान्निर्मितं वस्तु शुष्कं भूतं यदा भवेत् । अभोज्यं भक्षयित्वा तद्यावकं कृच्छ्रमाचरेत् ॥
 “ दुर्गन्धरहितं भक्ष्यं तथा पर्युषितं च यत् । वटकं माषसंभूतं शण्कुल्यादि तथैव च ॥
 “ तैलादिपाकहीनं च भक्ष्यमाहुर्मनीषिणः ॥

“ माषसंभूतवटकान् शङ्कुलीं च तथाविधाम् । निष्कारणतया विप्रो न भुञ्जीत कदाचन ॥

“ पित्रर्थं देवकार्यार्थं पक्त्वा भुक्त्वा न दोषभाक् । वृथा तानीह भक्षित्वा यावकं कुच्छ्रमाचरेत् ” ॥

परमान्नकृसरभक्षणे कालनियमः । देवलः—

“ परमान्नं च कृसरं वृथा पक्त्वा द्विजोत्तमः । भुञ्जीत यदि छर्दिता उपोष्य रजनीं ततः ॥

५ “ पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चाच्छुद्धो भवति नान्यथा ।

“ रवौ धनुः समायाते गृहे कन्या रजस्वला । पितृदेवनिमित्तं च परमान्नं प्रशस्यते ” ॥ इति ।

गौतमः—

“ धनुर्मासे गृहे कन्या यदि स्यात्प्रथमार्तवा । तथैव देवयात्रायां कृसरान्नं न दोषभाक् ॥

“ पितृकार्येषु सर्वेषु दैवे बन्धुसमागमे । पक्त्वा भोज्यं तदन्नं स्यात् प्रभूतक्षीरसंभवम् ॥

१० “ निमित्तेन विना भुक्त्वा दिनमेकमभोजनम् । पञ्चगव्यं पिबेत्पश्चाच्छुद्धो भवति निश्चितम् ” ॥

कन्या दुहिता भगिनी स्नुषा च । धनुर्मासे च दुहितरि भगिन्यां स्नुषायां च प्रथमार्तवायां

पितृदेवकार्ये बन्धुसमागमे च पायसकृसरान्नभोजने न दोषः । उक्तनिमित्तादन्यत्र दिनमुपवासः

पञ्चगव्यप्राशनं च कर्तव्यमित्यर्थः ।

व्रात्यकुष्ठयाद्यन्नभोजने प्रायश्चित्तम् । व्रात्यान्नभोजने देवलः—

१५ “ व्रात्यान्नं यदि कुष्ठयन्नं भुङ्क्ते विप्रः क्षुधातुरः । एकादश्यन्नभुक् चैव शुद्धयै चान्द्रायणं चरेत् ॥

“ कुण्डगोलकयोरन्नं परिवित्तेस्तथैव च । परिवेत्तुर्यदन्नं च भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥

“ देवार्चकस्य यो भुङ्क्ते तथा गणकवेदमनि । उभौ तौ पापिनौ प्रोक्तौ प्रायश्चित्तमथार्हतः ॥

“ एकरात्रे पञ्चगव्यं द्विरात्रे यावकं स्मृतम् । मासमात्रे पराकं स्यादब्दे चान्द्रमुदीरितम् ॥

“ ततः परं तत्समः स्यात् स्त्रीणामर्धमुदीरितम् ।

२० “ यतेराराधने भूत्वा यत्यन्नं भोजनोपरि । दम्पत्योर्भुक्तशिष्टं यत् भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥

“ उल्लङ्घितं पादहतं विडालादिर्विमर्दितम् । देवपूजाविहीनं यद्वैश्वदेवविवर्जितम् ।

“ देवालेषु यद्भुक्तं यदन्नं मूल्यसंभवम् । शीतीकृतं यदन्नं च शूर्पेण वदनेन वा ।

“ तुषपाषाणसंयुक्तं फलीकरणमिश्रितम् । असाक्षिकं यदन्नं च यदन्नं जीवतण्डुलम् ॥

“ एतद्भुक्त्वा विशुद्ध्यर्थं पराकं कुच्छ्रमाचरेत् ” ॥ इति ।

२५ भोक्तुरागमनात्पूर्वं भोजनपात्रे यत्परिवेषितं तदसाक्षिकम् ।

अन्तःश्वग्रामभोजने प्रायश्चित्तम् । अन्तःश्वग्रामभोजने संवर्तः—

“ यत्र ग्रामे तु कुणपो विप्रो वर्तते तत्र वै । पाकयज्ञं तथा भुक्तिं जलाहरणमेव च ॥

“ न कुर्यात्तावता विप्रो यावन्नान्यत्र नीयते । कुणपेनाश्रिते ग्रामे विप्रो भुक्त्वा स पापकृत् ॥

“ प्राजापत्यं तु कुर्वीत पञ्चगव्यमतः परम् । द्विजानां क्षीरपाने तु न दोषो गृहमेधिनाम् ” ॥

३० **उपरागभोजने प्रायश्चित्तम् । उपरागभोजने मनुः—**

“ सूर्योपरागे यो भुङ्क्ते तस्य पापं महत्तरम् । तस्य पापविशुद्ध्यर्थं तत्तद्विद्वद्भुङ्क्ते ॥

“ चन्द्रोपरागकाले तु भुक्त्वा कायं समाचरेत् । उभयोर्भोजने विप्रः पुनः संस्कारमर्हति ” ॥

मरीचिरपि—

“ सूर्यग्रहे तु नाश्नीयात्पूर्वं यामचतुष्टयम् । चन्द्रग्रहे तु यामांस्त्रीन् भुक्त्वा पापं समश्नुते ॥

“ इमं धर्मं परित्यज्य यो विप्रस्त्वन्यथा चरेत् । तस्योपनयनं भूयस्तप्तं सांतपनं स्मृतम् ” ॥
सूर्यग्रहे तप्तम् । अन्यत्रान्यदित्यर्थः । उभयोः पुनःसंस्कारे इत्यर्थः ।

भिन्नपात्रभोजने प्रायश्चित्तम् । भिन्नपात्रादिभोजने गालवः—

“ स्वर्णपात्रं तथा कांस्यं राजतं भिन्नमेव यत् । तत्र भुक्त्वा चरेत्कृच्छ्रमन्यथा दोषमाप्नुयात् ॥

“ येषु पर्णेषु यो भुङ्क्ते यदा तत्र भुजिं चरेत् । पर्णान्तरं न भुञ्जीत तदा चैन्द्रवमाचरेत् ॥ ५

गौतमोऽपि—

“ एकजातीयपर्णेषु कांस्ये चाभिन्नभाजने । भोजनं कुरुते यस्तु संपूर्णायुर्भवेदिह ” ॥

रजस्वलापक्वाभोजने प्रायश्चित्तम् । रजस्वलापक्वभोजने मार्कण्डेयः—

“ अज्ञात्वा पुष्पिणीं नारीं कृत्वा वै पचनक्रियाम् । पश्चाच्छुष्कं रजो दृष्ट्वा यदा तस्मादपक्रमेत् ॥

“ तां दृष्ट्वा भाषणं कृत्वा भुक्तवन्तो यदि द्विजाः । चान्द्रायणेन शुद्धाः स्युः पञ्चगव्येन चेतथा ॥ १०

“ पुनः कर्म प्रकुर्वीरन् भवेयुः पापिनोऽन्यथा ” ॥ इति ।

निषिद्धदिने द्विर्भोजने ब्रह्मयज्ञानकरणे च प्रायश्चित्तम् ।

निषिद्धदिने द्विर्भोजने स एव—

“ अर्कद्विपर्वरात्रौ च मृताहातपूर्ववासरे । तथा चतुर्दश्यष्टम्योः संक्रान्तौ च महोत्सवे ।

“ पितरौ व्याधिनाक्रान्तौ गुरुणां दुःखसंभवे । श्रोत्रिये मरणं प्राप्ते महाराजनिपातने । १५

“ न द्विवारं समश्नीयान्नश्येत् द्विवारभोजनात् ” ॥

“ न द्विवारं समश्नीयात् विप्रो धर्ममनुस्मरन् । तस्य पापस्य शुद्ध्यर्थं सहसा निष्कृतिं चरेत् ॥

“ पञ्चगव्येन शुद्धः स्यात् विप्रो द्विवारभोजने ” ॥ इति ।

एतदनभ्यासविषयम् । अभ्यासे तु भोजनप्रकरणोक्तं द्रष्टव्यम् । स एव—

“ वैश्वदेवं देवतार्च्यं नित्यहोमं तथाविधम् । ब्रह्मयज्ञं पितॄणां च तर्पणं द्विजवल्लभः ॥ २०

“ त्यक्त्वा भुक्त्वा तथा विप्रः सुरापीत्युच्यते बुधैः । तप्तकृच्छ्रं चरेत्पापी तस्मात्पापात्प्रमुच्यते ॥

“ पञ्चगव्येन पूतात्मा नान्यथा शुद्धिरिष्यते ” ॥ इति । एतदसकृत्करणविषयम् । सकृत्करणे तु

“ वेदोदितानां नित्यानां कर्मणां समतिक्रमे । स्नातकव्रतलोपे च प्रायश्चित्तप्रभोजनम् ” ॥ इति

मनुक्त (११।२०३) एकरात्रोपवासो द्रष्टव्यः ।

स्वस्वकाले गर्भाधानाद्यकरणे प्रायश्चित्तम् । स्वस्वकाले गर्भाधानाद्यकरणे हेमाद्रौ— २५

“ स्नातवत्यामृतौ पत्न्यां चतुर्थे पञ्चमेऽह्नि वा । कृत्वाऽभ्युदयिकं प्रातस्तद्रात्रौ मन्त्रपूर्वकम् ॥

“ गर्भाधानं ततः कुर्यात् प्रतिगर्भं न तत् स्मृतम् । अन्यथा गर्भवाती स्याद्यथा जारः तथैव सः ॥

“ प्राजापत्यत्रयं कुर्यात् द्वितीये पुनरर्तवे ।

“ सीमन्तपुंसवनयोः स्वकालाकरणे सति । प्राजापत्यद्वयं कृत्वा शुद्धो भवति नान्यथा ” ॥ इति ।

“ जातकर्म न कुर्वीत नास्तिक्याद्यदि पूर्वजः । प्राजापत्यद्वयं कुर्यान्नास्ति चौले तथा व्रते ॥ ३०

“ एकादशे द्वादशे वा नामकर्म विधीयते । अतिपत्तौ पिता कुर्यात् प्राजापत्यद्वयं ततः ॥

“ अन्नप्राशनचौलादिकाले कुर्याद्व्रतेऽपि वा ।

“ मुख्यकालपरित्यागादन्नप्राशनकर्मणः । व्रतबन्धे तु गौणं स्यात्प्राजापत्यमुद्गीर्तिम् ॥

“ देशकालानुरोधेन यदि चौलं विरुम्भ्यते । प्राजापत्यद्वयं कृत्वा तत्पापं परिशोधयेत् ॥

- “पञ्चमाब्दं विलम्ब्यांशु शिशोरक्षरसंग्रहे । कायिकं तत्र कर्तव्यमन्यथा दोषमाप्नुयात् ॥
 “यदि कामादष्टमाब्दं लङ्घयित्वा चरेद्ब्रतम् । नवमे तप्तकृच्छ्रं स्याद्दशमे तच्च कायिकम् ॥
 “एकादशे द्वादशे वा ह्यतिक्रम्यैन्दवं चरेत् । तत आ षोडशात्कुर्यादैन्दवत्रयमेव च ॥
 “अजिनं मेखलां दण्डं ब्रह्मचारी यदि त्यजेत् । प्राजापत्यं पक्षमात्रे मासे तप्तं समाचरेत् ॥
 ५ “अब्दमात्रपरित्यागे कुर्याच्चान्द्रायणव्रतम् ।
 “अग्निकार्यं ब्रह्मयज्ञं देवर्षिपितृतर्पणम् । अकृत्वा वत्सरे चान्द्रं तत्परं पतितो हि सः ” ॥
उष्णोदकस्नाने प्रायश्चित्तम् । उष्णोदकस्नानादौ देवलैः—
 “कूपोदकेन सप्ताहं स्नानमुष्णेन वारिणा । मृत्तिकाभिर्विना शौचं कृत्वा सप्ताहमेव च ॥
 “प्राजापत्यं विशुद्ध्यर्थं चरेत् पूतो भवेद्विजः । पञ्चगव्यं ततः पीत्वा शुद्धो भवति नान्यथा ” ॥ इति ।
 १० **यज्ञोपवीतादिना विना भोजने प्रायश्चित्तम् । यज्ञोपवीतादिनाविना भोजने सै एव—**
 “विना यज्ञोपवीतेन शिखया च द्विजोत्तमः । उच्छिद्यो यदि मोहात्मा पापकृत्स भवेद्विजः ॥
 “उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ” ॥ इति । शिखया शिखाबन्धनेत्यर्थः ।
शिखोपवीतभ्रंशे प्रायश्चित्तम् । शिखानाशे तु गौतमः—
 “शिखां विना द्विजश्रेष्ठः कण्ठे गोवालरोमभिः । भूत्वा तद्दोषशान्त्यर्थं प्राजापत्यं समाचरेत् ॥
 १५ “यावच्छिखा पुनर्जाता तावत्कण्ठेण धारयेत् । ब्रह्माविष्णुमहेशाख्या ब्रह्मसूत्रस्य तन्नव ॥
 “एकस्मिन्नुटिते विप्रः पुनर्धृत्वा नवं मुदा । नित्यकर्म प्रकुर्वीत नुटितं निक्षिपेज्जले ॥
 “ब्रह्मसूत्रं तु वामांसात् भ्रष्टं स्याच्चतुरङ्गुलम् । प्राणायामत्रयं कृत्वा स्वस्थाने पूर्ववत् क्षिपेत् ॥
 “मणिवन्धे यदा भ्रष्टं प्राणायामसहस्रकम् । कृत्वा शुद्धिमवाप्नोति वामहस्तादधोगतम् ॥
 “यत्सूत्रं सहसा त्यक्त्वा धारयेदन्यसूत्रकम् ।
 २० “जले भ्रष्टं परित्यज्य सहस्रं वेदमातरम् । जप्त्वा शुद्धिमवाप्नोति नान्यथा शुद्धिरीरिता ” ॥ इति ।
भोजनकाले क्षुतादौ प्रायश्चित्तम् । भोजनकाले क्षुतादौ विष्णुः—
 “द्विजो भोजनकाले तु जृम्भणं क्षुतमेव च । अपानवायुमोक्षं वा कुर्वन्निष्कृतिमाचरेत् ॥
 “अन्यो दोर्भ्यां जलं धृत्वा तस्य मूर्धनि विन्यसेत् । पृच्छेत जन्मसदनं दिवा वा यदि वा निशि ॥
 “क्षुते च जृम्भणे चैव कृत्वैवं स विशुद्ध्यति ।
 २५ “अपानवायोरुत्सर्गं जातेऽन्नं परिवर्जयेत् । लोभेन भुक्त्वा तद्भक्तं स्नात्वा कायं समाचरेत् ” ॥
शिवनिर्माल्यभोजने प्रायश्चित्तम् । शिवनिर्माल्यभोजने देवलैः—
 “शम्भोर्निवेदितं भक्तं तत्तर्पितं शाकमेव वा । विप्रः सकृन्न भुञ्जीयात् भुक्त्वा तप्तं समाचरेत् ” ॥
मार्कण्डेयः—
 “शिवे निवेदितं भक्तं प्रत्येकं देवतां विना । द्विजोऽज्ञानाद्यदा भुङ्क्ते तप्तकृच्छ्रं समाचरेत् ” ॥ इति ।
 ३० **सालग्रामादिसाहित्ये जाबालिः—**
 “शिवे विष्णवादिभिर्देवैर्वेष्टिते यत्समर्पितम् । तद्भुक्त्वा विप्रवर्योऽसौ न भवेद्दोषभाग्जनः ” ॥
हारीतः—
 “सालग्रामादिभिः शम्भोर्वेष्टितस्य यदुपार्जितम् । तद्भोक्तव्यं द्विजैर्नित्यं ततोयं च पिबेद्विजः ” ॥ इति ।
फलाधिक्यमाह योगयाज्ञवल्क्यः—
 “शिवे निवेदितं भक्तं सालग्रामादिवेष्टिते । तद्भुक्तभोजने चान्द्रं कृतवान्नात्र संशयः ।
 ३५ “अन्यथा मांसतुल्यं स्यात्ततोयमसृजासमम् ” ॥ इति ।

पत्न्या सहभोजने प्रायश्चित्तम् । पत्न्या सहभोजने देवलः—

“द्विजः कामातुरो यस्तु पत्न्या सह यदान्नभुक् । पश्चाच्चान्द्रायणं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पौर्विकीम्” ॥ इति ।

गालवः—“एक्याने समारोहमेकपात्रे तु भोजनम् । विवाहे पथि यात्रायां कृत्वा विप्रो न दुष्यति ॥

“अन्यथा दोषमाप्नोति पश्चाच्चान्द्रायणं चरेत् । अभ्यासे द्विगुणं चैव कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात्” ॥

गौतमः—“पिताऽनुजस्य पुत्रस्य तयोः प्रीतिं समुद्रहम् ।

“निक्षिपेत्कवलं तत्र न दोषस्तस्य भोजने । ताभ्यां सह न भुञ्जीत भुक्त्वा दोषमवाप्नुयात्” ॥ इति ।

नीलवस्त्रधारणनिषेधः । नीलवस्त्रादिधारणे आपस्तम्बः—

“नीलीरक्तं यदा वस्त्रं ब्राह्मणोऽङ्गेषु धारयेत् । अहोरात्रोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥

“रोमकूपे यदा गच्छेद्रसो नील्यास्तु कस्यचित् । त्रिचर्णेषु तु मासान्त्यं तप्तकृच्छ्रं विशोधनम् ॥

“पालनं विक्रयं चैव तद्वृत्त्या तूपजीवनम् । पतनं तु भवेद्विप्रः त्रिभिः कृच्छ्रैर्व्यपोहति ॥ १०

“स्नानं दानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम् । वृथा तस्य महायज्ञा नीलीसूत्रस्य धारणात् ॥

“नीलीमध्ये तु गच्छेद्यः प्रमादाद्ब्राह्मणः कचित् । अहोरात्रोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ॥

“नीलीदारुयदा भिन्द्याद्ब्राह्मणस्य शरीरकम् । शोणितं दृश्यते यत्र द्विजश्चान्द्रायणं चरेत् ॥

“स्त्रीणां क्रीडार्थसंभोगे शयनीयं न दुष्यति ।

“नीलरक्तेन वस्त्रेण यदन्नमुपजीव्यते । दातारं नोपतिष्ठेत् भोक्ता भुञ्जीत किल्बिषम् ।

“कम्बले पट्टवस्त्रे च नीलीरागो न दुष्यति” ॥ नीलीवस्त्रं धृत्वा भोजने देवलः—

“नीलीवस्त्रं तु तच्चिह्नं धृत्वा कर्म करोति यः । स विप्रस्तु न कर्मार्हस्तत्कर्म विफलं भवेत् ॥

“एकस्मिन् दिवसे भुक्त्वा धृत्वा रक्तमयं पटम् । कुर्याद्दिहविशुद्ध्यर्थं यावकं मुनिचोदितम् ॥

“अभ्यासे तु पराकं स्यात् वत्सरे चान्द्रमुच्यते” ॥ इति । तच्चिह्नं वस्त्रान्ते मध्ये वा नीलतन्तुभि-

श्चिह्नितमित्यर्थः । गौतमः—

“नीलीमयं पटं धृत्वा विप्रस्तच्चिह्नमेव वा । कृत्वा कर्माणि भुक्त्वा वा न तत्कर्मफलं लभेत् ॥

“भोजने मांसभुग्विप्रः सर्वथा परिवर्जयेत्” । देवलः—

“नीलवस्त्रं तु तच्चिह्नं धृत्वा ज्ञानात्तु यश्चरेत् । स विप्रस्त्वशुचिर्नित्यं न कर्मार्हो भवेद्दिह” ॥ इति ।

परान्नभोजने प्रायश्चित्तम् । परान्नभोजने शौनकः—

“यस्मिन्वयं जपेन्मन्त्रं शतवारं दिने दिने । सदा परान्नभोक्ता च विमुच्येत हि किल्बिषात्” ॥ २५

यमः—

“न पङ्क्तौ विषमं दद्यान्न याचेन्न च दापयेत् । प्राजापत्येन कृच्छ्रेण मुच्यते कर्मणस्ततः” ॥ इति ।

नवश्राद्धादिभोजने प्रायश्चित्तम् । श्राद्धभोजने विष्णुः—

“प्राजापत्यं नवश्राद्धे पादोनं त्वाद्यमासिके । त्रैपक्षिके तदर्धं स्यात्पञ्चगव्यं चै मासिके” ॥ इति ।

एतच्चापद्विषयम् । अनापदि तु—

“चान्द्रायणं नवश्राद्धे प्राजापत्यं तु मिश्रके । एकाहस्तु पुराणेषु प्रायश्चित्तं विधीयते” ॥

इति हारीतोक्तं द्रष्टव्यम् ।

‘प्राजापत्यं तु मिश्रक’ इति आद्यमासिकविषयम् । ऊनमासिकादिषु तु पादोनप्राजापत्यादीनि कर्तव्यानि । तदुक्तं चतुर्विंशतिमते—

“प्राजापत्यं नवश्राद्धे पादोनं त्वाद्यमासिके । त्रैपक्षिके तदर्धं स्यात् द्वौ पादौ मासिके ततः ॥

“पादोनं कृच्छ्रमुद्दिष्टं षण्मासे चाब्दिके तथा । त्रिरात्रं चान्यमासेषु प्रत्यब्दं चेदहः स्मृतम्” ॥ इति ।

५ अत्र ‘प्राजापत्यं नवश्राद्धे’ इत्ययमंश आपद्विषयः । अनापदि चान्द्रायणम् । तथा मरीचिः—

“नम्रश्राद्धं नवश्राद्धमाशौचाभ्यन्तरे द्वयम् । तत्रामं प्रतिगृह्याशु महारौरवमश्रुते ॥

“नम्रश्राद्धे नवश्राद्धे चान्द्रायणमुदोरितम् ॥

“आद्यश्राद्धे तथा चान्द्रं सपिण्डीप्रेतभोजने । चान्द्रायणं पराकं वा कुर्यात्तद्दोषशान्तये” ॥ इति ।

‘प्राजापत्यं तु मिश्रक’ इत्येतदावृत्ताद्यमासिकविषयम् । तत्र चान्द्रायणं महैकोद्दिष्टविषयम् । तद-

१० नार्वृत्तौ तु चान्द्रायणत्रयं कार्यम् ।

“आद्यमासिकमेकश्रेद्भुङ्क्ते ब्राह्मात्स हीयते । चान्द्रायणत्रयं कृत्वा कूष्माण्डैर्जुहुयात्ततः ॥

“पुनः कर्म प्रकुर्वीत ततः पूतो भवेद्विजः” ॥ इति स्मृतेः । यत्तु शङ्खवचनम्

“चान्द्रायणं नवश्राद्धे पराको मासिके स्मृतः । पक्षत्रये तु कृच्छ्रं स्यात् षण्मासे कृच्छ्र एव तु ॥

“आब्दिके पादकृच्छ्रं स्यात् एकाहः पुनराब्दिके” ॥ इति । अत्र यत्पराकादिविधानं तत्सर्पादि-

१५ हतविषयम् आपङ्कतेयविषयं च ।

“चण्डालादुदकात्सर्पात् ब्राह्मणादैर्बुतादपि । दंष्ट्रिभ्यश्च पशुभ्यश्च मरणं पापकर्मणाम् ॥

“पतनानशनैश्चैव विषोद्वन्यनतस्तथा । भुङ्क्ते यः षोडशश्राद्धे कुर्यादिन्दुव्रतं द्विजः ॥

“आपाङ्कतेयान्यदुद्दिश्य श्राद्धमेकादशेऽहनि । ब्राह्मणस्तत्र भुक्त्वाऽन्नं शिशुचान्द्रायणं चरेत् ॥

“मासश्राद्धे तथा भुक्त्वा तत्तदुच्छ्रेण शुद्ध्यति । संकल्पिते तथा भुक्त्वा त्रिरात्रं क्षपण स्मृतम्” ॥ इति

२० भारद्वाजेन प्रायश्चित्तविशेषाभिधानात् ।

श्राद्धभोजने ब्रह्मचारिणः प्रायश्चित्तम् । ब्रह्माचारिणस्तु बृहद्यमो विशेषमाह—

“मासिकादिषु योऽश्नीयात् असमातत्रतो द्विजः । त्रिरात्रमुपवासोऽत्र प्रायश्चित्तं विधीयते ॥

“प्राणायामशतं कृत्वा घृतं प्राश्य विशुद्ध्यति” ॥ इदमज्ञानविषयम् । ज्ञानपूर्वके तु स एव—

“मधु मांसं तु योऽश्नीयाच्छ्राद्धे सूतक एव वा । प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रं व्रतशेषं समापयेत्” ॥ इति ।

२५ क्षत्रियादिश्राद्धभोजने प्रायश्चित्तम् । क्षत्रियादिश्राद्धभोजने चतुर्विंशतिमते—

“चान्द्रायणं नवश्राद्धे पराको मासिके स्मृतः । त्रैपक्षिके सांतपनं कृच्छ्रं मासद्वये स्मृतम् ॥

“क्षत्रियस्य नवश्राद्धे व्रतमेतदुदाहृतम् । वैश्यस्यार्धाधिकं प्रोक्तं क्षत्रियात्तु मनीषिभिः ॥

“शूद्रस्य तु नवश्राद्धे चरेच्चान्द्रायणद्वयम् ।

“सार्धं चान्द्रायणं मासे त्रिपक्षे त्वैन्दवं स्मृतम् । मासद्वये पराकं स्यादूर्ध्वं सान्तपनं स्मृतम्” ॥ इति ।

३० यत्तश्नसोक्तम्

“दशकृत्वः पिबेदापो गायत्र्या श्राद्धभुग्विद्वजः । ततः सन्ध्यामुपासीत शुद्ध्येत्तु तदनन्तरम्” ॥ इति

तदनुक्तप्रायश्चित्तश्राद्धविषयम् ।

नान्दीश्राद्धभोजने प्रायश्चित्तम् । संस्काराङ्गश्राद्धभोजने व्यासः—

“प्रवृत्ते चूडाहोमे तु प्राङ्नामकरणात्तथा । चरेत्सान्तपनं भुक्त्वा जातकर्मणि चैव हि ॥

“अतोऽन्येषु तु भुक्त्वान्नं संस्कारेषु द्विजोत्तमः । नियोगादुपवासेन शुध्यते नित्यभोजनात्” ॥ इति ।
सीमन्तोन्नयनादिषु धौर्म्यो विशेषमाह—

“ब्रह्मौदने च सोमे च सीमन्तोन्नयने तथा । जातश्राद्धे नवश्राद्धे भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत्” ॥ इति ।
ब्रह्मौदनाख्यं कर्मगन्याधानाद्भूतम् । यत्तु भारद्वाजोक्तम्—

“भुक्तश्चेत्पार्वणश्राद्धे प्राणायामान् षडाचरेत् । उपवासस्त्रिमासादिवत्सरान्तं प्रकीर्तितम्” ॥ ५
एतदप्यापदिषयम् । अनापद्यधिकप्रायश्चित्तस्योक्तत्वात् । आमश्राद्धे सर्वत्रार्थम् । “आमश्राद्धे
भवेदर्धम्” इति षट्त्रिंशन्मतेऽभिधानात् ।

श्राद्धशिष्टान्नभोजननिषेधः । श्राद्धशिष्टान्नभोजनं प्रतिषेधति देवलः—

“अमायां पैतृकश्राद्धे मासिश्राद्धे महालये ।

“श्राद्धे च षण्णवत्याख्ये सपिण्डीकरणे तथा । मासिकेषु तथा विप्रो न कुर्याच्छेषभोजनम्” ॥ १०

महाभारते—

“श्राद्धकर्मणि भोक्तारो भोक्तारो यज्ञकर्मणि । श्राद्धशिष्टान्नभोक्तारस्ते वै निरयगामिनः ॥

“सगोत्राणां सकुल्यानां न दोषः शिष्टभोजने । पुत्रिणामन्यगोत्राणां विधवानां तु दुष्यति” ॥

जाबालिः—

“श्वशुरस्य गुरोर्वापि मातुलस्य महात्मनः । एतेषां श्राद्धशिष्टान्नं भुक्त्वा दोषो न विद्यते ॥ १५

“पित्रोश्च ब्रह्मनिष्ठस्य ज्येष्ठभ्रातुश्च ज्ञानिनः । पैतृकेषु न भोक्तव्यं विधवानां तु सर्वदा ॥

“विप्रस्तवन्यकुले श्राद्धे कुर्याच्चेच्छेषभोजनम् । प्राजापत्यं विशुद्धिः स्यात् ज्ञातीनां तु न दोषभाक् ।

“व्रतिनां च स्वपित्रादौ न दोषः शिष्टभोजने । विधवा केशवपनं कृत्वा तप्तं समाचरेत् ॥

“यतिश्च ब्रह्मचारी च पराकं कृच्छ्रमाचरेत् । संन्यासी वपनं कृत्वा लक्षं च प्रणवं जपेत्” ॥ इति ।

चन्द्रिकादावनेकस्मृतिवचनाभिधानपूर्वकं श्राद्धशिष्टान्नभोजनं न दोषावहमित्युक्तम् । तच्च २०

प्रतिपादितमधस्तात् । हेमाद्रौ तु विशेषवचनमुदाहृत्य श्राद्धशिष्टान्नभोजने प्रायश्चित्तं चाभिहितम् ।

अत्र निषेधस्य प्राबल्यात् श्राद्धशिष्टान्नभोजने प्रायश्चित्तोपदेशात् शिष्टाचारबाहुल्याच्च तद्वर्जनमेव
युक्तमित्याहुः ।

चौलाद्यन्नभोजने देवलः—

“चौलकर्मणि सीमन्ते मुहूर्ताद्भोजने परम् । सुरापानसमं प्रोक्तमतो नेच्छन्ति सूरयः” ॥ २५

गौतमः—“सीमन्ते पुंसवे चैव चौले कर्मणि यो द्विजः । असगोत्रस्तदन्नादः सुरापीत्युच्यते बुधैः” ॥

मार्कण्डेयः—

“चौले कर्माणि सीमन्ते पुंसवे योऽसगोत्रजः । मुहूर्ताद्विध्वंभुक्पापी सुरापानमवाप्नुयात् ॥

“प्रायश्चित्तं द्विजैः प्रोक्तमत्र शिष्टान्नभोजने । मुहूर्तात्परतस्तप्तं तत्पूर्वं भोजनं चरन् ॥

“जप्त्वा शुद्धिमवाप्नोति सहस्रं वेदमातरम् । स्त्रीणामर्धं यतीनां च व्रतिनां चान्द्रमुच्यते ॥ ३०

“चौलकर्मणि पूर्वत्रापरत्र च समं भवेत्” ॥ स्मृत्यन्तरे च—

“चौलोपनयने चैव सीमन्ते पुंसवे तथा । ऋतूत्सवेऽप्यहःशेषं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत्” ॥

अहःशेषमिति वचनात् रात्रौ तद्गृहभोजने नैतत् प्रायश्चित्तम् । उच्छिष्टभोजनादीनां प्रायश्चित्त-
माह्निकपरिच्छेदे भोजनप्रकरणे निरूपितम् । तत एवावधार्यम् ।

अनुक्तप्रायश्चित्तेषु शङ्खलिखितौ—

“क्रयविक्रयदुष्टभोजनप्रतिग्रहेषु अनुद्विष्टप्रायश्चित्तेषु सर्वेषु चान्द्रायणं प्राजापत्यं वा” ॥ इति ।
मनुः (११।१६०)—

“अभोज्यमन्नं नात्तव्यमात्मनः शुद्धिमिच्छता । अज्ञातभुक्तमुद्विष्टं शोध्यं वाप्याशु शोधनैः” ॥

५ स्मृत्यन्तरे तु—

“भक्ष्याभक्ष्याण्यशेषाणि ब्राह्मणानां विशेषतः । तत्र शिष्टा यथा ब्रूयुस्तत्कर्तव्यमिति स्मृतम्” ॥

अविक्रेयविक्रये प्रायश्चित्तम् । अविक्रेयविक्रये हारीतः—“गुडतिलपुष्पमूलफल-
पक्वान्नविक्रये सोमलाक्षालवणमधूनां तैलक्षीरतक्रदधिघृतगन्धचर्मवाससामन्यतमविक्रये चान्द्रायणं
तथोर्णाकेशकेसरिभूषेनुवेश्माश्रमशस्त्रविक्रये च मत्स्यमांसास्थिशृङ्गनखशुक्तिविक्रये तप्तकुच्छं
१० हिङ्गुगुग्गुहरितालमनःशिलाज्जगैरिकलाक्षालवणमणिमुक्ताप्रवालवैणवमृन्मयेषु च आरामतटाकोप-
वनपुष्करिणीसुकुतविक्रये त्रिषवणस्नाय्यधःशायी चतुर्थकालाहारो दशशहस्रं जपेद् गायत्रीं
वत्सरेण पूतो भवति हीनमानोन्मानोन्मापनसंकरसंकीर्णविक्रये च” इति ।

चतुर्विंशतिमते—

“सुराया विक्रयं कृत्वा चरेत्सौम्यचतुष्टयम् । लाक्षालवणमांसानां चरेच्चान्द्रायणव्रतम् ॥

१५ “मध्वाज्यतैलघोमानां चरेच्चान्द्रायणद्वयम् । पयःपायसापूपानां चरेच्चान्द्रायणव्रतम् ॥

“दध्याज्येश्वरसानां च गुडखण्डादिविक्रये । सर्वेषां स्नेहपक्वानां पराकं तु समाचरेत् ॥

“सिद्धान्नविक्रये विप्रः प्राजापत्यं समाचरेत् । उपवासं तु तक्रस्य नक्तं काञ्चनविक्रये ॥

“पूगीफलानि मज्जिष्ठां राजस्वर्जूरमेव च । एतेषां विक्रये कुच्छं पनसस्य दिनद्वयम् ।

“कदलीं नारिकेलं च नारङ्गं बीजपूरकम् । एतेषां पादकुच्छं स्यात् जम्बीरादेस्तथैव च ॥

२० “कस्तूरिकादिगन्धानां विक्रये कुच्छमाचरेत् । कर्पूरादेस्तदर्थं स्याद् दिनं हिंवादिविक्रये ॥

“तिलानां वि यं कृत्वा प्राजापत्यं समाचरेत् । यज्ञार्थं कृषिजातानां दानलब्धस्य विक्रये ॥

“रक्तपीतानि वस्त्राणि कृष्णाजिनमथापि वा । एतेषां विक्रये कुच्छं गर्गस्य वचनं यथा ॥

“गोविक्रयं द्विजः कुर्याद्वाभार्थं धनमोहितः । प्राजापत्यं प्रकुर्वीत गजानां त्वेन्दवं स्मृतम् ॥

“स्वराश्वाजिकानां च करभाणां च विक्रये । पराकं तत्र कुर्वीत शुनि द्विगुणमाचरेत् ॥

२५ “नारीणां विक्रयं कृत्वा चरेच्चान्द्रायणं व्रतम् । द्विगुणं पुरुषाणां च व्रतमाहुर्मनीषिणः ॥

“चान्द्रायणं प्रकुर्वीत एकाहं वेदविक्रये । अङ्गानां तु पराकं स्यात् स्मृतीनां कुच्छमाचरेत् ॥

“इतिहासपुराणानां चरेत्सातपनं द्विजः । रहस्यपाञ्चरात्राणां कुच्छं तत्र समाचरेत् ॥

“गाथानां नीतिशास्त्राणां प्राकृतानां तथैव च । सर्वासामेव विद्यानां पादकुच्छं समाचरेत्” ॥ इति ।

नारदः—“तण्डुलांश्च तिलान्माषान् फलपुष्पगुडायपि । नागवल्लीदलं पूर्णपर्णं कर्पूरमेव च ॥

३० “कस्तूरीं कुङ्कुमं मूलं मुद्गं दधि घृतं पयः । कृष्णाजिनं च रुद्राक्षं ब्रह्मसूत्रं कमण्डलुम् ॥

“ताम्रं कांस्यं तथा वस्त्रं कम्बलं रोचनं तथा । तिन्त्रिणीं लवणं मूलं पक्कमन्नं द्विजो यदि ॥

“विक्रयित्वा तु यो जीवेत् स तु शुद्रो न संशयः । एतानि विक्रयित्वा तु हव्यकव्यानि नाचरेत् ॥

“एतानि विक्रयित्वा तु प्राजापत्यं समाचरेत् । धनस्य संग्रहार्थं तु द्विगुणं कुच्छमाचरेत् ॥

“विप्रस्तु पक्षमात्रं च गोरसं विक्रयेद्यदि । तस्य देहविशुद्ध्यर्थं तप्तकुच्छमुदीरितम् ॥

३५ “मासमात्रं विक्रयित्वा चरेच्चान्द्रायणव्रतम् । ऋतुद्वयं विक्रयित्वा मण्डलं यावकं चरेत् ॥

“ ऋतुत्रयं विक्रयित्वा ब्रह्महन्ता भवेद् ध्रुवम् । षण्मासं गोरसं पक्वं पीत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

“ लवणं पक्कमन्नं च यदि मासं तु विक्रयेत् । तस्यैव निष्कृतिरियं यावकं वत्सरं चरेत् ॥

“ तस्योपनयनं भूयः कर्तव्यं शुद्धिमिच्छता ” ॥

कूर्मपुराणे—“अश्वधेनुमनुष्याश्च रासभः कुञ्जरस्तथा । कन्या नारी च मेषश्च पुस्तकं ब्रह्मसूत्रकम् ॥

“ लवणं पललं चर्मं लघुनं गृञ्जनं तथा । पिप्पली च मरीचाश्च हरिद्राश्च लवङ्गिकाः ॥

“ औषधानि च यावन्ति मत्स्यकुवकुटसूकराः । हिङ्गुजीरकवस्तूनि ताम्रं कांस्यादिकं तथा ॥

“ एतानि मूल्यैः कृत्वा तु स्वल्पैर्वापि ततोऽधिकैः । विक्रयित्वाऽत्मभरणं कुर्याद्यदि स पापभाक् ॥

“ मृत्वा नरकमासाद्य किमिरूपे पतत्यधः । तस्मादेतद्विशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमिहोच्यते ॥

“ एकवारं द्विवारं वा बहुवारमनेकशः । तप्तं पराकं चान्द्रं च यावकं वर्षमाचरेत् ॥

“ तस्योपनयनं भूयः पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ।

“ वृद्धेरपि च या वृद्धिश्चक्रवृद्धिरुदाहृता । मासिमासि च या वृद्धिः सा शिखावृद्धिरिष्यते ॥

“ ताभ्यां जीवेद्यदा विप्रः स वार्षिक उच्यते ।

“ मासं जीवेद्यदा विप्रः पराकं कृच्छ्रमाचरेत् । मासद्वये तु तप्तं स्याच्चान्द्रं मासत्रये स्मृतम् ॥

“ षण्मासे तु महाचान्द्रं वत्सरे द्विगुणं स्मृतम् । पतितः स्यात्परं विप्रः सर्वकर्मबहिष्कृतः ” ॥

ऋणादि कृत्वा व्रताद्याचरणनिषेधः । हेमाद्रौ—

“ स्वस्याकिंचन्यमज्ञात्वा ऋणं कृत्वा व्रतं चरेत् । भोगासक्तश्च यः स्वात्मविक्रयीत्युच्यते बुधैः ॥

“ नित्यकर्माणि काम्यानि इष्टापूर्तादिकानि च । सर्वं तस्यैव भवति स्वयं वै निष्फलो भवेत् ॥

“ अर्वाग्धनस्य द्वैगुण्यात् तस्माद्यात्सवृद्धिकम् । ऊर्ध्वं तु कर्मणां भ्रंशात् पतितः स्यान्न संशयः ॥

“ हिरण्यगर्भं तस्योक्तं प्रायश्चित्तं महर्षिभिः । धनिने च धनं दत्त्वा प्रायश्चित्तं समाचरेत् ” ॥ इति ।

“ कल्पान्ते भ्रूणहा मुच्येतर्णी तु न कदाचन ” इति वचनमकृतप्रायश्चित्तविषयम् । २०

यत्तु संवर्त आह—

“ अग्निहोत्री तपस्वी च ऋणवान्प्रियते यदि । अग्निहोत्रं तपश्चैव सर्वं तद्धनिनां धनम् ” ॥

इति तद्द्वैगुण्यादूर्ध्वं मरणे धनग्राहिपुत्राद्यभावे चावगन्तव्यम् ।

ब्राह्मणादिविक्रये प्रायश्चित्तम् । हेमाद्रौ—

“ पूर्वजः पूर्वजं वापि बाहुजोरूजपादजान् । वशीकृत्यौषधैर्मन्त्रैर्विक्रयेद्यदि पापधीः ।

“ बाले चान्द्रं द्विजे प्रोक्तं पौण्ड्रे तद्द्वयं चरेत् । तरुणे तु महाचान्द्रं प्रौढे प्रोक्तं तु तत्त्रयम् ॥

“ भिन्नवर्णे विक्रये तु सहस्रं कृच्छ्रमाचरेत् ।

“ विप्रं यः क्षत्रियो हत्वा विक्रयेद्यदि पापधीः । ब्रह्महत्याव्रतं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पौर्विकीम् ॥

“ तर्दनेनैव शुद्धः स्यादूरुजो विप्रविक्रये । शूद्रस्तु विक्रयेद्विप्रं मौसलं वधमर्हति ॥

“ जारजं वाऽत्मजं वापि विक्रीणीयात्सुतं यदि । तद्दोषपरिहारार्थं महासान्तपनं चरेत् ॥

“ बाले सान्तपनं प्रोक्तं पौण्ड्रे तद्द्वयं स्मृतम् । कौमारे प्रौढकाले च महासान्तपनत्रयम् ॥

“ स्वपत्नीं विक्रयेद्यस्तु सतीं दुष्टमथापि वा । सतीं विक्रीय चान्द्रं स्यात्पराकं दुष्टचारिणीम् ॥

“ बालिकायां षडब्दं स्यात् बुद्ध्यायां नास्ति निष्कृतिः । ज्ञात्वा विक्रयते यस्तु द्विगुणं व्रतमाचरेत् ॥

“ विवाहार्थं धनं गृह्णन् यत्किञ्चिद्वाजमाश्रितः । स कन्याविक्रयी तस्य शुद्धिश्चान्द्रायणत्रयात् ॥

“ द्विजः संपाद्य यो दासीं गृहकर्मसुखातये । युवतिं विक्रयित्वा तां षडब्दं कुच्छ्रमाचरेत् ॥
 “ स्नानादिनित्यकर्माणि इष्टापूर्तादिकानि च । उपोषणव्रतादीनि श्रौतस्मार्तादिकानि च ॥
 “ विक्रीणीयात्तु यो विप्रो माघस्नानं तथैव च । चान्द्रायणत्रयं कृत्वा पुनःसंस्कारकृत्या ॥
 “ पञ्चगव्यं ततः पीत्वा शुद्धिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ” ॥

५ श्रुतिस्मृत्यादेः विक्रये प्रायश्चित्तम् । वसिष्ठः—

- “ श्रुतिं स्मृतिं धर्मशास्त्रं पुराणं ज्योतिषं तथा । पुस्तकं फलकं वापि तत्साधनमथापि वा ॥
 “ विक्रयेद्यदि लोभात्मा महान्तं नरकं व्रजेत् । चान्द्रायणं पराकं वा कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ” इति ।
 मार्कण्डेयः— “ सालग्रामशिलां यो वै तत्तत्तत्क्राङ्गितां द्विजः ।
 “ शिवलिङ्गं चक्रपाणिप्रतिमां यदि विक्रयेत् । चान्द्रायणं प्रकुर्वीत पश्चात्तापसमन्वितः ॥
 १० “ लक्ष्मीनृसिंहं वामनं च गोपालं श्रीधरं तथा । लक्ष्मीनारायणं चैव दधिवामनमेव च ॥
 “ हिरण्यगर्भमित्यादिमूर्तीः पापापहारिण्यैः । रामादिविक्रये विप्रश्चरेच्चान्द्रायणत्रयम् ॥
 “ लक्ष्मीनारायणं चैव तद्वयं दधिवामने । महाचान्द्रं प्रकुर्वीत लक्ष्मीनृसिंहविक्रये ॥
 “ पराकं देहशुद्धयर्थं चरेद्विप्रो विचारयन् । लिङ्गे तु स्फाटिके चैव तथा मारकते द्विजः ॥
 “ मासं दीक्षामुपागम्य प्रातः स्नात्वा यथाविधि ।
 १५ “ सूर्योदयं समारभ्य यावदस्तंगतो रविः । प्रत्यहं दशसाहस्रं जपेच्चैवं षडक्षरम् ॥
 “ फलाहारं प्रकुर्वीत यदा मन्दायते रविः । स्थण्डिले शयनं कृत्वा मासान्ते शुद्धिमाप्नुयात् ” इति ।
 जलाग्न्यादिषु मर्तुमुद्यम्य निवृत्तस्य प्रायश्चित्तम् । चतुर्वर्णेषु यः कोऽपि स्वात्मघातार्थ-
 मुपक्रम्य कथंचित् वातात्प्रागेव निवर्तते तस्य प्रायश्चित्तं प्रश्नपूर्वकमाह पराशरः (१२।५-८)—
 “ जलाग्निपतने चैव प्रव्रज्यानशनेषु च । प्रत्यावसितवर्णानां कथं शुद्धिर्विधीयते ॥
 २० “ प्राजापत्यद्वयेनैव तीर्थाभिगमनेन च । वृषैकादशदानेन वर्णाः शुध्यन्ति ते त्रयः ॥
 “ ब्राह्मणस्य प्रवक्ष्यामि वनं गत्वा चतुष्पथे । सशिखं वपनं कृत्वा प्राजापत्यद्वयं चरेत् ॥
 “ गोद्वयं दक्षिणं दद्यात् शुद्धिं पाराशरोऽब्रवीत् । मुच्यते तेन पापेन ब्राह्मणत्वं च गच्छति ” इति ।
 नद्यादिप्रवेशनमाग्निप्रवेशनं भृगुपतनं महाप्रस्थानगमनमनशनं चेति जलाग्न्यादयः पञ्च मरणहेतवः ।
 जलादिमरणं द्विविधम् । विहितं प्रतिषिद्धं चेति । तत्र विहितमपि द्विविधम् । काम्यतपोरूपं प्राय-
 २५ श्चित्तरूपं चेति । तत्तु कलौ वर्जनीयम् । युगान्तरेष्वपि विहितत्वेन न प्रायश्चित्तार्हम् । क्रोधादिना
 यज्जलादिमरणं तत् प्रतिषिद्धम् । तदेवात्र परिशिष्यते । जलाग्नीति विषबन्धनोद्ध्वननादेरेष्युपलक्षणम् ।
 तत्र मर्तुमुद्यम्य मृतस्य प्रायश्चित्तं नास्ति । तत्कर्तुरभावात् । यस्तूद्यम्य मरणान्निवर्तते तस्योद्यम-
 निमित्तमिदं प्रायश्चित्तम् । प्रत्यावसिता निवृत्ताः । क्षत्रियस्य प्रायश्चित्तद्वयं वैश्यस्य तीर्थयात्रा
 शूद्रस्य वृषसहितगोदशकदानं ब्राह्मणस्य वनगमनादि व्रतम् । आत्मनो हननोद्यमेन ब्राह्मणत्वमप-
 ३० गतं चण्डालत्वमागतम् । पुनर्व्रतचरणेन चण्डालत्वनिवृत्तौ पुनः पूर्वसिद्धं ब्राह्मण्यं प्रतिपद्यते ।
 तदाह वृद्धपराशरः—
 “ अनाशकान्निवृत्तस्तु चातुर्वर्ण्यव्यवस्थितः । चण्डालः स तु विशेषो वर्जनीयः प्रत्यन्तः ॥
 “ ब्राह्मणानां प्रसादेन तीर्थाभिगमनेन च । गवां च दश दानेन वर्णाः शुध्यन्ति ते त्रयः ॥
 “ ब्राह्मणस्य प्रवक्ष्यामि गत्वारण्यं चतुष्पथम् । सशिखं वपनं कृत्वा त्रिसन्ध्यमवगाहनम् ॥

“सावित्र्यसहस्रं तु जपेच्चैव दिने दिने । मुच्यते सर्वपापेभ्यो ब्राह्मणत्वं च गच्छति ।

“भैक्षार्थं विचरेद् ग्रामं गृहान् सप्त वने वसन् । धौतां भिक्षां समश्नीयादब्दार्धेन विशुध्यति” ॥ इति ।

तत्रैव व्रतान्तराण्याह वसिष्ठः (२३।१९-२२) — “जीवन्नात्मत्यागी कुच्छ्रं वा द्वादशरात्रं चरेत् ।

त्रिरात्रं वोपवसेत् । नित्यं स्निग्धेन वाससा । “प्राणानात्मनि संयम्य त्रिः पठेद्धमर्षणम् ।

“अपि वैतेन कल्पेन गायत्रीं परिवर्तयेत् । अपि वाग्निमुपाधाय कूष्माण्डैर्जुहुयात् घृतम् ” ॥ इति । ५

तत्र जपहोमौ विद्वद्विषयौ कल्पनीयौ । द्वादशरात्रत्रिरात्रौ त्वविद्वद्विषये शक्ताशक्तभेदेन व्यवस्थिताविति माधवीये ।

पारिव्राज्यात् प्रच्युतौ प्रायश्चित्तम् । “प्रव्रज्यानशकेन च ” इति पराशरवरचने यः प्रव्रज्याशब्दः तस्यार्थान्तरमप्युक्तं तत्रैव । परिव्रज्यते विवर्ज्यते । तथा च सति पारिव्राज्यात् प्रच्युतस्य ब्राह्मणस्य प्राजापत्यं प्रायश्चित्तमुक्तं भवति । तदिदं श्रद्धालोः पुनरुप-^{१०} नयनादिपुरःसरं पारिव्राज्यं जिघृक्षोर्वेदितव्यम् । मोहान्निवृत्तौ संवर्तः—

“संन्यस्य दुर्मतिः कश्चित् प्रत्यापत्तिं व्रजेद्यदि । स कुर्यात्कुच्छ्रमश्रान्तः षण्मासान् व्रत्यनन्तरम् ॥

“पुनः परिव्रजेद्विप्रो यथाविधि समाहितः ” ॥ इति । अत्यन्ताशक्तमुग्धविषये वृद्धपराशरः—

“यः प्रत्यवसितो विप्रः प्रव्रज्यातो विनिर्गतः । अनाशकनिवृत्तश्च गार्हस्थ्यं चेच्चिकीर्षति ॥

“चरेत् त्रीणि च कुच्छ्राणि त्रीणि चान्द्रायणानि चाजातकर्मादिभिः सर्वैः संस्कृतः शुद्धिमाप्नुयात्” ॥ इति ।^{१५}

शक्तो यस्तु पुनः पारिव्राज्यं न जिघृक्षति तस्य मरणान्तिकं राजदासत्वादिकम् ।

अत्र नारदः—

“राज्ञ एव तु दासः स्यात् प्रव्रज्यावसितो द्विजः । न तस्य प्रतिमोकोऽस्ति न विशुद्धिः कथंचन” ॥ इति ।

कात्यायनः—

“प्रव्रज्यावसिता यत्र त्रयो वर्णा द्विजातयः । निर्वासं कारयेद्विप्रं दास्यं क्षत्रविशोर्वृषः ” ॥ २०

दक्षः—

“पारिव्राज्यं गृहीत्वा तु यः स्वधर्मे न तिष्ठति । श्वपदेनाङ्कयित्वा तं राजा शीघ्रं प्रवासयेत् ” ॥

याज्ञवल्क्यः (व्य. १८३) — “प्रव्रज्यावसितो राज्ञो दासः स्यान्मरणान्तिकम्” ॥ अङ्गिराः—

“संन्यासं चैव यः कृत्वा पुनरुत्तिष्ठते द्विजः । न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा स्वधर्मात् प्रच्युतस्य तु ॥

“आरूढो नैष्ठिकं कर्म पुनरावर्तयेद्यतिः । आरूढपतितो ज्ञेयः सर्वकर्मवहिष्कृतः ॥^{२५}

“चण्डालाः प्रत्यवसिताः परिव्राजकतापसाः । तेषां जातान्यपत्यानि चण्डालैः सह वासयेत् ॥

“नैष्ठिकानां वनस्थानां यतीनामवकीर्णिनाम् । शुद्धानामपि लोकेऽस्मिन् प्रत्यापत्तिर्न विद्यते” ॥ इति ।

बह्वचपरिशिष्टे—

“धीपूर्वं रेत उत्सर्गो द्रव्यसंग्रह एव च । पतत्यसौ ध्रुवं भिक्षुर्यस्य भिक्षोर्द्वयं भवेत् ” ॥

आत्मघातिनः शववहनादौ प्रायश्चित्तम् । आत्महननस्यातिकष्टत्वमुक्त्वा तच्छववहनादौ^{३०}

प्रायश्चित्तमाह पराशरः (४।१-४)—

“अतिमानादतिक्रोधात् स्नेहाद्वा यदि वा भयात् । उद्धवनीयात् स्त्रीपुमान्वा गतिरेषा विधीयते ॥

“पूयशोणितसंपूर्णे त्वन्धे तमासि मज्जति । षष्ठिं वर्षसहस्राणि नरकं प्रतिपद्यते ।

“ नाशौचं नोदकं नाग्निं नाश्रुपातं च कारयेत् ।

“ वोढारोऽग्निप्रदातारः पाशच्छेदकरास्तथा । तप्तकृच्छ्रेण शुद्ध्यन्तीत्येवमाह प्रजापतिः ॥

“ तप्तकृच्छ्रेण शुद्धास्ते कुर्युर्ब्राह्मणभोजनम् । अनहुत्सहितां गां च दद्याद्विप्राय दक्षिणाम्” ॥ इति ।
अन्धतमस्तीव्रो नरकविशेषः । यन्तु स्मृत्यन्तरे—

५ “एतानि पतितानां तु यः करोति विमोहितः । तप्तकृच्छ्रद्वयेनैव तस्य शुद्धिर्न चान्यथा” ॥ इति ।
एतानि दहनादीनि तेषां प्रकृतत्वात् तत् कामकारविषयम् । “विहितं यदकामानां कामतो द्विगुणं भवेत्” इति स्मरणात् । यच्च बृहस्पतिनोक्तम्—

“ विषोब्धन्धनशस्त्रेण यः स्वात्मानं प्रमापयेत् । मृते मेध्येन लेप्तव्यो नान्यं संस्कारमर्हति ॥

“पाशच्छेत्ता तु यस्तस्य वोढा चाग्निप्रदस्तथा । सोऽतिकृच्छ्रेण शुद्ध्येन पिण्डदो वा नराधमः” ॥ इति ।

१० यच्च यमेनोक्तम्—

“गोब्राह्मणहतं दग्ध्वा मृतमुद्धन्धनेन च । पाशं छित्वा तथा तस्य कृच्छ्रं सान्तपनं चरेत्” ॥ इति ।
तत् देशकालादितारतम्यापेक्षयोक्तम् । देशादितारतम्यस्य प्रायश्चित्तारतम्यहेतुत्वात् ।

तथा च व्याघ्रः—

“देशं कालं वयः शक्तिं ज्ञानं बुद्धिकृतं तथा । अबुद्धिकृतमभ्यासं ज्ञात्वा निष्क्रयणं वदेत्” ॥ इति ।

१५ शक्त्यादितारतम्यवत् निमित्तारतम्यमपि प्रायश्चित्तारतम्ये कारणम् । अत एव स्पर्शाद्यल्पनिमित्ते स्वल्पं प्रायश्चित्तमाह प्रजापतिः—

“तच्छवं केवलं स्पृष्ट्वा पातयित्वाश्रु वा तथा । एकरात्रं तु नाश्रीयात् त्रिरात्रं बुद्धिपूर्वकम्” ॥ इति ।
निमित्तभूयस्त्वेऽधिकं प्रायश्चित्तमाह वसिष्ठः—

“य आत्मत्यागिनां कुर्यात् स्नानं प्रेतक्रियां द्विजः । तप्तकृच्छ्रं तु सहितं चरेच्चान्द्रायणव्रतम्” ॥ इति ।

२० प्रमादादिकरणे पातित्याभावात् नैतत्प्रायश्चित्तम् । तच्चाधस्तात् प्रतिपादितम् ।

अनृतभाषणे प्रायश्चित्तम् । अनृतभाषणे मनुः (८।१०६-१०७)—

“ वागदैवत्यैस्तु चरुभिर्यजेरंस्ते सरस्वतीम् । अनृतस्यैनसस्तस्य कुर्वाणो निष्कृतिं पराम् ॥

“ कूश्माण्डैर्वापि जुहुयात् घृतमग्नौ यथाविधि । उदित्यूचा वा वारुण्या तृचेनाब्दैवतेन वा ॥

“ अनृती सोमपः कुर्यात् त्रिरात्रं परमं तपः । पूर्णाहुतिं वा जुहुयात् सप्तैतेन घृतेन तु ” ॥ इति ।

२५ याज्ञवल्क्यः (प्रा. २७९)—

“मयि तेज इति च्छायां स्वां दृष्ट्वा मृगतां जपेत् । सावित्रीमशुचौ दृष्टे चापले चानृतेऽपि च” ॥ इति ।

एतत्कामकारे द्रष्टव्यम् । अकामकृते अनृतवचने मनुः (५।१४४)—

“ सुप्त्वा क्षप्त्वा च भुक्त्वा च निष्ठीव्योक्त्वानृतानि च । पीत्वापोऽध्येष्यमाणश्च आचामेत्प्रयतोऽपि सन् ” ॥ इति ।

३० मिथ्याभूतचतुर्वधशपथे प्रायश्चित्तम् । एतस्य कार्यास्याकरणे चतुर्वर्णेऽध्वन्यतमं हतवानस्मीति शपथं कृत्वा यस्तत् कार्यं न करोति तस्य प्रायश्चित्तमाह यमः—

“ विप्रस्तु वधसंयुक्तं कृत्वा तु शपथं मृषा । ब्राह्मणो यावकात्रेण व्रतं चान्द्रायणं चरेत् ॥

“ क्षत्रियस्य पराकं तु प्राजापत्यं तथा विशः । वृषलस्य त्रिरात्रं तु व्रतं शूद्रहणश्चरेत् ॥

“ केचिदाहुरपापं तु वृषलस्य वधं मुधा । न ममैतन्मतं यस्माद्धतस्तेन भवत्यसौ ” ॥ इति ।

प्रतिश्रुत्यानृतोक्तौ हारीतः—

“प्रतिश्रुत्यानृतं ब्रूयान्मिथ्यासत्यमथापि वा । स तत्तकुच्छ्रसहितं चरेच्चान्द्रायणव्रतम्” ॥ इति ।
ब्रह्मचार्यादिविषये गार्ग्यः—

“त्रिरात्रमेकरात्रं वा ब्रह्मचार्यनृतं चरेत् । मासं भुक्त्वा ब्रह्मचारी पुनः संस्कारमाचरेत् ॥

“अभ्यासे चैन्दवं कुर्यान्नैष्ठिको द्विगुणं चरेत् । वनस्थस्त्रिगुणं कुर्याद्यतिः कुर्याच्चतुर्गुणम् ॥ ५

“मांसाशने चानृतोक्तौ शवनिर्वहणे तथा ” ॥ इति ।

क्वचित्तु निमित्तविशेषेऽनृतमपि बुद्धिपूर्वं वक्तव्यं तदाह याज्ञवल्क्यः (व्य. ८३)—

“वर्णिनां तु वधो यत्र तत्र साक्ष्यनृतं वदेत् । तत्पावनाय निर्वाप्यश्वरः सारस्वतो द्विजैः” ॥ इति ।

स्वोत्कर्षेऽनृतवचनं मनुना (११।५५)—“अनृतं च समुत्कर्षे राजगामि च पैशुनम्” इति
ब्रह्महत्यासमेषु मध्ये पठितम् । १०

“निषिद्धभक्षणं जैह्वचमुत्कर्षस्य वचोऽनृतम्” इति याज्ञवल्क्येन (प्रा. २२९) सुरापानसमेषु
पठितम् । विष्णुना तु (३।७।१) ‘अनृतवचनमुत्कर्षे’ इत्युपपातकत्वमुक्तम् । अत्र च विषयभेद उक्तो

माधवीये—“द्वेष्यं पुरुषं राजादिभिर्मौरयितुं तस्मिन्नविद्यमानमपि महान्तमपराधमारोप्यानृतं चेत्

ब्रूयात् तत् ब्रह्महत्यासमं वधपर्यवसायित्वात् । यस्तु लाभपूजाख्यातिकामो राजसभादौ स्वस्मि-

न्नविद्यमानमपि चतुर्वेदाभिज्ञत्वादिकं प्रथयितुमनृतं ब्रूते तत्सुरापानसममतिगर्हितत्वात् । यस्तु सुख- १५

गोष्ठ्यादौ परोपकारमन्तरेण वृथानृतं ब्रूते तस्यैतदुपपातकमिति । तत्राद्ययोः प्रायश्चित्तं विष्णुनो-

क्तम् (५।४।१४)—‘समुत्कर्षेऽनृते गुरोर्लीकनिर्बन्धे तदवज्ञानकरणे च मासं पयसा वर्तेत’ इति ।

तृतीये तु याज्ञवल्क्याद्युक्तं द्रष्टव्यम्—‘शतमश्वानृते हन्ति सहस्रं तु गवानृते’ इत्यादिना*

प्रतिपादिते दोषतारतम्ययुक्तेऽनृते उक्तप्रायश्चित्तेषु तारतम्यं द्रष्टव्यम् ।

श्रौताग्नित्यागे प्रायश्चित्तम् । श्रौताग्नित्यागे प्रायश्चित्तमाह विष्णुः (५।४।१३)—२०

“अग्न्युत्सादी त्रिषवणस्नाय्यधःशायी संवत्सरं सक्कुद्रैक्षेण वर्तेत” इति । वसिष्ठः (१।२३)—

“योऽग्नीनपविध्येत् स कुच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा पुनराधानं कारयेत्” इति । मनुः (११।४१)—

“अग्निहोत्र्यपविध्याग्नीन् ब्राह्मणः कामकारतः । चान्द्रायणं चरेन्मासं वीरहत्यासमं हि तत् ॥

“अग्निहोत्र्यपविध्याग्नीन् मासादूर्ध्वं तु कामतः । कुच्छ्रं चान्द्रायणं चैव कुर्यादेवाविचारयन्” ॥ इति ।

हारीतः—“संवत्सरोत्सन्नेऽग्निहोत्रे चान्द्रायणं चरित्वा पुनरादध्यात् । द्विवर्षोत्सन्ने चाद्रायणं २५

सोमायनं च कुर्यात् । त्रिवर्षोत्सन्ने संवत्सरं कुच्छ्रमभ्यस्य पुनरादध्यात्” इति । शंखोऽपि—

“अग्न्युत्सादी संवत्सरं प्राजापत्यं चरेत् गां च दद्यात्” इति । भारद्वाजः—“द्वादशाहाति-

क्रमे ज्यहमुपवासो मासातिक्रमे द्वादशाहमुपवासः संवसरातिक्रमे मासोपवासः पयोभक्षणं च”

इति । एतत् सर्वमालस्यादिनिमित्तत्यागविषयम् । यत्तु भारद्वाजगृह्येऽभिहितम्—

“प्राणायामशतमा दशरात्रं कुर्यादुपवासः स्यात् आ विंशतिरात्रमत ऊर्ध्वमा षष्टिरात्रात् तिस्रो ३०

रात्रीरुपवसेत् । अत ऊर्ध्वं मासं वत्सरात् प्राजापत्यं चरेत् । अत ऊर्ध्वं कालबहुत्वे दोषबहुत्वं

इति तत् प्रामादिकत्यागविषयम् । यत्तु जातुकर्णिराह—“अतिकालं च जुहुयादग्निं विप्राय

वा यवम् । नष्टेऽग्निं विधिवद्द्यात् कृत्वाऽऽधानं पुनर्द्विजः” ॥ इति । तदौपासनाग्निविषयम् ॥

नास्तिक्यप्रायश्चित्तम् । नास्तिक्यप्रायश्चित्तमाह वसिष्ठः (६५।२९)—“ नास्तिकः कृच्छ्रं द्वादशरात्रं चरित्वा विरमेन्नास्तिक्यात् ” इति । तदेतदुपपातकनास्तिक्यविषयम् । पातकनास्तिक्ये तु शङ्खः—“ नास्तिको नास्तिकवृत्तिः कुतघ्नः कूटव्यवहारी मिथ्याभिर्शंसीत्येवं पञ्च संवत्सरं ब्राह्मणगृहे भैक्षं चरेयुः ” इति । नास्तिकस्य त्रैविध्यमुक्तं माधवीये—

५ “ नास्तिकस्त्रिविधः प्रोक्तो धर्मज्ञैस्तत्त्वदर्शिभिः । क्रियादुष्टो मनोदुष्टो वाग्दुष्टश्च तथैव च ॥

“ उपपातकस्तु वाग्दुष्टो मनोदुष्टस्तु पातकः । अभ्यासान्तु क्रियादुष्टो महापातक उच्यते ” ॥ इति । महापातकनास्तिके तु हारीतः—“ कन्याद्रूषी सोमविक्रयी वृषलीपतिः कौमारदारत्यागी सुरा-मद्यपः शूद्रयाजको गुरोः प्रतिहन्ता नास्तिको नास्तिकवृत्तिः कुतघ्नः कूटव्यवहारी ब्राह्मण-मित्रघ्नो मिथ्याभिर्शंसी पतितसंव्यवहारी मित्रधृक् शरणागतघाती प्रतिरूपकवृत्तिरित्येते पञ्चतपोऽ-
१० भ्रावकाशजलशयनान्यनुतिष्ठेयुः क्रमेण ग्रीष्मवर्षाहिमन्तेषु मासं गोमूत्रयावकमश्रीयुः ” ॥ इति ।

एकपञ्चमै वैषम्येण दाने । एकपञ्चमैपविष्टानां वैषम्येण दानादौ यमः—

“ न पङ्क्त्यां विषमं दद्यान्न याचेन्न तु दापयेत् । प्राजापत्येन कृच्छ्रेण मुच्यते कर्मणस्ततः ” ॥ इति ।

अपाङ्केयपङ्क्तिभोजनादौ प्रायश्चित्तम् । अपाङ्केयपङ्क्तिभोजने मार्कण्डेयः—

“ अपाङ्केयस्य यः कश्चित् पङ्क्तौ भुङ्क्ते द्विजोत्तमः । अहोरात्रोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुद्ध्यति ” ॥
१५ पतितादिसंभाषणे गौतमः (९।१७-१९)—“ न म्लेच्छाशुच्यधार्मिकैः सह संभाषेत । संभाष्य पुण्यकृतो मनसा ध्यायेत् । ब्राह्मणेन वा संभाषेत ” इति अप्सु मूत्रपुरीषकरणे सुमन्तुः—

“ अप्सवग्नौ वा मेहतस्तप्तकृच्छ्रम् ” इति । आर्तविषये मनुः (११।२०२)—

“ विनाद्भिरप्सु वाऽप्यार्तः शरीरं संनिवेश्य तु । सचेलो मुहुरापुत्य गामालभ्य विशुद्ध्यति ” ॥
कामकारे तु यमः—

२० “ आपद्गतो विना तोयं शरीरं यो निषेवते । एकाहं क्षपणं कृत्वा सचेलः स्नानमाचरेत् ” ॥ इति ॥
ब्रह्मसूत्रं विना मूत्रपुरीषादिकरणे प्रायश्चित्तमुक्तं स्मृत्यन्तरे—

“ विना यज्ञोपवीतेन यद्युच्छिष्टो भवेत् द्विजः । प्रायश्चित्तमहोरात्रं गायत्र्यष्टशतं तु वा ॥

“ अकामतस्तु पिबतो मेहतश्चैव भुञ्जतः । प्राणायामत्रिकं षट्कं नक्तं च त्रितयं क्रमात् ” ॥ इति ।
संवर्तः—

२५ “ अनाचान्तः पिबेद्यस्तु अपि वा भक्षयेत् द्विजः । गायत्र्यष्टसहस्रं तु जपं कृत्वा विशुद्ध्यति ” ॥ इति ।

पलाशदारुशयनादौ प्रायश्चित्तम् । शङ्खः—

“ अध्यास्य शयनं यानमासनं पादुके तथा । द्विजः पलाशवृक्षस्य त्रिरात्रं तु व्रती भवेत् ॥

“ द्वौ विप्रौ ब्राह्मणाग्नौ वा दंपती गोद्विजोत्तमौ । अन्तरेण यदा गच्छेत् कृच्छ्रं सातपथं चरेत् ॥

“ होमकाले तथा दोहे स्वाध्याये दारसंग्रहे । अन्तरेण यदा गच्छेत् द्विजश्चान्द्रायणं चरेत् ॥

३० “ क्षत्रियस्तु रणे षष्ठं दत्त्वा प्राणपरायणः । संवत्सरं व्रतं कुर्यात् छित्वा वृक्षं फलप्रदम् ” ॥ इति
स एव—“ दुःस्वप्नारिष्टदर्शनादौ हिरण्यं घृतमर्पयेत् ” ॥ इति ।

श्राद्धे निमन्त्रितस्य कालातिक्रमे प्रायश्चित्तम् । श्राद्धे निमन्त्रितस्य कालातिक्रमे यमः—

“केतनं कारयित्वा तु योऽतिपातयते द्विजः । ब्रह्महत्यामवाप्नोति शूद्रयोनौ प्रजायते ॥

“एतस्मिन्नेनसि प्राप्ते ब्राह्मणो नियतव्रतः । यतिचान्द्रायणं चैर्त्वा ततश्चान्द्रायणं चरेत् ॥ इति ।

क्षत्रियाद्यभिवादनादौ प्रायश्चित्तम् । क्षत्रियाद्यभिवादाने हारीतः—“क्षत्रियस्याभि- ५
वादानेऽहोरात्रमुपवसेत् । वैश्यस्य द्विरात्रं शूद्रस्य त्रिरात्रमुपवासः । शय्यारूढपादुकोपानदारोपित-
पादोच्छिष्टान्धकारस्थश्राद्धकुज्जपदेवपूजादिरनाभिवादाने त्रिरात्रमुपवासः । अन्यत्र निमन्त्रित-
स्यान्यत्र भोजने त्रिरात्रमुपवासः ॥ इति ।

शूद्रस्य वेदवाक्यश्रवणे प्रायश्चित्तम् । शूद्रस्य वेदवाक्यश्रवणादौ गौतमः (१२।४)–

“अथ हास्य वेदमुपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां श्रोत्रप्रतिपूरणमुदाहरणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेदः” इति । १०

प्रतिग्रहविचारः । अथ प्रतिग्रहो निरूप्यते । वृत्त्यर्थं सत्प्रतिग्रहे न प्रायश्चित्तापेक्षा ।

“विहितात् प्रतिगृहीयात् गृहधर्मप्रसिद्धये । आत्मनो वृत्तिमन्विच्छन् गृहीयात्साधुतः सदा ॥

“अनापद्यपि गृहीयात् याज्यतः शिष्यतस्तथा । धर्मतस्तु द्विजो गृह्णन् न धर्मात् परिहीयते” इति

स्मृतेः । असत्प्रतिग्रहे प्रायश्चित्तं कर्तव्यम् । स पञ्चविधः—

“असत्प्रतिग्रहः प्रोक्तः कालतो देशतस्तथा । स्वरूपतो जातितश्च कर्मतश्चेति पञ्चधा ॥ इति १५

स्मरणात् । कालो ग्रहणादिः । देशः कुरुक्षेत्रादिः । स्वरूपं भेषीकृष्णाजिनतुलोभयतोमुख्यादिकम् ।

जातिः शूद्रादिः । कर्म पतनीयवृत्तिः । मनुः (१०।१०९)—

“प्रतिग्रहः प्रत्यवरः प्रेत्यै विप्रस्य गर्हितः । प्रतिग्रहेण विप्राणां ब्राह्मं तेजो विनश्यति (४।१८६) ।

“प्रतिग्रहीतुर्यत्पुण्यं दातारमधिगच्छति । दातुश्चैव हि यत्पापं प्रतिग्राहिणमुच्छति ॥

“प्रायश्चित्तमतः कार्यं भीरुणा चानुतापिना ॥

२०

“यद्गर्हितेनार्जयन्ति कर्मणा ब्राह्मणा धनम् । तस्योत्सर्गेण शुद्ध्यन्ति जपेन तपसैव च (११।१९३)” ॥

इति । उत्सर्गेण त्यागेन । जपेन वेदपारायणगायत्र्यादिजपेन । तपसा कुच्छ्रचान्द्रायणादिना च

शुद्ध्यन्तीत्यर्थः । वृद्धमनुः—

“कुषेस्तु विंशकं भागं वाणिज्यात् षष्ठमंशकम् । प्रतिग्रहे तुरीयांशं त्यक्त्वा पापात्प्रमुच्यते ॥ इति ।

व्यासः—

२५

“वाणिज्यस्याष्टमं भागं भागं विंशतिमं कुषेः । प्रतिग्रहे चतुर्थांशं त्यक्त्वा पापैः प्रमुच्यते ॥

“अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति जपैस्तीर्थनिषेवया ॥ इति । चतुर्विंशतिमते—“प्रतिषिद्धेषु दानेषु

षष्ठांशं परिकल्पयेत् ॥ इति । हेमाद्रौ—“अथ चेत्प्रतिगृह्णाति ब्राह्मणो वृत्तिकर्षितः ॥

“दशांशमार्जितात् दद्यादेवं तत्र न हीयते । गृहीतात् षोडशांशं तु पञ्चमांशमथापि वा ॥

अत्राभियुक्तैर्व्यवस्था दर्शिता—पञ्चदोषदुष्टप्रतिग्रहे साङ्गं द्रव्यत्यागं कुर्यात् ।

३०

“अज्ञानाद्यदि वा मोहादसद्द्रव्यं प्रगृह्य तु । सर्वं द्रव्यं परित्यज्य चान्द्रायणमथाचरेत् ॥ इति

स्मरणात् । त्यक्तं च द्रव्यं ब्राह्मण एव गृहीयात् । ‘प्रहीणं ब्राह्मणस्येति’ स्मरणात् । एवं कृत्वा

जपतपोभ्यां शुद्धिः कार्या । त्रिचतुरदोषदुष्टस्य दरिद्रस्य चतुर्थांशत्यागः । आढ्यस्य त्वर्धत्यागः कार्यः ।

‘असत्प्रतिग्रहे तु त्वर्धं त्यक्त्वा पापात्प्रमुच्यते’ इति स्मरणात् । दोषद्वययुक्तस्य पञ्चमांशत्यागः ।

एकदोषदुष्टस्य षष्ठांशत्यागः । दरिद्रस्योभयत्रापि दशांशत्यागः षोडशांशत्यागो वा कार्यः । सर्वत्र द्रव्यत्यागानन्तरं जपादिरूपं प्रायश्चित्तं च कर्तव्यम् । कुष्णाजिनकालपुरुषतिलधेनूभयतो-
मुखीमहिषीमेषीदानादीनां निषिद्धप्रधानद्रव्याणां प्रधानद्रव्यं दक्षिणाद्यङ्गद्रव्यस्य चतुर्थांशं च
त्यक्त्वा प्रायश्चित्तं च कार्यम् । अन्ये तु प्रधानद्रव्यं परित्यज्य दक्षिणाद्यङ्गद्रव्यं स्वीकृत्य
५ प्रायश्चित्तं कार्यमिति । स्वल्पद्रव्यपरिग्रहे प्रायश्चित्तमुक्तं षड्विंशन्मते “भिक्षामात्रे गृहीते तु पुण्यं
मन्त्रमुदीरयेत् ” ॥ इति । हारीतः—“ मणिवासोगृहादीनां प्रतिग्रहे सावित्र्यष्टसहस्रं जपेत् ” ॥
याज्ञवल्क्यः—(प्रा. २९०)

“ गोष्ठे वसन् ब्रह्मचारी मासमेकं पयोव्रतः । गायत्रीजप्यनियतः शुध्यतेऽसत्प्रतिग्रहात् ” ॥ इति ।
अत्र जपसंख्या मनुना दर्शिता (१२।२९४)

१० “जापित्वा त्रीणि गायत्र्याः सहस्राणि समाहितः । मासं गोष्ठे पयः पीत्वा मुच्यतेऽसत्प्रतिग्रहात् ” ॥ इति ।
एतच्च दातृद्रव्ययोरुभयोरसत्त्वे वेदितव्यम् । अन्यतरस्यासत्त्वे तु षड्विंशन्मते दर्शितम्—
“ ऐन्दवेन मृगारेष्ट्या कदाचिन्मित्रविन्द्या । पवित्रेष्ट्या विशुध्यन्ति सर्वे घोराः प्रतिग्रहाः ” ॥ इति ।
“ देव्या लक्षजपेनैव शुध्यन्तेऽसत्प्रतिग्रहात् ” ॥ इति ।

यत्तु वृद्धहारीतवचनम्—“ राज्ञः प्रतिग्रहं कृत्वा मासमप्सु सदा वसेत् ॥
१५ “ षष्ठे काले पयोभक्षः पूर्णे मासे प्रमुच्यते । तर्पयित्वा द्विजान् कामैः सततं नियतव्रतः ” ॥ इति
तत् पञ्चदोषदुष्टप्रतिग्रहविषयमिति माधवीये ।

तुलापुरुषादिप्रतिग्रहे । तुलादिषोडशमहादानप्रतिग्रहे प्रातिस्विकं प्रायश्चित्तमुक्तं हेमाद्रौ ।
तदिदानीं निरूप्यते । तत्र देवस्वामी—“ तुलाप्रतिग्रहीता च पूर्वजो विषयातुरः ।

“ सोऽरण्ये निर्जले देशे भवति ब्रह्मराक्षसः । नास्त्येव निष्कृतिस्तस्य नवलक्षजपाद्वते ” ॥

२० देवलः—“ ऋणापकरणार्थं वा तथा यागार्थमेव वा । द्विजः प्रतिग्रहं कृत्वा तदर्धं विनियोजयेत् ॥
“ सुवर्णरत्नरजतैस्तुलाश्च त्रिविधाः स्मृताः । तासां प्रतिग्रहे विप्रः ऋणयागादिभिर्विना ॥

“ रौरेवे नरके घोरे ऋत्विग्भिः सह मज्जति ” ॥ इति । ऋत्विजो बह्मा सदस्यो होतारो जापकाश्च ।

देवीपुराणे—

“ आत्मतुल्यसुवर्णं यः प्रतिगृह्य धनातुरः । अकृत्वा निष्कृतिं तस्य ऋत्विग्भिः सह राक्षसः ” ॥ इति ।

२५ गारुडपुराणे—

“ श्रीशैले हेमकूटे वाऽप्यचले गन्धमादने । अहोबिले वैकटाद्रौ काश्याविषु विशेषतः ॥

“ सूर्योपरागकालेषु अन्यकालेषु पर्वसु । प्रतिगृह्य तुलां विप्रो राज्ञो यो भोगलालसः ॥

“ सोऽरण्ये निर्जले देशे दृष्टिहीनो निराश्रयः । सहस्राब्दं भवेद्रक्षो नवलक्षजपाद्वते ” ॥ इति ।

ब्रह्माण्डे—

३० “ सेत्वादिपुण्यतीर्थेषु उपरागादिपर्वसु । पूर्वजः प्रतिगृह्णाति तुलां राज्ञो विशेषतः ॥

“ भवेद्रक्षः सहस्राब्दं दृष्टिहीनो निराश्रयः । निष्कृतिस्तस्य गायत्र्या नवलक्षजपादिह ॥

“ यदा प्रतिग्रहस्तस्यास्तदा पातित्यमर्हति । सन्ध्यादिनित्यकर्माणि विफलानि न संशयः ॥

“ सावित्रीपतितं विद्यात् पुनः संस्कारमर्हति ” ॥

स्कान्देऽपि—

“प्रतिगृह्य तुलामाशु नवलक्षं जपेद्बुधः । चतुर्थीशव्ययं कृत्वा यज्ञं वा सर्वदक्षिणम् ॥
“तदर्धं ब्रह्मणः प्रोक्तं तदर्धं सदसस्पतेः । होतृणां द्वारपालानां पाठकानां महामुने ॥
“जापकानामिदं प्रोक्तं तयोरर्धं विचक्षणैः ॥” तयोः ब्रह्मसदस्ययोः । अर्धं सर्वेषां प्रायश्चित्तमित्यर्थः ।
मार्कण्डेयपुराणे तु—“तुलाप्रतिग्रहीता च प्रायश्चित्तमिदं चरेत् ।

५

“चतुर्थार्धांशभागेन परिषद्विधिपूर्वकम् । चतुर्थार्शं धनं सर्वं चतुर्था भागमाचरेत् ॥
“अनुवादे भागमेकं भागमेकं विधायके । भागः परिषदि प्रोक्तः शेषं कृच्छ्रादिषु न्यसेत् ॥”
मार्कण्डेयपुराणे तु—

“प्रधानं संपरित्यज्य यागार्थं दक्षिणां वहन् । तस्यैव निष्कृतिरियं मुनिभिः परिकीर्तिता ॥
“परेषुर्वा तदानीं वा स्नात्वा शुचिरलंकृतः । नीलवर्णी च गामेकां श्यामां वाऽऽदाय निर्गदाम् ॥ १०
“आपोहिष्ठादिभिर्मन्त्रैः प्राङ्मुखीं मार्जयेज्जलैः । रक्तेन वाससाच्छाद्य त्रिः परिक्रम्य यत्नतः ॥
“तन्मूत्रस्नानमासाद्य जपेन्मन्त्रमिदं सुधीः । हिरण्यगर्भ इत्येनामृचमान्तं समुच्चरन् ॥
“विष्णुर्येनिमित्येताभिरान्ताभिरनुमन्त्रयेत् ॥

“स्थित्वा मुहूर्तं गोगर्भं स्वमूर्धानं निधाय च । अष्टयोनिमष्टपुत्रामनुवाकं जपेद्बुधः ॥
“ततः परं पुनर्जातं मन्येतात्मानमादृतः । स्वयं पिताय वाचार्यो जातकर्मादि भावयेत् ।

१५

“व्रतान्नं तत्र तद्द्रव्यं दत्वाचार्यं क्षमापयेत् । ततः पूतो भवेदेषु दक्षिणामात्रसंग्रहे ॥
प्रधानत्यागाभावे पूर्वोक्तैरष्टलक्षजपादिभिः पूतो भवति । तथा च हेमाद्रौ—

“अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति ह्यकुत्वा निष्कृतीरिमाः । सहस्राब्दं भवेद्रक्ष आचार्यो द्रव्यलोभतः ॥
“ब्रह्मा सदस्पतिश्चैव तदर्धं राक्षसो भवेत् । द्वारपा ऋत्विजश्चैव होतारो जापका अपि ॥
“तयोरर्धं भवेयुस्ते राक्षसा घोररूपिणः ॥

२०

“आचार्यार्धं जपः प्रोक्तो ब्रह्मणः सदसस्पतेः । तयोरर्धं तु होतृणामितरेषामिति स्थितिः ॥
नागरखण्डे—“एवं हिरण्यगर्भस्य ग्रहणे निष्कृतिः पुरा । दृष्ट्वा मन्वादिभिर्विप्रैर्धर्मशास्त्रपरायणैः ॥
“अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति प्रायश्चित्तैर्जडोदितैः ॥

ब्रह्माण्डघटविषये—

“ततः परं विशुद्ध्यर्धादिह लोके परत्र च । पुनः संस्कारविधिना ह्यभ्यसेद्वेदमातरम् ॥
“ब्रह्मोपदेशं तत्रापि कुर्यादाचार्यवाक्यगैः । ततः परं जपेद्वेदमातरं प्रत्यहं सुधीः ॥
“प्रतिग्रहपरास्त्रेषु विमुखो विष्णुमादरात् । चिन्तयन्वर्तयन् विप्रः सुखी भव परत्र च ॥

२५

“एवं कृत्वा द्विजो यस्तु निष्कृतिं शुद्धमानसः । तुलाप्रतिग्रहे राजन् शुद्धो भवति नान्यथा ॥
“अकुत्वा निष्कृतीरेता एकां वापि नरेश्वर । सन्ध्यादि नित्यकर्माणि पितृकर्माणि यानि च ॥
“न फलन्तीह सर्वाणि भस्मनि न्यस्तहव्यवत् । पुनःसंस्कारमात्रेण पुनरायान्ति तानि वै ॥
“ततः प्रतिग्रहीता तु आत्मदेहविशुद्धये । कुर्याद्वै विरजाहोमं पञ्चगव्यमनन्तरम् ॥ इति ।
हिरण्यगर्भविषये हेमाद्रौ—

३०

“पूर्वजो द्रव्यलोभेन ऋणयागादिभिर्विना । गर्भं स्वर्णमयं धृत्वा ऋत्विग्भिः सह राक्षसः ॥
पाद्मे—“हिरण्यगर्भं भूपालात् पूर्वजो भोगलालसः । प्रतिगृह्य स शीघ्रेण नर्कचारी भवेद्बुवि ॥
“ऋत्विजः कीकसा नाम पिशाचाः संभवन्त्यथ । कथंचिन्निष्कृतीर्दृष्ट्वा पुनर्गर्भाच्च चान्यथा ॥ ३५

देवीपुराणे—

“ दक्षिणामात्रमालम्ब्य प्रधानं संपरित्यजेत् । तथापि धर्मयागादिं कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ॥

“ शेषयेद्यस्तु मोहेन वृत्त्यर्थं भोगलालसः । तस्योपनयनं भूयो जननं गर्भगोलतः ॥

“ पञ्चायुतेन शम्भोर्वा ह्यभिषेकेण मुच्यते । अष्टलक्षजपो देव्याः कूष्माण्डायुतहोमतः ॥

५ “ चतुर्भागव्ययो वापि यज्ञो वा सर्वदक्षिणः । एवं कुर्यात् द्विजो यस्तु तस्माद् दोषात्प्रमुच्यते ” ॥

देवलः—

“ ब्रह्माण्डं यस्तु गृह्णाति द्विजः क्रत्वादिभिर्विना । ऋत्विग्भिः सह दुष्टात्मा राक्षसो भवति ध्रुवम् ” ॥

मार्कण्डेयः—

“ ब्रह्माण्डं पुण्यतीर्थेषु प्रतिगृह्णाति यो द्विजः । निष्कृतिस्तस्य नास्तीह वसुलक्षजपादृते ” ॥

१० ब्रह्मकैवर्ते—

“ ब्रह्माण्डघटसंज्ञं तु प्रतिगृह्णाति यो द्विजः । अष्टलक्षजपादस्य निष्कृतिर्ब्रह्मराक्षसात् ” ॥ इति ।

गालवः—

“ ब्रह्माण्डं यो द्विजो धृत्वा वसुलक्षं जपेद्दिह । पूतो भवति दुष्टात्मा इह लोके परत्र च ॥

“ नियुतेनाभिषेकस्य शम्भो रुद्रविधानतः । चतुर्भागव्ययं कृत्वा यज्ञं वा बहुदक्षिणम् ॥

१५ “ एषैव निष्कृतिस्तस्य ऋत्विग्भिः सहितस्य च । अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति सहस्राब्दं पिशाचता ” ॥

भविष्योत्तरे—

“ आचार्यार्थं तयोः प्रोक्तं प्रायश्चित्तमिदं प्रभो । द्वाःस्थानां हि तदर्थं स्याद्विद्विषां हि पूर्ववत् ॥

“ अथवा तच्चतुर्भागव्ययं तु कुरुते द्विजः । अन्यथा निष्कृतिर्नास्ति दानैस्तीर्थावगाहनैः ॥

“ आचार्यं प्रविशेत्पापं राज्ञो दानाधिकारिणः । पादहीनं तयोः प्रोक्तं शेषं सर्वेषु संविशेत् ॥

२० “ प्रायश्चित्तैर्विना राजन्न पुनन्ति प्रतिग्रहात् । तस्मादिदं प्रकर्तव्यं प्रायश्चित्तं द्विजातिभिः ” ॥ इति ।

कल्पतरुविषये मार्कण्डेयः—“ आपत्स्वपि सदा विप्रो न गृह्णीयादिमं तरुम् ।

“ यान्यस्य सन्ति पर्णानि फलानि कुसुमानि च । तावतीस्तु समा भूयाद्राक्षसो निर्जने वने ॥

ऋत्विग्भिः ब्रह्मणा सार्धमधःपादविवर्जितः ” ॥ इति ।

गारुडे—

२५ “ न द्विजः क्वापि गृह्णीयात् बहुभिः कारणैर्विना । तरुमेनं पर्णवन्तं रक्षो भवति कानने ॥

“ दृष्ट्या पथ्यां विना राजन् ऋत्विग्भिः सह निर्जले । यावन्ति तस्य पर्णानि तावदब्दं नराधिप ” ॥ इति ।

गौतमः—

“ द्विजो ऋणविमुक्त्यर्थं गृह्णीयात्कल्पभूरुहम् । यागार्थं स्वकृतग्रामतटाकादिविनाशने ॥

“ सर्वं तदर्थं सहसा व्ययं कृत्वा न दोषभाक् । शुद्धो भवति मानुष्ये न भवेद्ब्रह्मराक्षसः ” ॥ इति ।

३० मार्कण्डेयपुराणे—

“ प्रतिगृह्य द्विजो मोहात् तरुमेनं सुखासये । निष्कृतिस्तस्य नास्तीह नरकादेकविंशतेः ॥

“ कथंचिन्निष्कृतिर्दृष्टा मनुनारदगालवैः । अष्टलक्षाद्देमातुश्चतुर्थीशव्ययेन वा ॥

“ अभिषेकेण वा शम्भोर्भूमिर्वा त्रिः परिक्रमात् । रामसेत्वादितीर्थेषु व्यब्दाब्दस्नानतोऽपि वा ॥

“ एता निष्कृतयो दृष्टास्तरारेतस्य संग्रहे ” ॥

३५ तत्रैव—“ बाहुजादेकगुणितं पादजाद्विगुणं चरेत् । मुखजादुक्तमानेन ऊरुजात् क्षत्रवन्धुप ॥

“ एताभ्यो निष्कृतिभ्यश्च गतिर्नान्यत्र विद्यते ” ॥ इति ।

गोसहस्रप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । गोसहस्रप्रतिग्रहे देवलः—

“ तुलायां गोसहस्रेषु आचार्यस्य पुनर्भवः । आब्रह्मणोऽद्दपर्यन्तं नास्ति भूमौ पिशाचतः ” ॥

पिशाचत्वाच्चित्तिर्नास्तीत्यर्थः । **मार्कण्डेयः—**

“ धृत्वाग्रजो गोसहस्रं राज्ञोऽन्यस्मात् द्विजन्मनः । नवलक्षं जपेद्देव्याः पुनःसंस्कारमर्हति ” ॥ ५

मत्स्यपुराणे—

“ पुण्यक्षेत्रे पुण्यतीर्थे सूर्याचन्द्रमसोर्ग्रहे । धेनूनां यः सहस्रं च प्रतिगृह्य धनातुरः ॥

“ भुवः प्रदक्षिणं कृत्वा नवलक्षं जपेद्बुधः । केशानां वपनं कृत्वा पुनःसंस्कारमर्हति ” ॥

राजविषये—

“ सहस्रधेनुदाने तु आचार्यत्वं यदि वजेत् । तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति नवलक्षजपादृते ॥

१०

“ भूमेः प्रदक्षिणं कृत्वा केशानां वपनं पुनः । प्रायश्चित्तेन पूतात्मा पुनःसंस्कारमर्हति ” ॥

कूर्मपुराणे—

“ सहस्रधेनुदाने तु आचार्यो यदि लोभतः । भूमेः प्रदक्षिणं कृत्वा नवलक्षं जपेद् द्विजः ॥

“ तदशक्तो महाशम्भोर्नमकैश्चमकैः शुभैः । कृत्वाऽभिषेकं विधिवत् अयुतं प्रयुतं तु वा ॥

“ सर्वव्ययं च यागे वा कृत्वा शुद्धिमवाप्नुयात् ” ॥

१५

नागरखण्डे—“ ब्रह्मा सदस्यः पूर्वोक्तप्रायश्चित्तार्थमर्हति ।

“ तदर्धं द्वारपालानां पाठकानां तथैव च । होतॄणां जापकानां च पूर्ववन्मुनिभिः स्मृतम् ” ॥

लिङ्गपुराणे—

“ तुलायां गोसहस्रे च आचार्यो यद्धनं हरेत् । अकृत्वा तद्व्ययं धर्म्यं पत्नीपुत्रपरिष्कृतः ॥

“ तत्पत्नीनां च पुत्राणां मनुजानां जनाधिप । हव्यकव्येषु यो भोक्ता ये वा संबन्धिवान्धवाः ॥ २०

“ ते वै कृच्छ्रद्वयं कुर्युः निष्कृतिः कथितोत्तमैः ” ॥

हिरण्यकामधेनुप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । हिरण्यकामधेनुविषये महाभारते—

“ राज्ञां पापनिबद्धानां सर्वदा पापचेतसाम् । पापनिर्मोचनी तेषां कामधुक् पुण्यवर्धनी ॥

“ एतादृशीं पुण्यरूपां स्वर्णकामदुहं द्विजः । प्रतिगृह्णाति यो लोभात् स सद्यः पतितो भवेत् ॥

“ अष्टलक्षजपाद्राजन् व्ययाद्वा अष्टभागतः । अभिषेकेण वा शम्भोः यज्ञाद्वा सर्वदक्षिणात् ॥ २५

“ एतैः शुद्धिमवाप्नोति ह्युभयोर्लोकयोरपि ” ॥

कौर्मै—“स्वर्णकामदुहं राज्ञा स्वर्चितां शास्त्रवर्त्मना । प्रत्यगृह्णाद् द्विजो यस्तु स सदा सूतकी भवेत् ॥

“ प्रायश्चित्ती भवेत्सद्यः पुनर्ब्रह्मोपदेशतः । अष्टलक्षं जपं कृत्वा प्रत्यहं विधिपूर्वकम् ॥

“ धनस्याष्टमभागेन प्रायश्चित्तिं समाचरेत् । अभिषेकेण वा विप्रो यज्ञात्सर्वस्वदक्षिणात् ॥

“ एतेषूक्तेषु राजेन्द्र प्रायश्चित्तेन बुद्धिमान् । इह लोके परत्रापि शुद्धिमवाप्नोत्यनुत्तमाम् ” ॥ ३०

हिरण्यश्वप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । हिरण्यश्वप्रतिग्रहे कौर्मै—

“ हिरण्यवाजिनं गृह्णन् द्विजो लोभपरायणः । जन्मत्रये राक्षसत्वमनुभूय पिशाचताम् ॥

“ तदन्ते भुवमासाद्य रासभत्वमवाप्नुयात् । तदन्ते रोगवान् भूत्वा नरकं याति पाण्डव ” ॥ इति

वामनपुराणे—

“ हिरण्याश्वं द्विजो लोभात् राज्ञः पुण्यदिनेष्विह । प्रतिगृह्यात्मभोगार्थं स भवेद्ब्रह्मराक्षसः ।

“ ततः खरत्वमासाद्य रोगवान् जन्मनां त्रये । ततो नरकमासाद्य तिष्ठत्या चन्द्रतारकम् ॥

“ तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति ह्यष्टलक्षजपादृते ” ॥ इति ।

५ ब्रह्मकैवर्ते—“हिरण्याश्वं द्विजो धृत्वा तस्य निष्कृतिरीरिता । अष्टलक्षजपाद्वापि नियुताद्वाभिषेकतः ॥

“ अष्टमांशव्ययेनापि यागैर्वा सर्वदक्षिणैः । ततः शुद्धिमाप्नोति पुनर्मौञ्जीविधानतः ॥

“ तद्ब्रह्मा च सदस्यश्च प्रायश्चित्तार्धमर्हतः । द्वाःस्थास्तज्जापका राजन्नर्हन्त्यर्धार्धमंशतः ॥

“ अन्यथा दोषवन्तस्ते न संभाष्याः कदाचन । न संस्पृश्यास्त्वपाङ्गकेया नालपेत्तानिह द्विजान् ” ॥

हिरण्याश्वरथप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । हिरण्याश्वरथप्रतिग्रहे ब्रह्मकैवर्ते—

१० “ हिरण्याश्वरथं यस्तु द्विजो गृह्णन्नराधिपात् । सोऽरण्ये निर्जले देशे ऋत्विभिः सह राक्षसः ॥

“ तस्यैषा निष्कृतिर्दृष्टा मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः । नवलक्षजपाद्वापि नियुताद्वाभिषेकतः ॥

“ अष्टमांशव्ययेनापि प्रायश्चित्तविधानतः । तदन्ते वपनं कृत्वा पुनःसंस्कारमर्हति ॥

“ एवं चेच्छुद्धिमाप्नोति प्रायश्चित्तेन भूयसा । अन्यथा तु न शुद्धः स्यान्न संभाष्यः कदाचन ॥

“ ब्रह्मादीनां तदर्धांशन्यायः पूर्वोक्त इष्यते ” ॥ इति ।

१५ हिरण्यहस्तिप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । हिरण्यहस्तिप्रतिग्रहे ब्रह्माण्डपुराणे—

“ हिरण्यहस्तिनं धृत्वा पुण्यकालेषु पर्वसु । यो विप्रो लोभमोहेन राज्ञो दानार्थिनो नृप ॥

“ न तस्य निष्कृतिर्दृष्टा दशलक्षजपादृते । लक्षहोमेन कूष्माण्डैः शुद्धिमाप्नोत्यनुत्तमाम् ” ॥ इति ।

ब्रह्मकैवर्ते—

“ हिरण्यहस्तिनं भूपात् द्विजो लोभविमोहितः । पुण्यकालेषु पुण्येषु तीर्थेष्वायतनेषु च ॥

२० “ प्रतिगृह्य ततो लोभादकृत्वा निष्कृतिं नृप । सोऽरण्ये निर्जले देशे राक्षसोऽम्बरचारवान् ॥

“ तस्यैव निष्कृतिर्नास्ति नवलक्षजपादिना । लक्षहोमेन कूष्माण्डैः शुद्धिमाप्नोति दैर्हिक्कीम् ।

“ अष्टमांशव्ययेनापि प्रायश्चित्तविधानतः । केशानां वपनं कृत्वा पुनःसंस्कारमाचरेत् ॥

“ तदर्धं ब्रह्मणः प्रोक्तं तथैव सदसस्पतेः । तदर्धं द्वारपालानां जापकानां तदर्धतः ॥

“ प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं हेमहस्तिप्रतिग्रहे ” ॥ इति ।

२५ पञ्चलाङ्गलप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । पञ्चलाङ्गलप्रतिग्रहे वसिष्ठसंहितायाम्

“ लाङ्गलं मुखजो धृत्वा पञ्च वाप्येकमेव वा । तस्यैव निष्कृतीर्वक्ष्ये शृणु नान्यमनाः प्रभो ॥

“ दशलक्षजपं वाथ प्रयुतं त्रिभिषेचनम् । चतुर्भोगव्ययं कुर्याद्यज्ञं वा सर्वदक्षिणम् ॥

“ एतत्पापविशुद्ध्यर्थं परेशुर्वाप्यन्यतोऽपि वा । मार्तण्डस्योदयादर्शाक् स्नानं कृत्वा यथार्हतः ॥

“ नित्यकर्म समाप्याशु यावत्सूर्योदयो भवेत् । तावद्गत्वा जलाधारं नदीं पुष्करिणीमपि ॥

३० “ कण्ठदघ्नजले स्थित्वा स्मरन्नारायणं विभुम् । मुखमुद्धृत्य मार्तण्डं पश्यन्नुत्तानपाणिगः ॥

“ अघमर्षणसूक्तं च जपन् पापविमुक्तये । यावदस्तं गतो भानुस्तावत्कालं जपेत्सुधीः ॥

“ मध्ये माध्याह्निकं कृत्वा ब्रह्मयज्ञं च तर्पणम् । मनसा देवमाराध्य पुनर्गत्वा जलं जपेत् ॥

“ सायं सन्ध्यामुपासित्वा सायं होममनन्तरम् । मौनं त्यक्त्वा तदा राजन् मिताहारं समाचरेत् ॥

“ ओदनं यावकं भक्षेद्यथा मुद्गभक्षणम् । अधःशायी भवेत्तत्र पापं कृतमनुस्मरन् ॥

३५ “ प्रभातायां तु शर्वर्या पूर्ववद्व्रतमाचरेत् ॥

“ एवं तु मण्डले पूर्णे विरजाहोममाचरेत् । उपोष्य दिनमेकं च पञ्चगव्यं पिबेत्ततः ।
“ ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात् तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणाम् । पश्चात्स्वयं प्रभुर्जीयात् तद्विप्रानुज्ञया सह ” ॥ इति ।

एतत् प्रायश्चित्तमाचार्यस्य । सर्वेषां प्रायश्चित्तमुक्तं मात्स्ये—

“ ब्रह्मा सदस्पतिश्चैव तदर्थं भागमर्हतः । द्वारस्थानां तदर्थं स्यात्तदर्थमितरेषु वै ॥

“ प्रायश्चित्तविधिश्चैव नान्यथा गतिरस्ति हि ” ॥ इति ।

धराप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । धराप्रतिग्रहे शिवपुराणे—

“ धरामभ्यर्च्य गन्धाद्यैर्यो राजा पुण्यकालतः । विप्रसात्कुरुते तत्र पुण्यस्यान्तो न विद्यते ।

“ गृह्णीयाद्यो धरामेनां पुण्यकालेषु पर्वसु । तस्य विप्रस्य चास्तीह न पुनर्जन्म राक्षसात् ॥

“ ब्रह्मोपदेशः कर्तव्यः सावित्रीदानमेव च । ततः परं जपेद्देव्या दशलक्षमतन्द्रितः ” ॥ इति ।

पाद्मे—“ धरामभ्यर्चितां राज्ञा धर्मशास्त्रानुसारतः । यो विप्रः प्रतिगृह्णीयात् द्रव्यलोभपरायणः ॥ १०

“ यज्ञादिकमकृत्वा चेत् भवति ब्रह्मराक्षसः । दशलक्षजपाद्देव्यास्तस्य निष्कृतिरिति ॥

“ सदस्यब्रह्मणोरर्थं द्वारपानां तदर्थकम् । तदर्थं जापकानां च होतॄणां च तथैव च ॥

“ मार्जनं सर्वदानानामाचार्याणां स्वयंभुवा । उक्तं पुरा देवमध्ये लोकस्यास्य हितैषिणा ॥

“ अन्यथा मृत्युमाप्नोति कुर्यादेतत्प्रयत्नतः ” ॥ इति ।

विश्वचक्रप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । विश्वचक्रप्रतिग्रहे मार्कण्डेयः—

“ विश्वचक्रं द्विजो धृत्वा निर्निमित्तेन लोभतः । अरण्ये निर्जले देशे भवति ब्रह्मराक्षसः ॥

“ न तस्य पुनरावृत्तिः सहस्राब्दं महाभयात् । एषा वै निष्कृतिर्दृष्टा वसिष्ठेन महात्मना ।

“ चतुर्भागव्ययं कृत्वा प्रायश्चित्तविधानतः । पुनःसंस्कारविधिना पुनःसंस्कारमाचरेत् ॥

“ ब्रह्मोपदेशं सावित्रीमभ्यसेद् द्विजपुङ्गवात् । प्रयुतेनाभिषेकस्य निष्कृतिस्तस्य नान्यथा ॥

“ तदर्थं ब्रह्मणः प्रोक्तं तथैव सदस्पतेः । द्वारपानां जापकानां तयोरर्थं प्रकल्पयेत् ” ॥ इति । २०

कल्पलताप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । कल्पलताप्रतिग्रहे लिङ्गपुराणे—

“ दत्तामिमां कल्पलतां राजभिः पूजितां शुभाम् । यो गृह्णीयात् द्विजः कामात् स भवेद्ब्रह्मराक्षसः ॥

“ यावज्ज्योतींषि तिष्ठन्ति तावत्तिष्ठति राक्षसः । तद्ब्रह्मा च सदस्यश्च द्वारपा जापका अपि ॥

“ राक्षसाः क्रूरकर्माणो भवन्त्येव न संशयः । सहस्राब्दं तदर्थं च तदर्थं च यथाक्रमम् ॥

“ प्रायश्चित्तं कल्पतरोर्यत्तदेव समाचरेत् ” ॥ इति ।

सप्तसागरप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । सप्तसागरप्रतिग्रहे लिङ्गपुराणे—

“ मुखजो धनलोभेन गृह्णीयात्सप्तसागरम् । कुलेन सह संयुक्तो राक्षसो निर्जले भवेत् ॥

“ यागार्थं दक्षिणां गृह्णन् प्रधानत्यागमाचरेत् । योगे सर्वव्ययं कृत्वा नास्ति तस्य पिशाचता ।

“ प्रायश्चित्तेन पूतात्मा इह लोके परत्र च । चतुर्भागव्ययं वापि प्रायश्चित्तं समाचरेत् ॥

“ तस्योपनयनं भूयः सावित्रीदानमेव च ॥

“ ब्रह्मा सदस्यस्तस्यार्थं प्रायश्चित्तिमिहार्हतः । द्वारस्थानां तयोरर्थं जापकानां यथाक्रमम् ” ॥ इति ।

चर्मधेनुप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । चर्मधेनुप्रतिग्रहे वामनपुराणे—

“ धृत्वा चर्ममयीधेनुं धनलोभपरायणः । सप्तजन्मसु राजेन्द्र विपिने निर्जनेऽजले ॥

“ कृतं पापमनुस्मृत्य स भवेद्ब्रह्मराक्षसः ।

“ तस्यैषा निष्कृतिर्दृष्टा देव्या द्वादशलक्षतः । तस्योपनयनं भूयः पुनःसंस्कारकर्मणा ” ॥ इति । ३५

पराशरः—

“मुखजो यस्तु गृह्णीयात् चर्मधेनुं नृपात्मजात् । ग्रहणादिषु कालेषु पुण्यतीर्थेषु येषु च ॥

“चतुर्भागव्ययं कुर्यात् प्रायश्चित्तविधानतः । देव्या द्वादशलक्षेण नियुतेनाभिषेकतः ॥

“एषामन्यतमेनैव पुनःसंस्कारतः शुचिः । सदस्यब्रह्मणोरर्धमृत्विजामपि पूर्ववत् ” ॥ इति ।

५. गारुडराणे—“तुलायां गोसहस्रे च लाङ्गले सप्तसागरे । विश्वचक्रे चर्मधेनौ महाभूतघटे तथा ॥

“हेमहस्तिरथे चैव आचार्यं मृत्युराविशेत् । तस्मात्तन्मार्जनं कर्म मृत्युत्तरणहेतवे ॥

“तदानीं वा परेद्युर्वा पक्षे वा पञ्चमे दिने । मासमात्रे त्रिमासे वा वत्सरे पूर्णतां गते ॥

“प्रायश्चित्तेन पूतात्मा पुनःसंस्कारमर्हति ॥

“व्यवहारक्षमो भूयादुभयोर्लोकयोरपि । अन्यथा दोषमाप्नोति न मुक्तिर्ब्रह्मराक्षसात् ” ॥ इति ।

१०. महाभूतघटप्रतिग्रहे प्रायश्चित्तम् । महाभूतघटप्रतिग्रहे देवलः—

“पञ्चभूतघटे गृह्णन् विप्रो भवति राक्षसः । सहस्राब्दं वने घोरे निर्जले निर्जने वसेत् ॥

“पक्षमात्रं जपेद्देवीं द्विजः पापविशुद्धये । तस्योपनयनं भूयः पुनःसंस्कारकर्मणा ॥

“नियुतेनाभिषेकेण चतुर्भागव्ययेन च । नान्यथा शुद्धिमाप्नोति ब्रह्मराक्षसदेहतः ॥

“तदर्थं ब्रह्मणः प्रोक्तं तथैव सदसस्पतेः । द्वाःस्थानां जापकानां च तयोरर्थं प्रकल्पयेत् ” ॥ इति ।

१५. स्कान्दे तु—“प्रतिगृह्य तुलादीनि राज्ञः पापपरायणात् । प्रायश्चित्तेन पूतात्मा पुनःसंस्कारमर्हति ॥

“गङ्गायां मौसलस्नानाच्छुद्धिमाप्नोति दैहिकीम् । रेवायां तु तथा स्नात्वा शुद्धिमाप्नोति पौर्विकीम् ॥

“प्रातरारभ्य गण्डक्यामा सायं स्नानमाचरेत् । वर्षद्वयेन पूतात्मा ह्युभयोर्लोकयोः शुचिः ॥

“तथैव शोणभद्रायां पूर्वजः शुद्धिमाप्नुयात् । गौतम्यां नियतः स्नात्वा नित्यकर्मपरायणः ॥

“विंशत्या मौसलस्नानैरब्दमात्रेण शुध्यति । भीमरथ्यां महानद्यामर्धरात्रे जितेन्द्रियः ॥

२०. “जानुदध्ने जले स्थित्वा जपेन्मन्त्रं त्रियम्बकम् । सहस्रं पूर्णतां याति यावत्तावद्विरम्यते ॥

“एवं मासत्रयं कृत्वा शुद्धिमाप्नोति पौर्विकीम् । अखण्डायां तु कावेर्यां प्रातः स्नात्वा यथाविधि ॥

“नित्यकर्म समाप्याशु कण्ठदन्त्रे जले वसन् । जपेच्च पौरुषं सूक्तमष्टोत्तरशतं द्विजः ॥

“यद्वा समाप्तिर्भवति तदा मौनं परित्यजेत् । एवं कुर्यात्प्रतिदिनं शुद्धः स्याद्वतुमात्रतः ॥

“ताम्रपर्णीनदीतोये अवगाह्य दिनत्रयम् । त्रियम्बकं जपेन्नित्यं संख्यामनुपधारयन् ॥

२५. “दिनत्रये तु पूर्णेऽस्मिन् निर्विघ्नेन जनाधिप । पूतो भवति विप्रोऽसौ तुलादीनां प्रतिग्रहात् ॥

“धनुष्क्रोड्यां तुलादीनां ग्रहीता धनलोभतः । स्नात्वा मध्याह्नवेलायां गत्वा रामेश्वरालयम् ॥

“औपासनाग्नौ जुहुयाद्विरजाहोममादितः । अधःशायी भवेन्नित्यं मासमेकं निरन्तरम् ॥

“दुग्धाहारं फलाहारं द्योरेकं समाचरेत् । सेतुदर्शनमात्रेण ब्रह्महत्या विनश्यति ॥

“अर्वाचीनानि पापानि नश्यन्तीत्यत्र का कथा ” ॥ इति । आहिताग्निः संपूर्णदक्षिणेन पुनः

३०. स्तोमेन वा यजेत । ‘यो वा बहु प्रतिगृह्य गरगीर्णमिव मन्येत पुनःस्तोमेन यजेत’ इति श्रुतेः ।

‘उशनसः स्तोमेन गरगीर्णमिवात्मानं मन्यमानो यजेत’ इत्याश्वलायनसूत्रम् । (श्रौतसू. उ. ५।१)

उशनसस्तोमो नाम एकाहः पुनःस्तोम इति चास्यैव संज्ञा । गरः विषं गरो गीर्णो येन स गरगीर्णः । यो बहुप्रतिग्रहादिना पापादिभयादात्मानं गरगीर्णमिव मन्येत स एतेन यजेतेति नारायणीयवृत्तिः ।

इति प्रतिग्रहप्रायश्चित्तम् ।

यत्र प्रतिपदं प्रायश्चित्तं नोक्तं नोपलभ्यते वा तत्र साधारणं प्रायश्चित्तमुच्यते ।

अतिपातकिप्रायश्चित्तम् । तत्रानुपातकप्रायश्चित्तं विष्णुराह (३६।८)—

“ अनुपातकिनस्त्वेते महापातकिनो यथा । अश्वमेधेन शुध्यन्ति तीर्थानुसरणेन वा ” ॥ इति ।
तत्राश्वमेधः सार्वभौमराजविषयः “ राजा सार्वभौमोऽश्वमेधेन यजेत ” इति श्रुतेः (आप. श्रौ. सू. २०।२; सत्पाषाढसू. १४।१) । तीर्थस्नानमितरविषयम् ।

उपपातकिप्रायश्चित्तम् । उपपातकप्रायश्चित्तमाह स एव (३७।३६)

“ उपपातकिनस्त्वेते कुर्युश्चान्द्रायणं नराः । पराकमथवा कुर्युर्यजेयुर्गोसवेन वा ” ॥ इति ।
याज्ञवल्क्योऽपि (प्रा. २६५)—

“ उपपातकशुद्धिः स्यादेवं चान्द्रायणेन वा । पयसा वापि मासेन पराकेणाथ वा पुनः ” ॥ इति ।

संकरीकरणादिप्रायश्चित्तम् । संकरीकरणादेः प्रायश्चित्तमाह विष्णुः (३९।२२-४०।२)—

“ संकरीकरणं कृत्वा मासमश्रीत यावकम् । कुच्छ्रातिकुच्छ्रमथवा प्रायश्चित्तं तु कारयेत् ॥

“ अपात्रीकरणं कृत्वा तप्तकुच्छ्रेण शुध्यति । शीतकुच्छ्रेण वा शुद्धिः महासान्तपनेन वा । (४१।५)—

“ मलिनीकरणीयेषु तप्तकुच्छ्रं विशोधनम् । कुच्छ्रातिकुच्छ्रमथवा प्रायश्चित्तं विशोधनम् ॥ ” इति ।
मनुः (११।१२५)—

“ संकरापात्रकृत्यासु मासं शोधनमैन्दवम् । मलिनीकरणीयेषु तप्तः स्याद्यावकं त्र्यहम् ” ॥ इति । १५

अनुक्तानां सर्वेषां पापानां साधारणं प्रायश्चित्तमाह पराशरः (१२।७२)—

“ चान्द्रायणं यावकं च तुलापुरुष एव च । गवां चैवानुगमनं सर्वपापप्रणाशनम् ” ॥ इति ।

तुलापुरुषः कुच्छ्रविशेषः । पापगौरवलाघवानुसारेण चान्द्रायणादीन्यावृत्तान्यन्यावृत्तानि वा अनुष्ठेयानि ।

स एव (११।५३)—

“ सर्वेषामेव पापानां संकरे समुपस्थिते । दशसाहस्रमभ्यस्ता गायत्री शोधनी परम् ” ॥ इति । २०

शाङ्खिल्यितौ—“ कथयिक्यदुष्टभोजनप्रतिग्रहेष्वनादिष्टप्रायश्चित्तेषु सर्वेषु चान्द्रायणं प्राजापत्यं वा ” ॥ इति ।

शातातपः—“ अनुक्तेषु विधिं ज्ञात्वा प्राजापत्यं समाचरेत् । सर्वत्र सर्वपापेषु द्विजश्चान्द्रायणं चरेत् ” ॥

उशनाः—

“ यत्रोक्तं यत्र वा नोक्तमिह पातकनाशनम् । प्राजापत्येन कुच्छ्रेण शुध्यते नात्र संशयः ” ॥ इति । २५

मनुविष्णुविश्वामित्राः (११।२०९)—

“ अनुक्तनिष्कृतीनां तु पापानामपनुत्तये । शक्तिं चावेक्ष्य पापं च प्रायश्चित्तं प्रकल्पयेत् ” ॥ इति ।

याज्ञवल्क्यः (प्रा. २७५)—

“ देशं कालं वयः शक्तिं पापश्चावेक्ष्य यत्नतः । प्रायश्चित्तं प्रकल्प्यं स्याद्यत्र चोक्ता न निष्कृतिः ” ॥

स एव—

“ यदा यदा तु संकीर्णमात्मानं मन्यते द्विजः । तदा तदा तिलैर्होमो गायत्र्या वाचनं तथा ” ॥ इति ।

गौतमः (१९।१७-२०)—“ संवत्सरं षण्मासाश्चत्वारस्त्रयो द्वावैकश्चतुर्विंशत्यहो द्वाविंशहाः

षडहस्त्र्यहोहोरात्रः ” इति कालाः । एतान्येवानादेशे विकल्पेन क्रियेरन्नेनःसु गुरुषु गुरूणि लघुषु

लघूनि कुच्छ्रातिकुच्छ्रौ चान्द्रायणमिति सर्वप्रायश्चित्तम् ” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरे—“सर्वजन्मार्जितानीह भ्रूणहत्यादिकान्यपि । सर्वपापानि नश्यन्ति कुच्छ्रैर्द्वादशवार्षिकैः ॥

“जन्मप्रभृति यत् किञ्चित्पातकं चोपपातकम् । अर्वाक्तु भ्रूणहत्यायाः षडब्दान्नश्यति ध्रुवम् ॥

“अब्दात्तु सकृदभ्यस्तं बुद्धिपूर्वमसम्महतं । तच्छुद्ध्यत्यब्दकुच्छ्रेण महतः पातकादृते ” ॥ इति ।

त्रिंशत्कुच्छ्रा अब्दकुच्छ्रः कुच्छ्रः प्राजापत्यः । स च प्रतिनिधिना कार्यः ।

- १५ **रहस्यपापप्रायश्चित्तानि** । अथ रहस्यप्रायश्चित्तानि । यत्पापं कर्तव्यतिरिक्तनान्येन केनापि न ज्ञातं तद्रहस्यम् । तस्य प्रायश्चित्तमपि रहस्येव कर्तव्यम् । तथा च **यमहारीतौ**—
‘रहस्ये रहस्यं प्रकाशे प्रकाशम्’ इति । रहस्यत्वादेव नास्ति तत्र परिषदनुमत्यपेक्षा । तदाहतुर्बृहस्पतियाज्ञवल्क्यौ (प्रा. ३०१)—

“प्रख्यातदोषः कुर्वीत पर्षदोऽनुमतं व्रतम् । अनभिख्यातदोषस्तु रहस्यं व्रतमाचरेत् ” ॥ इति ।

- १० न च विना परिषदं व्रतज्ञानाभाव इति शङ्कनीयम् । शास्त्रज्ञस्य तद्विज्ञानसंभवात् । इतरेणापि बुद्धि-
मता विद्वद्गोष्ठ्यां केनचित् व्याजेनावगन्तुं शक्यत्वात् । रहस्यकृतं पापं स्वल्पेनापि जपादिना निर्वर्तते । अत एव प्राजापत्यादिव्रतानां जपादीनां च व्यवस्थामाह **मनुः** (११-२२६)—
“एतैर्द्विजातयः शोध्या व्रतैराविष्कृतैः नसः । अनाविष्कृतपापांस्तु मन्त्रैर्होमैश्च शोधयेत् ” ॥ इति ।
तत्र रहस्यानां साधारणं प्रायश्चित्तमाह स एव (११२४५-२४६, २४८)—

- १५ “वेदाभ्यासोऽन्वहं शक्त्या महायज्ञक्रिया क्षमा । नाशयन्त्याशु पापानि महापातकजान्यपि ॥
“यथैधस्तेजसा बलिः प्राप्तं निर्दहति क्षणात् । तथा ज्ञानाग्निना पापं कृत्स्नं दहति वेदवित् ॥
“सव्याहृतिकाः सप्रणवाः प्राणायामास्तु षोडश । अपि भ्रूणहनं मासात् पुनन्त्यहरहः कृताः ” ॥

बोधायनः (२।४।१८)—

“यदुपस्थकृतं पापं पभ्यां वा यत्कृतं भवेत् । बाहुभ्यां मनसा वाचा श्रोत्रघ्राणेन चक्षुषा ॥

- २० “सर्वं दहति निःशेषं प्राणायामैस्त्रिभिः कृतैः ” ॥

गौतमः (२५।७-१०) “अनार्जवपैशुनप्रतिसिद्धाचारानाद्यप्राशनेषु शूद्रायां च रेतः सिक्त्वा
अयोनौ च दोषवति च कर्मणि अभिसन्धिपूर्वेऽपि अञ्जिङ्गाभिरप उपस्पृशेत् । वारुणीभिरन्यैर्वा
पवित्रैः । प्रतिषिद्धवाङ्मनसापचारे व्याहृतयः पञ्च । सर्वास्वपो वा आचामेदहश्च माऽऽदित्यश्च
पुनात्विति । प्राता रात्रिश्च मा वरुणश्च पुनात्विति सायमष्टौ वा समिध आदध्यात् । देवकृतस्येति हुत्वैवं

- २५ सर्वस्मादेनसो मुच्यते मुच्यत” इति । अनार्जवमनृजुत्वं मानसं कर्मशाठ्यं वा । पैशुनं परपरिवादः ।
वाचिकं प्रतिसिद्धाचारः । नियमलोपः कायिकं अनाद्यस्यानेकविधस्योपभोगः अनाद्यप्राशनम् ।
एतदादौ दोषवति कर्मणि च ।

आपस्तम्बः (१।९।२६।७)—“अनाद्यानपयःप्रतिषिद्धभोजनेषु दोषवच्च कर्माभिसन्धिपूर्वकं
कृत्वाऽनभिसन्धिपूर्वं वा शूद्रायां च रेतः सिक्त्वा योनौ चाञ्जिङ्गाभिर्वारुणीभिश्चोपस्पृश्य प्रयतो

- ३० भवति । ओपूर्वाभिर्व्याहृतिभिः सर्वाभिः सर्वपापेष्वप्येव । आचमनादेव सर्वस्मात्पापात्
प्रमुच्यते । अष्टौ वा समिध आदध्यात् । देवकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा । मनुष्यकृतस्यैनसोऽ-
वयजनमसि स्वाहा । पितृकृतस्यैनसोऽवयजनमसि स्वाहा । आत्मकृतस्यैनसोऽवयजनमसि
स्वाहा । यद्विवा च नक्तं चैनश्चकुम् तस्यावयजनमसि स्वाहा । यत् स्वपन्तश्च जाग्रतश्चैनश्चकुम्-
तस्यावयजनमसि स्वाहा । यद्विद्वांसश्चाविद्वांसश्चैनश्चकुम्तस्यावयजनमसि स्वाहा । एनस

एनसोऽवयजनमसि स्वाहा । इत्येतैरष्टाभिर्हुत्वा सर्वस्मात् पापात्प्रमुच्यते । ऋतं च सत्यं चेत्यधमर्षणं त्रिरन्तर्जले पठेत् । सर्वस्मात्पापात् प्रमुच्यते । आयंगौः पृश्निकमीदिति वृचं च त्रिरन्तर्जले पठेत् । सर्वस्मात् पापात् प्रमुच्यते । द्रुपदादिवेन्मुमुचान इति एनामृचं त्रिरन्तर्जले पठेत् । सर्वपापात् प्रमुच्यते । हंसः शुचिषदित्येतामृचं त्रिरन्तर्जले पठेत् । सर्वपापैः प्रमुच्यते । अपि वा सावित्रीं गायत्रीं पच्छोऽर्धर्चशः समस्तामिति त्रिरन्तर्जले पठेत् । सर्वपापैः प्रमुच्यते । अपि वा व्याहृतीर्व्यस्ताः समस्ताश्चेति त्रिरन्तर्जले पठेत् । सर्वस्मात्पापात् प्रमुच्यते । अपि वा प्रणवमेव त्रिरन्तर्जले पठेत् । सर्वस्मात् पापात् प्रमुच्यते । पवित्रैर्मार्जनं कुर्वन् रुद्रैकादशिनीं जपन् । मुच्यते सर्वपापेभ्यो महतःपातकादृते ॥ इति ।
आपस्तम्बः (१।९।२६।७)—“ अनार्जवपैशुनप्रतिषिद्धाचारेषु अभक्ष्याभोज्यापेयप्राशने शूद्रायां च रेतः सिक्त्वायोनौ च दोषवत्कर्माभिसन्धिपूर्वं कृत्वानभिसन्धिपूर्वं वा अब्लिङ्गाभिरप उपस्पृशेत् वारुणीभिर्वान्यैर्वा पवित्रैर्यथाकर्मभ्यासः ” इति । १०

यमः—“ विरजाद्विगुणं जप्त्वा तदह्नैव विशुध्यति । पौरुषं सूक्तमावृत्य मुच्यते सर्वकिल्बिषात् ॥

“ ऋषभं शतशो जप्त्वा तदह्नैव विशुध्यति । वेदमेकगुणं जप्त्वा तदह्नैव विशुध्यति ॥

“ रुद्रैकादशकं जप्त्वा तदह्नैव विशुध्यति । जपेद्वाप्यस्य वामीयं पावमानीरथापि वा ॥

“ कुन्तापं वालखिल्यांश्च निर्विप्रैषं वृषाकपिम् । होतृन् रुद्रान् पितृन् जप्त्वा मुच्यते सर्वपातकैः ॥ ” इति ।
 होतृन् चित्तिः सुगादीन् । पितृन् परे युवांसमित्यादीन् । **चतुर्विंशतिमते**— १५

“ पावमानीस्तथा काष्ठं पौरुषं सूक्तमेव च । सपुत्रं माधुच्छन्दसं जप्त्वा पापैः प्रमुच्यते ।

“ मण्डूकं ब्राह्मणं रुद्रं शुक्रियं मोक्षकं तथा । वामदेव्यं बृहत्साम जप्त्वा पापैः प्रमुच्यते ॥

“ यज्ञायज्ञियमादित्यज्येष्ठसाम च राजनम् । पौरुच्छेषं च सामानि जप्त्वा पापैः प्रमुच्यन्तं ॥

“ अथर्वशिरसं चैव पौरुषं सूक्तमेव च । नीलरुद्रांस्तथैवेन्द्रं जप्त्वा पापैः प्रमुच्यते ॥

“ आथर्वणाश्च ये केचित् मन्त्राः कामविवर्जिताः । ते सर्वे पापहन्तारो याज्ञवल्क्यवचो यथा ॥ २०

“ अग्नेर्मन्वेऽनुवाकं तु जपेदेनमनुत्तमम् । सिंहे मे मन्युरित्येतमनुवाकं जपेद् द्विजः ॥

“ जप्त्वा पापैः प्रमुच्येत बोधायनवचो यथा ।

“ ऋग्वेदमभ्यसेद्यस्तु यजुःशाखामथापि वा । सामानि सरहस्यानि अथर्वाङ्गिरसस्तथा ॥

“ यत्किञ्चित्पातकं कुर्यात् किञ्चेत्माता च तं जपेत् । हंसः शुचिषदित्येतां जपेद्वापि त्रियम्बकम् ॥

“ ब्राह्मणानि च कल्पाश्च षडङ्गानि तथैव च । आख्यानानि तथान्यानि जप्त्वा पापात्प्रमुच्यते ॥ २५

“ इतिहासपुराणानि देवतास्तवनानि च । जप्त्वा पापैः प्रमुच्येत धर्मस्थानैस्तथापरैः ॥ ” इति ।

विष्णुः (५६।१-२७)—“ अथातः सर्वदैवपित्र्याणि भवन्ति । येषां जपैश्च होमैश्च द्विजातयः पापैश्च पूयन्तेऽधमर्षणं देवकृतं शुद्धवत्यस्तरत्समन्दीधावति कूश्माण्डाः पावमान्यः दुर्गा सावित्री अतिषड्भ्यः पदस्तोभा व्याहृतयो भारुण्डानीन्द्रसामं पुरुषव्रतं दैवतं भासमब्लिङ्गं बार्हस्पत्यं वाक्सूक्तं गोसूक्तं अश्वसूक्तं मध्वृचः सामानि चेन्द्रशुद्ध शतरुद्रीयमथर्वशिरः त्रिसुपर्णो महाव्रतं ३० नारायणीयं पुरुषसूक्तम् । “ त्रीण्याज्यस्तोमानि रथंतरं चाग्नेर्व्रतं वामदेव्यं बृहच्च ।

“ तानि जप्त्वा पुनन्ति जन्तून् जातिस्मरत्वं लभते य इच्छेत् ” इति । **पैठीनसिः**—

“ सर्वपापप्रसक्तोऽपि ध्यायन्निमिषमच्युतम् । पुनस्तपस्वी भवति पङ्क्तिपावनपावनः ” ॥

वसिष्ठः—

“ हित्वा सकलपापानि लब्ध्वा सुकृतसंचयम् । स पूतो जायते धीमान्मुरजिन्नामकीर्तनात् ” इति ।

भृगुः—“ क्रोडिशो मनुजानां वै भीतिदं समुपस्थितम् । रामरामेति संकीर्त्य तं नाशयति मानवः ॥

“ सर्वेषामेव पापानां प्रायश्चित्तमिदं स्मृतम् । नातः परतरं पुण्यं त्रिषु लोकेषु विद्यते ” ॥ इति ।

५ योगयाज्ञवल्क्यः—

“ न तावत्पापमेधेत यन्नाम्ना न हतं हरेः । अतिरेकभयादाहुः प्रायश्चित्तान्तरं वृथा ” ॥ इति ।

ब्रह्मकैवर्ते—

“ सर्वपापयुतो वापि कीर्तयन्ननिशं हरिम् । शुद्धान्तःकरणो भूत्वा जायते पङ्क्तिपावनः ” ॥

रहस्यब्रह्महत्यादिपापानां प्रतिपदोक्तप्रायश्चित्तम् । अथ प्रतिपदोक्तानि ।

१० व्यासः—“ योऽनूचानं द्विजं मर्त्यो हतवानर्थलोभतः । स जपेत्पौरुषं सूक्तं जलस्थश्चिन्तयन् हरिम् ॥

“ तथैव ब्रह्महत्याया मुच्यते नात्र संशयः ” ॥ इति ।

यमः—“ ब्रह्महत्यासुरापानस्वर्णस्तेयगुरुतल्पेषु प्राणायामैः श्रौताधमर्षणं जपेत् ” ॥ इति ।

याज्ञवल्क्यः (प्रा. ३०२)—

“ त्रिरात्रोपोषितो जप्त्वा ब्रह्महर्षं त्वधमर्षणम् । अन्तर्जले विशुद्ध्येत गां दत्त्वा तु पयस्विनीम् ” ॥

१५ शङ्खलिखितौ—“ त्रिरात्रोपोषितोऽन्तर्जलेऽधमर्षणं त्रिरावर्तयेत् ” ॥ इति । चतुर्विंशतिमते—

“ त्रिमधुत्रिसुपर्णं च नाचिकेतत्रयं तथा । नारायणं जपेत्सर्वं मुच्यते ब्रह्महत्याया ” ॥ इति ।

बोधायनः (३१।४)—“ ग्रामात् प्राचीमुदीचीं वा दिशमुपनिष्क्रम्य स्नातः शुचिः शुचि-
वासा उदकान्ते स्थण्डिलमुपलिप्य सकृत्क्लिन्नवासा गोशकृत्पूतेन पाणिनादित्याभिमुखोऽधमर्षणं
स्वाध्यायमधीयीत प्रातःशतं मध्याह्ने शतमपराह्णे शतमपरिमितं चोदितेषु नक्षत्रेषु प्रसृतियावकं प्राश्नी-

२० यात् । ज्ञानकृतेभ्योऽज्ञानकृतेभ्यश्चोपपातकेभ्यः सप्तरात्रात् प्रमुच्यते । द्वादशरात्रान्महापातकेभ्यः
ब्रह्महर्षणं गुरुतल्पगमनं स्वर्णस्तेयं सुरापानमिति च वर्जयित्वा एकविंशतिरात्रात् तान्यति-
तरति ” ॥ इति । बृहद्विष्णुः—“ ब्रह्महत्यां कृत्वा प्राचीमुदीचीं वा दिशमुपनिष्क्रम्य प्रभूते-
नेन्धनेनाग्निं प्रज्वालयाधमर्षणेनाष्टसहस्रमाज्यैर्जुहुयात् । तेनैव तस्मात् पूतो भवति ” ॥ इति ।

मनुः (२।१२४९-२५१)—

२५ “ कौत्सं जप्त्वाऽपनोत्येतद्वासिष्ठं च त्वंच प्रति । माहित्रं शुद्धगङ्गं च सुरापोऽपि विशुद्ध्यति ॥

“ सकृज्जप्त्वास्य वामीयं शिवसंकल्पमेव च । सुवर्णमपहृत्यापि क्षणात् भवति निर्मलः ॥

“ हविष्मन्तैयमभ्यस्य न तमं ह इतीति च । जप्त्वा च पौरुषं सूक्तं मुच्यते गुरुतल्पगः ॥

“ मन्त्रैः शाकलहोमीयैरब्दं हुत्वा घृतं द्विजः । सर्वमप्यपहन्त्यैनो जप्त्वा वाग्नौ इत्यृचा । (२५६)

“ महापातकसंयुक्तोऽनुगच्छेद् गाः समाहितः । अभ्यस्याब्दं पावमानीः भैक्षाहारो विशुद्ध्यति । (२५७)

३० “ अरण्ये वा त्रिरभ्यस्य प्रयतो वेदसंहिताम् । मुच्यते पातकैः सर्वैः पराकैः शोधितस्त्रिभिः । (२५८)

“ ज्यहं तुपवसेद्युक्तः ज्यहं तूपनयन्नपः । मुच्यते पातकैः सर्वैः त्रिजप्त्वा वाधमर्षणम् ” ॥

यमः (२-५)—“ सुरापः कण्ठमात्रमुदकमवतीर्य सुतसोमात् प्रसूतिमादाय ओंकारेणाभिमन्त्र्य पिबेत् ।

ततोऽप्सु निमग्नो मानस्तोकीयं जपेत् । ब्राह्मणः स्वर्णस्तेयं कृत्वा हिरण्यशालायां प्रक्षिप्याप्सु
निष्णातो ग्रीवामात्र उदके हिरण्यवर्णाभिश्चतसृभिरात्मानमभ्युक्ष्य त्रीन् प्राणायामान् कृत्वा

३५ तदेतस्मात् पूतो भवति । गुरुतल्पगमनं कृत्वाऽधमर्षणमन्त्रं जले त्रिरावृत्य तदेतस्मात् पूतो भवति ” ॥

रहस्यसुरापानादिप्रायश्चित्तम् । सुरापानादौ याज्ञवल्क्यः (प्रा. ३०४-३०५)—

“ त्रिरात्रोपोषितो हुत्वा कूर्शमाण्डीभिर्वृतं शुचिः । ब्राह्मणः स्वर्णहारी तु रुद्रजापी जले स्थितः ॥

“ सहस्रशीर्षा जापी तु मुच्यते गुरुतल्पगः । गौर्द्वैया कर्मणोऽस्यान्ते पृथगेव पयस्विनी ” ॥ इति ।

शातातपः— “ मद्यं पीत्वा गुरुदारांश्च गत्वा स्तेयं कृत्वा ब्रह्महत्यां च कृत्वा ॥

“ भस्मच्छन्नो भस्मशय्याशयानो रुद्राध्यायी मुच्यते सर्वपापैः ” ॥ इति । ५

जपश्चैकादशकृत्वः कार्यः । तदाहात्रिः—

“ एकादशगुणान्वापि रुद्रानावर्त्य धर्मवित् । महापापैरपि स्पृष्टो मुच्यते नात्र संशयः ” ॥ इति ।

बोधायनः—

“ अघमर्षणं देवकृतं शुद्धवत्यस्तरत्समाः । कूर्शमाण्डः पावमान्यश्च विरजामृत्युलाङ्गलम् ।

“ दुर्गयाहुतयो रुद्रा महापातकनाशनाः ” ॥ इति । **आश्वलायनः—** १०

“ कुन्तापं बालस्त्रिधांश्च जप्त्वा पापैः प्रमुच्यते । ब्रह्महत्यादिपापेभ्यः पावमानात्प्रमुच्यते ” ॥

संवर्तः—

“ षण्मासं पञ्चमासं वा नियतो नियताशनः । जप्त्वा तु पौरुषं सूक्तं मुच्यते सर्वपातकैः ” ॥ इति ।

बोधायनः— “ मातृदुहितृस्नुषास्वसृसवर्णाविधवागमनं कृत्वा यः पुरुषसूक्तं त्रिरुच्चारयेत् तदानीमेव पूतो भवति ” इति । **कूर्मपुराणे—** १५

“ जपस्तपस्तीर्थसेवा दानं ब्राह्मणपूजनम् । ग्रहणादिषु कालेषु महापातकशोधनम् ॥

“ उपोषितश्चतुर्दश्यां कृष्णपक्षे समाहितः ।

“ यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च । वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च ॥

“ प्रत्येकं तिलसंयुक्तान् दद्यात् सप्तोदकाञ्जलीन् । स्नात्वा नद्यां तु पूर्वाह्णे मुच्यते सर्वपातकैः ” ॥ इति ।

अत्र ज्ञानाज्ञानाभ्यासानभ्यासैर्व्यवस्था द्रष्टव्या । संसर्गा तदीयमेव प्रायश्चित्तं कुर्यात् । २०

‘ स तस्यैव व्रतं कुर्यात् ’ इत्यादिना पूर्वमेवोक्तत्वात् ।

उपपातकरहस्यप्रायश्चित्तम् । उपपातकरहस्यप्रायश्चित्तमाह याज्ञवल्क्यः (प्रा. ३०६)—

“ प्राणायामशतं कार्यं सर्वपापापनुत्तये । उपपातकजातानामनादिष्टस्य चैव हि ” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरेऽपि—

“ दशप्रणवसंयुक्तैः प्राणायामैश्चतुःशतैः । मुच्यते ब्रह्महत्यायाः किं पुनः शेषपातकैः ” ॥ इति । २५

प्राजापत्यकृच्छ्रलक्षणम् । अथ कृच्छ्रलक्षणम् । तत्र प्राजापत्यस्य **बोधायनः** (४।५।६)—

“ प्राजापत्यो भवेत्कृच्छ्रो दिवा रात्रावयाचितम् । क्रमशो वायुभक्षश्च द्वादशाहं त्र्यहं त्र्यहम् ” ॥

आपस्तम्बः (१।१२।७)— “ त्र्यहमनकाशी अदिवाशी ततस्त्र्यहं त्र्यहमयाचितव्रतस्त्र्यहं नाश्नाति किं च नेति कृच्छ्रद्वादशरात्रस्य विधिः ” ॥ इति ।

मनुः (१।१२।१-१)—

“ त्र्यहं प्रातस्त्र्यहं सायं त्र्यहमयादयाचितम् । त्र्यहं परं तु नाश्नीयात् प्राजापत्यं चरन्व्रतम् ” ॥ इति ।

अस्थैवाधिकारिभेदेन प्रयोगान्तरमाह वसिष्ठः (७०।४२)—

“ अहःप्रातरहर्नक्तमहरेकमयाचितम् । अहः परं चोपवास एवं चतुरहौ परौ ॥

“ अनुग्रहार्थं विप्राणां मनुर्धर्मभूतां वरः । बालवृद्धातुराणां च शिशुकुच्छ्रमुवाच ह ” ॥
बोधायनः (४।५।७)—

५ “ अहरेकं तथा नक्तमज्ञातं वायुभक्षितम् । त्रिवृदेष परावृत्तो बालानां कुच्छ्र उच्यते ” ॥
याज्ञवल्क्यः (प्रा. ३१९।३२०)—

“ एकभुक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन वा । उपवासेन चैकेन पादकुच्छ्रः प्रकीर्तितः ।

“ यथाकथंचित् त्रिगुणः प्राजापत्योऽयमुच्यते ” ॥ इति । एकभुक्तेन दिवा सकृद्भोजनेन नक्तेन रात्रौ सकृद्भोजनेन अयाचितेन न विद्यते याचितं यस्मिन् भोजने तेनात्र कालविशेषाप्रतीतिः दिवा
१० रात्रौ वा सकृद्भोजनेनायाचितेनोपवासेनानाशनेन पादकुच्छ्रो भवति । अयमेव पादकुच्छ्रः स्वस्या-
वृत्त्या स्वस्थानविवृद्ध्या वा यथाकथंचित् त्रिगुणः त्रिरभ्यस्तः प्राजापत्य इत्युच्यत इत्यर्थः ।

एकभुक्तदिषु ग्राससंख्यां परिमाणं चापस्तम्बो दर्शितवान्—

“ सायं द्वाविंशतिग्रासाः प्रातः षड्विंशतिः स्मृताः । चतुर्विंशतिरयाचिते परं निरशनं स्मृतम् ॥

“ कुक्कुटाण्डप्रमाणं तु यथावास्यं विशेत्स्वयम् ” ॥ चतुर्विंशतिमते—

१५ “ प्रातस्तु द्वादशग्रासाः सायं पञ्चदशैव तु । अयाचितेन द्वावष्टौ त्रिदिनं मारुताशनः ” ॥ इति ।
अत्र शक्त्यपेक्षया व्यवस्था द्रष्टव्या ।

पादकुच्छ्राणां वर्णभेदेन व्यवस्था ।

आपस्तम्बः चतुरः पादकुच्छ्रानुक्त्वा तेषां वर्णभेदेन व्यवस्थामाह—

“ त्र्यहं निरशनं पादः पादश्चायाचितं त्र्यहम् । सायं त्र्यहं तथा पादः प्रातः पादस्तथा त्र्यहम् ॥

२० “ प्रातः पादं चरेच्छूद्रः सायं वैश्यस्य दापयेत् । अयाचितं तु राजन्ये त्रिरात्रं ब्राह्मणे स्मृतम् ” ॥
अर्धकुच्छ्रपादोनकुच्छ्रयोः स्वरूपमाह स एव—

“ सायंप्रातर्विनार्धं स्यात् पादोनं नक्तवर्जितम् ” ॥ अयमर्थः—अयाचितोपवासयोः
त्र्यहद्वयानुष्ठानेनार्धकुच्छ्रो भवति । नक्तत्रयव्यतिरिक्तत्र्यहत्रयानुष्ठानेन पादोनकुच्छ्रो भवतीति ।
अन्यथा अर्धकुच्छ्रस्तेनैवोक्तः—

२५ “ सायं प्रातस्तथैवोक्तं दिनद्वयमयाचितम् । दिनद्वयं तु नाश्रीयत् कुच्छ्रार्धं तद्विधीयते ” ॥ इति ।

यत्तु जपहोमादिबाह्याङ्गविहितं प्राजापत्यकुच्छ्रं गौतमेनाभिहितं (२६।१-१७)—“ हविष्या-
न्प्रातराशान् भुक्त्वा तिस्रो रात्रीर्नाश्रीयत् । अथापरं त्र्यहं नक्तं भुञ्जीताथापरं त्र्यहं न किञ्चन
याचयेत् । अथापरं त्र्यहमुपवसेत् । तिष्ठेद्दहनि रात्रावासीत क्षिप्रकामः । सत्यं वदेदुनार्थैर्न संभाषेत ।
रौरवयोधाजपे नित्यं प्रयुञ्जीतानुसवनमुदकोपस्पर्शनमापो हि षेति तिसृभिः पवित्रवतीभिर्मार्जयित

३० हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका इत्यष्टाभिरथोदकतर्पणं नमोऽहमाय मोहमाय मंहमाय विधून्वते
तापसाय पुनर्वसेवे नमो नमो मौञ्ज्यायोर्म्याय वसुविन्दाय सार्वविन्दाय नमो नमः पाराय सुपाराय
महापाराय पारयिष्णवे नमो नमो रुद्राय पशुपतये महते देवैताय ज्यम्बकायैकचरायाधिपतये
हराय शर्वायेशानायोग्राय वज्रिणे घृणिने कपर्दिने नमो नमः सूर्यायादित्याय नमोनमो नीलग्रीवाय
शितिकण्ठाय नमो नमः कृष्णाय पिङ्गलाय नमो नमो ज्येष्ठाय श्रेष्ठाय वृद्धयेन्द्राय हरिकेशा-
३५ थोर्ध्वरेतसे नमो नमः सत्याय पावकाय पावकवर्णाय कामाय कामरूपिणे नमो नमो दीप्ताय

दीप्तरूपिणे नमो नमस्तीक्ष्णाय तीक्ष्णरूपिणे नमो नमः सोभ्याय सुपुरुषाय महापुरुषाय मध्यम-
पुरुषायोत्तमपुरुषाय ब्रह्मचारिणे नमो नमश्चन्द्रललाटाय कृत्तिवाससे नमः । इत्येतदेवादित्योपस्थान-
मेता एवाज्याहुतयो द्वादशरात्रस्यान्ते चरुं श्रपयित्वैताभ्यो देवताभ्यो जुहुयादग्नये स्वाहा
सोमाय स्वाहाऽग्नीषोमाभ्यामिन्द्राग्निभ्यामिन्द्राय विश्वेभ्यो देवेभ्यो ब्रह्मणे प्रजापतयेऽग्नये सिवष्ट-
कृते स्वाहेत्यन्ते ब्राह्मणभोजनम् ” इति । हविष्यानित्याद्युपवसेदित्यन्तेन प्राजापत्यस्वरूपमुक्तम् । ५
तिष्ठेदित्यादिना तस्येतिकर्तव्यतोच्यते । क्षिप्रकामः शीघ्रं शुद्धिकामः । भोजनाद्यविरुद्धकालेषु
अहनि तिष्ठेत् रात्रौ निद्रामप्यासीन एव सेवेत । एवं सत्यं वदेदित्याद्यङ्गकलापे क्षिप्रकाम इत्यधिकारि-
विशेषणमनुषजनीयम् । अनेन यः शनैः शुद्धो भवामीति मन्यते तस्य नायं नियम इति गम्यते ।
रौरवयौधाजये सामनी नमोऽहमायेत्याद्यस्त्रयोदशमन्त्रास्तर्पणसूर्योपस्थानाज्यहोमेषु द्रष्टव्याः ।
अथवा संप्रदानविभक्त्यन्ताः षट्पञ्चाशन्मन्त्राः । एतन्मन्वाद्युक्तजपहोमाद्यङ्गरहितप्राजापत्यद्वय- १०
स्थाने वेदितव्यमिति माधवीये ।

अतिकृच्छ्रलक्षणम् । अतिकृच्छ्रस्य मनुः (११।२।१३)—

“ एकैकं ग्रासमश्रीयात् त्र्यहाणि त्रीणि पूर्वतः । त्र्यहं चोपवसेदन्त्यमतिकृच्छ्रं चरन् द्विजः ” ॥ इति ।
एकभुक्तनक्तायाचितदिवसेषु नवस्वैकैकं ग्रासमश्रीयात् । त्र्यहं चोपवसेत् । अयमतिकृच्छ्रो भवतीत्यर्थः ।
यमः—“ एकैकं पिण्डमश्रीयात् त्र्यहं काले त्र्यहं निशि । अयाचितं त्र्यहं चैव वायुभक्षः परे त्र्यहम् ॥ १५

“ अतिकृच्छ्रं चरेदेतत्पवित्रं पापनाशनम् ” ॥ **बोधायनः (४।५।८)—**

“ एकैकं ग्रासमश्रीयात् पूर्वोक्तेन त्र्यहं त्र्यहम् । वायुभक्षस्तत्र्यहं चान्यदतिकृच्छ्रोऽघनाशनः ” ॥

यत्तु याज्ञवल्क्येनोक्तम् (प्रा.-३२०)—“ अयमेवातिकृच्छ्रः स्यात् पाणिपूरान्नभोजने ” इति
अयमेव प्राजापत्यकृच्छ्र एव एकभुक्तनक्तायाचितदिवसेषु नवसु पाणिपूरान्नभोजनयुक्तोऽतिकृच्छ्रो
भवतीत्यर्थः । तथा च पराशरः (११।५२)—

२०

“ नवाहमतिकृच्छ्रः स्यात् पाणिपूरान्नभोजनः । त्रिरात्रमुपवासः स्यादतिकृच्छ्रः स उच्यते ” ॥ इति
तदेतदशकविषयम् । पाणिपूरान्नस्य ग्रासपरिमितान्नादधिकपरिमाणत्वात् ।

कृच्छ्रातिकृच्छ्रलक्षणम् । कृच्छ्रातिकृच्छ्रस्य बोधायनः (४।५।९)—

“ अब्भक्षस्त्रयहानेतान्वायुभक्षस्ततः परम् । एष कृच्छ्रातिकृच्छ्रस्तु विशेषः सोऽतिपावनः ” ॥

एकभुक्तनक्तायाचितदिवसेषु यो भोजनकालः तस्मिन्नेव काले केवलमुदकेनैव वर्तनं त्रिरात्रमुपवासश्च २५
कृच्छ्रातिकृच्छ्र इत्यर्थः । यत्तु एकविंशतिदिनपर्यन्तं क्षीरिणैव वर्तनमुक्तं याज्ञवल्क्येन (प्रा. ३२१)

“ कृच्छ्रातिकृच्छ्रः पयसा दिवसानेकविंशतिम् ” इति तदशकविषयम् ।

तप्तकृच्छ्रलक्षणम् । तप्तकृच्छ्रस्य मनुः (११।२।१४)—

“ तप्तकृच्छ्रं चरन् विप्रो जलक्षीरघृतानिलान् । प्रतित्र्यहं पिबेदुष्णान् सकृत्स्नायी समाहितः ” ॥

बोधायनः (४।५।१०)—

३०

“ त्र्यहं त्र्यहं पिबेदुष्णं पयः सर्पिः कुशोदकम् । वायुभक्षस्तत्र्यहं चान्यत् तप्तकृच्छ्रः स उच्यते ” ॥

सांतपनकृच्छ्रलक्षणम् । सांतपनस्य मनुबोधायनौ (११।२।१२; ४।५।११)—

“ गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् । एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रः सांतपनः स्मृतः ” ॥ इति ।

एतस्य द्विरात्रसाध्यत्वमाह याज्ञवल्क्यः (३१५)—

“गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् । जग्ध्वा परेऽह्नेच्युपवसेत् कुच्छ्रं सांतपनं चरन्” ॥ इति ।

महासांतपनलक्षणम् । महासांतपनं त्रिविधं सप्तरात्रं पञ्चदशरात्रमेकविंशतिरात्रं चेति । तत्र सप्तरात्रस्य स्वरूपमाह याज्ञवल्क्यः (प्रा. ३१६)—

५ “पृथक् सांतपनद्रव्यैः षडहः सोपवासकः । सप्ताहेन तु कुच्छ्रोऽयं महासांतपनः स्मृतः” ॥ इति ।

यमः पञ्चदशाहमाह—

“अयं पिबेत्तु गोमूत्रं अयं वै गोमयं पिबेत् । अयं दधि अयं क्षीरं अयं सर्पिस्ततः शुचिः ॥

“महासांतपनं ह्येतत् सर्वपापप्रणाशनम्” ॥ इति । जाबालिस्त्वाह—

“षण्णामेकैकमेतेषां त्रिरात्रमुपयोजयेत् । अयं चोपवसेदन्ते महासांतपनं विदुः” ॥ इति ।

१० एतत् त्रयं पापतारतम्यविषयं द्रष्टव्यम् । पराकलक्षणम् । पराकस्य मनुः (११२१५)—

“यतात्मनोऽप्रमत्तस्य द्वादशाहमभोजनम् । पराको नाम कुच्छ्रोऽयं सर्वपापप्रणाशनः” ॥ इति ।

पर्णकुच्छ्रलक्षणम् । पर्णकुच्छ्रस्य याज्ञवल्क्यः (प्रा. ३१७)—

“पर्णोदुम्बराजीवबिल्वपत्रकुशोदकैः । प्रत्येकं प्रत्यहं पीतैः पर्णकुच्छ्र उदाहृतः” ॥ इति ।

पलाशोदुम्बराविन्दबिल्वपर्णानामेकैकेन काथितमुदकं प्रत्यहं पिबेत् । कुशोदकं चैकस्मिन्नहनीति

१५ पञ्चाहसाध्यः पर्णकुच्छ्रः । पर्णकुच्छ्रस्य लक्षणान्तरमाह यमः—

“एतान्येव समस्तानि त्रिरात्रोपोषितः शुचिः । काथयित्वा पिबेदद्भिः पर्णकुच्छ्रस्य लक्षणम्” ॥ इति ।

पलाशपर्णान्येकीकृत्याम्भसा काथयित्वा त्रिरात्रोपवासान्ते काथितं तत्पयः पिबेत् । अयं पर्णकुच्छ्रो भवतीत्यर्थः ।

फलकुच्छ्रादिलक्षणम् । फलकुच्छ्रादीनां स्वरूपमाह मार्कण्डेयः—

२० “फलैर्मसिन कथितः फलकुच्छ्रो मनीषिभिः । श्रीकुच्छ्रः श्रीफलैः प्रोक्तः पद्माक्षैरपरस्तथा ॥

“मासेनामलकैरेवं श्रीकुच्छ्रः परमः स्मृतः । पत्रैर्मतः पत्रकुच्छ्रः पुष्पैस्तत्कुच्छ्र उच्यते ॥

“मूलकुच्छ्रः स्मृतो मूलैस्तोयकुच्छ्रो जलेन तु” ॥ इति । यदा बिल्वादिफलान्यम्भसा

काथयित्वा मासमेकं तदम्भः पिबति तदा फलकुच्छ्रो भवति । यदा बिल्वपद्माक्षामलकाना-

मन्यतमस्य काथं मासमेकं पिबेत् तदा श्रीकुच्छ्रो भवति । यदा त्वेषां पत्रपुष्पमूलानां काथं पिबेत्

२५ तदा पत्रपुष्पमूलकुच्छ्राणि भवन्ति ।

वारुणस्त्रीसौम्यकुच्छ्रलक्षणम् । वारुणस्त्रीकुच्छ्रयोर्लक्षणमाह यमः—

“ब्रह्मचारी जितक्रोधो मासेऽप्युदकसक्तुक्कात् । पिबेच्च नियताहारः कुच्छ्रं वारुणमुच्यते ॥

“अयं पिबेत्तु गोमूत्रं अयं वै गोमयं पिबेत् । अयं वै यावकेनैव स्त्रीकुच्छ्रं ह्येतदुच्यते” ॥ इति ।

सौम्यकुच्छ्रस्य याज्ञवल्क्यः (प्रा. ३२२)—

३० “पिण्याकाचामतक्राम्बुसक्तूनां प्रतिवासरम् । एकरात्रोपवासश्च कुच्छ्रः सौम्योऽयमुच्यते” ॥ इति ।

आचामः ओदननिष्पावः । पिण्याकादीनां पञ्चानां एकैकं प्रतिदिनमुपभुज्य षष्ठेऽहन्युपवसेत् ।

स एष सौम्यकुच्छ्रः । यत्तु जाबालेन चतुरहव्यापी सौम्यकुच्छ्र उक्तः—

“पिण्याकं सक्तवस्तर्कं चतुर्थेऽहन्यभोजनम् । वासो वै दक्षिणां दद्यात् सौम्यो वै कुच्छ्र उच्यते” ॥ इति

तदेतदशकविषयम् ।

तुलापुरुषकृच्छ्रलक्षणम् । अथ तुलापुरुषकृच्छ्रमाह जाबालिः—

“ पिण्याकं च तथाचामस्तक्रं चोदकसक्तवः । त्रिरात्रमुपवासश्च तुलापुरुष उच्यते ” ॥ इति सोऽयमष्टदिवससाध्यः । याज्ञवल्क्यः पञ्चदशाहसाध्यमाह (प्रा. ३२३)—

“ एषां त्रिरात्रमभ्यासात् एकैकस्य यथाक्रमम् । तुलापुरुष इत्येवं ज्ञेयः पञ्चदशाहिकः ” ॥ इति । एषां पिण्याकादीनां पञ्चानाम् । यमस्तु एकविंशतिदिनसाध्यमाह—

५

“ आचामांचितपिण्याकं तक्रं चोदकसक्तकान् । ज्यहं ज्यहं प्रयुञ्जानो वायुभक्षस्त्यहद्वयम् ॥ “एकविंशतिरात्रस्तु तुलापुरुष उच्यते” ॥ इति । तदेतत् त्रयं पापतारतम्यविषयतया व्यवस्थापनीयम् ।

अधमर्षणकृच्छ्रलक्षणम् । अधमर्षणकृच्छ्रस्य शङ्खः—

“ ज्यहं त्रिषवणस्नायी मुनिः स्नात्वाऽधमर्षणम् । मनसा त्रिः पठेदप्सु न भुञ्जीत दिनत्रयम् ॥

“ अधमर्षणमित्येतद्रतं सर्वाधसूदनम् ” ॥ इति । प्रकारान्तरमाह विष्णुः (४६।२-९)— १०

“ ज्यहं नाश्रीयात् ज्यहं त्रिषवणस्नानमाचरेदप्सु त्रिरधमर्षणं जपेत् । दिवा तिष्ठेद्रात्रावासीत कर्मणोऽन्ते पयस्विनीं गां दद्यादित्यधमर्षणम् ” इति ।

दैवतकृच्छ्रलक्षणम् । दैवतकृच्छ्रमाह यमः—

“ यवागूं यावकं शाकं क्षीरं दधि घृतं तथा । ज्यहं ज्यहं तु प्राश्रीयात् वायुभक्षः परं त्रयम् ॥

“ कृच्छ्रं दैवं तु तन्नाम सर्वकल्मषनाशनम् ” ॥ इति ।

१५

यज्ञकृच्छ्रम् । यज्ञकृच्छ्रस्याङ्गिराः—

“ युक्तस्त्रिषवणस्नायी संयतो मौनमास्थितः । प्रातः स्नानं समाभ्य कुर्याज्जप्यं च नित्यशः ॥

“ सावित्रीं व्याहृतीश्चैव जपेदष्टसहस्रकम् । ओंकारमादितः कृत्वा रूपे रूपे तथादितः ॥

“ भूमौ वीरासने युक्तः कुर्याज्जप्यं तु संयतः । आसीनश्च स्थितो वापि पिबेद् गव्यं पयः सकृत् ॥

“ गव्यस्य पयसोऽलाभे गव्यमेव भवेद् दधि । दध्नोऽभावे भवेत्तक्रं तक्रालाभे तु यावकम् ॥ २०

“ एषामन्यतमं यत्तु उपपद्येत तत् पिबेत् । गोमूत्रेण समायुक्तं यावकं चोपयोजयेत् ।

“ सर्वपापहरो दिव्यो नाम्ना यज्ञ इति स्मृतः । एकाहेन तु कृच्छ्रोयमुक्तस्त्वङ्गिरसा स्वयम् ॥

“ एतत्पातकयुक्तानां तथा चाप्युपपातकैः । महद्भिश्चापि युक्तानां प्रायश्चित्तमिदं शुभम् ” ॥ इति ।

यावककृच्छ्रलक्षणम् ।

यावककृच्छ्रस्य देवलः—“ यावकानामप्सु साधितानां सप्तरात्रं पक्षं मासं वा प्राशनं यावकम् । २५ एतेन यावकपायसोदकानि व्याख्यातानि ” । शङ्खः—

“ गोपुरीषं यवाभ्यासो मासमेकं समाहितः । व्रतं तु यावकं कुर्यात् सर्वपापापनुत्तये ” ॥ इति ।

प्रसृतियावककृच्छ्रलक्षणम् । प्रसृतियावककृच्छ्रमाह हारीतः—“ य आत्मकृतैः कर्मभिः गुरुमात्मानं पश्येत् । आत्मार्थं प्रसृतियावकं श्रपयेत् । ततोऽग्नौ जुहुयात् । तेन दैवबालिकर्म । श्रुतमभिमन्त्रयेत् ।

३०

“ यवोऽसि धान्यराजोऽसि वारुणो मधुसंयुतः । निर्णोदः सर्वपापानां पवित्रमृषिभिः स्मृतम् ॥

“ घृतं यवा मधु यवा आपोहिष्ठासृतं यवाः । सर्वं पुनन्तु मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम् ॥

“ वाचा कृतं कर्मकृतं मनसा दुर्विचिन्तितम् । अलक्ष्मीं कालकण्ठीं च सर्वं पुनीतं मे यवाः ” ॥

श्रप्यमाणं रक्षां कुर्यात् । नमो रुद्राय भूतपतये सावित्री मानस्तोकेति पात्रे त्रिः निषिच्य ये देवा मनोजातो मनायुजः सुदक्षा दक्षपितरस्ते नः पान्तु ते नोऽवन्तु तेभ्यो नमस्तेभ्यो नमः स्वाहेति आत्मनि जुहुयात् । त्रिरात्रमेवात्रातिपापकृत् षड्रात्रं पीत्वा पूतो भवति सप्तरात्रं महापातकी द्वादशरात्रं पीत्वा सर्वं पुरुषकृतं पापं निर्दहति । निर्वृत्तानां यवानामेकं विंशतिरात्रं पीत्वा गणान् पश्यति गणाधिपं पश्यति विद्यां पश्यति विद्याधिपं पश्यति योऽश्नीयाद्यावकं पक्वं गोमूत्रेष्वसकृत् दधिक्षीरसर्पिःषु मुच्यते सौहसः क्षणात् इत्याह भगवान् मैत्रायाणिः ” इति ।

चान्द्रायणकृच्छ्रलक्षणम् । अथ चान्द्रायणस्य प्रकार उच्यते । तच्च द्विविधं पिपीलिकामध्यं यवमध्यं चेति । यथा पिपीलिकायाः शिरःपृष्ठभागौ स्थूलौ मध्यं शून्यं तथा यस्य चान्द्रायणस्य मध्ये अमावास्यादिने सर्वग्रासह्रासः तस्य मध्यभागसौक्ष्म्यात् पिपीलिका-
१० मध्यत्वम् । तद्यथा कृष्णप्रतिपदि व्रतं संकल्प्य चतुर्दश ग्रासान् भुञ्जीत । ततो द्वितीयामारभ्य प्रतिदिनमेकैकग्रासस्य ह्रासे सति अमावास्यायामुपवासः संपद्यते । पुनः शुक्लप्रतिपदि ग्रासमेक-मुपकम्य प्रतिदिनमेकैकग्रासवृद्ध्या पूर्णिमायां पञ्चदशग्रासाः संपद्यन्ते । स एष पिपीलिकामध्य-चान्द्रायणस्यानुष्ठानप्रकारः । तथा यवं मध्यस्थूलमुभावन्तौ शून्यौ । तथाहि—शुक्लप्रतिपदमारभ्य प्रतिदिनमेकैकग्रासवृद्ध्या पूर्णिमायां पञ्चदशग्रासाः संपद्यन्ते । कृष्णप्रतिपदमारभ्यैकैकग्रासह्रासे
१५ सति अमावास्यायामुपवासः इति मध्यभागस्थौल्याद्यवमध्यत्वम् ।

तत्र पिपीलिकामध्यमाह वसिष्ठः (प. ७०।४५)—

“ मासस्य कृष्णपक्षादौ ग्रासानद्याच्चतुर्दश । ग्रासापचयभोजी सन् पक्षशेषं समापयेत् ॥

“ तथैव शुक्लपक्षादौ ग्रासं भुञ्जीत चापरम् । ग्रासोपचयभोजी सन् पक्षशेषं समापयेत् ” ॥

पराशरः (१०।२)—

२० “ एकैकं ह्रासयेद् ग्रासं कृष्णे शुक्ले तु वर्धयेत् । अमावास्यां न भुञ्जीत ह्येष चान्द्रायणो विधिः ” इति ।
चान्द्रायणद्वयमाह देवलः—“ चान्द्रायणं द्विविधं यवमध्यं पिपीलिकामध्यं चेति । एकग्रासममा-वास्यादि यवमध्यं पञ्चदशग्रासं पौर्णमास्यादि पिपीलिकामध्यम् ” इति ।

मनुरपि (११।२१६-२१७)—

“ एकैकं ह्रासयेद् ग्रासं कृष्णे शुक्ले च वर्धयेत् । उपस्पृशंश्चिषवणमेतच्चान्द्रायणव्रतम् ॥

२५ “ एवमेव विधिं कुत्सनमाचरेद्यवमध्यमे । शुक्लपक्षादिनियतश्चरेच्चान्द्रायणव्रतम् ” ॥ इति ।

वपनादिक्रमः । वपनादीतिकर्तव्यतामाह गौतमः (२७।३-१५)—“ वपनादिव्रतं चरेत् । श्वोभूतां पौर्णमासीमुपवसेदाप्यायस्व सं ते पर्यासि नवो नव इति चैतामिस्तेर्षणमाज्यहोमो हविषां चानुमन्त्रणमुपस्थानं चन्द्रमतो यद्देवा देवहेलनमिति चतसृभिराज्यं जुहुयात् । देवकृतस्येति चान्ते समिद्धिः । ओं भूर्भुवः सुवर्धहर्जनस्तपः सत्यं यशः श्रीर्लिंगिर्दौजास्तेजः पुरुषो धर्मः शिव
३० इत्येतैर्ग्रासानुमन्त्रणं प्रतिमन्त्रं मनसा । नमः स्वाहेति वा सर्वानेतैरेव ग्रासाननुभुञ्जीत । ग्रास-प्रमाणमास्याविकारेण । चरुभैक्षसक्तुकणयावकशाकपयोदधिघृतमूलफलोदकादीनि हवींष्युत्तरोत्तरं प्रशस्तानि । द्वादशैतानि पौर्णमास्यां पञ्चदशग्रासान् भुक्त्वा एकैकापचयेनापरपक्षमश्नीयात् । अमावास्यायामुपोष्यैकैकोपचयेन पूर्वपक्षं विपरीतमेकेषामेष चान्द्रायणो मासः ” इति ।

पुनरपि प्रकारान्तरेण त्रिविधं ऋषिचान्द्रायणं शिशुचान्द्रायणं यतिचान्द्रायणं चेति ।
तेषां स्वरूपमाह यमः—

“त्रींस्त्रीन् पिण्डान् समश्नीयात् नियतात्मा दृढव्रतः । हविष्यान्नस्य वै मासमृषिचान्द्रायणं स्मृतम् ॥

“चतुरः प्रातरश्नीयात् चतुरः सायमेव च । पिण्डानेतद्धि बालानां शिशुचान्द्रायणं स्मृतम् ॥

“पिण्डानष्ट समश्नीयात् मासं मध्यंदिने रवौ । यतिचान्द्रायणं ह्येतत् सर्वकल्मषनाशनम् ” ॥ इति । ५

विष्णुः पञ्चविधमाह (४७।१-९)—“ अथातश्चान्द्रायणं ग्रासानास्याविकारमश्नीयात् । तांश्च कलाभिवृद्धौ क्रमेण वर्धयेत् । हानौ च ह्रासयेत् । अमावास्यायां च नाश्नीयात् । ”

दक्षः—“चान्द्रायणो यवमध्यः पिपीलिकामध्यो वा यस्यामावास्या मध्या भवति स पिपीलिकामध्यः ।

“यस्य पौर्णमासी स यवमध्यः । अष्टौ ग्रासान् प्रतिदिनमश्नीयात् स यतिचान्द्रायणः । सायं

“प्रातश्चतुरश्चतुरः स शिशुचान्द्रायणः । यथाकथंचित् पिण्डानां तिस्रोऽशीतीर्वा समश्नीयात् १०

“ससामान्यचान्द्रायणः ” इति ।

चान्द्रायणे ग्रासपरिमाणम् । चान्द्रायणेऽभिहितस्य पिण्डस्य परिमाणमाह
पराशरः (१०।३)—

“कुक्कुटाण्डप्रमाणं तु ग्रासं वै परिकल्पयेत् । अन्यथाभावदोषेण न धर्मो न च शुद्ध्यति ” ॥

व्रताचरणानन्तरं कर्तव्यमाह स एव (८।४८)—

१५

“प्रायश्चित्ते ततश्चीर्णे कुर्यात् ब्राह्मणभोजनम् । गोद्वयं वत्ससंयुक्तं दद्याद्विप्राय दक्षिणाम् ” ॥ इति ।

संख्याविशेषानुपादानात् शक्त्यनुसारेण ब्राह्मणभोजनम् ।

चान्द्रायणफलनिरूपणम् । चान्द्रायणस्य फलं दर्शयति यमः—

“यत् किंचित् क्रियते पापं कर्मणा मनसा गिरा । द्विजश्चान्द्रायणं कृत्वा तस्मात्पापात् प्रमुच्यते ॥

“एतानि विधिवत् कृत्वा षड्भिर्मासैर्हविष्यभुक् । व्यपेतकल्मषो विप्रश्चन्द्रस्यैति सलोकताम् ” ॥ २०

व्रतग्रहणप्रकारः । व्रतग्रहणप्रकारमाह विष्णुः—

“सर्वपापेषु सर्वेषां व्रतानां विधिपूर्वकम् । ग्रहणं संप्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्ते चिकीर्षिते ॥

“दिनान्ते नखरोमादीन् प्रवाप्य स्नानमाचरेत् । भस्मगोमयमृदारिपञ्चगव्यादिकल्पितैः ॥

“मलापकर्षणं कार्यं बाह्यशौचोपासिद्धये ” ॥ इति । जावालिः—

“आरम्भे सर्वकुच्छ्राणां समाप्तौ च विशेषतः । आज्येनैव हि शालाग्रौ जुहुयाद् व्याहृतीः पृथक् ॥ २५

“कायाभ्यङ्गं शिरोभ्यङ्गं ताम्बूलमनुलेपनम् । व्रतस्थो वर्जयेत्सर्वं यच्चान्यत् बलरागाकृत् ” ॥ इति ।

गृही तस्य व्रतस्यासमापने प्रत्यवायमाह छागलेयः—

“पूर्वं व्रतं गृहीत्वा तु नाचरेत् कामतो हि यः । जीवन् भवति चण्डालो मृतः श्वा चाभिजायते” ॥

ब्रह्मकूर्चस्वरूपं तत्परिमाणं च । ब्रह्मकूर्चस्य स्वरूपमाह पराशरः (११।२७-३७)—

“गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् । निर्दिष्टं पञ्चगव्यं तु पवित्रं पापनाशनम् ॥

१०

“गोमूत्रं कृष्णवर्णायाः श्वेतायाश्चैव गोमयम् । पयश्च ताम्रवर्णाया रक्ताया गृह्यते दधि ॥

“कपिलाया घृतं ग्राह्यं सर्वं कपिलमेव वा । मूत्रमेकपलं दद्यादङ्गुष्ठार्धं तु गोमयम् ॥

- “क्षीरं सप्तपलं दद्यात् दधि त्रिपलमुच्यते । घृतमेकपलं दद्यात् पलमेकं कुशोदकम् ॥
- “गायत्र्यादाय गोमूत्रं गन्धद्वारेति गोमयम् । आप्यायस्वेति च क्षीरं दधिक्रावणस्तथा दधि ॥
- “तेजोऽसि शुक्रमित्याज्यं देवस्य त्वा कुशोदकम् । पञ्चगव्यमृचा पूतं स्थापयेदग्निं संनिधौ ॥
- “आपो हि धेतृचालोऽह्य मानस्तोकेति मन्त्रयेत् । सप्तावरास्तु ये दर्भा अच्छिन्नाग्राः शुक्लविषः ॥
- ५ “एतैरुद्धृत्य होतव्यं पञ्चगव्यं यथाविधि । इरावती इदं विष्णुर्मनस्तोकेति शर्वति ॥
- “एताभिश्चैव होतव्यं हुतशेषं पिबेद् द्विजः । आलोऽह्य प्रणवेनैव निर्मथ्यं प्रणवेन तु ॥
- “उद्धृत्य प्रणवेनैव पिबेच्च प्रणवेन तु । मध्यमेन पलाशस्य पद्मपत्रेण वा पिबेत् ॥
- “स्वर्णपत्रेण रौप्येण ब्रह्मतीर्थेन वा पुनः । यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति देहिनाम् ॥
- “ब्रह्मकुर्चो दहेत्सर्वं प्रदीतोऽग्निरिवेन्धनम् । पवित्रं त्रिषु लोकेषु देवताभिरधिष्ठितम् ॥
- १० “वरुणश्चैव गोमूत्रे गोमये हंसवाहनः । दध्नि वायुः समुद्दिष्टः सोमः क्षीरे घृते रविः ” ॥
- यथोक्तपरिमाणानि द्रव्याणि पलाशादि पात्रे गायत्र्याभिः संयोज्य स्थापयित्वा आपो हि धेतुं
त्र्युचेनालोऽह्य मानस्तोकेत्यभिमान्य सप्तावरैः हरितवर्णैः दर्भैरादाय इरावति इदं विष्णुर्मनस्तोके
शंनो देवीरिति चतसृभिरग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहा सवित्रे स्वाहा ओं स्वाहा अग्नये स्विष्टकृते
स्वाहा । इति प्राजापत्योक्तैर्मन्त्रैश्च पलाशपत्रेण हुत्वा हुतशेषं हस्तेन काष्ठेन वा निर्मथ्य
- १५ पिबेत् । गोमूत्रादीनां परिमाणान्तरमाह प्राजापतिः—
- “गोमयात् द्विगुणं मूत्रं सर्पिर्दद्याच्चतुर्गुणम् । क्षीरमष्टगुणं देयं दधि पञ्चगुणं तथा ” ॥ इति ।
- अत्र गोमयस्य परिमाणविशेषानभिधानात् वचनान्तरादङ्गुष्ठपरिमितं ग्राह्यम् । पर्वद्वयोपेतमङ्गुष्ठ
तत्रोपरितनपर्वणा समानपरिमाणं गोमयं स्वीकृत्य यथोक्तोत्तराभिवृद्ध्या गोमूत्रादीनि योजयेत् ।
एतच्च पूर्वोक्तपरिमाणेन सह विकल्प्यते । स एव—
- २० “पलाशं पद्मपात्रं वा ताम्रं वाऽथ हिरण्यम् । गृहीत्वा सादयित्वा तु ततः कर्म समारभेत् ॥
- “स्थापयित्वाऽथ दर्भेषु पालाशैः पत्रकैरथ । तत्समुद्धृत्य होतव्यं देवताभ्यो यथाक्रमम् ॥
- “अग्नये चैव सोमाय सवित्रे च तथैव च । प्रणवेन तथा हुत्वा स्विष्टकृत्वा तथैव च ” ॥ इति ।
- ब्रह्मकुर्चस्य कालविशेषमाह स एव—“चतुर्दश्यामुपोष्याथ पौर्णमास्यां समाचरेत् ” ॥ इति ।
- जाबालिरपि—
- २५ “अहोरात्रोषितो भूत्वा पौर्णमास्यां विशेषतः । पञ्चगव्यं पिबेत्प्रातर्ब्रह्मकुर्चमिति स्मृतम् ” ॥
- देशविशेषमाह शातातपः—
- “नदीतीरेषु गोष्ठेषु पुण्येष्वायतनेषु वा । तत्र गत्वा शुचौ देशे ब्रह्मकुर्चं समाचरेत् ” ॥ इति ।
- प्राजापत्यादिप्रत्याम्नायः । अथ पूर्वोक्तानां व्रतानां केनचिन्निमित्तेनानुष्ठानाशक्तौ यथायोगं
प्रत्याम्नाया उच्यन्ते । तत्र प्राजापत्यप्रत्याम्नायाश्चतुर्विंशतिमते दर्शिताः—
- ३० “कृच्छ्रोऽयुतं तु गायत्र्या उद्वासस्तथैव च । धेनुप्रदानं विप्राय सममेतच्चतुष्टयम् ॥
- “तिलहोमसहस्रं तु वेदपारायणं तथा । विप्रा द्वादश वा भोज्याः पावकेष्टिस्तथैव च ॥
- “अन्या वा पावमानेष्टिः समान्याहुर्मनीषिणः ” ॥ तिलहोमसहस्रं गायत्र्या ।

पराशरः (१२।५६-५७)—

“ कृच्छ्रे देव्ययुतं चैव प्राणायामशतद्वयम् । पुण्यतीर्थेनार्द्रशिरः स्नानं द्वादशसंख्यया ॥
“ द्वियोजनं तीर्थयात्राकृच्छ्रमेकं प्रकल्पितम् ” ॥ इति । अनार्द्रं शिरो यस्यासावनार्द्रशिराः
तस्य स्नानमनार्द्रशिरःस्नानम् । सकृत् स्नात्वा तदङ्गानुष्ठानं च कृत्वा केशान् शोषयित्वा
ततो द्वितीयस्नानमाचरेत् । एवंविधस्नानद्वादशकं पुण्यतीर्थे कृतमित्यर्थः । हेमाद्रौ—

“ कृच्छ्रोऽयुतं तु गायत्र्या विप्रद्वादशभोजनम् । तिलहोमसहस्रं वा सममेतच्चतुष्टयम् ” ॥ इति ।
द्वादशब्राह्मणभोजनं निर्धनविषयम् । धनिकस्य प्रतिदिनं पञ्चपञ्चेति द्वादशसु दिवसेषु षष्ठी-
ब्राह्मणा भोजनीयाः । अत एव स्मृत्यन्तरम्—

“ प्राजापत्यं चरन् विप्रो यद्यशक्तः कथंचन । प्रत्यहं पञ्च विप्राग्रच्यान् भोजयेत्सम्यगीप्सितान् ” ॥

अन्यत्रापि—

“ षष्ठिश्चतुर्विंशतिर्वा भोज्या द्वादश वा द्विजाः । तावद्भोजनपर्याप्तं धान्यं तन्मूल्यमेव वा ॥

“ तत्समृद्धयसमृद्धिभ्यां संख्यावैषम्यभाषणम् ” ॥ इति । माधवीये—

“ प्राजापत्यक्रियाशक्तौ धेनुं दद्यात् द्विजोत्तमः । धेनोरभावे दातव्यं मूल्यं तुल्यं न संशयः ” ॥ इति ।
मूल्यं च यथाशक्ति देयम् ।

“ गवामभावे निष्कं स्यात् तदर्धं पादमेव वा । पादहीनं न कर्तव्यमिति शातातपोऽब्रवीत् ” ॥ इति १५

स्मरणात् । स्मृत्यन्तरेऽपि—

“ कृच्छ्रोऽयुतं तु गायत्र्या उदवासस्तथैव च । समुद्रगानदीस्नानं सममेतच्चतुष्टयम् ” ॥ इति ।
नदीस्नानं मृत्तिकास्नानम् ।

चान्द्रायणादीनां प्रत्याम्नायाः । चान्द्रायणादीनां प्रत्याम्नायाश्चतुर्विंशतिमते दार्शिताः—

“ चान्द्रायणं मृगारेष्टिः पवित्रेष्टिस्तथैव च । मित्रविन्दाकुंतिश्चैव कृच्छ्रं मासत्रयं तथा ॥ २०

“ तिलहोमायुतं चैव पराकद्वयमेव च । गायत्र्या लक्षजप्यं च समान्याह प्रजापतिः ॥

“ नित्यनैमित्तिकानां च काम्यानां चैव कर्मणाम् । इष्टीनां पशुबन्धानामभावे चरवः स्मृताः ॥

“ पराकतप्तकृच्छ्राणां स्थाने कृच्छ्रत्रयं चरेत् । व्रतहोमादिकान्वापि कल्पयेत् पूर्वकल्पवत् ” ॥ इति ।

स्मृत्यन्तरे—

“ चान्द्रायणं त्रयः कृच्छ्रा गायत्र्या अयुतत्रयम् । तथा महानदीस्नानं सममेतच्चष्टयम् ” ॥ इति । २५

महानदीपरिगणनम् । महानद्यः परिगणिताः

देवलः—“ अथ गङ्गा सरस्वती यमुना नर्मदा विपाशा वितस्ता कौशिकी नन्दा विरजा
चन्द्रभागा सरयूः शरावती सिन्धुः कृष्णवेणी शोणा तापिनी पाषाणगा गोमती गण्डकी बाहुदा
पम्पा देविका कावेरी ताम्रपर्णी चर्मण्वती वेन्नवती गोदावरी तुङ्गभद्रा सुचक्षुररुणा चेति महानद्यः
पुण्यतमाः ” ॥ इति । चतुर्विंशतिमते—

“ प्राजापत्ये तु गामेकं दद्यात् सांतपने द्वयम् । पराकतप्तकृच्छ्रेषु तिस्रस्तिस्रस्तु गाः स्मृताः ॥

“ अष्टौ चान्द्रायणे देयाः प्रत्याम्नायविधौ सदा । यथावित्तानुसारेण दानं दद्याद्विशुद्धये ” ॥ इति ।

यत्तु स्मृत्यन्तरे चान्द्रायणस्य गोदानत्रयमभिहितम्

“प्राजापत्ये तु गामेकामतिकृच्छ्रे द्वयं स्मृतम् । चान्द्रायणे पराके च तिस्रस्ता दक्षिणास्तथा” ॥ इति तन्निर्धनविषयम् । गोदानादावशक्तो गोभ्यस्तृणं दद्यात् । तदाह कण्वः—

“एकमध्ययनं कुर्यात् प्राजापत्यमथापि वा । दद्यात् द्वादशसाहस्रं गवां मुष्टिं विचक्षणः” ॥ इति ।

५ चतुर्विंशतिमते—“कृच्छ्रे पञ्चातिकृच्छ्रे त्रिगुणमहरहस्त्रिंशदेवं तृतीये ।

“चत्वारिंशच्च तप्ते त्रिगुणनगुणिता विंशति स्यात्पराके ॥

“कृच्छ्रे संतापनाख्ये भवति षडधिका विंशतिः सैव हीना ।

“द्वाभ्यां चान्द्रायणे स्यात्तपसि कुशबलो भोजयेद्विप्रमुखायान्” ॥ इति । अहरहरिति सर्वत्र संबध्यते । तृतीयः कृच्छ्रातिकृच्छ्रः । अध्ययनजपादीनां पुरुषविशेषेण व्यवस्था तत्रैव दर्शिता—

१० “धर्मनिष्ठास्तपोनिष्ठाः कदाचित्पापमागताः । जपहोमादिकं तेभ्यो विशेषेणाभिधीयते ॥

“नामधारकविप्रा ये मूर्खा धर्मविवर्जिताः । कृच्छ्रचान्द्रायणादीनि तेभ्यो दद्याद्विशेषतः ॥

“धनिना दक्षिणा देया प्रयत्नविहिता तु या । एवं नरविशेषेण प्रायश्चित्तानि पातयेत्” ॥ इति ।

यत्र यावत्संख्यया प्राजापत्यान्यावर्तनीयानि भवन्ति तत्र तावत्संख्यया गोदानादीन्यावर्तनीयानि । तदपि चतुर्विंशतिमते दर्शितम्—

१५ “जन्मप्रभृति पापानि बहूनि विविधानि च । अर्वाकृतु भ्रूणहत्यायाः षडब्दं कृच्छ्रमाचरेत् ॥

“प्रत्याम्नाये गवां देयं साशीति धनिना शतम् । तथाष्टादशलक्षाणि गायत्र्या वा जपेद्बुधः” ॥ इति ।

इति श्रीबाधूलवंशमुक्ताफलवैद्यनाथदीक्षितविरचिते स्मृतिमुक्ताफले

प्रायश्चित्तिनिरूपणं नाम षष्ठः परिच्छेदः ॥

स्मृतिमुक्ताफलपुस्तकोद्धृतकषिवचनानाम् अकारादिवर्णतः सूचिः ।



| कषिः | पृष्ठम् | कषिः | पृष्ठम् | कषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|---------|------------------------|---------|------------------------|----------|
| अखण्डादर्शः | | यो देवः सविता | ३२७ | उपस्थानं व्रतादेशः | ८७० |
| अत्रोदकपिण्ड | ६११ | राजकार्यनियुक्तानां | ६०३ | एकमातृप्रसूतानां | १४५ |
| अनुमकेशो यः | ५८७ | श्रीरामनवमी | ८३६ | एकादशगुणान् | ३४९ |
| अप्रायत्यं निहन्त्येव | २४६ | अग्निः | | कामतो मरणं | ४८९ |
| अब्दान्ते वाध | ४८९ | एकचित्यां समाहृत्य | ६९६ | कृत्वा मूत्रपुरीषं वा | २१३, २६७ |
| अष्टमांशे चतुर्दश्याः | ६१३ | अग्निवेद्यः | | कृत्वा यज्ञोपवीतं तु | २१२ |
| असपिण्डो यदि | ५९९ | बोधाद्यनमापस्तम्बं | ९ | गृहे यस्य मृतः | ५२५ |
| उच्छिष्टेन तु संयुक्ता | २७८ | अग्निवैश्वायनिः | | चण्डालपतितादीनां | ४३२ |
| एकस्मिन्मासे | ७०५ | त्रिपुण्ड्रं ब्राह्मणो | २९३ | चित्रकर्म यथा | ७३ |
| कूटस्थमन्तराले | १२६ | अग्निस्मृतिः | | जनने मरणे चैव | ४८१ |
| जननमरणयोः | ५३३ | व्याहादेकोदकानां | ४९८ | जात्रालिर्नाचिकेतश्च | ८ |
| ज्ञातीनां स्नानमेव | ५१० | पुंजन्मनि सपिण्डानां | ४९८ | तिस्रः कोट्यर्थं | १६१ |
| ततो गृहं समागम्य | ६०० | स्त्रीषु त्रिपुरुषं | ४९८ | त्रयोदश्यां ऋणपक्षे | ७४८ |
| त्रिंशतीत्य मातृतः | १२८ | अङ्किराः | | दम्पत्योः सह | ६३८ |
| दम्पती शिशुना | ५९० | अतिक्रान्ते दशाहे | ५४० | दासी दासश्च सर्वे | ४८६ |
| दायप्राप्तैः स्वरुध्या | २३ | अनभिमत उत्क्रान्ते | ५३९ | दाहकस्तु दशाहान्तः | ५३३ |
| दाहं विनालंकरणं | ५४४ | अनिर्दशाहे जनने | ५०४ | दाहकस्त्वा दशाहातु | ६३५ |
| न तिथिर्न च | ६०५ | अनुजातस्य तावत् | ५०७ | दाहयित्वा तथा | ५१४ |
| पित्रोः सपिण्डीकरणं | ६८४ | अन्नसत्रप्रवृत्तानां | ४८० | द्वादशाहे त्रिपक्षे | ६६५ |
| भुक्त्वा तु सुखमासीनः | ४५५ | अयुजो भोजयेत् | ७७७ | द्विविधं गृहितं | ४३३ |
| रजस्वलाया भोजनं | २७९ | अविशेषेण वर्णानां | ५११ | धर्मस्य संपदश्चैव | ८६९ |
| वाग्यतः प्राङ्मुख | ३३७ | आतुराणां विशेषो | ३७५ | न जातिकुसुमानि | ७८९ |
| सायमासीनः | ३२३ | आ द्वादशाहात् | २७७ | नारायणबलिः कार्यो | ४९० |
| शूर्पवायुर्नखा | २५६ | आममेवाददीत | ९६ | नाशौचं सूनके | ५०२ |
| सोदकवाससो | ५९६ | आम्रपुंनागबिल्वानां | २४१ | नाश्रीयुस्तद्विने | ६०६ |
| — १२९, ४९९, ५०१, ५०६, ५११ | | आर्तानां मार्गमाणानां | ८७० | पातके तु शतं | ८७० |
| अगस्त्यः | | आशौचं यस्य | ५४० | पिण्डं काकादिपक्षिभ्यो | ६०३ |
| अथाचान्तेषु | ८१३ | उत्थाय पश्चिमे यामे | २११ | पुराणश्रवणात् | २०४ |
| एकादशेऽन्दि | ६४७ | उत्पन्ने संकटे | १७४ | प्रच्छन्नानि | ३२१ |
| चैत्रशुद्धा तु | ८३६ | उद्वाह्य पुत्री | १४५ | प्रथमा प्रसृतिर्ज्ञेया | २१८ |
| नित्यमेव तु | ८३६ | | | प्रमाणानि प्रमाणज्ञैः | २ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|----------------------------|----------|-------------------------|----------|---------------------------|----------|
| अंगिराः | | संन्यासं चैव | २०७, ११९ | उभाभ्यामेव हस्ताभ्यां | २३० |
| प्राक् स्नानात् | ४९९ | संपूर्णा दशमी | ८३७ | ऊर्ध्वपुंड्र विहीनं | २९३ |
| प्राप्ते वेदानुवचने | ११३ | सतिलं दर्भेष्वसावेतत् | ५९७ | एकादशगुणान् | ३४९, १३५ |
| प्रायो नाम तपः | ८५९ | सयःशौचे तु | ४८१ | एकोद्विष्टे सपिण्डे | ७९१ |
| प्रथमेऽहि तृतीये | ६०५ | सर्वे वर्णाः सूतके | २७२, ४८५ | कौपीनयुगुलं | १८५ |
| चङ्घिः पिण्डप्रदानं | ६०१ | सर्वेषामेव वर्णानां | ४९५ | क्षमं पात्रं च | २०३ |
| ब्रह्मचारी शुना | २७०, १०४ | सर्वे वर्णः सूतके | ७१७ | क्षीरं लवणसंयुक्तं | ४२७ |
| ब्रह्मवर्चसकामस्य | ८७ | साध्वाचारा न तावत् | २७७ | गोत्रसंबन्ध | ८०५ |
| ब्राह्मणी तु शुना | १०५ | साध्वीनामेव | १६२ | घृतं वा यदि वा | ४३० |
| भूमिप्रदानं | ८७९ | सायं सगोपनार्थं | ८७६ | चतुरोऽयं वसेत् | २०५ |
| मातामहमातुल- | ५२६ | सायमायन्तयो | ८३८ | जन्मभे जन्मदिवसे | १४७ |
| मौंजीनिबन्धव्रत | १४७ | सूतके मृतकं चेत् | ५३० | ते तं तथेत्य | ७७८ |
| यज्ञोपवर्ति कर्णे च | २१२ | सूतके सूतिकावर्जं | ४९९ | तोयं पाणि | ८६५ |
| यत्तु क्षेत्रगतं | ४८० | सूत्रांतरेण यत् | ५७८ | दत्ते वाऽप्यथवा | ८०६ |
| यत्तु राशीकृतं | ५६ | स्नानं रजस्वलायास्तु | २७६ | दिवा स्वापं न | ४५४ |
| यत्पूर्वं मनुना | ६ | स्वपात्रे यत्तु | ४४६ | दैवमार्षे ततो | १७७ |
| यदा मनसि | १७३ | स्वसूत्रे विद्यमाने | ५७८ | न तावन्मुच्यते | १७६ |
| यदि कश्चिन्ममादेन | ४८७ | स्वाभिप्रायरुतं | ३६४ | न मृन्मयानि | ७८९ |
| यद्यप्यरुतचूडो | ५०९ | — | ५०९, ५५४ | न व्रतेनोपवासेन | १५८ |
| यस्तु छायां श्वपाकस्य | २६६ | अङ्गिरा स्मृतिः | ८६८ | नोपतिष्ठन्ति ये | ३१४ |
| यस्य संवत्सरात् | ६५२ | अत्रिः | | पार्वणं च यथा | १७७ |
| या स्त्री ब्राह्मणजातीया | १६२ | अंगुलीमूलदेशे तु | २३० | पिता पितामहो | ७६९ |
| युक्खिपवण | १३९ | अंगुल्या दन्तकाष्ठं च | २४१ | पिता भ्राता स्वसा | २०६ |
| यो दद्यात्कांचनं | ३६६ | अगोधूमं च | ७८१ | पुत्रो भ्राताथ | ३९९ |
| यः कश्चिन्निर्हरेत् | ५४६ | अनित्यं वै | २०२ | प्रथमेहि निवास | ७७८ |
| रजश्चतुर्विधं ज्ञेयं | २७७ | अपसव्यं ततः | ७९९ | प्राणाहुतौ घृताभावे | ४२७ |
| लौकिके वैदिके | ३९६ | अपः पाणिनस्त्राग्नेभ्यः | २२३ | प्रेतार्थं सूतकान्ते | ६४८ |
| वयोधिकां नोपयच्छेत् | १२५ | अविकोष्ट्याश्च | ४३८ | मिन्नमातृष्वसुः | ५२८ |
| विप्रे न्यूने | ५०९ | अविकोष्ट्याश्च | ८८२ | भूम्यां पादौ प्रतिष्ठाप्य | ४१८ |
| विरक्तः संन्यसेत् | १७३ | अशुद्रः स्वयमप्यन्नं | ४२८ | मधुपर्के च सोमे | २३९ |
| शयनासनयानानि | ४६९ | असाति प्रतिबन्धे | २०६ | मातामहपितृव्याणां | ५८९ |
| शवस्पर्शमधोद्वयाम् | २६४ | अस्नाताशी मलं भुंक्ते | २४५ | मासप्रोक्तेषु | ७३४ |
| शालामौ तु पचेत् | ३९६ | अहिंसा सत्यम् | १९० | मासप्रोक्तेषु कार्येषु | ६९२ |
| शुद्धा भर्तुश्चतुर्थेऽन्दि | २७७ | आकेशाग्रान् | ३२४ | मुखे पशुं पिते | २४० |
| शुद्रस्य प्रेतस्य | ५४२ | आर्चातोऽप्यशुचिः | ४५३ | मौनव्रतं महाकष्टं | ४२३ |
| षष्टिं कुलान्यतीतानि | १७५ | आर्त्तवा यदि | २७९ | यदि कर्ता व्रतस्थः | ५९४ |
| षष्ठे तथा द्वादशे | ८७ | आस्थेन न पिबेत् | ४२९ | रजस्वलायां स्नातायां | २७७ |
| संन्यसेद् ब्रह्म | १७२ | उभाभ्यामेव पाणिभ्यां | २३० | वपनानंतरं | २०५ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|--------------|------------------------|---------|-------------------------|---------|
| विवाहे वितते | १३७ | देशांतरमृते | १६२ | आथर्वणम् | |
| शब्देनापः पयः | ४२२ | नष्टे चन्द्रेऽष्टमे | ८८ | प्रणवं देवा | २९ |
| शाकभक्षाः पयोभक्षा | ९६ | न स्वपद्येषु | ७७ | यस्याग्निहोत्र | २१ |
| शिखिनस्तु श्रुतः | १८४ | निन्दा मृत्युपदं | ४६४ | हरेः पादाकृति- | २९२ |
| शुचौ देशे तथा | १९१ | मंत्रवत्संस्कृतस्यापि | ६२६ | आथर्वणिकम् | |
| शूद्रान्नं सूतकान्नं | ४४८ | विभवे चाग्निहीनस्य | ४४३ | यस्याग्निहोत्रं | ७३३ |
| षड्भिस्तु परतो | ७६९ | शुचिं देवाश्च रक्षन्ति | २२० | आथर्वणी श्रुतिः | |
| षोडशोद्वाहगर्भाब्दे | ५९३ | — | ६६२ | ब्रह्मसूत्रमहम् | १७९ |
| संध्यात्रयं तु | ३१२, ३१५ | अमरसिंहः (अमरकोशः) | | सखा मा गोपाय | १८० |
| संपर्काज्जायते | ५०० | १।४।१ | ७०२ | आथर्वसंहिता | |
| सामिकः पितृयज्ञान्तं | ३९८ | १।४।५ | ५२६ | ४।३।९।९ | १४३ |
| सिंहकर्कटयोर्मध्ये | २८७ | २।४।१३ | १० | आदित्यपुराणम् | |
| सुहृदन्नं गुरोरन्नं | ७८१ | २।४।९३ | ७८१ | अटवी पर्वताः | ७५८ |
| स्नानं त्रिषवणं | १९३ | २।७।३१ | ७८६ | आमंत्रितश्चिरम् | ७८० |
| हस्तदत्ता तु | ९७ | २।७।४० | ७६९ | चापं गते ततः | ३९१ |
| हस्तेन मुक्तं | ८०५ | व्रतीनामासनं | ७८८ | त्रिपुंड्रधारी सततं | ३०३ |
| हितं मितं सदा | २०२ | अमृतविन्दूपनिषद् | | दुर्वाससो मुनेः | ३०५ |
| हुंकारेणापि | ८०९, | मनो हि द्विविधं | १९३ | पक्षान्तरेऽपि कन्यास्थे | ७१६ |
| — | ३२, ४७५, ५२८ | तदव निष्फलं | १९५ | पितृन्संतर्प्य | ४०७ |
| अथर्वशिरस् | | अर्णलः | | प्रावृद्धतौ यमः | ७४७ |
| — | ३०१ | अन्नप्राशनवैवाहे | १४७ | ब्राह्मण्या भार्यया | ४२६ |
| अनुमृतिविषयः | | अर्णवः | | भगिन्यो बांधवाः | ४४० |
| पितुरूर्ध्वविधिं | ६४६ | अशक्तौ वा जलाभावे | २३६ | मधुकं रामठं | ७८१ |
| अज्ञगीतिः | | आगमः | | लिंगे स्वायंभुवे | ४४० |
| यो मामदत्त्वा | ४०९ | वैदिकं तु पुरा | ६२७ | वसन्ति पितरः | ८२२ |
| अपरार्कः | | सर्वेषामेव वर्णानां | ६२७ | सौराष्ट्रसिन्धु | ११७ |
| अधिमासमृतानां | ७३१ | आचारसारः | | स्त्रीशूद्रयोरर्धमानं | २१९ |
| अनार्यता निष्ठुरता | १३५ | प्रातस्तीर्थोवगाहन- | २४६ | आदिपुराणम् | |
| अभोज्यं ब्राह्मणस्यान्नं | ४४५ | मालती मल्लिका | ३८७ | अधर्मदेश | ९ |
| अष्टाक्षरेण देवेशं | ३८७ | शुचिं देशं विविक्तं | ४५७ | जातश्राद्धे न दद्यात् | ७९ |
| आचार्यो ब्रह्मलोकेशो | ४१७ | आत्रेयः | | संक्रान्तावुपवासेन | ७५० |
| कांसिकस्य तु | ४१९ | अंतःशवो यदा | ५४१ | सूतके तु मुखं | ४९९ |
| गर्भिण्यौ यस्य भार्ये | ५९२ | अभिषेकेऽपि नाक्षत्रं | ७०२ | आनुशासनिकम् | |
| छाया स्याद्वासवर्गः | ४६४ | कालेऽल्पदोषे | ६१० | आचाराल्लभते | ५ |
| जातिदुष्टं क्रियादुष्टं | ४३३ | मृन्मयान्यश्ममयानि | १७९ | कल्मषं गुरुशुश्रूषा | ७७ |
| दिवा कपित्थ- | ४३८ | — | ३४ | गृहानाश्रयमाणस्य | ४२६ |
| दुर्मृतौ सय एव | ४९० | | | यदा श्राद्धं पितृभ्यः | ८१९ |

| क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् |
|--------------------|----------|--------------|---------|---------------|---------------|
| आनुशासनिके | | ११११११८-२० | ५४७ | ११११०१११ | ९०० |
| अ. १०११६४ | ४४ | १११११५ | ९८ | ११११२०१२१ | ३८ |
| अ. १०२११९ | ५० | १११११६-१७ | ९८ | ११११२२ | ३८ |
| आपस्तम्बः (ध. सू.) | | ११११२०-२१ | २२४ | ११११२३-२४ | ३८ |
| ११११३१२६ | ४११ | ११११२१ | ११४ | ११११२४१२० | ८७२ |
| ११११४-५ | ६९ | ११११२५ | ११६ | ११११२४१२४ | ८७३ |
| ११११४१२ | ४२६ | ११११२२-१६ | १०८ | ११११२४१२५ | ८६८ |
| ११११६ | १०१ | ११११२५१२-६ | २२४ | ११११२५११ | ८८७ |
| ११११६-८ | ६८ | ११११२५१८ | २८० | ११११२५१३ | ८७९ |
| ११११९-१० | १०० | ११११२५१११ | २३५ | ११११२५१४ | ८८३ |
| ११११११ | ६९२ | ११११२५११३-१४ | २६६ | ११११२५११३ | ८७७ |
| ११११११-१२ | ९९ | ११११२५११-१२ | ३६० | ११११२६१४-५ | ४३१ |
| १११११४-१५ | १०४ | ११११२५११६-१७ | २६७ | ११११२६१७ | ८६८, ९३२, ९३३ |
| १११११६-१८ | ८८ | ११११२६१२-८ | २२६ | ११११२७१३-४ | ९०७ |
| ११११२७ | ८९ | ११११२६१८ | २२६ | ११११२७१७ | ९३५ |
| ११११२७-३१ | ८९ | ११११२६१८-१५ | २३६ | ११११३१२३ | ८६३ |
| ११११३३ | २८ | ११११२६१९ | २३६ | १११०१२७११० | ८९१ |
| ११२-३ | २ | ११११२६११० | २३७ | १११०१२८११-५ | ८८६ |
| ११२११० | ९४ | ११११२६१११ | २३८ | १११०११११५-१६ | ९०१ |
| ११२१११-१६ | ११९ | ११११२६११२-१३ | २३८ | १११०१२८११६-१७ | ८६८ |
| ११२११२ | १४८ | ११११२६११४ | २३५ | १११०१२८११९-२० | ८९४ |
| ११२११९-२४ | ११५ | ११११२६११९-२० | ५०३ | १११०१२९१६ | ८७४ |
| ११२१३० | ११३ | ११११२७१११-१३ | ४६८ | १११०१२९१७ | ८७४ |
| ११२१३८ | ९३ | ११११२७ | ११२ | १११०१२९१७-१८ | ९०१ |
| ११२१४०-४१ | ९४ | ११११२७११४-१९ | ४३७ | ११११३०१७ | ४६२ |
| ११३११२ | ९४ | ११११२७१२० | ४३७ | ११११३०१८ | ३३६ |
| ११३१११४-१५ | ५४३ | ११११२७१९ | ४१८ | ११११३०१८-९ | ३१५ |
| ११३११०१५ | ५८५ | ११११२७१२१-२५ | ४३७ | ११११३०१९ | ३३८ |
| ११३१११-२१ | ११५ | ११११२८-१९ | १११ | ११११३०११० | २५१ |
| ११३१११२३-२४ | ३६८, ३७० | ११११२१-२२ | १११ | ११११३०११०-१४ | ४६२ |
| ११३११२ | १३७ | ११११२९०-१३ | ४४३ | ११११३११९-१७ | ४६२ |
| ११३११५-१८ | १४४ | ११११२९१२-१० | ४४२ | ११११३१११९-२१ | ४६३ |
| ११३१२५-२६ | ९७ | ११११२९११४-१५ | ४४४ | ११११३१११-३२ | ४३१ |
| ११३१३१-३६ | ९७ | ११११३५ | १११ | ११११३१११ | ४१९ |
| ११४११२११-२ | ३७० | ११११३११२-१७ | ९०१ | ११११३११४ | ४२३, ४७८ |
| ११४११२१३-७ | ३७१ | ११११३१२० | ८६४ | ११११३२१९ | २४३ |
| ११४१२१९ | ३७२ | ११८११९-२० | १११ | ११११३२१९-२७ | ४६२ |
| ११४१२११५ | ४०३ | ११९१४ | ३८ | ११११३२१७ | २५६ |
| ११४११३११ | ४०३, ४०५ | ११९१६-८ | ३८ | १११२१९ | ३८ |

| क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् |
|-------------|---------|----------------|---------|---------------|---------|
| आपस्तम्बः | | २।२।३।४ | ३९९ | २।१२३।११ | ५७९ |
| १।१३-२२ | २१ | २।२।३।१०।१३-१४ | ३९९ | २।१२४।११-८ | १६७ |
| १।१३।६-७ | २९ | २।२।३।१२-१४ | ३९८ | २।१०।१-२ | ४३ |
| १।१४।१-२ | २१ | २।२।३।१५ | ४०० | २।१०।३ | ४४ |
| १।१४।१४-२२ | १०८ | २।२।३।१६-१७ | ३९७ | २।१०।४ | १८ |
| १।१४।२१ | ५८९ | २।२।३।१९ | ४०० | २।१०।१८-१९ | ५० |
| १।१४।२६-३१ | ११० | २।२।३।२०-२३ | ३९९ | २।१०।२७।८ | ८९१ |
| १।१५।१ | ९२ | २।२।४।१-९ | ३९९ | २।१०।२७।९ | ८९३ |
| १।१५।१२ | ९८ | २।२।४-१४ | ४१५ | २।१०।२७।११-१३ | ८८७ |
| १।१५।२२ | ९ | २।२।४।८ | ३९७ | २।१०।२७।१६-१७ | ८८५ |
| १।१५।२३ | २१७ | २।२।४।११-१२ | ४०८ | २।११।५-९ | १०७ |
| १।१८।१ | ५७ | २।२।४।१६-१९ | ४०९ | २।११।१५-१६ | १२७ |
| १।१९।६ | ५५३ | २।२।४।२१-२२ | २५३ | २।११।१७ | १३४ |
| १।२०।६-७ | ३ | २।२।४।२३ | ४५४ | २।११।२९।१-२ | ८६३ |
| १।२०।८-९ | ३ | २।२।८-९ | २६५ | २।१२।१३-१५ | २१० |
| १।२०।१०-११ | ६१ | २।३।६।३ | ४१२ | २।१३।१ | १८ |
| १।२०।१२-१३ | २८६ | २।३।६।५ | ४१२ | २।१३।७-९ | ५ |
| १।२०।१२-१६ | ६१ | २।३।६।७-८ | ४१४ | २।१३।१० | ४८, १०३ |
| १।२१।१-४ | ६१ | २।३।६।१४-१५ | ४१४ | २।१३।११ | १४२ |
| १।२१।२७, २९ | ३८ | २।३।७।१-३ | ४१६ | २।१५।१२ | ४८ |
| १।२१।५ | २८, १५३ | २।३।७।१७ | ४१३ | २।१५।१४-१८ | ३९८ |
| १।२५।१० | ८८३ | २।४।८।५-९ | ४१५ | २।१५।१९-२५ | ८५, ८६, |
| १।२६।८-९ | १२२ | २।४।९।५-६ | ४१२ | २।२०।२२ | ७६ |
| १।२७।११ | ६९ | २।४।९।१०-१३ | ४१२ | २।२१।२ | १७२ |
| १।२८।३-५ | ५८ | २।४।९।१३ | ४२४ | २।२१।६ | १२१ |
| १।२८।१९-२ | १६४ | २।४।९।७ | ४२६ | २।२१।१०-१७ | १९१ |
| १।२९।८-१८ | १५३ | ३।४।२१-२२ | ९२ | २।२१।१२-१३ | १५१ |
| १।३०।१५-२० | २१४ | २।५।१८ | ३१ | २।२४।२ | १२४ |
| १।३०।२१ | २१५ | २।६।१५।२ | ५२९ | २।२५।१५ | ६५ |
| १।३१।२ | २११ | २।६।१५।१३ | ४०५ | २।२६।१-४ | ६५ |
| १।३१।३१ | २१२ | २।७।१७।११-१२ | ७७६ | २।२७।२-६ | १४ |
| १।३२।२ | ७७ | २।७।१७।१६ | ८२० | २।२७।१५ | ६८ |
| १।३७।४१ | ९७ | २।८।१८।१-२ | ४३६ | ३।७।१७-१८ | १५० |
| २।१।१।२ | ४१७ | २।८।१९।७-८ | ४२४ | ३।७।१९-२२ | ३५४ |
| २।१।४-६ | ३४९ | २।८।१९।३-४ | ४२० | ३।९।१ | ७४ |
| २।१।१।१३-१४ | ३५४ | २।८।१९।५-६, | ४२४ | ४।१०।२-४ | ८७ |
| २।१।२।२-३ | ३ | २।८।१९।९-११ | ४२४ | ५।१६।१ | ८२ |
| २।१।१५ | ४६२ | २।९।८-९ | ४३ | ६।१५।८ | ८१ |
| २।१।२३ | ७७ | २।९।२३।१०-१२ | १६७ | ६।१५।९-१० | ८२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------------|---------|---------------------------|----------|----------------------------|----------|
| आपस्तम्बः | | किञ्चिदेव तु | ८७७ | भोजयेद्वाह्मणान् | ७७० |
| ६१५।११ | ८२ | रुष्णपक्षेऽष्टमी | ८५१ | मासि मासि कार्यं | ७५१ |
| ६१६।६-७ | ८३ | केशान्प्रकीर्य | ५९७ | यत्नेन धारयेत् | ४१९ |
| ८।२।९ | ८१५ | क्षत्रविट् क्षत्रियाणां | ४९५ | यद्गारेषु व्यवशातेषु | ३६३ |
| अग्नीमित्रभाग् | ५८१ | घृतं तैलं च | ४३० | यदि जीवपिता | ७४२ |
| अग्नीनाधायैतस्मिन् | २४ | छन्दसां साधनार्थं | ११७ | यदि पत्नी विदेशस्था | ८१७ |
| अचूडायां तु | ५१४ | तमष्टधा कृत्वा | ७४४ | यदीष्टया यदी | ८५६ |
| अजिनं मेखला | ११७ | तयोर्यः पूर्वं | ५७२ | यदुदिते जुहोति | ३५८ |
| अटव्यां ये | ७४८ | तृतीयेऽपि नवं | ५१३ | यद्याहिताभिः ५५६, ५७०, ५७४ | |
| अथास्य दक्षिणेन | ५८० | तेषामुत्सन्नाः | १ | यद्येतस्मिन्कृते | ६३३ |
| अथैनं चित्तावुपर्य- | ५८३ | त्र्यहः निरशनं | ९३६ | यश्चार्थहरः | ५६३, ६७० |
| अथैनमुपोषति | ५८३ | दहनदोषं जोषयते | ५८२ | यादच्छिक्कं तु | २८३ |
| अध्वर्युरेष | ४८२ | दारकर्मणि | २५ | या माध्याः पौर्णमास्या | ७४४ |
| अनशनान- | ६८६ | दुहितृमते अधिरथं | ६८१ | यायावरा ह | ३५९ |
| अनुपेतान् कन्याश्च | ५१३ | द्वादशगृहीतेन | ५७६ | यावज्जीवं | १६१ |
| अन्नदाने न | ५२ | द्वावेवाश्रमिणौ | ४४१ | येषां परंपरा | १३१ |
| अपरपक्षे पित्र्याणि | ८०३ | द्वेधा दक्षिणायान् | ६७७ | लौकिकानां पाक | ६८ |
| अपरेयुस्तृतीयस्यां | ६०७ | धून्वने अन्वारंभणे | ५८४ | विना तु सततस्नानं | २८३ |
| अपाङ्क्येऽर्हता | ३४८ | न ग्राममध्यात् | २४ | व्यापादयेद्य | ४८९ |
| अपि वृक्षसूर्य | ३५७ | नापितकर्माणि च | ५८६, ५९१ | शरंगारा अभ्यूहते | ३६३ |
| अष्टवर्षा भवेद्गौरी | १३५ | नालिकाभिर्न | ३५३ | शूद्राणां हीनजातीनाम् | ६६७ |
| अश्वश्वश्वश्वे | २४७ | निमन्त्रयेत् व्यवहारान् | ७१८ | शिरः परिवेष्टनं प्रथमं | २१३ |
| अहरहर्जमानः | ३५५ | निर्मथ्येन पत्नीम् | ५६९ | श्वोभूतेन्वष्टकां | ७४४ |
| अग्नि शौचं तु | २१८ | नीलकर्षणकारी | १७५ | संकल्पश्चाद्वे | ७३८ |
| आकाशं गनयेत् | ६०२ | नीलीरक्तं यदा | ९१३ | स न मन्येत | ३५८ |
| आग्निद्वे मासिके | ७०४ | तोर्ध्वं नाधो न तिर्यक् च | २१२ | सप्तमात्परतो यस्तु | ७११ |
| आत्मारूढेष्वग्निषु | ५७३ | पयसा पशुकामस्य | ३६० | समानप्रवरां कन्यां | १२७ |
| आहिताभिं विजने | ५७५ | पर्वणि केशश्मश्रूणि | ५९४ | समित्युष्पकुशा | १०९ |
| आहिताभिनर- | ८४७ | पितृपितामह | ७५१ | समुद्रो वा एष | ३५७ |
| आहिताभिरनङ्गवान् | ९७ | पुंसवनं व्यक्ते | ७८ | सर्वान्लोकान् | ७०२ |
| उत्तरं पितृमेधं | ५७९ | पुमांसं जनयति | ७८ | सर्वेषामनु | ४९६ |
| उपर्यग्रावरणी | ३६५ | पौर्णमास्यां तु | ८५५ | सायं द्वाविंशतिः | ९३६ |
| उषस्युपोदयं | ३५७ | प्रतिपत्सद्वितीया | ८२६ | सायं प्रातर्विनार्थं | ९३६ |
| ऊर्ध्वं प्राणा | १०८ | प्राजापत्यं सौम्य | ११७ | सायं प्रातस्तथैवोक्तं | ९३६ |
| ऋक् श्वशुर | ११० | ब्रह्मविदाप्रोति | ५५२ | समिन्तोन्नयनं | ७८ |
| एकशाखां समारूढ | २६६ | ब्राह्मणान्भोजयेत् | ७६७ | सौम्यव्रतं प्रकुर्वीत | ११७ |
| एवं गोदान- | ११९ | भस्म स्यादग्नि | २९० | हवींषि च | ५८१ |
| एवमहरहरअलि | ५९७ | भुक्वतोऽनुव्रज्य | ६७७ | - ८७, १२१, ५०४, ५६९, ५७०, | |
| औदुम्बरीमासंयां | ५८१ | भूमौ निक्षिप्य तद्द्रव्यं | २४० | ५७२, ५७३, ५७६, ५७८ | |
| औपसनेनाहिताभिं | ५६९ | | | | |

| क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् |
|-----------------------------|---------|---------------------------|---------|-----------------------------|---------|
| आपस्तम्बः | | वेदमादौ समारभ्य | ३६९ | उपभोगादन्यत्र | २१४ |
| ५८४, ६२७, ६५०, ६८४, | | शृणु पाण्डव | ३८६ | उपेतपूर्वस्य | ६३३ |
| ६८७, ६८९, ७१०, ८०५, | | श्रुतिः स्मृतिर्ममैवाज्ञा | ४ | एकत्रैव दिने | ६९५ |
| आपस्तम्बगृह्यसूत्रम् | | सांगोपांगान् तथा | ४१६ | एकरात्रं वसेत् | १९१ |
| २१५१५-१८ | ३६४ | स्नातः शुचिः शुचौ | ४१८ | कुलमग्रे परिक्षित | १३४ |
| ३१७१९ | १५० | हरिरचिन्त्यात्मा | २८७ | कुन्तापं वालस्त्रियं | ३८८ |
| ४१७०१० | ९४ | आश्वलायनसूत्रम् | | रुतसायमाग्नि | ७७६ |
| १६१३ | ८३ | ११२११ | ४०५ | क्षत्रवृत्त्या वैश्यवृत्तिः | ६० |
| आपस्तम्बपरिशिष्टम् | | ११२११-२ | ३९७ | गंगा गोदावरी | ७५८ |
| वैश्वदेववलि | ४०३ | ११२१८-९ | ४०० | चतुर्थे पञ्चमे | ६०७ |
| आपस्तम्बस्मृतिः | | ११५१४-६ | १४८ | चत्वारि वेदग्रतानि | ११७ |
| अथ वक्षे ह्याचमनं | २२१ | ११९११ | ६७१ | जपेच्च रुद्रवत् | १६१ |
| आयुर्वेदः | | ३११४ | ४०५ | तांबूलरुसरा | ७८७ |
| सौरवृहस्पति | ७०१ | ३१४११ | ३६७ | त्यक्तसंगं मुनिं | ७६८ |
| आरण्यकोपनिषद् | | ३१११ | ६६४ | त्यागान्मूत्रपुरीषस्य | २१५ |
| उपवीतं भूमा | १७९ | ४१११६ | ५८२ | ज्ञानाध्ययन | ८१९ |
| गृहस्थो ब्रह्मचारी | १७२ | ४१२११-३ | ५८१ | देवपूर्वं तु यच्छाद्रं | ६६३ |
| आरण्युपनिषद् | | ४१२१९ | ५८४ | दौहित्रस्तु गुणैः | ७७० |
| अरणि प्राजापत्यः | १८६ | ४१२१९-१० | ५८१ | नक्षत्रे क्षत्रियाणां | ६३१ |
| ब्रह्मचर्यमहिंसा | १९२ | ४१४१९ | ५८१ | नवमिश्रं षडुत्तरम् | ६६१ |
| आरुणिश्रुतिः | | ४१४१९-१६ | ५९८ | न शूद्रं भोजयेत् | ८१८ |
| काममेकं वैणवं | १८० | ४१४१६ | ६०६ | नैकत्रदिवसे | ६९६ |
| यतयो भिक्षार्थं | २०१ | ४१४१२६-२७ | ५२९ | पत्न्यां रजस्वलायां च | ६७७ |
| वर्षासु ध्रुव | १९१ | ४१४१२६-२७ | ५२९ | पयसा नित्यहोमो | ३६० |
| दाने सुतोदये | ४८१ | ४१५११ | ५२९ | पिण्डान्निर्वृणुयात् | ७४२ |
| आश्वमेधिकम् | | ४१७१२-५ | ६०८ | पितुरेव पितुः | ७२१ |
| अर्कपुष्पाणि | ३७४ | ४४११९ | ८०१ | पितृनावाह | ७९७ |
| उत्थाय च पुनः | ४२६ | अथाभ्युदधिके | ५२५ | प्रदोषान्तो होमकालः | ३५८ |
| उदक्ष्यामपि चण्डालं | ४२८ | अदंतजाते पर्याते | ५०८ | प्रधानस्य क्रियायां | १५ |
| उपप्लवे चन्द्रमसो | ७१७ | अनवैक्षमाणा | ५८४ | प्रागंङ्गजलात् | ८१३ |
| दूराध्वगं श्रान्तम् | ४१२ | अपराह्णे प्रातः | ३५७ | प्राग्बोद्धुमुख आसीनः | २४३ |
| पचनाग्निं न गृहीयात् | ४६६ | अप्यनुदुहो | ७४५ | प्राचीनाग्रान् | ७५६ |
| पाणिना जलमुद्धृत्य | ४२१ | आ दन्तजाते च | ५१० | प्राचीनावीती | ८०२ |
| पादाभ्यगाम्बु | ४१४ | आपन्नश्वाशुचिः | ४७८ | प्रातर्मुहूर्त्ताद्वार्क | ५९५ |
| | | अविप्लुतब्रह्म | ७६७ | बांधवानां स्वजातीनां | १५६ |
| | | अस्थनां संचयनात् | ५०२ | भुक्तवत्स्वना | ६७७ |
| | | आपन्नश्वाशुचिः | ३३८ | भुक्तवत्स्वाचांतेषु | ८१६ |
| | | आहार्येणानाहिताग्निः | २५ | भोक्ता भोजयिता | ८१० |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|--------------|--------------------------|----------|-------------------------|---------|
| मन्वादिभ्यो युगादिस्तु | ७०६ | पूर्वेयुरपरेयुर्वा | ८५२ | माधुकरम्— | २०० |
| मासे त्वज्ञायमाने | ६३१ | शिवरात्रिघृत | ८५१ | माषमज्जनमात्रा | २२२ |
| मृते भर्तृपुत्रा | १६० | उज्ज्वला | | मूत्रपुरीषरेतः | ४६७ |
| यन्मास्येवादिदकं | ६९३, ६९५ | पृ. २७।८ | ३७२ | यत्रोक्तं यत्र वा | ९३१ |
| यत्र स्युर्बहवः | ६०१ | अपरेणाम्नि | ४०३ | यथाकथंचिदपि | ७६८ |
| यया कयाऽपि | ५७ | उत्तररामायणम् | | यस्तु ब्राह्मणो | ८९१ |
| लाक्षां लशुनं | २०३ | ये च मद्विषया | ६०१ | विड्वराह | ७८६ |
| वरस्योदक् स्थितां | १४९ | उपमन्युः | | व्यभिचारिणी | १६३ |
| वामं वामेन | १०८ | अनपत्या च | १६२ | व्यभिचारिणीं भार्या | ८९३ |
| विप्राणां दासवृत्तिः | ६४ | शिवलिंगं तु | ४४ | शयनस्य शिरस्थाने | ४०० |
| शर्मन्तं ब्राह्मणस्योक्तं | ८१ | उपनिषद् | | सच्छूद्रः स्नायात् | ६८ |
| शेषयेद्भोजने | ८१० | दश वा नव वा | ४९४ | स्नात्वाऽनुपहतं वस्त्रं | २५२ |
| श्रौतं वा यत्र | १५ | उशनाः | | स्वल्पाशौचस्य | ५३१ |
| सरुन्निमज्ज्य | ५९७ | अग्निसर्माप | ३९६ | — | ९०५ |
| सतिलं तण्डुलं | ५८३ | अत्यक्त्वा जुहुयात् | ३९८ | ऋग्विधानम् | |
| सत्पात्राणामलाम्भे | ७६९ | अनुगम्य मृतं | ५८५ | इन्द्राय सोमसूक्तेन | ८११ |
| समानो मन्त्रः | ६७७ | अपत्नीकः प्रवासी | ७१५, ८२१ | यदादीध्ये जपेत् | ३१४ |
| सर्वाश्चेदनुगता | २४ | अर्धमण्डलसंप्राप्ते | ३५८ | ऋग्वेदसंहिता | |
| सहैवाभ्युदय | ७५३ | आचार्येणाभ्य | १७२ | २।२।२४ | ३९० |
| साग्राभ्यामजु | २३३ | आमन्त्रितस्तु यः | ७७९ | २।२।२५ | ३९१ |
| सार्वकालिकं | १४८ | एकोद्विष्टं न | ६६३ | २।३।१४ | ३४७ |
| स्मार्तार्धेनाग्निभिः | ५६९ | कुसुमं नालिकाशाकं | ४३४ | २।३।२८ | ३०० |
| स्वयं पर्वणि | ३५६ | गमने तु घृतं | ८८८ | ५।१।२२ | ८३ |
| हेमन्तशिशिरतो | ७४४ | गोमयोदकैः | ७८१ | ७।४।९ | ३०० |
| — | ६२, ७८, ४००, | ज्वराभिभूता या नारी | २७९ | ७।६।१४ | ३४७ |
| ५२९, ५८२, ५९१, ६०५, | | तेनोदकेन | ३५३ | ७।८।३ | ३१४ |
| ६८०, ६८९, ७९४, ८१२ | | दक्षिणाभिमुखो | २४२ | १०।१।७-६ | ४०९ |
| आश्वलायनकारिका | | दशकृत्वः पिबेत् | ९१४ | ऋतुः | |
| आधायाश्नानमेकं | ६०३ | द्विचन्द्रदर्शनं | ६१३ | श्राद्धं कृत्वा पुनः | ६९४ |
| चरुमुद्धृत्याज्य | ६४९ | न वेष्टिताशिरः | २५२ | ऋग्यजुः | |
| स्नातः पवित्रपाणिः | ५७७ | नाङ्गुलीभिर्दन्तान् | २४१ | आब्दिके चैव | ७१६ |
| आश्वलायनपरिशिष्टम् | | नादत्त्वा मृष्टमश्रीयात् | ४२७ | आशौचमन्तरा | ६१२ |
| ३।१।८ | ६४५ | नालिकाशण | ७८४ | एकादशी न | ८३८ |
| आश्वलायनस्मृतिः | | परान्नं परवस्त्रं | ४४५ | एकोद्विष्टे तु | ६५४ |
| तिलोदकं प्रदातव्यं. | ७४५ | पितुः पितामहे | ६८० | कृत्वा पूर्वं मृतस्यादौ | ६९७ |
| ईशानसंहिता | | पृथक् चितिं समा | १६२ | कृत्वा पूर्वमृतस्यादौ | ६३९ |
| एवमेतत् घृतं | ८५२ | भोजनं तु न | ८१० | जातकर्मणि | ६९२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|----------|-------------------------|----------|-----------------------|----------|
| ऋष्यशृंगः | | एकरात्रं वसेत् | १९० | कल्पपरिशिष्टम् | |
| धाराशौचं न कर्त्तव्यं | २१६ | एकादशीमुपवसेत् | ४४९, ८३८ | मृताहिताग्नेः | ५७० |
| पत्न्याः पुत्रस्य | ६४० | तृतीयाक्षत्रियो | १२८ | कल्पसारः | |
| पारणाय न लभ्येत | ८४३ | त्रीनुद्दिश्य तु | ७३६ | अमत्योढा सगोत्रा | १२७, ९०२ |
| पुत्राणां मध्यमो वाऽपि | ५५६ | नमस्कृत्य तथा | २०२ | कल्पसूत्रकाराः | ३०० |
| पुत्रेषु विद्यमानेषु | ५५८ | नवश्राद्धं मासिकं | ६५४ | ऋषयः | |
| प्रथमेऽहनि यत् | ६०४ | नवश्राद्धे मासिके | ६०५ | प्रवेशनादिकं | ५८५ |
| भवेद्यदि सपिण्डानां | ६३८, ६९६ | यज्ञेषु पशु | ९०९ | पित्रोः प्रत्यादिदकं | ३८२ |
| यत्र त्रिरात्रं | ५११ | यत्नोत्सर्गं गृहीत्वा | ८९२ | मनुष्यवर्जं विप्राणां | ४९० |
| यस्मिन् स्थाने कृतं | २१६ | शौचमाचमनं | ४७९ | अनुगम्य शवं | ५४२ |
| वाससा यज्ञोपवीतार्थान् | ९२ | श्लेष्माद्युपहतानां | ४६७ | काठकम् | |
| शुचीभूतेन दातव्यं | ७१६ | कपर्दिः | | यज्ञोपवीतं | १८६ |
| संवत्सराति | ७३२ | अधोभागस्य | ५९१ | काठकगृह्यम् | |
| सपिण्डीकरणं येन | ६६६ | अपत्नीको | २५ | प्रवृत्तं मलमासात् | ७३३ |
| सर्वत्रैकादशी | ८४३ | आधारदावाग्नि | ७९३ | मलेऽनन्यगतिं | ७३३ |
| स्त्रीणामायस्य वै | ६८२ | अस्ति स्वामित्व | २६ | महालयाष्टका | ७३२ |
| — | ६४०, ७३२ | आहिताग्निः पूर्वमृतां | ५६९ | यस्मिन्मासे न | ७२४ |
| ऐतरेयब्राह्मणम् | | नष्टोत्सृष्टानल | ५७१ | रविसंक्रमहीने | ७३५ |
| ७।५।५ | ९३ | पत्नीदाहोपयुक्ता | २६ | विवाहदिवसात् | १२३ |
| और्वः | | प्रजापतिमुत्तान् | ३५ | सोमयागादि | ७३३, ७९६ |
| आस्थं प्रक्षाल्य | ४५३ | यदि त्वनेक | २५ | काठकब्राह्मणम् | |
| बालापत्याश्च | १६२ | कपर्दिभाष्यम् | | चतुर्वर्णेषु | २०१ |
| बालापत्याश्च गर्भिण्यो | ६४१ | ब्रह्मविद्भ्यः कर्तव्यो | ५७९ | काठकश्रुतिः | |
| कठवल्ली | | नष्टोत्सृष्टा | २५ | एताद्वि देवपितृणां | ७६० |
| अशरीरं शरीरेषु | १९५ | विच्छिन्नाग्नेः | २५ | सशिक्षान् केशान् | १७९ |
| कठशाखा | | कपिलः | | कात्यायनः | |
| धृतोर्ध्वपुंड्रो | २९२ | अद्रयः स्वाहा | १७९ | अकाले चेत्कृतं | ६९१ |
| कठश्रुतिः | | कर्मप्रदीपः | | अक्रिया त्रिविधा | ५७८ |
| त्रिगुप्तातमश्रीयात् | ४४० | देवाचने जपे | ३२३ | अग्निहोत्रादि | १५७ |
| कण्वः | | वामहस्तेन गणयन् | ३२३ | अथ सपिण्डीकरणं | ६६४ |
| अग्निमतोपि | ३९६ | कर्मप्रदीपिका | | अथानवेक्ष | ५८४ |
| अग्निहोत्रहवं | ४७९ | अनन्तरममा | ६६८ | अनन्तर्गर्भितं | २३३ |
| अथ वेदेतिहास- | २२६ | कन्याबालकयोः | ५०८ | अर्निष्येनामंत्रितो | ७७९ |
| उद्योपरिविद्धा | ८३९ | कल्पकारिका | | अनिवृत्ते दशाहे | ५०३, ५०६ |
| एकमध्ययनं | ९४४ | पत्युर्वेदामिसंस्कारे | ६४४ | अनुजा वाऽग्रजा वापि | ५६६ |
| एकमुद्दिश्य यत् | ६५८ | लोकाग्नावितरौ | ५७२ | अन्वाधानं भूततिथ्यां | ८५७ |
| एकमुद्दिश्य | ७५७ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|----------|--------------------------|----------|--------------------------|---------|
| कात्यायनः | | कात्यायनः | | कात्यायनः | |
| अपत्नीको यदा | ६८६ | कर्मादिषु च | ७५३ | नानिष्ठा तु | ७५५ |
| अपत्नीकः प्रवासी | ६८८ | कर्षूसमन्वितं मुक्त्वा | ५६२, ७१८ | नान्दीमुखात् | ७५६ |
| अपत्यार्थं स्त्रियः | १३४ | कालातीतिषु | ९९ | नाष्टकादौ भवेत् | ७५५ |
| अपरपक्षे श्राद्धं | ७४६ | कुशवत्यां भूमा | ७९९ | निक्षिप्यामि | ३५६ |
| अपरेद्युस्तृतीये | ६०७ | रुच्छ्रांस्तु चतुरः | १७६ | नित्योपवासी | ८५० |
| अपुत्रस्याथ कुलजा | ५६३, ५६६ | गणशः क्रियमाणेषु | ७५३ | निर्वर्त्य वृद्धितंत्रं | ६५७ |
| अपुत्रोऽहं प्रदास्यामि | ६८१ | गन्धान् ब्राह्मण | ८०१ | नृणां भोजनकाले | ४३० |
| अभावे शिष्यान् | ७७० | गायत्रीं मधुमतीं | ८१२ | परेऽह्नि घटिका | ८५६ |
| अर्थवादं हरेः | ३५१ | गृहीत्वोदुंबरं | ८४९ | पालाशः समिधः | ३६० |
| अल्पत्वाद्वोम | २४६ | ग्राम्याभिरोषधीः | ७८३ | पिंडान्वाहार्यकं | ७४१ |
| अव्यक्तलिंगा | १९३ | घृतेनाभ्यक्त | ५८० | पितृमातृस्वसृ | ८४८ |
| अश्वस्तु जपेत् | ८०७ | चंडालपतितो | ४२८ | पितृवंश्या मातृवंश्या | ३८० |
| अष्टवर्षाधिको | ४४९, ८४७ | चण्डालसूतिको | २६५ | पित्रा श्राद्धं न | ५६६ |
| असंस्कृतोऽनपत्यश्च | ५५९ | चतुर्दशी दिनान्ते तु | ८५६ | पित्र्ये यः पङ्क्ति | ६८६ |
| असमक्षं तु | ३५६ | चत्वारि पात्राणि | ६७४ | पुत्रः शिष्योऽथवा | ५६७ |
| आधाने होमयोः | ७५५ | चेतोवद्भिर्हते | ४९० | पुत्रोत्पत्तिप्रतिष्ठासु | ७५५ |
| आपयनमौ | ७१५ | छायां यथेच्छेच्छ | ३८० | पुरोहितस्य गोत्रेण | ६८२ |
| आपोहिष्ठादिभिः | २९० | जान्हव्यादित्यसम्भूता | २८८ | पूर्वं मृतस्य | ५७० |
| आमंत्रितोऽन्यन्न | ७७९ | जुहुषुश्च हुते | ३६२ | पूर्वदत्ता तु या | १३८ |
| आमपात्रेऽन्नमादाय | ५८२ | तत्प्रयुक्तोपवासस्य | ८४४ | पूर्वामुक्तो धृतिं | २४३ |
| आवर्तनात्पाक् | ८५५ | तथानवैक्षमेत्यायः | ५९७ | पेतुकं प्रथमं | ७९९ |
| उत्थायार्कं प्रतिप्राप्य | ३२० | तर्जन्याद्विभृयाद्रौष्यं | २३२ | प्रत्यब्दं यो यथा | ६९९ |
| उद्धृत्य घृताक | ८०१ | तेषामभावे तु | ५६४ | प्रथमेऽह्नि तृतीये वा | ६१३ |
| उद्धृत्य हविरासिच्य | ३९९ | तैलमुद्धृतं | ७८७ | प्रधानस्याक्रियायां | ६५६ |
| उन्मत्तः पतितः | १३५ | त्रिकालमेक | १९८ | प्रवृत्ते श्रावणे | २८८ |
| उपन्यस्तेन | ५५ | त्रिवृतं चोपवीतं | ९० | प्रवेशाद्वरुणस्याष्टु | २७१ |
| उपवासित्व शक्ता | ८४८ | त्रिवृदूर्ध्वं वृतं | ९० | प्रत्यक्षशवसंस्कारे | ५५५ |
| उपवासे यदा नित्यः | ७२३ | दक्षिणं पातयेत् | ७९४ | प्रत्यब्दं यदुपाकर्म | ३५ |
| उपवासो यदा | ८४८ | दक्षिणाशिरसं | ५८३ | प्रवरैरेषामविवाहः | १२७ |
| उपाकर्माणं चोत्सर्गे | २८९ | दत्तानूढा च | १०३ | प्रव्रज्यावसिता | ९१९ |
| ऋतुस्नातां द्विजो | ८९३ | दुर्बलं स्नापयित्वा | ५५३ | प्रातः स्नात्वा | ८५० |
| ऋत्विजां च | ९०९ | देशान्तरस्थकृषि | १५२ | प्रावृट्काले महानय | २८८ |
| एकदण्डधरा | १८६ | द्वे बहूनि निमित्तानि | ६९४ | ब्रह्मचर्याद्ब्रह्मात् | १७२ |
| एकादशाहं निर्वर्त्य | ६६८ | धनुः सहस्राण्यष्टौ | २५५ | भार्या भर्तुर्मतेनैव | १५६ |
| एकादशीषु रुष्णासु | ८४५ | ध्वजाकारं निराकारं | ४०१ | भार्या भर्तुर्मते- | ८४७ |
| एकादश्यामुष | ८३८ | नभो नभस्ययोर्मध्ये | २८७ | महापापं चातिपापं | ८६७ |
| एवं रक्तोदकान् | ६०४ | न यष्टव्यं चतुर्थेऽंशे | ८५४ | मातृयागाक्रिया- | ७५३ |
| कर्कटादौ रजोदुष्टा | २८८ | नांगुष्ठादधिका | ९८ | मुखे वल्लं | ५८० |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|---------|-------------------------------|----------|--------------------------|----------|
| कात्यायनः | | सपवित्रेषु | ७९९ | कारिकारत्नम् | |
| यजनीयेऽहि | ८५८ | सपितुः पितृकृत्येषु | ७३७, ७४२ | अद्याहात् द्वादशाहात् | ६९० |
| यत्र दिङ्निचयो | १५ | सप्त दर्भाः शुभा | २३१ | अनग्निं गर्भिणीनाथं | ७७१ |
| यथाहनि तथा | २४६ | सर्वप्रायश्चित्तं च | ८४ | मातुः पित्रोर्मासिकादीन् | ७२२ |
| यन्नाम्नातं स्व- | १५ | सर्वेषामेव वर्णानां | ६६७ | कावर्णाजिनिः | |
| यवास्तिलार्थः | ७५५ | सव्यान्वारब्धेन | ७३७ | अत ऊर्ध्वं न | ६५९ |
| यस्त्वाधायाग्नि | ७७३ | सशिखं वपनं | ११५ | अपसव्येन कर्त्तव्यं | ८०३ |
| यवत्सम्यङ्मन | ३५७ | सायं प्रातरू | ४०५ | अवांगद्वयायत्र | ६५१ |
| याः शोषमुपगच्छन्ति | २५८ | सायंप्रातर्वैश्वदेवः | ३९७ | अशक्तानुग्रहार्थं | ७६९ |
| रजस्वलां चतुर्थेऽहि | ७४ | सिनीवात्यपराह्णे | ८५६ | आदौ मध्येऽवसाने | ७४६ |
| रजस्वला चतुर्थेऽहि | २७७ | सुरूपाः सुताः | ७६३ | आपन्नोऽप्याब्दिकं | ७१६ |
| रात्रौ दग्ध्वा तु | ५९६ | सूतके च प्रवासे | ८२० | ऊनान्यनेषु | ६५५ |
| वरयित्वा तु यः | १३८ | सूतके प्रेतके च | ४७७ | ऊपरं तु यथा | ७०६ |
| वर्णत्रयस्य विप्राणां | ८९३ | सूर्येऽस्तशैलमप्राप्ते | ३५७ | ऋते नैमित्तिकं | ७४८ |
| वस्त्रं संशोधयेत् | ५८४ | सौवर्णराज | ७८९ | कन्यापुत्रविवाहेषु | ७५५ |
| विद्व्यादौरसः | ५६४ | स्त्रीधर्मचारिणी | २५ | दर्शं स्नात्वा | ७३५ |
| विधिवत्कृतं | ७७९ | स्पृष्टमुद्रुत | ७९९ | देवानां च पितॄणां | ३७७ |
| विप्रादीनां तु | ८८४ | स्मृतेर्वेदविरोधे तु | १२८ | नभस्यरुणपक्षे | ७४७ |
| विश्वान् देवान् | ७९७ | स्वपितृभ्यः पिता | ७५२ | नाभिमात्रजले स्थित्वा | २४८ |
| विश्वेषां देवानां | ७९८ | स्वशास्त्राविधिं | ५७८ | नाभिमात्रे जले | २४८ |
| विष्णुधर्मोत्तरे चाष्टु | ६८६ | स्वाहाकारवषट् | ४०४ | पित्रोः श्राद्धे समं | ६३८, ६९५ |
| विहायामि सभार्यः | २४ | स्वाहाकारैर्जुहुयात् | ३९७ | पुत्रमुत्पाद्य | १९ |
| वैष्णव्यर्चा | ८०४ | स्वाहा स्वधा नमः | ८०२ | प्रत्ताप्रत्तास्तु | ५१५ |
| व्युत्क्रमाच्च मृते | ६७० | हरिता यज्ञिया दर्भाः | २३१ | प्रादुर्भावे पुत्र | ७५४ |
| शमीपलाश | ६०९ | हविष्येषु यवा | ३६१ | भक्ष्यभोज्यानि | ८०८ |
| शिरसो मार्जनं | ३१९ | हविस्तु त्रिविधं | ३६० | भिक्षां वा पुष्कलं | ४०४ |
| शिरः प्रावृत्य कुर्वीत | २११ | हस्ते हुतं यदश्रीयात् | ६८६ | भूतविद्धाममा | ७३९ |
| शेषस्य कर्मणः | १७८ | -५१०, ५७०, ५७७, ६८०, ७३१, ७७७ | | मृताहेऽहर | ७५२, ७५७ |
| श्राद्धं वा पितृयज्ञः | ४०२ | कात्यायनस्मृतिः | | मौजीघन्धाद्विवाहाच्च | ६७० |
| श्राद्धे यज्ञे जपे | ३०२ | ततः संवत्सरे पूर्णे | ६६४ | ये के चास्मत्कुले | २५० |
| श्रोत्रियं सुभगं गां च | २११ | मृतं दग्ध्वा त्रिरात्रेण | ५१२ | श्राद्धं तु नैक | ७४९ |
| षष्टिप्रस्थमितं | ३५६ | कामिकः | | श्राद्धे विवाहकाले | २४७ |
| संधिश्चेत्संगवात् | ८५५ | आदित्यासामये | ८५२ | सपिण्डीकरणं कुर्यात् | ६६७ |
| संध्यादिकं भवेत् | ८४७ | माघमास्यसिते | ८५१ | हस्तर्क्षस्थे दिनकरे | ७४७ |
| संप्राप्ते श्रावणे मासि | २८७ | उपायनामौ | ६११ | कालदीपे | |
| संबंधिबान्धवा | ६६१ | कारिकाकारः | | आरवारे च सौरे | ६१२ |
| संस्कारा अतिपथेरन् | ८४ | अग्रे भिक्षेत | ९६ | भ्रातृद्वये स्वसृयुगे | १४६ |
| स तु यद्यन्यजातीयः | १३८ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------------|---------|--------------------------|----------|--------------------------|----------|
| कालनिर्णयः | | अलाभे वा निषिद्धे वा | २४४ | न नन्दासु भृगोवरि | ७४८ |
| अस्तमयादर्वाक् | ८५६ | अशक्त्या पार्वणं | ७३८ | नभस्यस्यापरः | ७४५ |
| आदित्यगतिं | ७०१ | अष्टकापरपक्षा | ७०३ | नित्यदार्शिकयोः | ६९४ |
| उपवासे निषिद्धे तु | ८४५ | अस्मिन्या भरणी | ७४८ | नित्यस्य सोदकुम्भस्य | ६९५ |
| एकादशीमात्र | ८४२ | आयगर्भोऽथ | १४७ | निमित्ततोऽपि | २७१ |
| ग्रस्यमाने भवेत् | २७३ | आद्वादशाहात् | ६०५ | नैकः श्राद्धद्वयं | ६९४ |
| तत्र पञ्चधा | ७०७ | आपदायकृतं | ६५४ | नैमित्तिकं तु | ७५४ |
| तिथ्यर्थे प्रथमे | ७२६ | आपद्यपि च | ७१६ | पंचधा पंचदशधा | ७०७ |
| दिवा श्राद्धक्रियाया | ७१० | आब्दोदकुम्भ | ७३१ | पक्षाद्यादि च | ७४६ |
| द्वादशीमात्रवृद्धौ | ८४२ | आद्यश्राद्धं द्विजेऽग्नौ | ६५१ | पक्षाद्याद्यासु | ७६४ |
| नित्यं सदा यावत् | ८३६ | आवर्तनादधः | ८५४ | पत्नीभ्रातृसुता- | ६३९ |
| नैमित्तिकं तु कर्त्तव्यं | २७२ | आश्रमस्वीकृतिः | ७२८ | पत्न्यादीनां च पित्रोश्च | ६४० |
| पूर्वच्युरसती | ८३० | उपोष्यैकादशां | ८४५ | पर्वणि क्षयगे वृद्धौ | ८५६ |
| यस्मिन्वर्षे | ८३३ | एकादशे द्वादशे | ६६५ | पितुर्मृतस्य | ६७२ |
| रात्रौ संक्रमणे | २७६ | एकादशेऽन्हि | ६५२ | पित्रोस्तु पितृपूर्वत्वं | ६९५ |
| वसंतादतवो | ७०१ | एकोद्विष्टं तु | ७०६ | पित्रोः संघातमरणे | ६३७ |
| शरीरमंतःकरण- | ८४९ | कुर्यान्मातामह | ६८१ | पूर्णिमा प्रतिपत्सन्धिः | ८५५ |
| शुद्धाविद्यो | ८४३ | गुरोरज्येष्ठ | ६६१ | पूर्वं चोर्ध्वमन- | ३९ |
| शुद्धा विद्धा तिथिः | ८२७ | चतुर्थः पर्वणो | ८५५ | पूर्वप्रातिपदोः | ८५४ |
| श्राद्धेऽपराह | ७४० | चोदनादपराणहस्य | ७०९ | पूर्वमासस्थ | ७२८ |
| सप्तमी पूर्वविद्धैव | ८३१ | जह्याद्रक्तं द्वयं | ८५० | प्रत्याब्दिकस्य | ७१७ |
| सूर्यग्रहो यदा | २७३ | तिथिवारसमायोगे | २८४ | प्रत्याब्दिकादि | ८२७ |
| सूर्योदयस्योपरि | ८५४ | तृतीये वा चतुर्थे | ७८ | प्रत्याब्दिकेऽप्येव | ७१४ |
| — | ७०८, | त्रिपक्षात्पूर्वतः | ६४७ | प्रत्युष आश्वयुक् | २८४ |
| ७१२, ७२६, ७३२, ७४१ | | त्रिपुण्ड्रे च नन्दासु | ६५५ | प्रमादादकृते | ६६९ |
| कालनिर्णयसंग्रहः | | त्रिभिर्द्वाभ्यां | ६५५ | प्रातर्मध्यंदिनं | ३६८ |
| अभावेऽपि प्रतिपदः | ८२८ | त्रिमुहूर्तास्तमानात् | ८२९ | बलीनां वैश्वदेवस्य | ४०३ |
| कुतपाद्यपरा- | ७१४ | दशो दशाहमध्ये | ६१४ | भौमार्कशुक्रवारेषु | २८४ |
| कालाग्निरुद्रोपनिषद् | ३०१ | दाहात् दशाहपर्यन्ताः | ५६२ | भ्रातृद्वये स्वसृद्धये | १०० |
| कालादर्शः | | दाहादि मंत्रवत् | ५६० | मन्वाद्यासु युगाद्यासु | ३८१, ७६२ |
| अध्यायानाम् | ३२ | देवतैक्ये काम्या | ६९८ | मलमासे द्विसंक्रान्तौ | ७३५ |
| अनाकर्णितवार्तस्य | ६३१ | दैवार्थे पाणौ | ६८६ | मल्लिलुचान्य | ७३१ |
| अनुग्रज्य च | २७० | द्वादशाहत्रिपक्षादौ | ६९० | मार्गशर्षि च पौषे | ७४४ |
| अपुत्रो भ्राता | १०२ | द्वादशाहसपिण्डयन्तं | ७२७ | मासाज्ञाने दिनज्ञाने | ६३१ |
| अमावास्या द्विधा | ७४० | द्वितीया त्रिमुहूर्ता | ८५७ | मिहिरेण सहात्यन्तं | ७३४ |
| | | न जीवपितृकः | ७३७ | मुक्त्वाद्यपक्षं | ७४७ |
| | | न तत्संन्यासिनां | ६६२, ६६३ | मैत्रेद्रामिस्वाति | ७४४ |
| | | | | मौजीबन्धाद्भूत्सरार्थं | ६७० |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|---------------------|---------------------------|---------|-----------------------------|---------|
| कालादर्शः | | बालानामदन्तजातानां | ५१० | प्राणस्तु देहजो | २०७ |
| यदागच्छत् | ६३३ | ब्रह्मणो हृदयं | ३१० | प्रातस्तु दन्तकाष्ठं वै | २४५ |
| रजस्वलांगनो | ७१५ | योजयेन्मातुरर्घ्यं | ६७८ | यथोत्तरे दक्षिणे | ८४५ |
| रजो दृष्टेऽतुर्थ्याया | ७७ | व्युत्क्रमेण प्रमीतानां | ६७३ | राजानः शूद्रभूयिष्ठा | १२ |
| रवीन्द्रोर्यो | ८२५ | पष्ठे वा सप्तमे | ७८ | विनिन्दन्ति महादेवं | ३१० |
| रवेः कन्यागतत्वेन | ७४६ | संत्यज्य विधिवत् | ५८५ | सङ्गं कृतार्थं | ८९८ |
| वर्गद्वयं समुद्दिश्य | ७५१ | सप्तपौनर्भवाः | १३७ | सृष्टासृष्टिच्छलेनाह | ३०४ |
| विवाहपुत्रभेदेन | ६८१ | सूर्यस्य त्रिर्नमस्कारं | ८९२ | केशवीयम् | |
| वृद्धौ तान्यप | ६५७ | कुण्डिन्यः | | यस्मिन्मासि न | ७२५ |
| वैश्वदेवे बलिहृता | ४०४ | दीक्षितोऽप्येकपुत्रश्चेत् | ५६० | कैवल्यश्रुतिः | |
| शुद्धा विद्धा द्विधा | ८४१ | कुत्सः | | २४ | ३४९ |
| श्राद्धं दर्शेऽप्यह | ७३० | आचातो नभिदेशं | ४३३ | उमासहायं | १९५ |
| श्राद्धं शस्त्रहतस्यैव | ७५० | कूर्मपुराणम् | | कौटिल्यअर्थशास्त्रम् | |
| श्राद्धद्वयं तथोद्दिष्टं | ७५७ | उ १११५ | ९३ | २।२५ | १०७ |
| संक्रातिरहितो | ७२५ | अ. उ. १४।८२-८३ | ३९ | कौत्सः | |
| संक्रांत्यादिनिषेधश्च | ८४४ | १४।८४-८७ | २९ | उत्तराहस्त | ७४६ |
| सप्तमी नवमी दर्श | २८३ | उ. १५।११ | ७६ | कौर्म | |
| सर्वस्मृतिपुराणोति- | ८३८ | उ. १५।१२ | ७८ | अंकितो यः | २९९ |
| सायौ कर्तयुभावादौ | ६६८ | उ. १८।५२-५४ | ३७४ | अथैव सात्वता | २९७ |
| सिंहकर्मटयोनयः | २८८ | उ. १८।८८-८९ | ३८३ | अन्यानि चैव | २९७ |
| सीमन्तव्रत | ७५४ | उत्त. १९।१९ | ४२५ | एकादशी द्वादशी | ८४४ |
| सीमन्तोन्नयनं | ७८ | उ. २६।४-८ | ४० | एकादश्यां न | ८४५ |
| स्नेहाद्विप्रादिकैः | ५६७ | ३।१८।२०-२२ | ४२६ | एकादश्यां न भुंजीत | ८४५ |
| — | २७६, | अरुत्वा तु द्विजः | ४०६ | कापालिकाः पाशुपताः | ३०६ |
| ५६०, ५६१, ६१४, ६३६, | ६७०, ७२६, ७४९, ८४३, | अथवा देवमीशानं | ३९१ | काम्योपवासे | ८४८ |
| कालादर्शटीका | | अप्रायत्ये समुत्पन्ने | २९१ | द्विष्टृगेकादशी | ८४४ |
| एकोद्विष्टपदम् | ६५४ | अश्वघेनुमनुष्याः | ९१७ | नैमित्तिकं तु | ७०६ |
| — | ६३९ | आदित्यवारे | ७६३ | प्रदोषव्यापिनी | ८२९ |
| कालिकापुराणम् | | उच्छिष्टोऽद्भिरनाचान्त | २६८ | बुद्धश्रावक | २९९ |
| एकादशी तु | ८८२ | गोदोहमात्रकालं | ४०८ | मद्भक्तः शंकरद्वेषी | ३१० |
| एकोद्विष्टे तु | ६५० | गोपीचन्दनधारी | २९६ | यदीच्छेद्विष्णु | ८३८ |
| कुलशीलविहीनस्य | १३८ | चण्डालसूतिका | २६५ | वदन्तीह पुराणानि | ८३८ |
| कुविवाहैः क्रियालोपैः | १४४ | जपस्तपस्तीर्थ | ९३५ | सर्वांगमेषु निष्ठानां | २९६ |
| काश्यपः | | तस्मात्तु वेदवाह्यानां | २९७ | सृष्टा तानूचतुः | २९८ |
| गर्भधारणमारभ्य | १५९ | न विष्ण्वाराधनात् | ३९१ | स्वर्णकामदुहं | ९२७ |
| नीलं वाऽप्यथ | ६४५ | नैमित्तिकं तु | ७६२ | द्विरप्यवाजिनं | ९२७ |
| बालानामदन्त- | ५०९ | प्रक्षाल्य पाणी पादौ | २३७ | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|---------|--------------------------|----------------|---------------------------|-----------|
| कौशिकः | | अथवा त्वरुतं | ६६५ | गारुडपुराणम् | |
| कुशासनं परं पूतं | २३० | अन्तर्दशाहे संप्राप्ते | ६०८ | उपोष्यैकादशी | ८३७ |
| गवां बालपवित्रेण | २३३ | एकमातृप्रसूतानां | १४५ | तुलायां गोसहस्रे | ९३० |
| न ब्रह्मयन्थिनाचामेत् | २३१ | कुशं काशं पलाशं | २४२ | दशमीशेषसंयुक्तो | ८३९ |
| नैष्ठिकानां व्रतस्थानां | ८९२ | रुतदारो न वै | ३५६ | न द्विजः क्वापि | ९२६ |
| प्रातःस्ताने विशेषो | २४९ | रुणपक्षे तु | ६५६, ६६६ | पुनः प्रभातसमये | ८४१ |
| भिन्नासनं योगपदं | ४१९ | गुरौ सिंहस्थिते | १४७ | भस्मना तूर्ध्वपुंडं | २९५ |
| वामहस्ते स्थिते | २३२ | गृही स्यादेकपत्नीकः | १५३ | यदा त्वल्पा | ८४७ |
| विधिदृष्टं तु यत्कर्म | २५४ | चतुर्दश्यां तु | ६६२ | श्रीशैले हेमकूटे | ९२४ |
| क्रतुः | | जन्मनः षोडशे | ११९ | श्रुतयः स्मृतयः | ३०४ |
| अन्वष्टकासु | ७३७ | ज्येष्ठस्य ज्येष्ठकन्यया | १४७ | — | ९२९ टीप |
| असुराणां कुले | ७८९ | तैलस्नानं सदा | २८३ | गार्ग्यः | |
| अहमेवाक्षरं | १७३ | त्रिसंध्यं वाग्यतो | ३५३ | आक्षिपक्ष्म | ८२५ |
| तेषामारक्षभूतं | ७९२ | दशांगुलं तु विप्राणां | २४२ | अधिमासः स | ७२३ |
| दर्भपाणिर्द्वि | ७९४ | दिव्यं वायव्यमाभेयं | २८९ | अनादिदेवता | ७३४ |
| देवरान्न सुतोत्पत्तिः | १३९ | न च स्पृश्या | २८२ | अनूराधे च मूले | ६३४ |
| पंचसप्त | २०४ | परेन्हि संगवात् | ३३ | अपुत्रा ये मृताः | ६६१ |
| पूर्वसंकल्पितद्रव्यं | ४८४ | पुत्रचूडाकृतौ | ८३ | अर्धरात्रादधः | ३३ |
| ललाटे वर्तुलं | ८०० | पुत्रजन्मनि संक्रान्तौ | २८३ | कुर्यान्नैमित्तिकं | २६४ |
| विवाहोत्सव | ४८४ | पुत्रीपरिणयात् | १४६ | कुर्यान्नैमित्तिकं स्नानं | २८५ |
| संप्राप्तार्थम् | २०१ | प्रतिपद्यप्रविष्टायां | ८५५ | रुतक्रियेऽपि पितरि | ६२० |
| क्रमदीपिका | | प्रत्यावृत्तेऽभसि | २५८ | सर्वां दर्पा तथा | ८२५ |
| रजस्वला च या | ७७१ | प्रधानं वैदिकं | १९ | चतुर्दश्यां तु | ७५० |
| क्रियाकल्पकारिका | | मलव्यपोहनफलं | २८३ | चित्रा श्रविष्ठा | ६३४ |
| पतिव्रता त्वन्यदिने | ६४३ | यो वैदिकमनादृत्य | ३५५ | तिथितक्षत्र | ८२५ |
| क्रियासारः | | व्रतं कुर्यात्तु | ११७ | त्रयोदश्यां तृतीयायां | २८२ |
| मध्यांगुलित्रयेणैव | ३०३ | षष्टिंशदाब्दिकं | ११९ | त्रिरात्रमेक | ९२१ |
| शुद्धहस्तस्थितं | ३०५ | सर्जं धैर्यं वटे | २४२ | दत्त्वा हस्ते | ७९९ |
| गणकारिका | | सापिण्ड्यात् प्राक् | ६५१ | दन्तकाष्ठे त्वमावास्या | २४४ |
| प्रत्यक्षमितरान् | ७४२ | सोदर्यो तिष्ठति | १५२ | दक्षिकित्सेमर्हारोभौः | ४८८ |
| गभस्तिः | | — | २८२, २८३, ३१३, | नन्दायां भार्गवादिने | ६०५, ६५५, |
| एकोद्विष्टं तु | ७२९ | गर्भोपनिषद् | | — | ७४८ |
| न कुर्यान्मल | ७२९ | ऋतुकाले प्रयोग | ५५९ | नामकर्म च | ७३४ |
| गर्गः | | एतत्पाट्कौशीकं | १२४ | पंचविंशघटी | ५५५ |
| अतीतेऽब्दे तु | ५३८ | गायत्रीसारः | | पर्वण्योदयिके | ३२ |
| | | तत्सवितुर्वरेण्यं | ३३१ | प्राप्तकालमतिक्रम्य | ६३४ |
| | | | | भद्रे त्रिपदनक्षत्रे | ६१० |
| | | | | भद्रे भूमिप्रदानं स्यात् | ५५३ |
| | | | | भार्यान्तरविवाहः | १५२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|----------------------------|----------|--------------------|----------|---------------------------|---------|
| मघासु कुर्वतः | ७४८ | मध्ये विषुवति दानं | २७६ | गान्धर्वासुरपैशाच | १४५ |
| मातृश्राद्धं तु | ७५४ | मिथ्यापापेन वा | ८१९ | धर्म्येष्वेव विवाहेषु | १४८ |
| माससंज्ञे यथा | ७६४ | वधे प्राथमिकात् | ८७२ | पितामहस्य तत्पत्न्या | ५६२ |
| मेषराशौ यदा | ७६४ | वर्षे वर्षे तु | ७३१ | प्रोषितोऽप्यात्म | ४०५ |
| मैत्रक्षार्त्ताण्डश | ३७ | सपिण्डीकरणं | ६७४ | मलं वदन्ति कालस्य | ७२३ |
| यदि समिततः | ७९ | सपिण्डीकरण | ६६६ | य एवाहिताग्नेः | ६३३ |
| यो यस्य विहितः | ७०६, ८३० | सपिण्डीकरणात् | ६६७ | यच्च पाणितले | ६८६ |
| रवौ चापगते | ६३३ | सर्वक्लेशयुतो | ३५१ | यज्ञोपवीतं परमं | ९० |
| ललाटसंमिते | ७५४ | स्थिरमे विष्णुपदं | २७४ | येन सायं | ३६० |
| विवाहादौ स्मृतः | ७८२ | स्वर्णपात्रं तथा | ९११ | शाकं वा यदि | १९८ |
| वृषे वा मिथुने | ७६४ | - | ९१३ टीप | संप्राप्ते पार्वणश्राद्धे | ४०७ |
| शुक्रादिशुभवाराश्च | ६१० | गीता | | स्वगृहोक्तेन विधिना | ३६३ |
| शौक्रे च बुधवारे | ६०६ | ३१३ | ४०८ | गृह्यारत्नम् | |
| शौक्रे वारे निशायां | ५८६ | २१२० | १६७ | अंगवंगकलिङ्गः | ११८ |
| सुखानुकूले | ४५७ | गुरुः | | गृह्यवृत्तिः | |
| स्पर्शे स्पर्शो भवेत् | ७९५ | संपूर्णैकादशी | ८४० | पवित्रपाणिर्नव | ३७८ |
| स्वाहेति चैव | ७९८ | गृह्यकारः | | गृह्यसंग्रहकारः | |
| गार्ग्यायणिः | | अन्वष्टक्यं च | ६८५ | अथातः प्रेताधान | ५७६ |
| अन्तरेणैव यो | ६५७ | शूद्रस्यापि निषेक | ६७ | गोपालभाष्यम् | |
| सोपानत्कः | ३५३ | गृह्यपरिशिष्टम् | | उपोषणं दहनं | ५८३ |
| गालवः | | ११५ | ३३१ | औपासनं हि | ५८० |
| आमश्राद्धं तु | ७५४ | ११५ | ३३७ | गोभिलः | |
| ऊनषाण्मासिकं | ६५२, ६५५ | ११६ | ३३३ | ११३१६ | ३५५ |
| एकचित्वां समारूढौ | ६५३, ६७८ | १११० | २५९ | ११४१२-४४ | ४०५ |
| एकयाने समारोहम् | ९१३ | १११२ | ३९६, ३९७ | ११९१२-१३ | ३५८ |
| ओदुनान्निर्मितं | ९०९ | ११२१ | २९१ | अंतश्चरसि भूनेषु | ४२२ |
| रुतोदके तु | ६२३ | ३१७ | ६०८ | अगस्तिर्माधव | ४५७ |
| रुतोदके तु षण्मासात् | ५३६ | अथ गृहस्थो | ३८४ | अग्निहोत्रे तु | ४७८ |
| तिथ्यादिषु च | ७६२ | अथ संवत्सरे | ६६४ | अनुककालेष्वपि | ६७३ |
| तीर्थेऽनन्नावापदि | ७१५, ७५६ | अनस्तमित | ३५७ | अरुणोदयवेलायां | ८३९ |
| त्रिपक्षादिषु कालेषु | ६५२ | अवषट्कारहोमश्च | ७३३ | आयातु वरदा | ३२६ |
| त्रिभिर्वा दिवसैः | ६५५ | अष्टमाद्वत्सरात् | ५१४ | आवर्तने यदा | ८५४ |
| दौहित्रः पुत्रिकापुत्रो | ५२२ | असगोत्रः सगोत्रो | ६०२, ६१८ | उपमूलं लूनाः | २३१ |
| पित्रोराशौचमव्ये | ६१४ | उत्तानेन तु | ३६२ | उभयत्र स्थितैर्दर्भैः | २३२ |
| पुरोहिते मृते | ५२६ | उपवीतमयुगम् | ९० | एकचित्वां समारूढौ | ५३२ |
| प्रेतश्राद्धं सपिण्ड्यन्तं | ७५२ | ऋतुमत्स्वपि | ६८७ | एकपक्त्युपविष्टानां | ४२७ |
| ब्रह्माण्डं यो | ९२६ | एतद्वपनं संस्कृतं | ५८६ | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|----------------|--------------|---------|---------|---------|
| गोभिलः | | गौतमः | | २५६ | १०५ |
| एकवस्त्रो न भुञ्जीत | २५३ | १११ | २ | ३११ | १७२ |
| कुशमूले स्थितो ब्रह्मा | २२९ | ११३-४ | ५ | ३१३ | १६७ |
| सर्वा दूर्वा तथा | ८२६ | ११५ | ७, ७०३ | ३१४-८ | १२१ |
| सर्वा दूर्वा तथा | ७१४ | ११६।८ | ८७ | ३११०-१२ | १९१ |
| छांदोगाभिहिताः | ३३ | ११७ | ८७ | ३१३७-२४ | १९१ |
| तूष्णीमेताः क्रियाः | ८४ | १११३ | ८९ | ३१२० | १९१ |
| दशरात्राच्छत- | ८१ | १११५ | ९५ | ३१२१ | १८५ |
| द्वादशाहादिकालेषु | ६६९ | १११६ | ९३ | ३१४८ | ११६ |
| न शस्त्रेन पिबेत् | ८३८ | १११७-१८ | ९४ | ३१४९ | ११६ |
| नागन्धां स्त्रजं | १२३ | १११९-२० | ९४ | ३१५१-५३ | ११९ |
| नित्यं सततनिर्वर्त्य | २५४ | ११२१ | ९३ | ३१५४-५५ | १२० |
| नोदकेषु न पात्रेषु | ३७६ | ११२४-२५ | ९३ | ४११३ | १२५ |
| न्युब्जं कुर्यात् | ७९९ | ११२८-३३ | ४७० | ४१२-३ | १२९ |
| पक्षाता उपवस्तव्याः | ८५४ | ११३४ | २१५ | ४१४ | १३४ |
| पर्वण्यौदधिके | ३३ | ११३५-३९ | २२६ | ४१४-१३ | १४२ |
| पिबन्ति शिरसो | २५० | ११४१-४३ | २३८ | ४१९ | १४३ |
| पूर्वाणहः प्रहरः | ७०७ | ११४४ | २३७ | ४१९३ | ६८१ |
| प्राङ्मुखावस्थितो | ४१८ | ११४५ | ४६८ | ५११-२ | ७६ |
| प्राणाहुतौ हुतायां | ४२४ | ११४६ | ४६८ | ५१४-५ | ३६७ |
| प्रातर्गायत्री | ३३३ | ११५३ | १११ | ५१६-७ | ३५४ |
| ब्राह्मणं भोजयेत् | ६५१ | ११६० | ३६ | ५१९ | ३९७ |
| मतिमान्न कदाचित्तु | ३४१ | २११ | १०१ | ५११०-१५ | ४०० |
| यज्ञोपवीतं कुरुते | ९१ | २११२ | ८४ | ५११६ | ४१० |
| यस्य संवत्सरात् | ६५२ | २११-१० | ८५ | ५११८ | ४९ |
| वज्रो यथा सुरेन्द्रस्य | २२९ | २१७ | ८६ | ५११९-२२ | ४४ |
| विरिंचेन सहोत्पन्न | २३४ | २१८ | ८६ | ५१२१ | १३७ |
| व्याहृतीभिर्गायत्र्या | ४२१ | २११२ | ९८ | ५१२३ | ४०८ |
| शुचौ देशे शुचिर्भूत्वा | २३४ | २११५ | १२५ | ५१२५-२९ | ४१५ |
| श्रौतस्मार्तक्रियो | २९८ | २११७ | ३३६ | ५१२७ | २४० |
| संध्या येन न | ३११ | २११९-२१ | ११४ | ५१३०-३३ | ४१४ |
| साध्निकस्तु यदा | ६६८ | २१२५ | ८५ | ५१३४-३५ | ४१४ |
| — | ४८३, ७०७, ८२० | २१३८ | ११४ | ५१३६ | ४१२ |
| | ८५४ | २१४१ | ९६ | ५१३९-४२ | ४१२ |
| | ८५४ | २१४२ | ९५ | ६१५ | १०८ |
| गोविन्दस्वामी | १४२ | — | ९५ | ६१९ | ११० |
| गौणकारिका | ७४२ टिप्प. ७४३ | २१४६ | ७४२ टीप | ७११ | ३१ |
| | | | ९७ | ७१६-७ | ६० |
| | | | | ७१८-२३ | ६२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------|---------|------------------------|--------------|--------------------------|----------|
| गौतमः | | | | | |
| ७।१८-२० | १०७ | १।१२७ | ८६, २६४, २६७ | अंगुल्या जपसंख्यानं | ३४२ |
| ७।२१-२२ | १०७ | १।१३१ | ५२१ | अंगुष्ठं मोक्षदं | ३४३ |
| ८।१४-२४ | ७३ | १।१३१-३३ | ५१६ | अभिपूतो गृहस्थः | ९०२ |
| ८।१५ | १४४ | १।१३४ | ५४७ | अग्रजो वाऽनुजो | ६६९ |
| ८।१८-२४ | १९ | १।१३४-३९ | ६०६ | अग्रे भिक्षेत | ९६ |
| ८।२५ | ७३, ८७४ | १।१३६ | ५९८ | अदैवं पार्वणश्चाद्धं | ६९० |
| ९।२-३ | १२३ | १।१३७ | २६४, ५८७ | अनेन विधिना | ३४३ |
| ९।४ | २५२ | १।१३०२ | ७३५ | अपरपक्षे श्राद्धं | ७४६ |
| अ. ९ पं. ५ | २५२ | १।५७-८ | ७७७ | अपुत्रस्य पितृव्यस्य | ५५८, ५८९ |
| ९।८, ९, १५-२५ | ४६३ | १।५१३-१४ | ५६३ | अमावास्योदये | ७४१ |
| ९।१५ | २१५ | १।५१२१-२२ | ७६९ | अस्नात्वा भोजनं | ९०९ |
| ९।१७-१९ | ९२२ | १।५१२३ | ७७९ | आग्नेय्यां वाध | ५८२ |
| ९।२६ | ७७ | १।५१२९ | ३४८ | आचांतः पुनराचामेत् | ४५३ |
| ९।४५-५५, | ४६३ | १।६१ | ३२ | आदित्येऽहनि | ८४५ |
| ९।६३-६४ | ३७५ | १।६५-१३, १४ | ३८ | आस्ये चक्षुषोः | ५८३ |
| ९।६५ | १०, ४६३ | १।६३७-३८ | ३९ | उद्धृतस्नेह- | ४३६ |
| ९।६८ | ३१ | १।७।१ | ४४२ | एकचित्यां समारूढौ | ६४३ |
| १०।१-३ | १८ | अ. १७ सू. १-५ | ५७ | एकजातीयपर्णेषु | ९११ |
| १०।२-९ | ८६८ | १।७।८-९ | ४३३ | एकद्वित्रिदिनैः | ६५५ |
| १०।५ | ६२ | १।७।१२-१४ | ४३७ | काहलभ्रामण | ४३१ |
| १०।७-१८ | ६५ | १।७।१८-२१ | ४३७ | क्रिया ह्यर्थकारिता | ७४२ |
| १०।१३-४४ | ६५ | १।७।२५ | ४३६ | गच्छतस्तिष्ठतो | ३४२ |
| १०।५१-५८ | ६७ | १।७।२७ | ४५१ | गण्डूषस्याथ समये | ३२१, ४५३ |
| १०।६०-६७ | ६७ | १।८।१७-१८ | १५२ | गायत्रीं पच्छोर्ध्वर्चशः | २६१ |
| ११।२० | १२८ | १।९।७-२० | ९३१ | गायत्रीं यस्य यो | १२९ |
| १२।१ | ८७३ | २।१।१-२ | १२७, ८६३ | ज्येष्ठस्य चानपत्यस्य | ५५८ |
| १२।१-५ | ६८ | २।१।१० | ८६४ | त्रसरेणुसमं | ८८३ |
| १२।२-३ | ८९३ | २।१।१७-१९ | ८९८ | दक्षिणाग्नेषु | ६५० |
| १२।४ | ९२३ | २।३।१-३ | ८७९ | दक्षिणाग्नेषु दर्भेषु | ६५० |
| १२।२५ | ५९, ८८६ | २।३।१७-१९ | १२२ | दातृगोत्रसमुद्धृतां | १४६ |
| १।१५-६ | ५३० | २।३।२३-२४ | ९०७ | दिवोत्तरायणे शुक्ल | ५५३ |
| १।१५-७ | ५०४ | २।५।७-१० | ९३२ | देशकालादि | ६५३ |
| १।१८-११ | ४८७ | गौतम धर्मसूत्रः | | द्वादशीं श्रवणक्षं | ८४६ |
| १।१।२ | ४९७ | २।५।९ | ३१८ | द्विजो रणविमुक्त्यर्थं | ९२६ |
| १।१।१७-१८ | ५२७ | २।६।१-१७ | ९३६ | द्विजः कामातुरो | ८८८ |
| १।१।२५ | ५२५ | २।७।३-१५ | ९४० | धनुर्मासे गृहे | ९१० |
| १।१।२६ | ५४५ | २।८।१७ | १२६ | नीलीमयं पटं | ९१३ |
| | | ५।९।११ | २२८ | पञ्चमाद्वत्तरात् | ५१२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|---------|-------------------------|---------------|----------------------------|----------|
| गौतमः | | अधस्तान्नवमान् | ४१४ | मृतजातकयोः | ५३० |
| पश्चाशद्वत्सरात् | ९०२ | अर्हच्चार्याक | ७ | यद्विवा विहितं | २१८ |
| पत्नी जुहुयात् | ३५५ | अलाभे येन | ३९८ | यस्य धान्यसमृद्धिः स | ५५५ |
| पाकयज्ञस्य | १५० | आचार्यं गुरु | ७५२ | रजसा शुद्ध्यते | ४७५, ८९३ |
| पितानुजस्य पुत्रस्य | ९१३ | आमश्राद्धं यदा | ७५६ | विष्णून्मक्षणे | ४४८, ८८१ |
| पितृपत्न्याः सर्वा | ५६५ | आरनालं तथा | ४४६ | विधवागमने रुच्छं | ८९१ |
| प्रथमेऽह्नि तृतीये | ५९८ | उपव्युषसि यत्स्नानं | २४७ | शूद्रस्य तु नवश्राद्धे | ४४८ |
| प्राङ्नाभिवर्धनात् | ८० | एकं नाम्नापरं | ७५६ | श्वकाकोच्छिष्टं | ४३२ |
| प्राणानां ग्रंथिरसि | ४५३ | कंदमूलफलादीनि | ४३५ | सम्बन्धिनः स्त्रियं | ८८८ |
| प्राधान्येन विधानाच्च | ३४ | कांस्यपित्तल | ८८४ | सावित्र्यास्तु | ३३५ |
| बलाद्वन्दीकृतो | ९०३ | रुच्छे पश्चाति | ९४४ | सीदंश्चेत्प्राति | ५६ |
| ब्रह्मस्वं यस्तु | ८८४ | रुच्छोऽयुतं | ९४२ | सुराया विक्रयं | ९१६ |
| ब्राह्मणान्नं ददत् | ४४५ | रुष्णसर्पं द्विजं | ४६४ | स्त्रीक्षीरं च | ४३८ |
| मन्त्रब्राह्मण उच्चारयतो | २३८ | केचिदिच्छन्ति | ७१९ | स्त्रीक्षीरं तु | ८८२ |
| मातामहे च तत्पत्न्याः | ५८९ | कोद्रवान् राजमार्षाश्च | ७८१ | स्त्रीणां नास्ति परित्यागो | ८९४ |
| मृतं दध्वा | ५१३ | गर्भपाते समुद्दिष्टं | ८९४ | स्नानमव्येदव | २४६ |
| मुसलं दृषदं चैव | ८८५ | चतस्र एव | ८९४ | स्नानादनन्तरं तावत् | २४७, २५० |
| यदा रहः पुष्पवर्ती | ८९० | चान्द्रायणं नव | ८१४ | स्मृतेर्वेदविरोधेन | ७ |
| ये समाना इत्यर्घ्यं | ६७७ | चान्द्रायणं मृगारेणिः | ९४३ | चन्द्रिका | |
| शशाप तान् | ३०६ | जन्मप्रभृति पापानि | ९४४ | पृ. २४ पं. ७ | ८४ |
| शिखां विना द्विज | ९१२ | जीवे पितरि | २३ | पृ. ९८ पं. ३० | २३५ |
| शिवर्लिगसमीपे तु | २५९ | ज्येष्ठभ्रात्रा | २३ | पृ. ९९ पं. १ | २३५ |
| श्वश्रूश्चशुर- | ५२६ | तिस्रस्तिस्रः शलाका | ७९८ | पृ. १०५ पं. ७ | २४३ |
| सङ्गीभूय द्विजा | ९०८ | तृतीयां वा चतुर्थी | १३० | पृ. १०६/१९ | २४२ |
| सर्वस्मिन्वा द्रव्य- | ७४६ | त्रिमधु त्रिसुपर्ण | ९३४ | पृ. १११ पं. २६ | २८२ |
| सीमन्ते पुंसवे | ९१५ | दीर्घं तक्रमपेयं | ४३७ | पृ. ११२ | २५१ |
| सूत्वा नारी सूता | ५५४ | द्वे द्वे शलाके | ७९८ | पृ. ११३ पं. ४ | २५० |
| स्नापयित्वाऽलंकृत्य | ५८० | धर्मनिष्ठास्तपो | ९४४ | पृ. ११३ पं. २९ | २५२ |
| हंविः प्राश्य यथा | २०१ | पात्रालंभं द्विजः | ८०५ | पृ. ११४ पं. २८ | २५३ |
| — ५२, ६९, १३१, १७२, | | पावमानस्तथा | ३५०, ९३३ | पृ. ११६ पं. १३ | २६५ |
| २६५, ३०१, ४००, ५०९, ५२७, | | प्रतिषिद्धेषु दानेषु | ९२३ | पृ. ११७ पं. २० | २६६ |
| ५५४, ६५१ टीप, ७४३, ७७७ | | प्राजापत्यं नव | ४४८, ९१४ | पृ. ११८ पं. १ | २७७ |
| गौतमसूत्रम् | | प्राजापत्ये तु | ५५५, ९४३ | पृ. ११८ पं. २० | २६७ |
| ४१२० | ४९६ | प्रातस्तु द्वादशग्रासाः | ९३६ | पृ. १२३ पं. ७ | २८० |
| चक्रोपनिषद् | | बौद्धान्पाशुपतान् | २६७, ३०६ | पृ. १२५ पं. १० | २८३, २८४ |
| तस्माच्छ्रुत्वा मामेव | २९९ | ब्राह्मणीगमने | ८८८ | पृ. १२५ पं. १४ | २८३ |
| चतुर्विंशतिमतम् | | भ्राता वा भ्रातृपुत्रो | ६५८, ६६९, ६९३ | पृ. १२६ पं. २ | २८० |
| अग्नेर्मन्वेनुवाकं | ३४८ | | | | |

| क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् |
|--------------------|---------|----------------------------|---------|-------------------------|----------|
| पृ. १२९ पं. २ | २५९ | चंद्रिका | | चंद्रिका | |
| पृ. १२९ पं. १२ | २५६ | अयं श्राद्धं करिष्य | ४८३ | कार्ताधिकारसिद्धयर्थं | ५५४ |
| पृ. १२९ पं. ३० | २५६ | अनतीतद्विवर्षः | ५०९ | कालशाकं महाशाकं | ७८३ |
| पृ. १३२ पं. २९ | २५७ | अन्नमंगुष्ठ | ८०५ | कुक्कुटो विड्वराहः | ७८६ |
| पृ. १३५ पं. १० | ३३७ | अन्वष्टकासु वृद्धौ | ७१९ | क्रीता द्रव्येण | १४४ |
| पृ. १३९ पं. ८ | ३४४ | अमावास्याद्वयं | ७२३ | क्षयाहं वर्जयित्वैकं | ७१९ |
| पृ. १३९ पं. १३ | ३४५ | अर्थे तु श्मशान | ५८३ | गायत्रीं चिन्तयेत् | ३१३ |
| पृ. १४० पं. १-१२ | ४७८ | अस्पृश्यस्पृष्टमरणे | ५५४ | गायत्रीमात्र | ७०० |
| पृ. १४३ पं. २३ | ३३४ | आच्छादनं तु | ७९० | गृहस्थानां सहस्रेण | ७६८ |
| पृ. १४४ | ३३० | आत्मपितृष्वसुः | ५२६ | गोदोहकालं काक्षेत | ४०८ |
| पृ. १४४ पं. २० | ३२९ | आब्दिर्दकं प्रथमं | ७३० | चण्डालादीन्जपे | २३६ |
| पृ. १४५ | ३३१ | आर्यावर्त्तमतिक्रम्य | ९ | चत्वारो ब्राह्मणस्यायाः | १४२ |
| पृ. १४९ पं. २० | ३३९ | आशौचनिर्गमात् | ६४८ | जनने मरणे चैव | ५४७, ५९० |
| पृ. १५१ पं. ४ | ३३८ | आशौचमस- | ५२९ | जन्मनाम्नोर- | ४९७ |
| पृ. १५२ पं. १९ | ३४२ | आशौचान्ते ततः | ६४७ | जानुमात्रजले तिष्ठन् | २२८ |
| पृ. १६३ पं. १ | ३६० | आसनेष्वासनं | ७९५ | जैनाभ्याशुपतान् | ३०६ |
| पृ. ६४ पं. १, ४, ६ | ३६५ | आहिताग्नेस्तु | ६२७ | ज्यायानपि कनीयांसं | १०९ |
| पृ. १६८ पं. १५ | ३६६ | आहिताग्नेस्तु विधिवत् | ५३८ | ज्येष्ठेन वा कनिष्ठेन | ६२०, ६२४ |
| पृ. १९४ पं. ६ | ३८२ | उत्सृजेत् वृषभं | ६४५ | ततः तस्मात् | ५१४ |
| पृ. १९४ पं. २४ | ३८१ | उन्मत्तः किल्बिषी | १५३ | तीर्थायतनसंपूर्णं | ३६२ |
| पृ. २०१ पं. २६ | ३८८ | उपमूलं तथा लूनाः | २३१ | त्रयोदशी भाद्रपदी | ७४९ |
| पृ. २०९ पं. २९६ | ४०४ | उपरागसहस्राणि | ५५४ | त्रिंशन्मासादूर्ध्वं | ७२५ |
| पृ. २२१ पं. १८ | ४१८ | उपास्य पश्चिमां | ३११ | त्रिरात्राद्याशौचिनां | ५३५ |
| पृ. २२३ पं. २१ | ४२४ | उरसा मनसा | ३८९ | दम्भा रात्रौ तु | ५८६ |
| पृ. २२६ पं. १९ | ४२५ | उर्वारकं कारवल्ली | ७८२ | द्व्यादियुक्तं | ४३७ |
| पृ. ३३८ पं. ३ | ५६१ | ऋतुर्वसन्तः | ८७ | दर्शादर्शश्चान्द्र | ६९९ |
| पृ. ४८७ पं. २२ | ४०६ | एकदेशं तु वेदस्य | ५२९ | दशाष्टद्वादशान् | ६७८ |
| पृ. ४८७ पं. २५ | ४०७ | एकोटिष्ठे तु | ६५० | दाने विशिष्ट | ४८० |
| पृ. ४८८ पं. ८-११ | ४०६ | एतत् सपिण्डीकरणात् | ७२९ | दिवा शौचस्य निश्चयं | २१८ |
| आ. ६७२ पं. १८ | १२७ | एतेषु सर्वेषु | ६६२ | दीक्षितस्य यज्ञ- | ४८२ |
| अंगुष्ठे चैव | ३३१ | एभिर्वचनैः | ७१९ | देवरेण सुतोत्पत्तिं | १३९ |
| अक्षय्यासनयोः | ७९६ | एवं देवान् | ४४० | देशकालबला- | ७७८ |
| अशौकरणानन्तरं | ४०७ | करकालाबुकास्येन | २२४ | द्विजाते सूतिकाया | ५०१ |
| अचिरगर्भस्त्रावे | ४९२ | करेण दक्षिणोर्ध्वं | ९० | धर्मशास्त्रं तु | ११६ |
| अजीर्णेऽभ्युदिते | ५८५ | कर्तुरन्येषां च | ५७८ | धार्योजनामिकया दर्भो | २३० |
| अतीते सूतके | ५३४ | कर्माण्यत्रादृष्टार्थानि | ४९३ | प्रियमाणे तु | ७२१ |
| अथ देवप्रतिष्ठायां | ४८१ | कामकालौ वैश्वदेवे | ६७५ | नम्रप्रच्छादनं | ५९६ |
| अदत्त्वा कर्षको | ६३ | काणादीन्भोजयेत् | ७७६ | न मातृषु पृथक् | ७३६ |
| | | काम्यश्राद्धं काम्यसिद्धिः | ७६४ | नरेन्द्रसन्निवृत्तिनां | ४८२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|---------|-----------------------|---------|--------------------------|---------|
| चंद्रिका | | यस्त्वासन्नम् | ७७० | हंसे हस्तस्थिते | ७४९ |
| नासनारूढपादस्तु | ४२६ | यस्मिन्देशे स्थितो | ५७३ | हृदि रूपं मुखे | ३८९ |
| निमंत्रयीत | ७७७ | यस्मिन्नमौ भवेत् | ३९६ | — | १२९, |
| निमंत्रयीत पूर्वेषुः | ७७६ | याज्ञवल्क्येन कालस्तु | ७२२ | १३१, १३३, १३८, ३१३, ३३७, | |
| नीवीमध्ये तु | २३४ | यान्युपरि पात्राणि | ८०४ | ४८५, ४९२, ४९४, ४९९, ५०४, | |
| नैपालकम्बला | ७८८ | लिंगस्य दर्शनं | ३९२ | ५०५, ५०६, ५०९, ५१०, ५१५, | |
| योद्धवद्भसि | ४६७ | लोहे मृन्मये वा | ९७ | ५१६, ५२४, ५२५, ५२६, ५३०, | |
| पंखादीनाम् | १२१ | वर्णत्वमेक | ४ | ५३१, ५३५, ५६०, ५६१, ५६३, | |
| पत्नीभ्रातृभुतादीनां | ६६१ | वानप्रस्थाश्रम | ५१९ | ५७०, ५७८, ६१४, ६५४, ६६२, | |
| पाणिपादमुखा | ७९५ | विदेशस्थो गृही | ६२८ | ७१९, ७२६, ७३२, ७३६, ७४९, | |
| पिण्डालुकं च | ७८५ | विधिना देवपूर्वं | ८०४ | ७६१, ७८३, ७८४, ७८५, ७८७, | |
| पितामहादिभिः | ६८० | विप्रौ तु प्राङ्मुखे | ७९४ | ७८९, ७९८, ८१२, ८१६, ८१९, | |
| पितृमात्रयजा | ६६१ | विष्णोरायतनं | २६१ | ८२१, ९१५. | |
| पुत्राचार्यः स | ७७४ | वृद्धौ समर्चयेत् | ७५४ | चर्यापादः | |
| पुत्राभावे सपिण्डास्तु | ५६६ | वैश्वदेविक | ७९७ | पादौ हस्तौ च | ३१८ |
| पैतृकब्राह्मणेपु | ८११ | व्रात्यस्याकृत | ८९ | चयवनः | |
| पौत्राभावे प्रपौत्रो | ५८६ | शस्त्रघातिनो यदा | ७५० | श्रुतिस्मृतिपुराणेषु | ३५१ |
| प्रत्यक्षे चाप्रतिहतौ | ५५४ | शिष्ये दशरात्रा- | ५२५ | छागलेयः | |
| प्रेतस्य पुत्रो दाहादि | ५५६ | शुक्लप्रतिपदादि | ७०० | पूजयेच्छ्राद्ध | ७६८ |
| ब्राह्मणान्भोजयित्वा | ८१४ | श्राद्धकता गृहीत | ७९६ | पूर्वं व्रतं गृहीत्वा | ९४१ |
| भक्ष्यं भोज्यं च | ४३९ | श्राद्धे न देयाः | ७८४ | प्रख्यापनं प्राध्ययनं | ३१ |
| भर्तारमनुगच्छन्त्या | ६४१ | श्रुत्वैयत्र तु | ५२३ | प्रायश्चित्तमकामानां | ८६७ |
| भोजनीयास्तथा | ७६८ | श्रौतस्मार्तक्रियाः | ३०८ | यः शूद्राद् द्विजो | २२ |
| मलं वदन्ति कालस्य | ७३३ | श्रौतानामप्याग्नि | ४७९ | सर्वलक्षणसंयुक्तेः | ७६५ |
| मातापित्रोः | ५१७ | संभृतसंभार | ४८३ | छन्दोगब्राह्मणम् | |
| मातुले श्वशुरे | ५२६ | सन्देहेषु च सर्वेषु | २३५ | यो ह वा | २८ |
| मातृष्वस्त्रादिषु | ५२५ | सन्ध्या सावित्री | ३७४ | छान्दोग्यम् | |
| माधूकरं य आदाय | ४११ | सपिण्डस्य जनने | ४९९ | कस्माद्ब्रह्मणः | ३३७ |
| मासपक्षतिथि | ६९९ | सपिण्डीकरणात् | ७२९ | छान्दोग्यश्रुतिः | |
| मासस्थितिर्वा | ६३२ | सप्तपूर्वान् | ७७० | अन्यैः शतहुता | ३५६ |
| मासे त्रिंशत्तम | ७२५ | समृद्धयपि यस्य | ७७८ | आहारशुद्धौ | २०३ |
| मृता चेद्गर्भिणी | ६४४ | सर्व्यं जानु ततो | ७३७ | ब्रह्मवादिनौ वदन्ति | ३११ |
| मेखलामजिनं | ११३ | साधयामादूर्ध्वं | ३७६ | जमदग्निः | |
| यज्ञादौ माससंवत्सर | ७०२ | साशीति पण- | १४० | अपसर्व्यं तु | ८१४ |
| यदा अतिथिः | ८०९ | सौराष्ट्रं सिंधु- | १० | अपसर्व्येन कर्त्तव्यं | ८०७ |
| यदि पुत्रो गयां | ७७६ | स्त्रीणां तु पतितो | ५०७ | अल्पं पुनरुत्सृष्ट | ८१० |
| यदैकस्मिन्नहनि | ७४७ | स्वधाशब्दं धूपदीपौ | ६७६ | | |
| यद्यपि नाशौचम् | ४८१ | स्वशास्त्रोक्तक्रियां | ३८३ | | |
| | | स्वशास्त्रोक्तेन | ३९९ | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|---------|-------------------------|----------|----------------------------------|---------|
| जमदग्निः | | नैयोगिकी तिथिर्येषा | ७४६ | तुलायां मकरे | ७४० |
| आपाय सह | ६५८ | पात्राणि चालयेत् | ८१८ | त्रयोदश्यां तृतीयायां | २८२ |
| अब्धिकं श्रद्धया | ८२१ | पितरि प्रोषिते | ६३० | यहं समानो | ५१८ |
| कन्यां वामकरे | १४९ | पितुः पितृगण | ६५९, ६९८ | दशाहेन सपिण्डानां | ४९६ |
| ज्येष्ठपुत्रेण कर्तव्या | ५५७ | प्रत्यब्दं पार्वणैर्नैव | ६५९ | देवान्ब्रह्मर्षींश्चैव | २६४ |
| दण्डात्मनोस्तु | १८६ | मूत्रपुरीषाद् | ४७३ | द्विजः कामातुरो | ८८९ |
| दर्भमुष्टिं प्रदीप्यामौ | ५६८ | मृताशौचे समुत्पन्ने | ८० | न पारक्ये जले | २५६ |
| दीक्षितस्याहिताग्नेः | ५६८ | वस्त्रोत्तरीयाभावे | २५३ | न भाषेत स्त्रियं | १९२ |
| नदी वैतरणी नाम | ६७७ | व्याममात्रं समुत्सृज्य | ८१६ | नाधीयीत नरो | ३७ |
| न निन्देयुर्नाव | ८१० | शंसं प्राहुरमा | ७६० | नित्यं न ह्यपयेत् | २८३ |
| न भवेयस्य | ८२१ | सूतके तु समुत्पन्ने | ४७९ | नित्यं नैमित्तिकं | ७३३ |
| पितुः पुत्रेण कर्तव्याः | ५५६ | जाबालशाखा | | निमन्त्रितस्तु | २०४ |
| पितृदेवक्रियां | ४४४ | रुद्रेणात्तमश्नंति | ४४० | निष्पीडितं धौतवस्त्रं | २५० |
| मध्यंदिनकृतो | ३६७ | जाबालश्रुतिः | | पतितेऽनशने प्रेते | ४८९ |
| यो नामकरणात् | ५०७ | अथ परिवाड् | १७६ | पतिव्रता सुशीला | ६४६ |
| वैश्वदेवं दिवा रात्रा | ४०३ | अथ पुनरवती | १७३ | पत्नी चैव सुतो | ६४० |
| शुद्धवत्योऽथ | ७८७ | अथ हैनं | ३४९ | पिण्याकं च | ९३९ |
| सलिलं नाम- | ८१४ | ब्रह्मचर्यं समाप्य | १७२ | पिण्याकं सक्तवस्तकं | ९३८ |
| जयन्तकारिका | | जाबालिः | | पुर्वाह्नि चेदमावास्या | ७१८ |
| शरीराणि न | ५७४ | अकामकृतपापानां | ८६७ | पुत्रस्वीकारमात्रेण | १०३ |
| जातिनिर्णयसंग्रहः | | अजं वस्तं गृहे | ८८५ | मासं शुद्धस्य | ४९६ |
| ब्राह्मणात् द्विजकन्यायां | ३०७ | अतथात्वे | ८२९ | मृतं बालं च | ५४२ |
| जातुकर्णः | | अन्तर्दशाहे दर्शे | ६१६ | यतिहस्तगतं | ५८ |
| अग्न्यभावे तु | ६८५ | अपराह्णद्वय | ७३९ | यदि गृहमेव | १२१ |
| अत ऊर्ध्वं न | ६५९ | अब्दं यो भृतकं | ९०२ | ययेकत्र भवेतां | ६९७ |
| अतिकालं च | ९२१ | अशिरस्कं भवेत् | २९१ | रात्रावपि च शंसंति | ७१० |
| अन्वष्टक्यं तथा | ७१९ | अशिरस्कं भवेत्स्नानं | २८९ | पैतानासौ स्वयं | ४७९ |
| अलाभे कन्यायाः | १३३ | अहोरात्रोषितो | ९४२ | शिवे विष्णवादिभिः | ९१२ |
| ऊर्ध्वं त्रिपक्षायच्छादं | ६४७ | आगतेऽपि रवौ | ७४५ | श्राद्धं कृत्वा तु ६५१, ६५३, ६९४ | |
| ऊर्ध्वं नामेः | २६८ | आचरेदुषसि स्नानं | २४७ | श्वशुरस्य गुरोः | ९१५ |
| काषायं रुष्णवस्त्रं | २५२ | आरम्भे सर्वरुच्छाणां | ९४१ | षण्णामेकैक | ९३८ |
| कुर्यात्तस्य च | ६३१ | एकराशौ स्थिते | ७२८ | संकान्तौ पुण्यकालस्तु | २७३ |
| खण्डितं व्रतिना | ८९२ | एकस्मिन्नपि | ७२५ | संध्योरुभयोः | ३३० |
| ग्रहोपगमे विषुवे | ७६० | कुर्यान्नैमित्तिकं | ७९ | संध्या पंचमहा- | ४७७ |
| तिलोदकं तथा | ५१६ | कुशान्काशांश्च | २३४ | संन्यासनिश्चयं | ५७४ |
| द्वादश प्रतिमास्यानि | ६५२ | चण्डालीं रूपसंपन्नां | ८८९ | सततं प्रातरुत्थाय | २४५ |
| द्वितीये वा तृतीये | ७८ | तक्षा च तिलयन्त्री च | ८९० | सदैव तिथ्योरुभयोः | ८२९ |
| | | | | सपिण्डीकरणं | ६६७ |
| | | | | समानोदकानां | ४९७ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|----------|-----------------------|----------|-------------------------|----------|
| स्नात्वा निरस्य | २५१ | ऋते महायज्ञेभ्यः | ३९७ | २११८ | ९३ |
| स्नानं कृत्वाद्रवासा | २५० | पंचमहायज्ञेभ्यः | ४०४ | २१२५ | ८० |
| हरेर्नामपरं | ३५१ | तिथिदर्पणम् | | २१३११५ | ९३ |
| — | २८२, ९९२ | औदधिके संगवस्पर्शे | ३३ | २१५११ | ७४ |
| जावालोपनिषद्म् | | तुण्डीरमण्डलीयम् | | २१५११०१३ | ८७ |
| अभिरिति भस्म | ३०१ | त्रियामायास्तृतीयांशे | ५४० | २१५११११ | ९२ |
| जैमिनिः | | तैत्तिरीयक | | ३१२१९ | ५५१ |
| १११ | १६७ | अमये पथिरुते | ७३३ | ३१२१९७ | ८७ |
| अवश्यं तु त्यजेत् | ३९८ | वेदान्तविज्ञान | १७६ | ३१२१९० | २५ |
| आहितामिश्रेत् | २५ | तैत्तिरीयकोपनिषद् | | ४१२२ | ७०० |
| तन्निमित्तोप | ८४४ | धर्म इति धर्मेण | ३ | ५१२-३ | ५८० |
| नातिषोडश- | ९० | धर्मो विश्वस्य | ३ | ५१२७७ | ७०० |
| यावद् ब्रह्मोप | ९८ | तैत्तिरीयब्राह्मणम् | | ६११३ | ९३ |
| यावन्न छियते | ५०५ | १११२ | ७०० | ६१२११ | २१९ |
| सेतुर्नापेक्षते कालं | २५७ | १११३ | ९३ | ६१५२ | २६ |
| — | ५०६ | १११९ | ६६५ | ७१११४ | ७०१ |
| ज्योतिषार्णवः | | ११३१० | ७०० | ७५१६ | ८६ |
| श्रावण्यां प्रौष्ठपद्यां | ८३२ | ११८१५ | ६६५ | ७५१६ | ६९९ |
| ज्योतिःपराशरः | | ११२१२, ७ | २४ | तैत्तिरीयारण्यकम् | |
| सिनीवाली माति | ७३२ | २१११० | ३६३ | ११११ | ३०० |
| ज्योतिःशास्त्रम् | | २१२११३ | २५७ | २१२२ | ३१२ |
| अब्दद्वयं चाष्टमासाः | ७२४ | २१८१३ | ४०८ | २१२ | ३१३ |
| अरुणः सूर्यो भानुः | ७१४ | २१८१८ | ४०८ | २१११ | २२७, ३६७ |
| तत्र दत्तमदत्तं | ७३४ | ३१८१९ | ७००, ७०१ | २११३११ | ३७० |
| दर्शान्तः पूर्णिमान्तश्च | ७००, ७२७ | ३१९१७ | ३१७ | ९११४ | ३७० |
| माघादिषु तु | ८८ | ३१९१७५ | ३१७ | १०११ | ३४७ |
| संतापः क्रान्तिरल्पायुः | २८३ | हस्य हविर्निरुप्तं | ८५८ | १०११४ | ३२७ |
| — | ७२५ | — | ९३ टीप | दाने सर्वं प्रतिष्ठितम् | ५५३ |
| ज्योतिःसिद्धान्तः | | तैत्तिरीयश्रुतिः | | न कंचन वसतौ | ४१६ |
| असंक्रान्तिमासो | ७२४ | ब्राह्मणोऽस्य | १७ | — | ३६९ |
| यद्वा कन्यागते | ७२६ | तैत्तिरीयसंहिता | | — | ५८४ टीप |
| तन्त्रम् | | १११९ | ४१७ | तैत्तिरीयाः | |
| चतुर्दश्यष्टमी | ७८ | ११५११ | २४ | अथ यदि ते | ८ |
| तात्पर्यदर्शनम् | | ११५१२ | ७०० | तैत्तिर्यक्रश्रुतिः | १९५ |
| अत्र यद्यपि | ७१९ | ११५११० | ८१ | तौल्वलिः | |
| अष्टधा कृत्वेति | ७४४ | ११६१७ | ८५४ | क्रियागुणत्वात् | ७४३ |
| | | ११६१९ | २० | मतं दूषयति न | ७४३ |
| | | २१२११ | ५७९ | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------|----------|-----------------------------|----------|-------------------------|----------|
| त्रिकाण्डी | | दक्षः | | मातापित्रोर्गुरो | ५० |
| २११६९ | ६३६ | अशिरस्कं भवेत् | २८९ | मृताशौचनिमित्ते | ५३३, ६३५ |
| अनाहिताग्निः | ५६८ | अहोरात्रस्य यः | ३१० | मृद्गोमयादिभिः | २६० |
| अपि दुष्कृत | १६१ | आग्नेयं वारुणं | २८९, २९० | मेखलाजिनदण्डेन | ४६६ |
| चान्द्रो मासः श्रुति | ७०३ | आपयपि च कष्टयां | १०३ | यज्ञोत्सवे व्रते | ४८४ |
| तदेवं कुमारस्य | ९४ | इतिहासपुराणाभ्यां | २०४, ४५४ | यद्विवा विहितं | १९६ |
| नष्टेष्वग्निष्वथा- | ५७३ | एकाहात्परतो | १९० | यस्तु जापी सदा | ५९ |
| मृते भर्तारि दाहात् | ६३७ | कुशपाणिः सदा | २९३ | राक्षसासुर | १४८ |
| यस्मिन्नाशो स्थिते | ७०३ | कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां | ३८१ | रात्र्यंत्ययाम | ३१० |
| यस्य भार्या | २५ | ग्रन्थार्थतो विजानाति | ५१८ | वाग्दण्डो मौनमेव | १८४ |
| यस्य भार्या विदूरस्था | ५७७, ६८८ | ग्रहाश्रमात्परो | १५५ | वृत्तिभेदेन भिन्नाः | १८३ |
| वैश्वदेवं दिवा | ३९७ | चतुर्थे तु तथा | २४९, ३७५ | वेदस्वीकरणं | २९ |
| सपिण्डीकरणार्थं | ५९५ | चान्द्रायणो यवमध्यः | ९४१ | शुभ्येद्विप्रो दशाहेन | ४९४ |
| — | ५२२, ५५४ | जातमात्रः शिशुः | ८५ | संव्यात्रयेऽपि | ३२३ |
| दक्षः | | तस्मात्त्यक्त | १७४ | संहृत्यांगुष्ठमूलेन | २२६ |
| अ. २ | २४५ | तीर्थे शौचं न कुर्वीत | २१५ | सपिण्डीकरणात् | ७९१ |
| २११० | २४३ | त्रिंशत्परान् | १७५ | समं द्विगुण | ४९ |
| २१२० | ३५४ | द्विविधो ब्रह्मचारी | १२० | सर्वेऽपि क्रमशः | १७१ |
| २१२१ | ३७५ | व्यायेन्नारायणं | २४६ | सूतकं तु प्रवक्ष्यामि | ५३९ |
| २१२२ | ३६६ | नगरं हि न | १८८ | स्नात्वाऽऽचमेद्यदा | २४७ |
| २१२५ | ३७४ | न शौचं वर्षधारा | २१६ | स्नात्वाऽऽचामेद्यदा | २२९ |
| २१२८ | ३७४ | नामगोत्रे समुच्चार्य | १४९ | स्नानमूलाः क्रियाः | २४७ |
| २१२९-३२ | ३७५ | नैकः श्राद्धद्वयं | ६५३, ६९३ | स्नानान्कृतपणं कृत्वा | २४९ |
| ३११-१९ | १६४ | पंचमे च तथा | ३९५ | स्वकं कर्म परित्यज्य | १५ |
| ३१२६ | ८७३ | पंचापाने दशैकस्मिन् | २१७ | स्वीकरोति यदा | ११९ |
| ५१५ | २१८ | परिव्रज्यां गृहीत्वा | २०८ | होमे च फलं | ३५५ |
| ५१७ | २१८ | पारिव्राज्यं गृहीत्वा | ९१९ | — | २४७, ३१३ |
| ५१८ | २१८ | पितामहं च | ६७२ | दत्तात्रेयः | |
| ५११२ | १६५ | पितामहं च जीवन्तं | ६७३ | निर्मात्यं भक्षयित्वैव | ४४० |
| ५११३ | २१७ | पितृगृहे तु | ५१ | ब्रह्मरात्रीं ततो | १७९ |
| ६१२ | ४८१ | पूर्वं प्रादेशिकां | ३६० | भैक्षादन्यं न | २०४ |
| ६१५ | ४८२ | पैशून्यममृतं | ४६५ | वेदव्रतानि | ११७ |
| ६१९ | ४८८ | प्रथमा धर्मपत्नी | १५१ | दशकम् | |
| ६११८ | ४८३ | प्रदोषपश्चिमौ | ४५७ | अल्पात्यंचदिना | ५३१ |
| ६११९ | ४८० | प्रातर्माध्यान्हयोः | ११३ | उत्पन्ने त्रिदिनं | ५२६ |
| अनाश्रमी ष तिष्ठेत् | १२३ | बुधो ह्याभरणं | १८९ | जातमरणे पित्रोः | ५१० |
| अयने विषुवे | ४५० | ब्रह्मा मुरारिखिपुरान्तकश्च | २१० | मातुर्गर्भाविपत्स्वर्थं | ४९१ |
| | | महागुरुनिपाते | ५२३ | — | ४९४ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|----------------------|----------|-------------------------|----------|-------------------------|----------|
| दशकटीका | ५१९ | अहः षोडशकं | ७५५ | चान्द्रायणं द्विविधं | ९४० |
| दीपिका | | आचान्तेभ्यो द्विजेभ्यः | ८१४ | चौलकर्मणि | ९१५ |
| अनुपेत उपेते | ५१७ | आचार्यं स्वमुपाध्यायं | ५४५ | ज्येष्ठायां ययनू | ७७४ |
| अष्टमात्याक् | ४९७ | आत्मानं न शपेत् | ४६२ | ततः कर्मणि | ८१७ |
| गर्भनाशादि | ४९१ | आ त्रिपक्षात् | ५३५ | ततः सर्वाशनं | ८१६ |
| जनकस्य जनन्याश्च | ५३३, ६३६ | आददीत प्रवृत्तेभ्यः | १८६ | तथैव यंत्रितो | ७८० |
| पक्षिण्यामुभया- | ५२६ | आद्यश्चाद्भूमशुद्धोऽपि | ६३६ | तद्धिने वा परदिने | ६४३ |
| पितृगेहे मृतायां | ५१६ | आमश्चाद्गृहीत्वा | ७७९ | तद्देशं गृहीत्वा | २०२ |
| पुत्री पौत्री तथा | ४९८ | आशौचान्नोत्सृजेच्छिन्नं | २१५ | तर्जन्यङ्गुष्ठ | ३७७ |
| पुरुषाणां सर्पिडानां | ४९१ | आशौचाहः | ५३४ | तिलानवकिरेत् | ७८१ |
| मातापित्रोरधे | ५३७ | आसनानि न कुर्वीत | २४३ | तुलायां गोसहस्रेषु | ९२७ |
| स्नापनावप्रसवो | ४९१ | आसन्नसंक्रमं | २७५ | तृतीया रोहिणी | ७६१ |
| — | ५६० | इत्येवमद्रिराजानु | २२१ | तृतीये पञ्चमे | ६०५ |
| देवणभट्टः | १३२ | इष्टापूर्तमृताहेषु | ७८५ | तेषां सर्वर्णजः | ७० |
| देवरातः | | उद्धृताश्चापि | २८५, ४७३ | तैलमुद्वर्त्तनं | ७८८ |
| नाम्नो दन्तोद्गमात् | ५०८ | उन्मादस्त्वक् | ७७२ | दक्षिणां पितृविप्रेभ्यो | ८१४ |
| देवलः | | उपवासेषु सर्वेषु | ८२८ | दग्ध्वास्थि पित्रोः | ५३७, ६२८ |
| अंगुष्ठमूलदेशे | ३७७ | उपाकर्मं तथोत्सर्गं | ३४ | दशमेऽहनि संप्राप्ते | ५१०, ६०६ |
| अंगारतुषक्रीटास्थि | २१६ | उपाध्यायः पिता | १०४ | दशम्यामेक | ८३८ |
| अंगारदाही | ७७८ | ऋणापकरणार्थं | ९२४ | दिवाहृतैर्जलैः | २७१ |
| अमेरुषुलभुकस्य | ४६६ | एकां नदीं समासाद्य | २५७ | देये प्रत्यादिदके | ७१६ |
| अधृतं भोजयेत् | ४१४ | एकाग्रमरणे पित्रोः | ६७७ | देवार्चनपरो | ७७३ |
| अतः परामष्टा | ११९ | एकेन ग्रंथिना | ९० | देवार्थं ब्राह्मणार्थं | ४०८ |
| अथ गङ्गा सरस्वती | ९४० | एतेन विधिना | ७५२ | देवालेषु मार्गेषु | ९०८ |
| अधीतविस्मृते | ७७३ | ओंकारः प्रथमस्तंतु | ९० | दवाद्यं नैव | ७५१ |
| अन्नपानक | ८०८ | और्णकौशेय | ४६९ | देवोत्सवे प्रवृत्ते | १४८ |
| अपुत्रकस्य स्वं | ५६५ | कंडूरं श्वेतवृंताकं | ४३४ | द्विजः कामातुरो | ९१३ |
| अप्स्वीक्षितासु | २२२ | कदली मातुलुङ्गं | ८८५ | द्वितीयां वै तु | ५७१ |
| अभिसन्धिरुते | ८६७ | कार्पासक्षौम | ९१ | द्विविधो गृहस्थो | ६० |
| अभोज्यं प्रादुराहारं | ४३६ | कूपोदकेन सप्ताहं | ९१२ | ध्यामुण्यायणका | ५६१ |
| अमायां पैतृक | ९१५ | क्लृप्तं भिन्नं | ४७४ | धर्मानामन्तरे कृत्वा | ३६२ |
| अशुते वा सहस्रे | ९०८ | गान्धर्वादि विवाहेषु | १४५ | धर्मविद्वक्षिणं हस्तं | २१६ |
| अरोगः प्रकृतिस्थश्च | ८२२ | योगपथे तु | ७५ | धर्म्यं वै दक्षिणं | १९६ |
| अर्वाक् त्रिपक्षात् | ५३५ | ग्रामणीः प्राड्विवाकश्च | ८८६ | ध्रुवमजस्रकं | ४० |
| अवलीढं श्वमार्जारं | ४३१ | चण्डालश्च तुलुष्कश्च | ८८९ | नक्षत्रदर्शनात् | ८२९ |
| असंभवे परेद्युः | ७७७ | चण्डालाग्निः | ५११ | नाशौचं प्रसव- | ५३६ |
| | | चत्वार्यधीत | ५१८ | नास्ति मातृसमं दैवं | १०६ |
| | | | | निशुद्धमपि चाहारं | ४३२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|----------|------------------------|--------------|--------------------------|---------------|
| नीलवस्त्रं तु | ११३ | मृतं पतिमनुव्रज्य | ५३२ | संस्पृश्याशुचि | २६५ |
| पञ्चभूतघटं | १३० | मृताहं समतिक्रम्य | ७०६ | सकृच्च संस्कृता | ७८ |
| परतः परतो | ५३१ | यज्ञोपवीतं कुर्वति | ९० | सप्तम्यां रविवारे | ३७७ |
| परदाराभिगो | ७७३ | यज्ञोपवीतं विभ्राणां | ८०० | सदैवाद्दङ्मुखः कुर्यात् | २१२ |
| परमान्नं च | ११० | यत्र प्रसूयते | ४७१ | समानगोत्रजां | १०३ |
| परेद्युःपुन्याने | ६४३ | यथा स्नानं च | २७२ | समानोदकानां | ४९६ |
| पात्रालाभेऽपरं | ८२० | यस्मिन्देशे य | १३१ | सम्यक् कृतोपलेपः | ४१८ |
| पादौ प्रक्षाल्य | ४१७ | यः शुद्धान्यातितान् | २८ | सालग्रामं शैवल्लिङ्गं | ८८५ |
| पापानां तारतम्येन | ८६९ | यां तिथिं समनु- | ८२७, ८३० | स्तनादूर्ध्वमधो | ९१ |
| पितरौ प्रमीतौ | ६९८ | यागाध्ययन | ६० | स्त्रीगूढं यवकीर्णः | ७७२ |
| पितृकर्माणि सर्वाणि | ७१० | याजनं योनि- | २८ | स्थलीषु गिरी | ७५८ |
| पित्रोऽपरतौ पुत्रः | ६३९ | याजनं योनिसंबंधं | १५३ | स्वदासो नापितो | ४४७ |
| पिशुनश्च खलः | १०० | यावकानामधु | ९३९ | स्वयं दारान् | ७६ |
| पुनर्द्वैतमारभ्य | ६१७ | यावत्तु शुद्धिं मन्येत | २१७ | स्वयै धातेनं कर्तव्या | २५२ |
| पुनः प्राप्तं दशाशत् | ५३० | यावत्पिता च | १०६ | स्वल्पत्वं वा बहुत्वं | ४३ |
| पूर्वाण्डे दैविकं | ६४८, ७०९ | ये मृताः पापमार्गेण | ६३० | स्वाशौचकालात् | ५१० |
| पूर्वं विवाहाश्चत्वारः | १४२ | बंध्या तु वृषली | ५२, १३५, ७७३ | हिस्तालताल | ८८० |
| प्रमीतौ पितरौ | ६९२ | वर्षद्वयं वा वर्षं | ९०८ | — | ५०२, ५३५, ६३७ |
| बहुधान्योद्भव- | ८७८ | वल्लीमुपोतकीं | ४३४ | देवस्वामी | |
| बीभत्सुमशुचिं | ७८६ | वस्त्रेण बाध | ३६२ | एकोद्विष्टे तु | ६५४ |
| ब्रह्मचारिण एकं | ९१ | विना यज्ञोपवीतेन | ९१२ | चर्मकारस्त्रियं | ८८९ |
| ब्रह्मचारी न कुर्वीत | ५४५ | विप्रस्य पीतशेषं | ८८१ | तुलाप्रतिग्रहीता | ९२४ |
| ब्रह्माण्डं यस्तु | १२६ | विहितं तु सपिण्डानां | ५४४ | नक्षत्रेषु तु | ७६४ |
| ब्राह्मणानां कुले | ४९ | व्यतीपाते यदन्नं | ९०७ | यस्मिन्काले यद्विहितं | ७१२ |
| ब्राह्मणो मदलोभेन | ८९१ | व्यवहारादिकलहे | ८८५ | स्थूलतन्तुरुते | ८८५ |
| ब्राह्मण्यां ब्राह्मणात् | १८ | ब्राह्म्यान् यदि | ९१० | — | ६६२, ७१३ |
| भुक्तोच्छिष्टं समादाय | ४५२ | शम्भोर्निबोद्धितं | ९१२ | देवीपुराणम् | |
| भुक्त्वाऽऽचामेत् | ४५३ | शिखां बध्वा वसित्वा | २२३ | अर्धरात्रे त्वसंपूर्णे | २७५ |
| भुक्त्वाचामेद्यथोक्तेन | २३९ | शुक्लेस्तु तर्पयेत् | ३७७ | आत्मतुल्यसुवर्णं | १२४ |
| भृतकाध्यापको | ७७२ | शूद्रसत्रे न | ९०८ | गोत्रं नाम तु | १४९ |
| भोजने दत्तलभानि | २३८ | शौद्रोऽयं धर्मो | ६७ | दक्षिणामात्र | ९२६ |
| मन्वादयः प्रयोक्तारो | २ | श्राद्धं कृत्वा तु | ८१९ | धर्मदीपः | |
| मरणोत्पत्तियोगे | ५३० | श्वपाकं पतितं | २६८ | ब्राह्मणस्य पूर्वाशौच | ५३० |
| महागुरुनिपाते तु | ६४० | श्वः कर्ताऽस्मीति | ७७६ | धर्मशास्त्रसारः | |
| महिषीत्युच्यते | ७७४ | संकटे विषमे | ८४७ | चान्द्रायणानि रुच्छ्राणि | १० |
| मानुश्च ब्राह्मणश्चैव | ४९ | संक्रान्तिसमयः | २७३ | | |
| मानुषास्थिवसां | २१९ | संस्कार्यश्च पिता | ५६६ | | |
| मुत्रोच्चारं कृते | २१५ | | | | |

| क्रपि: | पृष्ठ | क्रपि: | पृष्ठ | क्रपि: | पृष्ठ |
|------------------------|----------|----------------------|----------|------------------------|-------|
| धर्मशास्त्रसुधानिधि: | | उपवासप्रभावेन | ८५२ | जननात्ममे | ५०२ |
| गोत्रान्मातृ | १३ | ऊरुजस्तु सुरां | ८८४ | जन्ममासे च | १२७ |
| धर्मसारः | | एवं हिरण्यगर्भस्य | ९२५ | तण्डुलाश्च तिलान् | ९१६ |
| खगवाताः शूर्पवातो | ४६४ | चण्डालवत्पशून् | ८९० | तृतीयां मातृपक्षाच्च | १३० |
| गोविप्रयोद्वाहणा- | ४६५ | नभो नाथ नभस्यो | ७३२ | दर्शं च पूर्णभासं | ७१३ |
| यद्गृहे कलहो | १५७ | ब्रह्मा सदस्यः | ९२७ | दीर्घकुत्सित | १२४ |
| सालग्रामशिला | ३८८ | ये वै कटकुरिस्था | ८८९ | यूतं पुराणशुश्रूषा | ११६ |
| धर्मसारसुधानिधि: | | वर्णत्रयाद्वा | ८९५ | धनमूलाः क्रियाः | ५५ |
| अलाबुं गृञ्जनं | ४३४ | नारदः | | धिग्जन्माचार | ५ |
| त्रिपुङ्गवं सदा | ३०३ | १२१५-६ | १३३ | नष्टेन्दुपर्वकालः | ७२४ |
| विभ्रं वसन्ते क्षितिपं | ८८ | १२१७ | १२६ | नोषण्या दशमी | ८४३ |
| धर्मोद्योतः | | १३१२०-२३ | १४० | पितृकार्यं तु | ७०४ |
| अस्नाताशी मलं | ४१७ | १२१२६ | १३६ | पुस्तकप्रत्ययाधीतं | ३० |
| काले साम्यं | ४२४ | १२१३३ | १३९ | पूर्वेयुश्चापरेयुः | ७७८ |
| तृतीये पुंसवः | ७८ | १२१४६ | १३९ | प्राणो वायुः | ३२४ |
| सौराणां रौद्रमंत्राणां | ४५६ | १२१७३-७५ | ८६४, ८८७ | बृहस्पतिर्मनुर्दक्षः | ३८५ |
| धारेश्वरः | ५११ | १२१९७ | १३९ | ब्राह्मणाय यदुद्दिष्टं | ४८ |
| धूर्तस्वामी | ६८४ | १३११०-१३ | १३४ | भर्तुराधिक्यभावेन | ७२० |
| धौम्यः | | १३१२४ | १३८ | मंत्रं विना तु | ६२६ |
| पितरो यत्र पूज्यन्ते | ७४९ | १३१३१ | १३८ | मध्यान्हे त्रिमुहूर्तं | ७११ |
| ब्रह्मोदने च | ४४९, ९१५ | १३१३२ | १३७ | महादेव विरूपाक्ष | ३५२ |
| नन्दिकेश्वरः | | अन्तर्दशाहे | ५३३, ६३५ | मृत्युनन्तरतो | ६३३ |
| यः प्रयच्छेद्भवां | ३९२ | अयने विषुवे | ३७ | यदि दैवात्तु | ८४३ |
| नन्दिपुराणम् | | अविद्याग्रहणात् | ११५ | यस्यां तिथौ मृतिः | ६९९ |
| विष्णुः पितास्य | ६६३ | अष्टाब्दादधिकां | ८४७ | यो वै यतीन् | ७६७ |
| नान्दिसूरिः | | अपराह्णद्वय | ७३९ | योऽहेरिव गणाद्रीतः | ११६ |
| नूलोपवीतविन्यासे | २३५ | आपस्वपि हि | ६३ | राज्ञ एव तु | ९१९ |
| वामहस्तस्थदर्भो | २३२ | इन्दुक्षयेर्क | ८४५ | लेखनीं बन्धसूत्रं | ८८५ |
| नान्दिसूरिस्मृतिः | | उद्यात् प्राक् | ८३९ | लोकेऽस्मिन्मंगला- | ३६६ |
| स्नानस्नानपानेषु | २३६ | उद्वाहिताऽपि | १३९ | विप्राणां वपुराश्रित्य | ३८४ |
| नागरखण्डम् | | एकादशी द्वादशी | ८४४ | विवाहास्त्वष्ट्या | १४४ |
| आमन्त्रयेयतीन् | ७६७ | एकादशीसमं | ८३७, ८३८ | वेदे तु पौरुषं | ३८४ |
| आषाढ्याः पञ्चमे | ७४६ | केदारे तत्तत्कच्छं | ८८५ | शुक्ला वा यदि | ८४६ |
| | | क्षयाहस्य तिथिः | ७१२ | शुभकृत्युत्रिको | १४६ |
| | | गुरो तु सिंहराशिस्थे | १४७ | श्राद्धं दद्यात् | ७७१ |
| | | चण्डालीं तु द्विजः | ८८८ | श्वशूद्रपतितां | ३४० |
| | | चतस्रो घटिकाः | २४७ | पंडस्य पुत्रहीनस्य | १५ |
| | | | | संक्रान्तिरहितो | ७२५ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------|----------|------------------------|---------|---------------------------|----------|
| नारदः | | आसत्येनोद्वयं | ३४४ | नृसिंहः | |
| संगवस्पृक् | ७४० | उपवीती बद्धशिखः | २४७ | कन्यां कुम्भगते | ६३४ |
| संत्यज्य सप्तमं | ७११ | केतनं कारयित्वा | ७८० | कन्या कुम्भगते | ६६६ |
| संपूर्णैकादशी | ८४०, ८४१ | प्राङ्मुखोदङ्मुखो | ३१५ | नृसिंहपुराणम् | |
| संपूर्णैकादशी यत्र | ८४० | यद्वयं यत्पावित्रं | ८०३ | गंगा च यमुना | २८८ |
| सुवर्णमानं यस्मिन् | ८८४ | वारुणीभिः आदित्यम् | ३४४ | गंगा यमुना | ५२३ |
| सूनोर्मापरि | ४३ | सभार्यस्तु शुचिः | ३९६ | पौरुषेण तू सूक्तेन | ३०५ |
| सौचिको वस्त्रसन्धानां | ८९० | स्पृष्ट्वा चाभिषृता | ३१९ | भिक्षां च भिक्षवे | ४१० |
| स्त्रीशूद्रपूजितं | ३९० | नारायणीयम् | | पतञ्जलिः | |
| स्नात्वा दग्ध्वा पुनः | ५९६ | ओंकारेण सह | २२६ | अविद्वांसः प्रत्यभि | ११२ |
| हस्तहीनस्तु | ३० | नारायणीयवृत्तिः | | पद्धतिः | |
| हीनाङ्गामधिका | १२५ | — | ९३० | अथ द्वादशाहे | ६६५ |
| नारदीयम् | | नारायणोपनिषद् | | अन्तर्दशाहे संप्राप्ते | ६१२ |
| अक्षारलवणाः | ८४९ | अथ पुरुषो ह | १७ | ऊर्ध्वपुंङ्गं त्रिपुंङ्गं | ३०९ |
| अन्यभावे तु | ६८५ | न कर्मणा न | १७५ | एकमुद्दिश्य | ६४९ |
| अल्पायामपि | ८४७ | — ३ टीप १८ टीप ४० टीप | | त्रिरात्रं च व्रतं | २७७ |
| ऊर्ध्वपुंङ्गं यः | २९४ | निगमः | | नन्दां भद्रां कलितित्थिम् | ६३४ |
| एकादश्याः कला | ८४७ | अनुज्ञातो गृह्यान् | ८२० | पूर्वभागेऽथवा | ६४५ |
| कलावेषेऽपि | ८३९ | अपहृता इति | ७९६ | मलमासे निपतिते | ३३ |
| तिथिनक्षत्रसंयोगे | ८३६ | अवश्यमर्थयेत् | ८०७ | मातापित्रोर्द्विजः | ५९२ |
| तृतीयैकादशी | ८५१ | रुष्णपक्षेऽष्टमी | ८३१ | श्राद्धे च शावक्षौरे | ५८७ |
| तैलाभ्यंगं महाराज | ८५४ | तुष्णीं भुञ्जीरन् | ८०९ | षष्ठ्यष्टमी प्रतिपद् | ५९५ |
| दर्शं च पौर्णमासं | ६८८ | नान्नपानादिकं | ८०८ | सत्यविंशदिनात् | ६५५ |
| नष्टाग्निदूर्भार्यश्च | २९९ | पूर्वविद्वाद्वा | ८२८ | पद्धतिग्रन्थः | |
| स्वकर्मत्यागिनो | ५४९ | मांसापूपफले- | ८०९ | — | ३४ |
| हरिपादोदकं | ८३८ | युग्माभियुग | ८२६ | पद्मपुराणम् | |
| — | | यो जीवति पितृणां | ७२१ | सांगान्यश्रुतुरो | ७६८ |
| नारदीयपुराणम् | | यो वा जीवति | ७४२ | परमहंसोपनिषद् | |
| द्वे तु शुक्ले | ७६१ | शुक्लपक्षेऽष्टमी | ८३१ | असौ स्वपुत्र | १८६ |
| पारणे मरणे | ७१३ | षष्ठ्यष्टमी | ८५१ | सौवर्णादीनां | १९३ |
| पित्र्ये मूलं तिथेः | ७१३ | सर्वप्रकारवेधो | ८३९ | पराशरः | |
| शैवान् पाशुपतान् | ३०६ | निरुक्तम् | | ११२० | ८ |
| संप्राप्ते माघमासे | २८२ | ११८ | २९ | ११२१ | ८ |
| नारदीयसंहिता | | १११८ | ३१७ | ११२३ | ११, ८७०, |
| अर्धरात्रियुता | ८५२ | निरुक्तभाष्यम् | | ११२५ | ११, ८९७, |
| नारायणः | | यद्ब्रह्म नित्यं | ३२७ | ११२९ | ११ |
| अचालयित्वा | ८१८ | | | | |
| आमंत्रितस्तु यः | ७७९ | | | | |

| क्र.पि: | पृष्ठम् | क्र.पि: | पृष्ठम् | क्र.पि: | पृष्ठम् |
|-------------|---------------|-------------|----------|----------|----------|
| पराशरः | | पराशरः | | पराशरः | |
| ११३०-३१ | ११ | ६१३ | ४, ८७७ | ७३१ | ४७० |
| ११३४ | १३ | ६१७ | ४३२ | ७३२ | ४७० |
| ११३७ | ६२ | ६१९६ | ८७४ | ७३३ | २६८ |
| ११३९-४० | ४११ | ६११७ | ८७४ | ७३६-३७ | ४७५ |
| ११४३-४५, | ४१० | ६११८ | ४४२ | ८११ | ८७० |
| ११४४-४७ | ४१० | ६११८-२० | ८७४ | ८१२ | ८६८ |
| ११४६ | ४१०, ४११ | ६१२३ | ८८१ | ८१२-१४ | ८७० |
| ११५६१५७, ५९ | ६६ | ६१२४ | ४७०, ८८१ | ८१५ | ३ |
| ११६० | ६६ | ६१२६ | ८८१ | ८१५-३४ | ८६९ |
| ११६१ | ६६ | ६१२७ | ८८१ | ८१२ | ८७० |
| ११६२ | ६६ | ६१२८ | ८८१ | ८१८ | २९ |
| २११-२ | ६२ | ६१३२ | ४७२ | ८१३५ | ८७० |
| २१४-५ | ६३ | ६१३४-३५ | ४७२ | ८१३७ | ८७० |
| २१६ | ६३ | ६१३७-४० | ४७२ | ८१४८ | ९४१ |
| २१७ | ६४ | ६१४१-४२ | ४७२ | ९११ | ८७६ |
| २१८ | ६१ | ६१४३१४५ | ४७२ | ९१२ | ८७६ |
| २१९ | ६३ | ६१४५-४६ | ४७४ | ९१३ | ८७६ |
| २११३ | ६३ | ६१५० | ५५० | ९१४ | ८७६ |
| ३१३ | ४७७ | ६१५१ | ५५० | ९१११ | ८७६ |
| ३१५-६ | ५१८ | ६१५२ | ५५१ | ९११७ | ८७६ |
| ३११०-११ | ४९७ | ६१६०-६१ | ५५१ | ९१२० | ८७६ |
| ३११२ | ४८५ | ६१६२ | ४३३ | ९१३२ | ८७६ |
| ३११३३०-३३ | ५६३ | ६१६३, | ४२५ | ९१४६ | ८७६ |
| ३११४ | ४९०, ५२२, ६३२ | ६१६४ | ४२५, ५५१ | १०१२ | ९४० |
| ३११६ | ५०८ | ६१६६-६७ | ४३२ | १०१३ | ९४१ |
| ३१३५ | ५३० | ६१६७-६८ | ४३२ | १०११०-११ | ८८६ |
| ३१४५-४७ | ५४६ | ६१६९ | ४३२ | १०११३-१४ | ८८७ |
| ३१४८ | ५४१ | ७१५ | ८८५ | १०११५ | ८९१ |
| ३१४९-५२ | | ७१११ | २७१ | १०११६ | ८९२ |
| ४११-४ | ९१९ | ७११३-१६ | २७८ | १०११८ | ४७३ |
| ४१८ | ८९८ | ७११७ | २७७ | १०११८-२३ | ८९६ |
| ४११३-१४ | १५९ | ७११७-१९ | ७४ | १०१२० | ८७५, ८९५ |
| ४११४ | ७५, ८९२ | ७११९ | ८९० | १०१२३ | ८७५ |
| ४१२० | १५३ | ७१२० | २७९ | १०१२४ | ८९७ |
| ४१२०-२१ | ९०३ | ७१२१-२२ | २६८ | १०१२५-२६ | ८९४ |
| ५११-९ | ९०४ | ७१२३ | ४६७ | १०१२७ | ८७९ |
| ५११० | ८८८ | ७१२४-२५, २७ | ४६८ | १०१२८ | ८८० |
| ६११ | १२ | ७१३० | ४७० | १०१३२ | ८९५ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------|----------|------------------------|---------|----------------------------|---------|
| पराशरः | | पराशरः | | पराशरः | |
| १०१३ | ८९५ | १२१५५ | ५५४ | कृतं चेता द्वापरं | ११ |
| १०१३४ | ८९६, ८९५ | १२१५६-५७ | ९४३ | कृत्वा तु शौचं प्रक्षाल्य | २२० |
| १०१३५ | ८९६, ८९५ | १२१५७ | ८९२ | ग्रामैकरात्र | २०१ |
| १०१३६-४२ | ८९६ | १२१५८ | ८७१ | क्षत्रियस्तु दशाहेन | ४९५ |
| ११११ | ८८० | १२१५९-६३ | ८७१ | गजस्य चतुरङ्गस्य | ८७७ |
| १११४-५ | ४४६, ९०७ | १२१६४ | ८७१ | गोवाटे वा | ८७५ |
| १११८-९ | ४२७ | १२१६४-६६ | ८७१ | गृहीत्वा दक्षिणां | ९०१ |
| ११११० | ८८२ | १२१६७ | ८८० | चंडालस्नात | ४७४ |
| ११११०-११ | ४३४ | १२१६९-७० | ८८३ | जातदन्तेऽनुजाते | ५०९ |
| ११११४ | ४४६ | १२१७१ | ८९८ | ज्ञात्वा विप्रः सकृत् | ८९१ |
| ११११५-१७ | ४४८ | १२१७२ | ९३१ | ज्येष्ठो भ्राता यदा | २३ |
| ११११८, १९ | ४४६ | १३१५०-५२ | ८९३ | ततः प्रक्षाल्य | ४२२ |
| १११२०-२३ | ४४७ | १९१५-८ | ९१८ | तत्र परमहंसा | १८५ |
| १११२४-२६ | ४४७ | २१११५११ | ४४७ | तस्मिन्नाचमनं | २६९ |
| १११२७-३७ | ९४१ | अभिकार्यपरिभ्रष्टाः | ५२ | तिष्ठः कोट्यर्थ | १६१ |
| १११३८-४२ | ४४७ | अभिना भस्मना | ४२७ | दग्निं व्याधितं | १५६ |
| १११४३ | ९०६ | अभौ करिष्य | ८०२ | दिनत्रयेण शुध्यंति | ४९६ |
| १११४९ | ८९९ | अतिथिं तत्र | ४१३ | दुर्मिक्षे राष्ट्रसंभ्रातौ | ४८६ |
| १११५० | ८९९ | अधिमासमृतानां | ७२८ | द्वादशैव तु | १५२ |
| १११५१ | ८९९ | अपृष्टा चैव | ८४८ | द्वा इमौ पुरुषौ | १०५ |
| १११५२ | ९३७ | अभावे तु सपिण्डानां | ५६६ | धर्मविघ्नकरीं (माधवीय) | १५१ |
| १११५३ | ९३१ | अर्धभुंक्ते तु यो | ४२९ | नदी वेगेन शुध्येत | ४७३ |
| १२११ | २६५ | अवधूनीनि यः | २२९ | निवापेन पितृन् | १६५ |
| १२१२-३ | ८८० | अवृता ह्यन | ९७, ४११ | परिव्रज्या तु | १७३ |
| १२१९-११ | २८९ | असमर्थोऽन्न | ७५६ | पातके तु सहस्रं | ८६० |
| १२११६ | २२९ | आ चतुर्थात् भवेत् | ४९१ | पापं प्रख्यापयेत् | ८७० |
| १२१२० | २७१ | आत्मानं वा विद्युज्जीत | ७७० | पिण्डं प्रदीयते | ६०२ |
| १२१२२ | ८०, ४८० | आमं वा यदि | ४४५ | पितुर्गतस्य देवत्वम् | ६६१ |
| १२१२३ | २७१ | आयसेन तु | ४३० | पितृव्यपुत्रः | २३ |
| १२१२४ | २७० | आवाहनक्रिया | ६४९ | पुण्यतीर्थेनार्द्रशिरः | ५५० |
| १२१२५ | २६५ | आहिताग्निर्द्विजः | ५७४ | पुत्रः पौत्रः प्रपौत्रो वा | ५६० |
| १२१२६ | २६९ | ऊढायाः पुनरुद्धाहो | १३ | पुनर्दाहक्रियाः | ६१७ |
| १२१२७ | २७१ | एकपादं चरेत् | ८७५ | पूर्वाः क्रिया मध्यमाश्च | ५६२ |
| १२१३२ | ६९ | एकपिण्डास्तु दायादाः | ४९५ | प्रभासादीनि तीर्थानि | २३६ |
| १२१४१ | २५७ | कृतौ तु गर्भे | २६५ | बाले देशान्तरस्थे | ८८७ |
| १२१४३ | ८९८ | कामं क्रोधं तथा | १८७ | बालैर्नकुल | ४३२ |
| १२१४७ | २६६ | कालोऽग्निः कर्म सृद् | ४६७ | ब्राह्मणानां प्रसूतौ | ५०० |
| १२१५४ | ९०६ | | | भास्करस्य करैः | २७० |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|----------|----------------------------|---------|----------------------------------|----------|
| पराशरः | | पाञ्चरात्रम् | | पारस्करः | |
| भुजानेषु तु | ८६५ | एकांतिनो महाभागा | २९६ | १११७११ | ८१ |
| मयमांसरतं | ४४६ | पाणिनीयस्मृतिः | | १११७१४ | ८२ |
| मर्त्यबुद्धिर्गुरौ | ३९५ | ८।२।८३ | ११२ | २।५।१६-१८ | ९४ |
| मातृष्वसृगमे | ८८७ | पाण्ड्यकुलोदयः | | ३।१० | ६०३ |
| मासः कन्यागते | ७३२ | स्थापिते सदासि | १० | ३।१०।१६ | ४९६ |
| मुखजो यस्तु | ९३० | पाद्मम् | | अन्तः सूतके | ५०३ |
| मृतसूतकमध्ये | २७८ | अन्तरात्मा भवेत् | ६६४ | अस्थिसंचयनाद् | ५४३ |
| मृते भर्त्तरि | १६१ | अस्थनां कृत्वाऽथ | ६०९ | आशौचे वर्तमाने | ५३७, ६२८ |
| यतीनामातुराणां | २०१ | आचम्य भस्मना | ३०७ | आहिताग्नेस्तु दहनात् | ५३८, ६२७ |
| यदि गर्भो विपद्येत | ४९१ | आपो नारायणो देवः | २८२ | उपनीतस्य पूर्णाघम् | ५१८ |
| यदि गेहे न | २७१ | ऊर्ध्वपुंड्रविहीनं | ३०८ | एतैरारब्धपिण्डस्य | ६२३ |
| यदि पत्न्यां प्रसूतायां | ५०० | ऊर्ध्वपुंड्रस्य माहात्म्यं | २९४ | गर्भे यदि विपत्तिः | ५०५ |
| यस्तु वेदमधीयानः | ९६ | एष मोहं सृजाम्याशु | २९७ | गायत्रीं त्रिः | ८०६ |
| यस्य छत्रं ह्यः | ४१४ | कपालकेशभस्मास्थि | ३०६ | गृहीत्वा प्रेतपाषाणं | ६०३ |
| यातुधानप्रियो | ७३२ | गृहे यस्य सदा | २९४ | चतुर्थेऽहनि | ६०७ |
| युक्तिछलेन | ५१ | ततः स्वयं तु | ४४० | जीवन् जातो यदि | ५०३ |
| रजकश्रमकारश्च | ८८९ | तिलपूर्णं ताम्रपात्रं | ४५ | तेऽपि कुर्यस्तु | ६१८ |
| रजसा शुष्यते | ४७५ | तथैव तु ब्राह्मणं | ७५९ | दत्तोऽपि न | ५२२ |
| रविणा लंघितो मासः | ७२३ | देवालयसमीपस्थान् | २८० | दत्त्वा गन्धादि | ८०१ |
| विष्णून्मध्य | ११८ | धरामभ्यर्चितां | १२९ | द्विजातिः सूतिका या | ४९३ |
| वृकश्चानशृगाला | २६९ | न जीवन्तमिति | ७२१ | द्विजाते सूत्रिका या | ५०१ |
| वैतानं प्रक्षिपेदप्सु | ४८९ | नैवेद्यपात्रं | ३८८ | न ब्राह्मणेन कर्त्तव्यं | ५६७ |
| व्यालग्राही यथा | १६१ | पयसा पाचयेत् | ७८४ | नाभिरुत्तनतः | ५०६ |
| शूद्रालये वा | ९०८ | पितुरेव पितुः | ७१८ | निषेककाले | ७५५ |
| शूद्राहृतैस्तु नाचामेत् | २२४ | प्रेतयोनिगतानां | ८३३ | पुत्रस्यासंनिधाने | ६१६ |
| सदाचारस्य विप्रस्य | ४४५ | बाणलिङ्गे स्वयं भूते | ४४० | पुत्रो भ्राताऽथ शिष्यो | ६१८ |
| सन्ध्या स्नानं | ७१२ | मद्रक्तः शंकरद्वेषी | ३१० | प्रथमे दिवसे देयाः | ५९९ |
| सव्यादंसाद्भ्रष्टपटं | २५३ | मध्याह्नव्यापिनी | ८२८ | ब्राह्मणे दशपिण्डास्तु | ६०१ |
| सीरस्नातप्रपातोयं | ४७४ | मानुर्मृताहे संप्राप्ते | ७२१ | या सपत्नीस्तुता | ५२८ |
| सुतृमैस्तेरनु | ८९६ | यस्यांतकाले | ५४९ | संकल्प्य पितृदेवेभ्यः | ८०७ |
| सूतकं मातुरेव | ५०१ | संक्रान्त्यामुपवासेन | ८४५ | सीमन्तोन्नयने | ७५५ |
| सौरालाभे ततः | ७०५ | सामिदादिद्वुतानां | २९५ | हिरण्यं विश्वेभ्यो | ८१४ |
| स्ताने नैमित्तिके | २७८ | हिरण्यगर्भं | ९२५ | पारस्कर गृह्यसूत्रम् | |
| होमदेवार्चनायास्तु | २५३ | श्रौतं वैखानसं | २९५ | २।६।३२ | २५३ |
| — | १३, १४६, | पारस्करः | | पाराशरः (see पराशर above) | |
| २६६, ४९७, ५०८, ५५४, ८९७, | | १।१।१।२ | ७८ | १।३।३ | १३ |
| ९१९ | | | | तंत्रनिष्ठः शिवे | २९६ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------------|----------|-------------------------|---------|--|---------|
| पाराशरः | | ॐ भूर्भुवः | ३३१ | तच्चैतेदेके | ६५८ |
| भस्मना वेदमंत्रेण | ३०४ | गायत्र्यास्तु त्रयः | ३३४ | चांद्रात् सौराति | ७२६ |
| मृदं मंत्रेणाभिर्मन्त्र्य | २९५ | चतुरश्रं ब्राह्मणस्य | ४१८ | जीवापितृकस्य | ७२१ |
| विनिर्वर्त्य यदा | ५४३ | दैवे कर्मणि पित्र्ये | ७०२ | तत्तन्मासवृद्धौ | ७२९ |
| श्रुतिश्रष्टः स्मृतिप्रोक्त | २९८ | द्वापारादियुगे | २०३ | दशाहान्तस्त्र्यह | ५९९ |
| श्रौतधर्मेक | ३०५ | नक्षत्रज्योतिरारभ्य | ३१० | दाहकस्तु स्वदेयं | ६९७ |
| षड्रात्रं स्यात् | ४९५ | नैवेद्यं तुलसी | ३९० | दूरभार्ये प्रेते | ५७७ |
| सपिण्डता तु | ४९७ | पद्ममुद्रा सौरभेयी | ३३३ | द्वादशाद्यदिवसे | ५९९ |
| पाराशरोपपुराणम् | | पाणिना जलमादाय | ३२० | न द्वादशाहादौ | ६९० |
| श्रौतं लिंगं | २९५ | पात्राद्वा जलमादाय | ३७७ | नित्यदाशिकाभ्यां | ६९४ |
| पारिजातः | | प्रणवव्याहृती | ३३८ | नैकश्राद्धद्वयम् | ६९४ |
| अग्नौ च गच्छन् | २१३ | प्रणवस्य ऋषिः | ३२४ | पत्न्यादीनामन्येषां | ६४० |
| अन्वष्टकास्तु | ७१९ | बहूदकः स | १८४ | पित्रोर्मृताब्दे | ५८८ |
| अपवित्रेण | ३०७ | मित्रस्येति तृचस्येह | ३४४ | पित्रोस्तु पञ्चदशात् | ६३१ |
| ईषन्नम्रः प्रभाते | ३२० | य एतन्नाभिजानाति | ९१ | पुंसः स्त्रिया वा | ६७९ |
| चण्डालादिहते | ६६४ | शूद्रराज्येऽपि | १० | प्रथमपष्ठ | ६५५ |
| तर्जन्यंगुष्ठचोरघं | २३३ | सविता देवता | ३२६ | प्राङ्मुखावुद | ७९४ |
| तृणराजसमुत्पन्नैः | २४३ | सूर्यश्रेत्यनुवाकेन | ३१७ | प्राग्घ्ये केनचित् | ६२४ |
| दूरे साभिः पतिः | ५७४ | सोमयागादि | ७३२ | भुक्शिष्टमन्नं | ६५० |
| नान्तः प्रक्षालयेत् | ७९२ | हंसस्तृतीयो | १८४ | मातृमृताहे | ७१८ |
| पितुर्न नाम | ६७४ | — | ३४४ | मृतिजन्मनोर्दशाहे | ५९२ |
| पित्रोः श्राद्धे समायाने | ७१८ | पितृगाथा | | यदि प्रेतकृत्य | ६३२ |
| पुत्रो दूरगतः | ५७५ | अपिनः स कुले | ३८० | यदि श्मशानासिः | ६११ |
| मासिकान्यसमा- | ६५५ | एष्टव्या बहवः | ६४६ | यद्यद्विप्रेभ्यो | ७५६ |
| सदाचारेण देवत्वं | ७ | कुलेऽस्माकं स | ७५९ | यद्यनेकेषां | ६३९ |
| हस्ते हुतं तु | ६४९, ६८६ | पितृमेधसारः | | योषिस्तु स्नात्वा | ५८५ |
| पिङ्गलः | | अग्नेमिमथ | ५८१ | विधिवत्संस्कारे | ६२६ |
| जात उभयोः रुते | ५०३ | अथोदकुम्भ | ६०० | श्वश्र्वादिसापिण्ड्येऽपि | ७१९ |
| पितामहः | | अष्टकास्वष्टौ | ७०४ | संकटेऽप्ययुग्माहेषु | ५९८ |
| अकृत्वा वपनं यस्तु | २९५ | आदित्यभिमुखः | ५८३ | संघातानुमृत्योः | ६३७ |
| अत्रिर्भृगुश्च | ३२४ | आनुपूर्व्यात् यथावृद्धं | ५८४ | सर्ववर्णानां मृताहात् | ६४८ |
| अमावास्या व्यतीपात | ७३६, ७४५ | आसमाप्तैः प्राचीन | ७९३ | साभिः कर्ता द्वादशाह | ६६९ |
| अवाचित | २०० | आसुरादिविवाहे | ६८१ | सिंहान्तं कृष्णपक्षस्य | ७४६ |
| आयातिव्यनु | ३२६ | उद्धृत्यावोक्ष | ५८२ | सौरमास्येक | ७०५ |
| उभाभ्यां तोषमादाय | ३१९ | एकात्तरवृद्धिश्राद्ध | ६९१ | स्नात्वा शक्तितो | ६४२ |
| एकादश्यां दिनक्षय | ८४५ | कादलीजाति | ७८२ | हिरण्यकलशान्न | ६३८ |
| एतत् ज्ञात्वा तु | ५१८ | रुते दशाहकृत्ये | ६१९ | हुतशेषमिश्रेः | ६७७ |
| एवं जप्त्वा यथाशक्ति | ३४३ | कृत्स्नस्कन्दने | ७९८ | — ५७८, ५७९, ५८७, ५९१, ५९४, ६१४, ६२०, ६४१, ७२६, ७४९, ७९३. | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|----------|-----------------------|----------|------------------------|---------------|
| पिप्पलादशाखा | | दिनत्रयमृते | ८४४ | अलामे विप्रकन्यायाः | १३३ |
| सशिक्षं वपनं | १८५ | वेदमूलतया | ३०० | असमानार्पेयां | १२५ |
| पुराणम् | | पुरुषार्थबोधः | | आयन्तावेव | ६१२ |
| अतसी तुलसी | ४३९ | विभूतिधारणविधिं | ३०५ | आहिताग्निश्चेत् | ५३८, ५३९, ६२७ |
| अस्थ्यभावे पलाशोऽर्थेः | ५३७, ६२९ | पुलस्त्यः | | उद्धेत सगोत्रां | १२७ |
| आमं ददातु | ७५६ | अयनद्विनये | ७६१, ७३० | एकादशेऽहि | ६३६, ६४७ |
| आसने चासनं | ७९५ | ईषद्वौतं नवं | २५२ | एकोद्विष्टं हि | ६६० |
| उपमूलं सक्तु | ७८८ | एकादश्यां न | ८३८ | काकोलूकस्पर्शने | २६७ |
| चतुर्दश्यष्टमी | २८३ | कामः कामप्रदः | ३५० | गृहं गत्वा स्थिता | ६०५ |
| जपेदायंतु | ७९७ | कुटीचको बहुदृश्य | ६६३ | जनौ सपिण्डाः | ४९९ |
| तथ्यमानास्तप- | ८०४ | कृत्वा तर्पणमेवं | २५० | ततो ब्राह्मणहस्तेषु | ७९९ |
| तिथिनक्षत्रवारेषु | २८५ | तेन द्रव्याण्यशेषाणि | ३५३ | तृणपर्णोदके | २४४ |
| दक्षिणं चरणं विप्रः | ७७६ | दध्यादीनां विकाशानां | ३८७ | त्रिनतीत्य मानृतः | १२८ |
| दिने दिने तु | १९९ | उर्मृतः सुमृतो वापि | ६३७ | त्रिमधुस्त्रिस्तु | ७७६ |
| देवालये तु परितः | २१४ | पानसद्राक्ष | ८८० | दक्षिणामुखस्त्रीन् | ५९८ |
| धर्मो मित्रं प्रमीतस्य | ४६६ | पुष्पजातिषु | ३८७ | दत्तक्रीतकृत्रिम | ५२१ |
| पादशौचं विना | ७८७ | पुण्ये च जन्मनक्षत्रे | २८० | दत्ता कन्या | ५१६ |
| पितरौ चेन्मृतौ | ६२१ | भोजनं तु न | ४३१ | दशरात्रे व्यतीति | ६१९, ६२० |
| पितृपक्षं प्रतीक्षन्ते | ७४७ | मुन्यन्नं ब्राह्मणस्य | ७८३ | ध्रुवो धर्मश्च | ३७८ |
| प्रातिवासरिको | ८१९ | संध्यामिति | ३१४, ४७८ | नित्यानि तु निवर्तेरन् | ४७९ |
| प्रापणेन महाविष्णोः | ४४० | सूतके च नरः | ८४८ | पंचमी सप्तमी चैव | ८२५ |
| यज्ञोपवीतं दातव्यं | ७९१ | सूतके मृतके | ३१४ | पक्षद्वयेऽपि | ८२७ |
| यथा व्रतस्थोऽपि | ५५९ | पूर्णसंग्रहः | | पायसेन षण्मासानि | ७८३ |
| ये कुर्वन्ति मही- | ७२३ | एवं च भोजनं | ६८२ | पितरौ चेन्मृतौ | ५२३ |
| वांशं करीरं | ७८४ | ग्रहणे चैव गंगायां | ८० | पितृपाकात् | ८१९ |
| विष्णुपूजाविहीनस्य | ३९१ | महालयादिषु | ७५१ | पितृपाकात् समुद्रृत्य | ४०७ |
| संबन्धिनस्तथा | ७७० | — | १२९, ७१० | पितृमातृष्वसृ | १२७ |
| सूतके तु नरः | ५४७ | पैठिनसिः | | प्रतिकृतिं कुशमर्षी | २८६ |
| सेतौ कवेरकन्याया | २५७ | अकृतचूडानां | ५१० | प्रबलीकृतधर्मस्य | ३५६ |
| हुत्वावशिष्ट | ८०२ | अभिर्गुष्ठतः | २२६ | प्रशस्तशुद्धपात्रेषु | ४१९ |
| पुराणसारम् | | अथ दत्तकृत | ६८१ | प्रेतं मनसा | ५९७ |
| अपि वा मातरं | ८६५ | अथ दत्तक्रीत | १२९ | भोषितभ्रातृमरणे | ५३६, ६२२, ६२३ |
| पार्प यदि कृतं | १६३ | अनभिमत उत्क्रान्ते | ५३९ | ब्राह्मणान्सप्त | ७७७ |
| पुराणान्तरम् | | अनूदकमूत्रपुरीष | २१२ | भार्या भर्तुर्ब्रतं | ८४८ |
| ईशानविष्णु | ८०६ | अपसव्यं ततः | ३७६ | मलमासमृतानां | ७३१ |
| ऊर्ध्वपुंङ्गुं त्रिशूलं | २९६ | अपुत्रायां मृतायां | ६७० | मातृष्वसृतत्सुत | ५२७ |
| | | अर्वाक्सपिण्डीकरणात् | ६५२ | मृतानुगमनं | १६२ |
| | | | | मौजी मेखला | ९५ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|----------|-------------------------|---------|------------------------|---------|
| पैठीनसिः | | प्रचेताः | | प्रचेताः | |
| युग्मान्देवे यथाशक्तिः | ७७७ | आपोशनकरा | ८०६ | मृन्मये पर्णपृष्ठे वा | ४२० |
| वसवः पितरो | ७९३ | ईषद्वौतं नवं | ९४,७९० | मौजीबन्धदिने | ९८ |
| विद्या तपोधिकानां | ७९५ | उदकं पिंडदानं च | ६१६ | यज्ञीयवृक्ष | ७९८ |
| विभक्तैस्तु पृथक् | ७९४ | एकादशी विवृद्धा | ८३८,८४३ | यः सायं वैश्व- | ४१३ |
| विवाहकाले यज्ञेषु | ४८१ | एकादशेऽन्हि | ६६९ | ये अग्निदग्धेति | ८१२ |
| वृंताकनालिका | ४३४ | एकैकस्य तु | ७९८ | वपनं कृत्वा | ५९७,६१६ |
| शूद्रयजकः | ९०१ | एकोद्विष्टं यते | ६६३ | वस्त्रांतरितसंस्पर्शः | २६६ |
| श्राद्धं निर्वर्त्य | ४०७,८१९ | ओं कुरुष्वेत्य | ८०१ | विहिते च वृषोत्सर्गे | ६४६ |
| श्रौतस्मार्तक्रियाः | ७३२ | कृतापसव्यः | ७७६ | वृक्षारोहण | ६६२ |
| षण्मासिकाब्दिदक | ६५३ | कृष्णमाषास्तिलाः | ७८१ | वैश्वानरेण यत्किंचित् | ३५३ |
| षोडशांशं स लभते | २८६ | गोदानं षोडशे | ११९ | शिरःप्रभृति | ७९७ |
| संक्रान्तिरहिते | ७३३ | गोभूतिलहिरण्याज्य | ५५२ | श्राद्धभुक् प्रातर | ७८० |
| सपिंडीकरणं पुत्रः | ६६८, ६८३ | गोशुरुन्मृन्मयं | ४१९ | षोडशानीह सर्वाणि | ६५३ |
| सपिंडीकरणात् | ६५८ | ज्ञातयः सप्तमात् | ६१६ | संगृह्याभ्युक्षणं | ३५३ |
| सर्वपापप्रसक्तो | ३५२ | ताम्बूलाभ्यञ्जने | ४१९ | सर्वं प्रकृतं | ८०४ |
| सर्वपापप्रसक्तोऽपि | ९३३ | तृप्तिं बुध्वाऽन्न | ८११ | सवर्णं प्रेषयेत् | ७७६ |
| सव्ये पाणौ शेषा | २२६ | तैलमुद्धर्तनं | ७८७ | सापंपं गन्धतैलं | २८५ |
| सूतके सावित्र्याजलिं | ४७८ | त्रिगुणं प्रदक्षिणा | ९५ | सूतिका सर्ववर्णानां | ४९३ |
| सूतके सावित्र्या | ३१४ | त्रीण्येवोदपात्राणि | ७९८ | स्त्रीशूद्रश्वपचश्चैव | ७९ |
| सूतिकां पुत्रजननीं | ४९३ | दंतच्छेदं हस्तपानं | ८१० | स्नानं प्रेतस्य | ५८० |
| सौवर्णं राजतं | ४२० | दक्षिणायाश्च दर्भाः | ६०१ | स्यादन्वपरि | ७७८ |
| स्त्रीमुखं रतिसंसर्गे | ४७५ | दर्भाश्चैवासने | ७९५ | हारीतमुद्र- | ७८३ |
| स्वशास्त्राध्ययनं | ३६९ | दिने दिनेऽञ्जलिन् | ५९८ | — | ७३१ |
| — १२८, ४०७, ४१९, ५०१, | | न जपेत्पैतृकं | ७५५ | प्रजापतिः | |
| ५२३, ६२०, ७३१, | | नदीकूलं ततो | ५९७ | अग्निहोत्रफला | २१ |
| पैङ्गवः | | न नर्मं तु दहेत् | ५८३ | अत्याहूतेषु दारेषु | ५२१ |
| गर्भस्थे प्रेते | ५१० | न स्पृशेद्भ्राम | ८०९ | अभिगच्छति | ८९६ |
| जात उभयोः | ५०४ | नान्तर्वाससा बहिर्वाससा | २२३ | अष्टोत्तरशतं | ३४२ |
| प्रचेताः | | नावाहनामौ | ४०२ | अस्नात्वा तु | ९०९ |
| अनुष्णाभिरक्नेनाभि | २२३ | नाहरेदेकजाति | ३५३ | आशौचे तु | ८० |
| अपरिज्ञाते अमावास्यायां | ६३२ | पीत्वापोशन | ८०९ | आशौचे तु समुत्पन्ने | ५३३ |
| अपरिज्ञातेर्मृताहे | ६३२ | पूर्वांष्ट्रे देविकं | ७५४ | उदक्यायाः करेणान्नं | ४२८ |
| अप्रदक्षिणम् | ७९९ | प्रथमेऽह्न्यमावास्या | ६१३ | उपक्रम्यावशिष्टस्य | २३५ |
| अमीमांसा बहिः | ७ | प्रथमे पितृपात्रे | ७९९ | क्षौमं वासः प्रशंसन्ति | २५२ |
| अलाबुताग्नपात्रं | २२४ | बहिस्तु प्राक्कूलेषु | ७५६ | गोमयात् द्विगुणं | ९४२ |
| असंस्कृतानां भूमौ | ६०१ | मुकवत्सु ततो | ८१८ | यासमात्रं भवेत् | ४०५ |
| आपोशानं प्रदायाथ | ८०६ | मातृष्वसामातुलयो | ५२५ | चतुर्दश्यामुपोष्याथ | ९४२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|---------|--------------------------|----------|----------------------------|----------|
| प्रजापतिः | | मातुलस्य पितृव्यस्य | ५८९ | बृहथमः | |
| जलपूर्णं तथा | ९१३ | यो भुक्त्वा पीठाद् | ८१३ | उत्पलत्रयकंदं | ४३५ |
| जले निधाय | ९०९ | प्रल्हादसंहिता | | मधुमांसं च योऽश्रीयात् | ४४९ |
| तच्छवं केवलं | ९२० | शरीरं दहते यस्य | ५८३ | मधु मांसं तु | ९१४ |
| दाहायैकादशा- | ६६९ | फलहः | | माता वा भगिनी | ४२६ |
| द्विवर्णात्प्राक् | १३६ | शिरः प्रावृत्य कण्ठं | २२३ | मासिकादिषु | ४४९ |
| नवश्चाद्रं दशाहान्तं | ६६१ | बह्वचम् | | मासिकादिषु यो | ९१४ |
| पालाशं पद्मपात्रं | ९४२ | अपत्नीको | २५ | बृहद्याज्ञवल्क्यः | |
| पुत्रं गृहीत्वा | १०३ | बह्वचपरिशिष्टम् | | कामादपि च | ८८० |
| प्रमादात्कुर्वतां | ३४१ | अथ पुत्रान् | १७९ | बृहद्वसिष्ठः | |
| प्रसूतिका तु | २७७ | अथ सक्तून् | १७८ | एकादशी तथा | ८३१ |
| ब्राह्मेरानंत्यमाप्नोति | ३४३ | अथास्मै नाम | १८२ | द्वादशी घटिका | ८३८ |
| वैश्वदेवं बलिहृतिं | ३९७ | अथास्य शिरसि | १८२ | द्वितीया पंचमी | ८२६ |
| शूद्राणां द्वादशाहे | ६६६ | अन्तर्धाय तृणेः | १९६ | द्वितीया पंचमी चैव | ८५० |
| शद्धधानस्य भोक्तव्यं | ४४१ | जननाद्दशरात्रे | ८१ | बृहद्विष्णुः | |
| सपिण्डीकरणं | ६६३ | धीपूर्वं रेत | ९१९ | अभोज्यानां च | ८६६ |
| स्वधर्मस्य परित्यागी | ५१ | पतत्यसौ ध्रुवं | २०८ | ब्रह्महत्यां कृत्वा | ९३४ |
| — | ५२४ | पवित्रं विष्णुनैवेद्यं | ३९० | पितुर्मरणमारभ्य | ६७५ |
| प्रत्यवायस्मृतिः | | प्राङ्मुखस्तिष्ठन् | १७९ | ब्राह्मणो ब्राह्मणोच्छिष्ट | ४३१ |
| अग्निकार्यपरिश्रष्टः | ३७२ | मुमुक्षुरात्म | १७६ | संस्कृत्य बन्धौ | ५८५ |
| प्रदीपिका | | — | १९३ | बृहन्निरुक्तः | |
| जले मध्ये यदा | २५० | बह्वचब्राह्मणम् | | पायं चैव | ७९२ |
| निशायां तु | ३५८ | द्वादशमासाः पंचतर्वः | ७०० | बृहन्मनुः | |
| संहतांगुलिना तोयं | २२१ | पर्वण्यपत्न्यपर | ३५५ | आषाढीमवधीं | ३८१, ७४६ |
| प्रपञ्चसारः | | — | ४८ | एकादशेऽन्धि | ६४८ |
| काननवृत्त | ३२२ | बादरायणः | | चत्वारिमानि कर्माणि | २०९ |
| प्रभासखण्डम् | | चण्डालोदकसर्पायैः | ४९० | जीवन् जातो यदि | ५०५ |
| सा शुद्धा स्यात् | ७१५ | पार्श्वयोः संस्थितौ | १४६, ५५७ | दशाह्राभ्यन्तरे | ५०३, ५०५ |
| प्रयोगक्रमः | | बार्हस्पत्यम् | | देशनामनदीं | ५२३ |
| पादौ हस्तौ च | ३२० | मातुलानां पितृव्याणां | ५८९ | यस्यामस्तं रविः | ७०९ |
| प्रयोगपारिजातः | | यस्मिन्मासेन संक्रान्तिः | ७२५ | रेवत्यादिषु ऋक्षेषु | ७४८ |
| ऊनानां नापकर्षः | ६५७ | बृहत्प्रचेताः | | — | ५०५ |
| न विवाहोपनयने | ९९ | मुहूर्त्तं जीवितो | ५०५ | बृहस्पतिः | |
| प्राङ्मुख उपवीती | २४८ | एतमेव प्रव्राजिनो | १७६ | १५१३ | ४७ |
| प्रयोगसारः | | | | | |
| पितुरेव पितुः | ७१८ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|---------|-------------------------|----------|-----------------------|---------|
| बृहस्पतिः | | बृहस्पतिः | | बृहस्पतिः | |
| अंत्यत्रिभागः | ६६६ | जन्मतः पंचमं | ५०२ | बध्वासनं नियम्या | ३२३ |
| अरुते प्राप्तकाले | ६६६ | जातमात्रे मृते | ५०३, ५१० | बन्धान्मोक्ष | २०५ |
| अग्न्यगारे गवां | ४२६ | जाते मृते मृते | ५०३ | बह्वीनामेकपत्नीनां | ५६५ |
| अज्ञातो हि मृताहः | ६३१ | ज्ञातयो बान्धवाः | ८१४ | बाले वा यदि | ७३४ |
| अतीतान्न स्मरेत् | १७४ | तां निशां ब्रह्मचारी | ८२० | ब्राह्मणस्याजिनं | ९४ |
| अतोयं सात्विकं | ४३ | तीर्थे विवाहे | २८० | भक्ष्यभोज्यगुणान् | ८०४ |
| अधो वायुसमुत्सर्गे | २३६ | त्रिंशद्दर्पो दशाब्दां | १२५ | भाजनेषु च | ८१८ |
| अन्तर्दशाहे दर्शः | ६१४ | त्रिरात्रेण विशुध्येत | ५१८ | भिन्नोदराणां | ५२२ |
| अन्यदेशगता | ८१७ | ज्यहं मातामहा- | ५२५ | भुञ्जानस्य तु | २१९ |
| अन्यदेशे मृतं | ५३४ | दशाहेन सपिण्डास्तु | ४९६, ५१८ | मध्यान्हाद्या त्वया | ७३९ |
| अभावे स्नातकानां | ७६८ | दानं यज्ञः सतां | ३ | महानद्यन्तरं | ५२३ |
| अमावास्या कलामात्रं | ७४१ | दिनमासौ न विज्ञातौ | ६३२ | मातापित्रोर्मृति | ५५३ |
| अयने विंशतिः | २७४ | दिवा निद्रां परान्नं | ८५० | मार्जारमूषकस्पर्श | ४२९ |
| अरण्येऽनुदके रात्रौ | २४० | द्वादशाहादि | ६६५ | मार्जालमूषिकस्पर्श | २६८ |
| अवकीर्णिव्रतं | ९८ | द्वौ शुक्रौ द्वौ | ७१२ | मासिकादिदक | ७०४ |
| आशौचे वर्त्तमाने | ५३६ | न तीर्थवासी | १९० | मासे संवत्सरे | ७०३ |
| उद्धास्ते दाक्षिणात्यैः | १३० | नवमे वाससां | ६०६ | य एवं वेत्ति | ८२२ |
| उपकाराय यो | ४६५ | नवश्राद्धस्य | ४३१ | यथा विद्या यथा | ४६५ |
| उपवीती ततो | ७७६ | नष्टं शौचे | ४११ | यदा मासो तु | ६३१ |
| ऋतुकालाभिगमनं | ७४ | नित्यनैमित्तिके | ७३३ | यद्येकं भोजयेत् | ७६५ |
| ऋषिं छंदो | ३२६ | नियोगमुक्त्वा | १०२ | यस्तैः सह सपिण्डोऽपि | ५४० |
| एकशय्यासनं | ८९८ | नैष्ठिकानां वनस्थानां | ४८१ | यस्य न श्रूयते | ६३० |
| एकस्मिन्दिवसे | १०६ | नोच्छिष्टं ग्राहयेत् | ४२७ | यो हि हित्वा | ९०६ |
| एकादशाहे यच्छ्राद्धं | ६४७ | पंचश्राद्धवसात् | ८३ | वायव्यं गोरज | २९१ |
| एकादशेऽह्नि | ६२४ | पतितां त्यश्वपाकैश्च | २७८ | विवाहोत्सव | ४८४ |
| एकैकमथ वा | ७७७ | परे वा बंधुवर्गे | ७३ | विषोद्वन्धनशस्त्रेण | ४८९ |
| एवं दंडादिभिः | १०४ | पर्णपृष्ठे न भुञ्जीयात् | ४३० | विषोद्वन्धन | ९२० |
| कांक्षंति पितरः | ६४६ | पाणिग्रहणका | ६८१ | विहितस्यानु- | ८५९ |
| कार्पासिकं सदा | ९० | पादौ शुचीं ब्राह्मणानां | ४७५ | शस्त्रेणाभिमुखो | ४८७ |
| कुसीदं ऋषिवाणिज्यं | ६२ | पितुर्गृहे तु | १३६ | शान्तिं कृत्वा | ३४ |
| रुते यदब्धधर्मः | १३ | पित्रोर्मृतौ तदारभ्य | ५९३ | शावाशौचं तु | ५०० |
| रुष्णपक्षः शुभः | ६३४ | पत्न्या प्रमादतो | ८८० | शिल्पिनः कारवो | ४८६ |
| ऋतुर्दक्षो वस्तुः | ७९३ | पौत्रश्च पुत्रिकापुत्रः | ५६१ | शुक्रवर्गा विवज्याः | ५८७ |
| सादितार्थं पुनः | ४२५ | प्रख्यातदोषः | ९३२ | शौर्यवीर्यार्थं | ४ |
| गर्भाधानमृतौ | ७८ | प्रचरन्नन्नपानेषु | २४० | श्रोत्रिये चैव | ४९ |
| गौडौ माध्वौ | ८७९ | प्रमीतस्य पितुः | ५६१, ५६७ | श्वश्रुद्रपतितांश्चैव | २३६ |
| च चार्वाकतर्पणात् | ३६७ | प्रस्थधान्यचतुःषष्ठे | ३६२ | संसारमेव | १७३ |
| चतुर्थीगणनाथस्य | ८३१ | | | सद्यो गृहीत | १५९ |

| क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|---------|----------------|----------|----------------|---------|
| बृहस्पतिः | | बौधायनः | | बौधायनः | |
| सन्ध्याऽभिकार्यं | १२० | ११५११-१२ | २२५ | २११४३-४४ | ८६६ |
| सपिण्डीकरणं पित्रोः | ६२१ | ११५१७-२२ | १३१ | २११४४-४५ | ९०० |
| समभ्यर्च्योद्- | ८१७ | ११५१८ | २२२ | २११४६-४८ | ९०१ |
| सायंप्रातस्तनौ | ३५९ | ११५१९ | २३८ | २११४९-५१ | १५४ |
| सायमायन्तयोः | ८५० | ११५२० | २३९ | २११५३ | ६१ |
| सूतके मृतके | ३५६ | ११५२२-२४ | २३९ | २११६२ | २८,१५४ |
| सूतके मृतके चैव | ४७९ | ११५४६ | २२० | २१२१ | १६६ |
| सूर्यादिवासरे | ७६४ | ११५४६, ४८ | ४६७ | २१२२९-३२ | १२२ |
| स्त्रियाः शुके | ७५ | ११५४७ | २१८ | २१२५९ | १५१ |
| स्वेन भर्त्रा समं | ७१९ | ११५५८-५९ | ४७१ | २१३११-१८ | ४०९ |
| बृहस्पतिस्मृतिः | | ११५६८ | २१२ | २१३२८-३१ | ४६४ |
| वृद्धो च माता | ५६ | ११५७४ | २३६ | २१३४० | ४६४ |
| वैजावापः | | ११५७५ | ३४१ | २१३६० | ४१९ |
| कीर्त्वा पितृणां | ७९८ | ११५८२ | १९ | २१३६१-६२ | ४०९ |
| स्नादिर्गौडुम्बर | ७८९ | ११५८५ | ६४ | २१४५-१० | ३३७ |
| तस्योपरि कुशान् | ८०० | ११५८७ | ४६६ | २१४५ | २४४ |
| बौधायनः | | ११५८९ | २३८ | २१४७ | ३३९ |
| १११५ | ३ | ११५९० | ४९४, ५३३ | २१४९-१० | ३४४ |
| ११११८-१९ | ४२६ | ११५९१ | ४९६ | २१४९६ | ३१४ |
| १११२३-२४ | १३१ | ११५१०२ | ६५ | २१४९८ | ९३२ |
| १११२९ | ९०४ | ११५१०४ | ५३० | २१४९९-२४ | ३४४ |
| १११२९-३१ | १० | ११५१०५-१०६ | ४९९ | २१५१५-६ | ८७ |
| १११३० | ९०४ | ११५११६ | ५२५ | २१५१४ | ३३८ |
| ११२११-६ | ११९ | ११५१२३ | ९०५ | २१६२९ | १६७ |
| ११२१६ | १९ | ११५१२६ | ९०४ | २१६५८-५९ | १६ |
| ११२१३-१४ | ९५ | ११५१२७ | ३२ | २१७२-४, ६ | ४२१ |
| ११२१६ | ९३ | ११६१३३-३४ | ४७० | २१७३ | ४२४ |
| ११२१७-२८ | १११ | ११६१४७ | ४६८ | २१७५ | ४३२ |
| ११२१३१-३४ | १०८ | ११११११-१७ | १४२ | २१७७-८ | ४२५ |
| ११२१४२-४३ | ३१ | ११११९ | ३७८ | २१७९-१४ | ४५२ |
| ११२१६ | ११० | १११११ | ६०७, ६०८ | २१७१२-१४ | ४२४ |
| ११२१४९-५० | ३१ | २११७ | ८९९ | २१७१९ | ४०९ |
| ११२१५२-५४ | ९८ | २११२८-२९ | ८२ | २१७२४ | ४१७ |
| ११३१२-६ | १२३ | २११२९-३१ | ८९२ | २१८ | ४०० |
| ११४१२३ | ४७४ | २११३८ | ९०२ | २१८१९११६ | ४२५ |
| ११५१९ | २१५ | २११३९ | १५३, ९०३ | २१९०२-७ | १७२ |
| ११५, ९, १०, १४, १५, २२३ | २२३ | २११४१ | ८६३, ९०० | २१९०१४-२१ | १७८ |
| | | २११४२ | ९०० | २१९०१६-५० | २०३ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------|----------|--------------------------|----------|-----------------------|----------|
| बौधायनः | | बौधायनः | | बौधायनः | |
| २।१०।५४ | २०० | अथ वृषोत्सर्जनम् | ६४५ | उपरिष्ठान्माध्याः | ७४५ |
| २।१४ | ३८६ | अथ संवत्सरे पूर्णे | ६६४ | उपलिप्ते समस्थाने | ४१८ |
| २।१७ | ३९२ | अथाम्नयोऽथ | ५८१ | उपाकर्मत्यन्ये | ६९२ |
| ३।२।६ | १८० | अथाम्नेर्विपत्तिं | ३६५ | उषःकाले समुत्थाय | १८७ |
| ३।३।५९ | २५३ | अथातो द्विजातीनां | ३०१ | ऋतुस्नातां तु | ७६ |
| ३।९।४ | ९३४ | अथातो विभूति- | ३०२ | ऋतौ न गच्छेत् | ८९३ |
| ३।१०।११ | ३४८ | अथादित्यम् | ३६७ | एक एव ऋषिः | १२६ |
| ३।१७।११ | ६४७ | अथान्तर्वेदि | १८० | एकाम्नेस्त्रिविधं | ३६४ |
| ३।३५ | १७२ | अथास्य भार्याः | ५८१, ५८४ | एकोद्विष्टान्त एव | ६१८, ६५० |
| ४।१।१२ | १३५, १३६ | अथैकोद्विष्टे | ६४९ | एतस्मिन् काले | ५८१, ५८८ |
| ४।१।१३-१६ | १३६ | अथैकोद्विष्टेषु | ६४९ | एष एव व्यञ्जनानां | ४०० |
| ४।३।२-५ | २२७ | अथोपनीतस्य | ११७ | ओदनं तु | ४३८ |
| ४।३।६ | ३९५ | अनाश्रमी चतुरः | १७७ | कक्कुटाण्डप्रमाणं | ६०२ |
| ४।४।७ | ३४८ | अन्नाभावे द्विजाभावे | ७९ | कमण्डलुर्द्विजातीनां | १३९ |
| ४।५।६ | ९३५ | अपराण्डद्वय | ७१२ | कार्तिक्यां वैशाख्यां | ७२८ |
| ४।५।७ | ९३६ | अपोवगाहनं स्नानं | २५४ | कुटीचकस्तु | १८३ |
| ४।५।८ | ९३७ | अप्रसासु च | ५१६ | कृत्वा तु पञ्च | ५४४ |
| ४।५।९ | ९३७ | अमत्या वारुणीं | ११७ | केशानोप्य ततः | ५९७ |
| ४।५।१० | ९३७ | अयुग्मान् ब्राह्मणान् | ७९५ | कोकिलस्य यथा | ६८० |
| ४।५।११ | ९३७ | अयोवर्णादके | २५८ | क्षत्रविदृशूद्र | ४९५ |
| ४।६।४, ३ | ३४९ | अरणिं रुग्णमाजारं | ३६७ | क्षुरकर्मपूर्वकत्वात् | ५८६ |
| ९।५।१० | २६२ | अष्टम्यां च | २८३ | घटिकैकाग्र्य | ७३९ |
| १६।३४-३८ | ४६८ | अस्थीनि यद्यलब्धानि | ५७४ | चतुर्दशी चतुर्थामे | ८५६ |
| २३-६१ | ४४ | आचमने चाग्नि | ७९३ | चतुर्दशी तु संपूर्णा | ८५६ |
| अङ्कुरं च प्रतिसरं | १४९ | आत्मारूढो निमज्जेद्वा | ३६५ | चतुर्वेदस्य चत्वारि | ९२ |
| अंगारान् भस्म | ३९८ | आददीत मृदोऽपश्च | २१९ | चत्वारि वेदव्रतानि | ११७ |
| अमये स्वाहेत्यादि | ४०३ | आदिशेत्प्रथमे | ६८० | जघन्ये रात्रिपर्याये | ४५८ |
| अघमर्षणं देव | ९३५ | आमश्राद्धे तु | ४४९ | जलावगाहनं | २९० |
| अचोदितेन पाकेन | २४ | आश्रमं च शृंगिवेरं | ४३९ | जातकर्मादिसंस्कारे | १०० |
| अत ऊर्ध्वं पतित | ८९ | आर्वाक् त्रिरात्रादय | ३६४ | ततो मध्यान्हसमये | २५४ |
| अथ गर्भिण्यन्तर्वत्नी | ६४४ | आसनं शयनं | ४७६ | तदभावे रहस्य | ७६९ |
| अथ चेदौपासना | १४९ | आहिताग्निमग्निभिः | ५६८ | तेषां ग्रहणे | ३९९ |
| अथ निर्वीति | ५८१ | इष्टपूर्तानि कर्माणि | ३५१ | त्रिमधुस्त्रिणा | ७६६ |
| अथ ब्राह्मे मुहूर्ते | १७९ | इष्टेरले प्रतिपदो | ८५७ | त्रिवर्षायुदकं | ५१३ |
| अथ यज्ञोपवीतं | १७९ | उक्तयोः कालयोः | ३५८ | त्रिषु वर्णेषु | ७२ |
| अथ यदि यदि | ५७६ | उत्तरापोशना | ८१२ | त्रीणि पितृणां | ७९८ |
| अथ यद्युपनय- | १४९ | उत्थाय नेत्रे प्रक्षाल्य | २४० | दध्याज्यतण्डुल | ५८३ |
| अथ यद्युप | ६१० | उदपानोदके | १० | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|----------|----------------------------|---------|------------------------------|---------|
| बौधायनः | | बौधायनः | | बौधायनः | |
| दारुचरितं | ५८३ | म्रियमाणस्य चेत् | ५७७ | सर्वत एव सहसा | ५८४ |
| दैवं चैवार्षकं | १७७ | यज्ञोपवीतं प्रति | ९१ | सर्वत्र एव सहसा | ५८२ |
| द्वितीया त्रिमूर्ता | ८५७ | यत्तु द्वादशाहे | ६६७ | सर्वसंगनिवृत्तस्य | ५४६ |
| द्व्यर्षेयसंनिपाते | १२६ | यदा चतुर्दशीयामं | ८५७ | सर्वोपकरणैः | ६७७ |
| धर्मशास्त्ररथा | ३ | यद्यनध्याय | ३९ | सायंप्रातः संध्ययोः | ३७ |
| न च माता न च | ५६६ | यर्वायान्यवीयान् | ५८४ | सूतकं मातुरेव | ५०१ |
| न जीवपितृकः | ३७८ | यस्तु पाणिगृहीताया | ७६ | स्वसूत्रेऽविद्यमाने | ६५० |
| निशि कृष्णे च | ५५६ | यस्मिन्काले विरोधो | १४८ | स्वाध्यायिनं कुले | ८७४ |
| पंथा देयो ब्राह्मणाद्य | १०७ | यस्मिन्मौ कर्म | ३०४ | हंसः कमण्डलुं | १८४ |
| पादेन पादमाक्रम्य | ८०९ | यस्य नित्यानि | २१ | — २५, १०१, १०३, १८५, | |
| प्रदक्षिणं तु | ७९४, ७९५ | योनिगोत्रसंबंधानां | ७७० | ३०१, ३१३, ३४८, ४४१, ४७५, | |
| पुरुषसंमितं | ६०९ | रजस्वला तु भुञ्जाना | २७८ | ५६९, ५७३, ५७६, ५७८, ५९१, | |
| प्रजामुत्पादयेत् | ५५७ | रजस्वला तु संस्पृष्टा | २७८ | ६२७, ६६०, ७०१, ८०१, ८०६, | |
| प्रणवव्याहृति | ४८४ | वत्सरान्ते ततः | ६६४ | ८१२, ८५६, ८५८. | |
| प्रवासं गच्छतो | ४०५ | वपनं मेखलादण्डौ | ६३३ | बौधायनगृह्यम् | |
| प्राचीनावीतिना | ५७९ | वर्धमानस्य पक्षस्य | ८२६ | — १४९, १५० | |
| प्रायश्चित्तरूप | ४७४ | वर्षे वर्षे तु | ६६० | बौधायनगृह्यसूत्रम् | |
| प्रेताहुत्यनंतरं | ५८० | वाग्दत्ता मनोदत्ता | १३७ | २६१७-२१ | ३५४ |
| फालकृष्टेनले | २१३ | विधवाविधुरामौ | ५६९ | २१२११-२ | ३९४ |
| बालान् मृतान् | ५१३ | विधिर्योऽनुष्ठितः | १३९ | २१२१८ | ३९४ |
| ब्रह्मचारिणः शवकर्मणो | ५५८ | विरमेद् ब्राह्मणे | ३४० | ५१४ | २५३ |
| ब्राह्मणकन्यकया | ९२ | विश्वेदेवाः शृणुत | ७९७ | बौधायनगृह्यशेषसूत्रम् | |
| ब्राह्मणक्षत्रिय | २०१ | वृक्षमूलिको | १९८ | ५१४ | २६२ |
| भर्तृहिते यतमानाः | १५९ | वेदविद्याव्रत | ९०५ | बौधायनधर्मसूत्रम् | |
| भवति भिक्षां देहि | ९५ | वेदानां किंचित् | ४९ | २१११-२ | ३१७ |
| भिक्षां न दद्युः | २०२ | ग्रीहीणां वा यवानां | ३६२ | २१५१६-३१ | ३७८ |
| भिक्षाप्राप्त | २०२ | शर्मान्तं ब्राह्मणस्योक्तं | ६८२ | २१०१४२, ४४, ५० | २०० |
| भूमौ दर्भास्तृतायां | ५५२ | शौचे यत्नः सदा कार्या | २२० | बौधायनस्मृतिः | |
| भोजने हवने | २३७ | शौणितशुक्रसंभवो | १०३ | सत्येन गो शकृत् | ३०२ |
| मंत्रेणैव द्विराचम्य | ४१८ | श्रान्तोऽष्टष्टपूर्वः | ४१२ | ब्रह्मकैवर्तम् | |
| मधुत्रयेण | ६७६ | श्वः करिष्यामीति | ७८७ | अर्धरात्रे तु | ८३९ |
| मध्याह्नव्यापिनी | ८२८ | संक्रमेऽन्नद्विजाभावे | ७१७ | गयाशीर्षे यदा | ७५९ |
| मध्याह्नात्परतो | ७३९, ८५८ | संवत्सरे मातरि | ६०७ | चतस्रो घटिकाः | ८४० |
| मरणादिविषमेषु | ६०५ | संवत्सरे सपिण्डीकरणं | ६६४ | तिर्यग्भस्ममृद् | ३०७ |
| मातृदुहितृस्तृणा | ९३५ | संस्कार्यश्च पिता | ५६६ | त्रयोदशी प्रकसंव्या | ८५० |
| मिथ्याभिर्शंसने | ८९९ | सचैला दक्षिणाभिमुखाः | ५८५ | | |
| मुण्डः काषायवासा | १८४ | सन्ध्ययोरुभयोः | ३४१ | | |
| मेरुकांचन | ४५५ | सप्तम्यां रविवारे | ३७७ | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|---------|----------------------------|---------|----------------------------|---------|
| ब्रह्मकैवर्तम् | | महापातकयुक्तोऽपि | ३५२ | कर्ता नोपवसेत् | ८४९ |
| धार्य भस्म | ३०५ | ये पूर्वं पूजिता | ४९ | जपादिकुसुमं | ७९० |
| प्रतिपत्त्यश्रमी | ८२६ | स्नानं स्यादुपरागादौ | २७३ | त्रयाणामाश्रमाणां | ६६३ |
| प्राप्ते हरिदिने | ८४९ | ब्रह्मसिद्धान्तः | | त्रिपुण्ड्रं शुद्धकल्पानां | ३०६ |
| ब्रह्माण्डघट | ९२६ | अमावास्या परिच्छिन्नो | ६९९ | देशे काले च | ७५७ |
| भूतविद्धा न कर्त्तव्या | ८५३ | चान्द्रमासो ह्यसंक्रान्तौ | ७२३ | नम्रादयो न | ७८६ |
| मुण्डान् जटिल | ७६८ | चान्द्रसावन | ७०९ | नभस्यरुणपक्षे | ७४६ |
| रंभाख्यां वर्जयित्वा | ८३९ | चान्द्रः शुक्लादिदर्शान्तः | ६९९ | निराशो नित्यभुक् | ८०८ |
| सर्वपापयुतो | ९३४ | चैत्रादवाक् | ७२६ | पात्राभावे द्विजः | ८४९ |
| सर्वेष्वेवोप | ८३५ | तिथिरैकगुणा प्रोक्ता | २८४ | प्रक्षाल्य हस्तपात्रादि | ८०३ |
| हिरण्याम्बं द्विजो | ९२८ | मासत्रये त्रिंशदूर्ध्वं | ७२५ | महिर्षी वत्ससंयुक्तां | ४५ |
| हिरण्याश्वरथं | ९२८ | यावान्कालः | २७३ | मृत्तिकाचंदनं भस्म | २९५ |
| ब्रह्मपुराणम् | | शुद्धा विद्धा दशम्या | ८४९ | यतिस्त्रिदण्डी | ७८८ |
| अनाहिताग्नेर्मरणात् | ५३९ | ब्रह्मा | | शिखिभ्यो धातु | ७६७ |
| अनाहिताग्नेः | ६०८ | अथातो दर्शयेत् | ३३९ | शुक्लाः सुमनसः | ७८९ |
| अध्याः पुष्पैश्च | ७९९ | ऋगंते मार्जनं | ३९६ | श्राद्धं करिष्य | ७९६ |
| अलामे ध्यानि | ७६७ | रुत्वा चैवाक्षर | ३२९ | श्राद्धभुग्दक्षिणां | ८९४ |
| अस्थीनि माता | ६०९ | गायत्र्या न परं | ३३५ | श्राद्धार्हगुणयोगेऽपि | ७७५ |
| उपमर्दे लक्षगुणं | २७३ | दक्षिणांगुष्ठमारभ्य | ३३० | श्वेतचन्दन | ७९० |
| गोदावरी भीमरथी | २८७ | धाराच्युतेन | ३९६ | सर्वेषामेव | ७८६ |
| ग्रामाद्बहिः शुचौ | ६०९ | नद्यां तीर्थे हृदे | ३९६ | हविषामथ पक्कानां | ७८७ |
| तप्तमुद्रा त्वंयजाय | २९९ | भुवि मूर्ध्नि तथाकाशे | २९९ | हिरण्यहस्तिनं | ९२८ |
| दाहायशौचं विज्ञेयं | ५३९ | मंत्रपूतं जलं | ३९६ | — | २६७ |
| दुर्मिक्षे प्राणरक्षार्थं | ४८६ | मातर्यपि च वृत्तायां | ६७३ | ब्राह्मम् | |
| नामगोत्रे समुच्चार्य | ५९८ | संमुखं संहतौ | ३३२ | अकालमृत्योः | ४८० |
| प्रतिपद्येक | ८२८ | चापं गते दिवानाथे | ३९९ | अनाथं ब्राह्मणं | ५४६ |
| प्रेतयोनिगतानां | ८३५ | सेत्वादिपुण्य | ९२४ | अनाथं ब्राह्मणं दग्धा | ५६७ |
| ब्राह्मणार्थं गवार्थं | ४८७ | ब्रह्माण्डपुराणम् | | अस्थीन्यादाय | ६०९ |
| यद्वा शताञ्जलीन् | ५९८ | पृ. १७९-पं. १० | २३९ | तावद् गृहीत | ४८२ |
| वैशाखशुक्ल | ७६९ | अनापयपि | ५६ | प्रमादादेव निःशङ्कं | ४८८ |
| शुक्लिदंष्ट्रिनस्त्रि | ४८७ | अन्नं पश्येयुः | ७८६ | ब्राह्मणी क्षत्रिया | ५०९ |
| षण्ढो मूकश्च | ७७५ | अशौचं जायते | २७२ | मृते पितरि यस्याथ | ६७९ |
| संपूज्य विधिवत् | ८४९ | अस्मान् वृणीष्व | ७७५ | विवाहकाले कन्यायाः | ४८३ |
| सपिण्डता तु | ४९८ | आपोशनं न | ८०६ | शौचाशौचं | ४९६ |
| ब्रह्मरातनम् | | आषाढ्याः पंचमे | ७४८ | ब्राह्मणः | |
| ब्राह्मणस्योर्ध्वपुण्ड्रं | ३०६ | आसनारूढ | ७८५ | तमसो वा एष | ६९२ |
| ब्रह्मवैवर्तम् | | ऊर्ध्वपुण्ड्रप्रमाणानि | २९३ | | |
| कावेरीतीरवासी | ६०९ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------|---------------|-------------------------|----------|--------------------------|----------|
| भगवद्गीता | | कंडूय पृष्ठतो | १०८, ३६५ | यः समानोदकं | ६१५ |
| ३११०-१२ | १९ | कर्मावसाने कर्मादौ | ५७९ | वनस्पतिगते सोमे | ७०९ |
| ३१३७ | ३१८ | कूर्चेन वा पवित्रेण | २३३ | वस्त्रनिष्पाडनं | ३८३ |
| ४१२४ | ३६६ | रुष्णांगारचतुर्दश्यां | २५७ | वस्त्रोदकमपेक्षन्ते | २४९, २५३ |
| ४१३७ | १९५ | क्षौरं च सागरस्नानं | २५७ | विद्वे पर्वणि | २५५ |
| ६१२४-२६ | १९२ | ग्रन्थियुक्तपवित्रेण | २३१ | विष्णुक्रांतां शर्मां | ३६५ |
| १०१४१ | ४१४ | चण्डालैरन्त्यजैरुक्तौ | २१२ | व्यतिपाते वैद्वतौ | ४५ |
| १३११०-११ | १८९ | जघ्रान्तं जानुपर्यन्तम् | २२१ | शावे शवगृहं | २६९ |
| १७१११-१३ | १९ | ततः प्रदक्षिणीकृत्य | ३२० | षोडशे वर्षेऽस्य | ११९ |
| १७१२३ | ३२७ | तर्पणं देवतादिभ्यः | २२५, २४८ | संकल्परहितं कर्म | २६४ |
| १७१२५ (२) | ५५२ | तान्नपात्राश्ववालैश्च | २२४ | समैव व्याहृतिरितः | ३२४ |
| १८१२ | १६५ | दंपत्योरुभयोः | २६ | सर्वेषु पाकयज्ञेषु | ३९८ |
| भगवान् | | नक्तोद्धृतं तु | ७८५ | सूर्यानुवाकस्याग्नि | ३१७ |
| वर्णानामाश्रमाणां | ४ | नदीमहानदीस्त्रोतः | २५६ | स्नानपानक्षुतस्वाप | २३७ |
| वर्णाश्रमाविधिं | १६६ | निराचारस्य | ४४५, ९०६ | भविष्यत्पुराणम् | |
| भट्टाचार्यः | | निर्मथ्येन पत्नीम् | ५६९ | अग्निहोत्रार्थ | ८६४ |
| पापक्षयो हि | ४७७ | निष्ठीवजृम्भणे | ३४१ | अथापि प्रजापतेः | १६७ |
| भरद्वाजः | | पक्वं सफेनकलुषं | २२२ | अनभिस्तु यदा | ६६८ |
| अंगुष्ठादिक | ३३१ | पादावाजानु वा | ७९२ | अरुणोदयकाले | ८३९ |
| अज्ञाता यदि वा | १६ | पितृणामन्न | ८०६ | आदौ कर्कटके सर्वा | २८७ |
| अथ यज्ञोपवीतस्य | ३४ | पुत्र्यास्त्रिरात्रं | ५२४ | एकादशी दिशा | ८४२ |
| अथातो व्रतादेश | ११७ | पूर्वाह्न एव नान्दी | ७५४ | एकादश्यामुपवसेत् | ८४८ |
| अथापरुष्णविष्मूत्रं | २१५ | प्रक्षाल्य चरणौ | २४० | रुत्वा श्राद्धं महाबाहो | ४०६ |
| अपांक्त्यान् | ४४९ | प्रणवस्य ऋषिः | ३२४ | गृहीतवियो गुरवे | १७२ |
| अपि वा स्त्री | ३५५ | प्राङ्मुखश्चरणौ | २९०, ३०२ | जीवमानेन देयं | ७४२ |
| अभ्यंगस्तपने | २८२ | बद्धचूडः कुशकरो | २२९ | तथा व्रतस्थोऽपि स्मृतः | ५६३ |
| अलब्धात्मीय | ५७८, ६२७, ६८२ | ब्रह्मयज्ञे विशेषोस्ति | २२७ | दंडं तु वैणवं | १८६ |
| अशक्यः स्याद्यदि | ३२३ | बाह्मणान्सम्यगभ्यर्च्य | ५५३ | दशरुत्वः पिबेत् | ८२० |
| असपिण्डशवस्य | ५४४ | भुक्त्वा अमृता-- | ४५२ | दिनमेव विजानाति | ६३१ |
| अस्पृश्यस्पर्शने | २६६, ५८५ | मंत्रं सदैवमुच्चार्य | ९१ | नव सप्तविंशति | ६०५ |
| आयतं दक्षिणं रुत्वा | २२२ | मलमूत्रं त्यजेद्यस्तु | २१३ | पलद्वयं तु प्रसृतिः | ४३२ |
| आयातिवत्यनु | ३२६ | महानदीनद | २५५ | पापानामपि बाहुल्यात् | ३०५ |
| आ सायमाहुति | ३५८ | मानुर्मृताहेसंप्राप्ते | ७२१ | पारणं तु त्रयोदश्यां | ८४३ |
| उत्तरायण आपूर्य- | ११७ | मुद्राढकीम् | ७८४ | पिण्डनिर्वापणं | ७५६ |
| उद्धृत्वा भूधरेऽभोधिं | २८८ | यदि संगवकाल | ७४० | प्रत्यक्षमर्चनं | ७२१ |
| अपस्थाय नमस्कुर्वीत | ३४५, ३७६ | यद्यात्मरण्योर्वा | ५७३ | प्रत्यक्षमर्चनं श्राद्धे | ७४२ |
| एकामिदं दिशाहं | ३६४ | यस्मिन्सूत्रे विवाहः | ५७८ | प्रविश्य भानुः | ७११ |
| | | यावन्तो नियमाः | २४४ | प्रवृत्ताशौचतंत्रस्तु | ६१२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------------|----------|--------------------------|----------|----------------------------|----------|
| भविष्यत्पुराणम् | | भारतम् | | भाष्यान्तरम् | |
| ब्राह्मणः सर्ववर्णानां | ११० | जातस्य हि ध्रुवो | ६०४ | ब्रह्मशब्देन | ५७९ |
| ब्राह्मणातिक्रमो | ७७० | तुलसीपत्रमादाय | ३७५ | भाष्यार्थसंग्रहकारः | ८५५ |
| भोजनात्किंचिदन्नात् | ४२१ | दिने द्विग्भिषेकश्च | ४०८ | अन्वाहितस्थिः | ८५५ |
| मुहूर्त्तं न दिनं | ८२९ | पारक्ये भूमिदेशे | ७५८ | माध्यन्दिनात् | ८५५ |
| मृताहं समतिक्रम्य | ७०६ | य इच्छत्यूर्ध्वं- | ४१९ | भास्करः | |
| यजमानोऽग्निमान् | ६६८ | यो मृत्युकाले संप्राप्ते | ५५२ | अह्नयहानि | ७५२ |
| यथा व्रतस्थोऽपि मृतः | ५६२ | सतिलेन ततोऽग्नेन | ८१६ | कालातिपत्तिः | ३५८ |
| ये त्वादित्यदिने | ८२९ | स्यादुत्तरायणे | ५५३ | दश द्वादश | ९९ |
| व्यतिक्रान्ते न दोषो | ७७० | भारद्वाजः | | पात्राणां बाहुमात्रे | ८१७ |
| श्रावणी दुर्गनवमी | ८३२ | अष्टाचत्वारिंशत् | ११९ | भास्करीयम् | |
| षष्ठे षाण्मासिकम् | ६५५ | आधाय विधिवत् | २७ | अयनं दक्षिणं | ३९१ |
| सपिण्डीकरणं कुर्यात् | ६६४, ६६८ | आसनं स्वस्तिकं | १५ | भृगुः | |
| सर्वं वा विचरेद् | ९६ | चण्डालादुदकात् | ११४ | अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि | ३९३ |
| — | १६८ | जननमरणयोः | ३५९ | अशीतिर्यस्य | १६४, ८९३ |
| भविष्योत्तर (पुराणम्) | | द्वादशाहानि | ९२१ | आरनालद्वयं | ४३५ |
| आचार्यार्थं तयोः | ९२६ | बन्धूनां मातुलादीनां | ५१६ | उपवीतं बटोरकं | ९१ |
| कथयामि कुलस्त्रीणां | ८५३ | भार्यासंभोगसमये | ७७ | उपवीतविहीनेन | २९२ |
| दशावाङ्मनाडिकाः | २७४ | भुक्तश्चेत्पार्वण | ९१५ | एककाले गतासूनां | ६९६ |
| देवे ह्योदयिकी ग्राह्या | ८५१ | यजमानस्यैवा- | ५७० | एकादश्यष्टमी | ८३० |
| प्रतिवर्षं विधानेन | ८३३ | यज्ञोपवीतमाजिनं | ९५ | कोटिशो मनुजानां वै | ३५१ |
| मार्गशीर्षं ततो | ८२७ | यद्यपत्नीकः | २५ | ग्रस्तावेवास्तमानं | २७३, ४५० |
| मासि भाद्रपदे | ८३२ | यः समानोदकं प्रेतं | ५४५ | त्रिः पीत्वापो | २२६ |
| संक्रमस्तु निशीथे | २७५ | सहस्रपरमां | ३३७ | न रक्तमुल्बणं वासो | २५२ |
| सुवर्णयाचकानां | ४४ | स्त्री चैवं भर्तारि | ५७२ | नैकवासा न च | २६४ |
| भागवतम् | | — | ५७० | पंचयज्ञास्तु | ४०६ |
| कौण्डिन्धे सवितरि | ३९१ | भारद्वाजगृह्यम् | | पित्रोर्मृताब्दे | ६४० |
| गृहं श्मशानं | ३९१ | प्राणायामशतमा | ९२१ | ब्राह्मणस्य सितं वस्त्रं | २५१ |
| त्रिवक्त्राया उपश्लोकः | २९७ | भाष्यम् | | भेदेस्तु कारवल्यानि | ४३९ |
| प्रजापतिर्नाम तयोः | ५५७ | अथ चेद्वह्मपत्नीको | ५७२ | मंत्रपूतं स्थितं | ९१ |
| स लिंगानाश्रमान् | १९४ | भाष्यकारः | | मर्ष्यदिनं पितृणां | ७४० |
| भानुः | | निरुद्धोद्वासन | ७९३ | मलमासे मृतानां | ७३० |
| नाभिकण्ठान्तरो- | ४७४ | यदि त्वनेक | ५७१ | माता भ्राता च | ६४० |
| — | ९०५ | यद्याहिताग्निः | ५७० | मातामहं मातुलं | ५४५, ५५८ |
| भारतम् | | स्वमूर्धं स्वं सेषुव | ५८२ | यत्फलं सोमयागेन | ४०५ |
| अन्नं पूर्वं | ४२१ | — | ३०१, ६०७ | या समारोहं | ६९६, ७२१ |
| अश्वत्थसागरौ | २५७ | | | | |
| गुणास्तु षण्मिमत- | ४२४ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------|---------|---------------------------|----------|-------------|---------|
| भृगुः | | मत्स्यपुराणम् | | मनुः | |
| वृद्धिश्चाद्रं तथा | ७३२ | पृ. १०८ पं. ११ | २३० | २११ | २ |
| नैक वृषभैकशतं यत्र | २६४ | अन्नं तु सदाधि | ७८२ | २१५ | ७ |
| शावाशौचे समुत्पन्ने | ५०२ | अन्हो मुहूर्ता | ७०८, ७११ | २१६ | १ |
| शावे च सूतके | ६०० | अर्थज्ञो वेदवित् | ७६६ | २१९ | १६६ |
| सदोपवीतिना | ९१ | आश्वयुक् शुक्ल | ७६१ | २१११ | २ |
| सूतकं प्रेतकं | २७८ | एवं स्नात्वा ततः | २५१ | २११२ | ८१ |
| सूत्रं सलोमकं | ९१ | रुतं श्राद्धं | ७६१ | २११४ | ७ |
| सोष्णीषो वद्वपर्यङ्कः | २२३ | जाताशौचस्य मध्ये | ५३१ | २११५ | ३५७ |
| — २५३, ५१९, ५२८, ५५४, | | ततश्च वैश्वदेवाते | ४०६ | २११६ | ६ |
| भृगुपनिषद् | | दर्शं चाहरहः | ७३२ | २११७ | ८८ |
| ९१११० | ४१६ | नित्यं तावत्प्रवक्ष्यामि | ४०२ | २११७-१८ | ९ |
| मञ्जरी | | निमंत्रितास्तु | ७७९ | २११९-२३ | ९ |
| त्रिवर्णादि दहेत् | ५१३ | पानीयमप्यत्र | ३८१ | २१२६ | ७२, ५८० |
| मत्स्यः | | पितृयज्ञं तु निर्वर्त्य | ७४१ | २१२७ | ७२ |
| अक्षताभिः सपुष्पाभिः | ७९२ | पुण्यक्षेत्रे पुण्यतीर्थे | ९२७ | २१२८ | ४०५ |
| आधानं यज्ञकर्मापि | ७३४ | भरणी पितृपक्षे | ७४८ | २१२९ | ७९ |
| एकादश्यां तु | ८४५ | भुक्तवत्सु ततस्तेषु | ८१२ | २१३० | ८१ |
| एवं निमन्त्र्य | ७७८ | विश्वान् देवान् | ७९७ | २१३१ | ८१ |
| कुसुमं बीजपूरं | ७८४ | वैशाखस्य तृतीया | ७६१ | २१३३ | ८२ |
| गायत्रीजप्य | ७६७ | मदालसा | | २१३४ | ८२ |
| गृहद्वारसमीपे | ७९१ | तदन्वाचमनार्थाय | ८१३ | २१३५ | ८३, ५०९ |
| गृहीत्वास्थीनि | ६०९ | मनुः | | २१३६ | ८५, ८६ |
| ततश्च वैश्वदेवान्ते | ८१९ | ११७ | १६ | २१३७ | ८७ |
| दक्षिणं जानुमालभ्य | ७७६ | ११४-१६ | १७ | २१३८ | ८८ |
| दक्षिणां दिशं | ८१५ | ११६७, ६९ | ११ | २१३९ | ८९ |
| दिनक्षये तु | ८४४ | ११८३ | ११ | २१४० | ८९ |
| नामगोत्रं पितृणां | ७९३ | ११८८ | १८ | २१४१ | ९३, ९४ |
| नामं गोत्रं पितृणां | ८२३ | ११९० | ६६ | २१४२-४३ | ९५ |
| पद्मबिल्वार्क | ७९० | ११९३-९५ | ६९ | २१४४ | ९० |
| पुनर्भोजनम् | ८२० | ११९६-९७ | ७० | २१४५ | ९३ |
| ब्रह्मा सदस्पतिश्चैव | ९२९ | ११९९-१०० | ४८ | २१४६-४७ | ९३ |
| सिंहस्थिते सुरगुरौ | १४७ | ११९०३ | ६ | २१४९ | ९५ |
| स्वास्तिवाचनकं | ८१४ | ११९०८ | २ | २१५० | ९५ |
| शिवनेत्रोद्भवं | ७८९ | ११९१० | ४ | २१५१ | ९७ |
| मत्स्यपुराणम् | | ११९१२ | १०७ | २१५२ | ४१९ |
| १७१६८ | ३७ | ११९१६-११७ | ११३ | २१५४-५५ | ४२१ |
| | | | | २१५८ | २२५ |

| क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् |
|----------|----------|-----------|----------|---------|---------|
| मनुः | | मनुः | | मनुः | |
| २५९ | २२५ | २१२७-१२९ | ११० | ३११ | ११८ |
| २६० | २२५ | २१३० | ११० | ३१४ | १२३ |
| २६१ | २२२ | २१३३ | १०५ | ३१५ | १२४ |
| २६२ | २२२ | २१३४ | ११० | ३१६-७ | १३२ |
| २६३ | ९२ | २१३५ | १०६ | ३१९ | १२५ |
| २६४ | ९१ | २१३६-१३७ | १०६ | ३१९-१३ | १३३ |
| २६६ | ८४ | २१३८-१३९ | १०७ | ३१९ | १३३ |
| २६७ | ८४ | २१४०-१४१ | १०४ | ३१९ | १३३ |
| २७० | ३० | २१४२ | १०२ | ३१९-१८ | १३३ |
| २७१ | १७८ | २१४२ | १०४ | ३१९ | १३४ |
| २७२ | १११ | २१४३ | ४८१ | ३१२०-२१ | १४० |
| २७४ | ११३ | २१४३-१४५ | ९६ | ३१२३-२४ | १४१ |
| २७६-७८ | ३३४ | २१४६-१४८ | १०५ | ३१२५ | १४१ |
| २८० | ३३४ | २१५०-१५६ | १०५ | ३१२७ | १४० |
| २८१ | ३१९ | २१५७-१५८ | २९ | ३१४३-४४ | १४५ |
| २८३ | ३३४ | २१६५ | २८ | ३१४५-४९ | ७४ |
| २८५, ८७ | ३५२ | २१६६ | २८ | ३१४९ | ७५ |
| २८६ | ३३६ | २१६९-१७० | ८८ | ३१५१-५२ | १४३ |
| २९८ | १२१ | २१७१-१७२ | ८६ | ३१५३ | १४२ |
| २१०० | १८७ | २१७१ | ५५९ | ३१५४ | १४३ |
| २१०१ | ३३६, ३३७ | २१८१ | १२१ | ३१५५-६२ | १४३ |
| २१०२ | ३३६ | २१८२ | ५६५ | ३१६५ | २८ |
| २१०३ | ३३६ | २१८५-१८६ | ९८ | ३१६७ | ३९६ |
| २१०४ | ३६८ | २१८७ | ९६, ९८ | ३१६८-७१ | ३९६ |
| २१०५ | ३८ | २१८८ | ९६ | ३१७२ | ४०६ |
| २१०५-१०६ | ३७१ | २१८९ | ७६८ | ३१७३-७४ | ३९६ |
| २१०६ | ३७२ | २१९१-१९३ | ११३ | ३१७६ | ३६६ |
| २११६ | ३० | २१२०५ | १११ | ३१८१ | ३९६ |
| २११७ | १०८ | २१२०८ | १०६ | ३१८० | ४०६ |
| २११८ | ७६७ | २१२०९ | ११४ | ३१८२ | ४०२ |
| २११९ | १०८ | २१२१० | १०९, १११ | ३१८४-८६ | ३९७ |
| २१२१ | १०८ | २१२१९ | ११४ | ३१८७-९१ | ४०१ |
| २१२२ | १०७ | २१२२०-२२१ | २१० | ३१९० | ४०० |
| २१२३ | ११२ | २१२३३-२३७ | १०६ | ३१९२ | ४०१ |
| २१२४ | ३७० | २१२३८ | ३० | ३१९३ | ४०६ |
| २१२५ | १११ | २१२४३-२४४ | १२० | ३१९४ | ४०८ |
| २१२६ | ११२ | २१२४६ | १२० | ३१९५-९६ | ४०९ |

| କାଞ୍ଚି: | ପୃଷ୍ଠା | କାଞ୍ଚି: | ପୃଷ୍ଠା | କାଞ୍ଚି: | ପୃଷ୍ଠା |
|-------------|----------|----------------|---------------|-------------|---------------|
| ମନୁ: | | ମନୁ: | | ମନୁ: | |
| ୩୧୭, ୧୮ | ୪୧୧ | ୩୧୯୧ | ୭୭୧ | ୩୧୯୧ | ୭୪୧ |
| ୩୧୭୦ | ୪୧୬, ୭୬୫ | ୩୧୭୨ | ୭୮୮ | ୩୧୯୩ | ୭୭୫ |
| ୩୧୭୧ | ୪୧୫ | ୩୧୭୫ | ୬୭୬ | ୪୧୨-୩ | ୫୧ |
| ୩୧୭୨-୧୦୩ | ୪୧୨ | ୩୧୭୬ | ୭୫୮ | ୪୧୨-୬ | ୫୧ |
| ୩୧୭୪ | ୪୪୪, ୫୧୫ | ୩୧୮୦ | ୭୮୮ | ୪୧୩ | ୩୭୫ |
| ୩୧୭୫ | ୪୧୩ | ୩୧୮୧ | ୮୦୧ | ୪୧୪ | ୫୧ |
| ୩୧୭୬ | ୪୧୪ | ୩୧୮୨ | ୮୦୨ | ୪୧୫ | ୨୧ |
| ୩୧୭୭ | ୪୧୪ | ୩୧୮୩ | ୬୮୫, ୬୮୬ | ୪୧୬-୧୨ | ୫୧ |
| ୩୧୭୮ | ୪୦୪ | ୩୧୮୫, ୨୧୬, ୨୧୮ | ୮୧୫ | ୪୧୭ | ୨୩୫, ୩୫୫, ୪୫୭ |
| ୩୧୭୯ | ୪୧୫ | ୩୧୮୬ | ୭୪୧ | ୪୧୮ | ୩୫୫ |
| ୩୧୮୦ | ୪୦୯ | ୩୧୮୭-୨୨୧ | ୬୭୧ | ୪୧୮-୨୬ | ୨୧ |
| ୩୧୮୧-୧୧୬ | ୪୦୯ | ୩୧୮୮ | ୮୦୭ | ୪୧୮ | ୨୨ |
| ୩୧୮୨ | ୪୦୮ | ୩୧୮୯ | ୮୦୩ | ୪୧୯ | ୭୭୫ |
| ୩୧୮୩-୧୨୦ | ୪୧୫ | ୩୧୯୦ | ୮୦୪ | ୪୧୯ | ୪୦୯ |
| ୩୧୮୪ | ୩୧୭ | ୩୧୯୧-୨୨୭ | ୭୮୨ | ୪୧୯-୩୬ | ୧୨୨ |
| ୩୧୮୫ | ୭୪୧ | ୩୧୯୨-୨୩୦ | ୮୦୮ | ୪୧୯୪ | ୨୫୨, ୪୨୪ |
| ୩୧୮୬ | ୭୬୫ | ୩୧୯୩ | ୭୭୦, ୭୮୮ | ୪୧୯୫-୩୬ | ୪୫୮ |
| ୩୧୮୭ | ୭୩୫ | ୩୧୯୬-୨୩୭ | ୮୦୯ | ୪୧୯୭ | ୨୧୪, ୪୫୮ |
| ୩୧୮୮ | ୭୬୫ | ୩୧୯୯-୪୦ | ୭୮୬ | ୪୧୯୮ | ୪୨୬ |
| ୩୧୮୯-୧୩୫ | ୪୧୧ | ୩୧୯୯ | ୮୦୮ | ୪୧୯୯ | ୨୧୩ |
| ୩୧୯୦-୧୨୬ | ୭୭୭ | ୩୧୯୯ | ୮୧୨ | ୪୧୯୯ | ୨୧୧ |
| ୩୧୯୧ | ୭୬୫ | ୩୧୯୯ | ୮୧୦, ୮୧୩ | ୪୧୯୯-୫୧ | ୨୧୨ |
| ୩୧୯୨ | ୭୭୧ | ୩୧୯୯ | ୮୧୦ | ୪୧୯୯-୫୪ | ୩୬୨ |
| ୩୧୯୩-୧୪୧ | ୭୭୧ | ୩୧୯୯-୨୪୮ | ୬୫୧ | ୪୧୯୯-୬୧ | ୧୦ |
| ୩୧୯୪ | ୪୧୧, ୭୭୧ | ୩୧୯୯ | ୮୧୬ | ୪୧୯୯ | ୪୧୭, ୪୨୫, ୪୩୬ |
| ୩୧୯୫-୧୪୮ | ୭୬୧ | ୩୧୯୯-୨୬୩ | ୮୧୭ | ୪୧୯୯ | ୪୨୦ |
| ୩୧୯୬ | ୭୬୫ | ୩୧୯୯ | ୪୦୬ | ୪୧୯୯ | ୪୧୭ |
| ୩୧୯୭-୧୬୭ | ୭୭୨ | ୩୧୯୯ | ୭୮୨ | ୪୧୯୯ | ୫୫ |
| ୩୧୯୮-୧୭୦ | ୭୭୪ | ୩୧୯୯-୭୨ | ୭୮୨ | ୪୧୯୯ | ୫୫ |
| ୩୧୯୯ | ୧୫୩ | ୩୧୯୯ | ୭୪୧ | ୪୧୯୯, ୧୧ | ୫୫ |
| ୩୧୯୯-୧୭୨ | ୭୭୩ | ୩୧୯୯ | ୭୪୭ | ୪୧୯୯ | ୨୦୧ |
| ୩୧୯୯ | ୭୭୫ | ୩୧୯୯ | ୭୬୩ | ୪୧୯୯ | ୩୩୭ |
| ୩୧୯୯-୧୮୬ | ୭୬୭ | ୩୧୯୯ | ୭୭୭, ୭୦୧, ୭୬୪ | ୪୧୯୯ | ୩୧୧ |
| ୩୧୯୯ | ୭୭୭ | ୩୧୯୯ | ୫୭୧, ୭୧୪ | ୪୧୯୯-୧୬ | ୩୨ |
| ୩୧୯୯ | ୭୭୧ | ୩୧୯୯ | ୭୦୧ | ୪୧୯୯ | ୩୫ |
| ୩୧୯୯ | ୭୮୦ | ୩୧୯୯ | ୮୨୩ | ୪୧୯୯ | ୩୧ |
| ୩୧୯୯ | ୭୭୧ | ୩୧୯୯ | ୪୦୮ | ୪୧୯୯-୧୦୩ | ୩୬ |

| क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् |
|----------------|---------|---------|---------------|------------|----------|
| मनु: | | मनु: | | मनु: | |
| ४११०४ | ३६ | ५१४१ | ४५१ | ५११००-१०१ | ५४४ |
| ४१११४ | ३५ | ५१५३-५४ | ४५१ | ५११०१-१०२ | ५१४, ६१७ |
| ४१११७ | ३६ | ५१५८ | ४९४ | ५११०४ | ४६७, ५४५ |
| ४११२४ | ३७ | ५१५९ | ५१४, ५१७, ५१८ | ५११०६ | ४६७ |
| ४११२९ | २७० | ५१६० | १२५, ४९६ | ५११०७ | १७५, ४७५ |
| ४११४४ | २३५ | ५१६१-६२ | ५०० | ५११०८ | ४६७ |
| ४११४६ | ३६६ | ५१६२ | ५१० | ५१११०-१११ | ४६७ |
| ४११५१ | २११ | ५१६३ | ५१४ | ५१११४ | ४५९, ४६८ |
| ४११५६-१५८ | ४ | ५१६४ | ५२५ | ५१११७ | ४६९ |
| ४११६२ | १०६ | ५१६५ | २७७, ४९१ | ५११२२ | ४७१ |
| ४११७८ | | ५१६६ | ५०७ | ५११२४ | ४३३ |
| ४११८७ | ५८ | ५१६७-६९ | ५०८ | ५११२७ | २२४, ४७३ |
| ४११८८-१८९ | ५८ | ५१६९ | ५०८ | ५११२९-१३० | ४७५ |
| ४११९५-१९६ | ४१ | ५१७० | ४९६, ५२७ | ५११३१ | २१९ |
| ४११९७ | ४१ | ५१७१ | ५१५ | ५११३२ | ४७६ |
| ४१२०० | १८६ | ५१७२ | ५४७ | ५११३३ | २१७, २१९ |
| ४१२०१-२०२ | २५५ | ५१७३ | ६०६ | ५११३४ | २१९ |
| ४१२०३ | २५३ | ५१७४ | ५३४ | ५११३५-१३६ | २१६ |
| ४१२०५-२०६ | ४४२ | ५१७५ | ५३४ | ५११३८ | ६८ |
| ४१२०७, २०९-२२३ | ४४२ | ५१७६ | ५३६ | ५११४० | २३८ |
| ४१२२४-२२६ | ४४१ | ५१७७ | ४८५, ५०७, ५३५ | ५११४१ | २३८ |
| ४१२३१ | ४० | ५१७९ | ५२५ | ५११४२ | २३९ |
| ४१२३२-२३७ | ४१ | ५१८० | ५१७, ५२५, ५२६ | ५११४४ | ९२० |
| ४१२३८-२४० | ४१ | ५१८२ | ५१८, ५२९ | ५११४५ | २३६ |
| ४१२३८-२४३ | ४ | ५१८३ | ५२२ | ५११५४ | १५७ |
| ४१२४७ | १३२ | ५१८४ | २६४ | ५११५८ | १४० |
| ४१२५० | ५६ | ५१८५ | | ५११५४ | ८४७ |
| ४१२५३ | ५७ | ५१८६ | २६७ | ५११५६ | १६१ |
| ४१२५४-२५५ | ५७ | ५१८७ | ५१९, ५२० | ५११६० | १६३ |
| ५१४ | ४३३ | ५१८९ | ४८९ | ५११६६, १६७ | २४ |
| ५१५ | ४३३ | ५१९० | ५५८ | ५११६७ | २६ |
| ५११८ | ४५१ | ५१९१ | ५८१ | ६११ | १६९ |
| ५११९ | ४३४ | ५१९२-९३ | ४८६ | ६१६-२३ | १६९ |
| ५१२० | ४३५ | ५१९४ | ४८७ | ६१२५-३० | १७० |
| ५१३० | ४५२ | ५१९५-९६ | ४८६ | ६१३१-३२ | १७० |
| ५१३५ | ४५१ | ५१९७ | ४८७ | ६१३३-३४ | १७१ |
| ५१३९-४० | ४५१ | ५१९८ | ५४८ | ६१३५-३७ | १७१ |

| क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् |
|-----------|---------|------------|---------|---------------|----------|
| मनु: | | मनु: | | मनु: | |
| ६।४४ | १८९ | ९।९८-१०० | १४३ | १०।१०९ | ९२३ |
| ६।४९ | १८७ | ९।९९ | १३७ | १०।१११ | ५९ |
| ६।५१ | १९९ | ९।१०५ | ७६ | ११।१।६ (?) | ५६ |
| ६।५३-५४ | २०२ | ९।१०७ | ७६ | ११।१० | ... |
| ६।५५-५७ | १९९ | ९।१०८ | १०४ | ११।२० | ३१५ |
| ६।५८-६० | १९९ | ९।१२५ | ५५७ | ११।२१-१ | ९३५ |
| ६।७० | ३२५ | ९।१२५-१२६ | १४६ | ११।२४ | २२ |
| ६।७२ | २०६ | ९।१२६ | ५५७ | ११।२७ | २२ |
| ६।७४ | १९५ | ९।१२७ | १२६ | ११।३० | २९२, ७६९ |
| ६।८९ | १६४ | ९।१३९ | ५६२ | ११।३६-३७ | ३५५ |
| ६।९० | १६५ | ९।१४१-१४२ | १०२ | ११।४१ | २२ |
| ६।९४ | १७४ | ९।१४२ | ५२१ | ११।४१ | ९२१ |
| ६।९५ | ३६६ | ९।१५५ | ८९४ | ११।४२, ४३ | २२ |
| ७।१३४ | ६६ | ९।१५९-१६० | ५२० | ११।४४ | ८५९ |
| ८।७९ | ६० | ९।१६६-१७७ | १०१ | ११।४५ | ८६८ |
| ८।८१-८२ | ६० | ९।१८० | १०१ | ११।४५-४७ | ९०६ |
| ८।८६-८९ | ६१ | ९।१८० | ५६१ | ११।४८ | ८६० |
| ८।९० | ६१ | ९।१८२ | १०२ | ११।६८ | ८६६ |
| ८।९२-९३ | ६१ | ९।१८३ | ५६५ | ११।४६ | ८६७, ८६८ |
| ८।१०३ | ५४ | ९।१८६ | ४९७ | ११।४६ | ८६८ |
| ८।१०६-१०७ | ९२० | ९।१८७ | १२५ | ११।५४ | ८६२, ८९७ |
| ८।११२ | ५४ | ९।१८७-१८९ | ५६७ | ११।५५ | ८६४, ९२१ |
| ८।१४१ | ६३ | ९।१९६ | ५६४ | ११।५६ | ८६५ |
| ८।२२८ | १३८ | ९।३०१-३१९ | ६४ | ११।५७ | ८६५ |
| ८।३००-३०१ | ११६ | ९।३२६ | ६६ | ११।५८ | ८६५ |
| ८।३४० | ८८६ | ९।३३४, ३३५ | ६७ | ११।५९-६६ | ८६६ |
| ८।३४२ | ५९, ८८६ | १०।५-६ | ७० | ११।७२ | ८७१ |
| ८।३४९-३५० | ८७४ | १०।८ | ७० | ११।७४-७५ | ८७६ |
| ९।२-१७ | १५४ | १०।११ | ७१ | ११।७६-७९ | ८७२ |
| ९।४७ | १३७ | १०।२० | ७२ | ११।७६ | ८७६ |
| ९।५९-६० | १०२ | १०।४१ | ४९५ | ११।८७-८८ | ८६३ |
| ९।८०-८३ | १५१ | १०।७७ | १८ | ११।९०-९१ | ८७९१ |
| ९।८८ | १३४ | १०।७७-७८ | ६४ | ११।९३, ९४, ९५ | ८७८ |
| ९।८९ | १३६ | १०।८३-८४ | ६२ | ११।९७ | ८८० |
| ९।९० | १३६ | १०।९५ | ६३ | ११।९९-१०२ | ८८२ |
| ९।९४ | १३६ | १०।१०२ | ५६ | १२।१०० | २९ |
| ९।९७ | १३८ | १०।१०४ | ४२६ | ११।१०३-१०७ | ८८६ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------|----------|------------------------|----------|-------------------------|----------|
| मनुः | | मनुः | | मनुः | |
| १११०५ | ८८७ | १११२१५ | ९३८ | उत्सर्गे प्रथमाध्याये | ३५ |
| ११११२०, १२२ | ८९२ | १११२१६-२१७ | ९४० | उपवीती स्त्रियं | ७७ |
| ११११२३ | १२२, ८९२ | १११२२६ | ९३२ | उभयत्र दशाहानि | ४७८ |
| ११११२५ | ९३१ | १११२२६-२२९ | ८६९ | ऊर्ध्वं नामेः | २६७ |
| ११११२६-१३० | ८७३ | १११२४५-४६ | ९३२ | एतदक्षरमेत्यं | ३३८ |
| ११११३१-१३२ | ८७७ | १११२४८ | ३२५, ९३२ | एवं निर्वपणं | ४४० |
| ११११४० | ८७७ | १११२५०-२५१ | ३५० | कुत्सिते वामहस्तः | १४ |
| ११११४८ | ४३२ | १२११० | १८४ | कुर्वन्प्रतिपदि | ७६३ |
| ११११५२ | ४३१ | १२१६९ | ८६२ | कुसीदं ऋषिवाणिज्यं | ६२ |
| ११११५२ | ९०७ | १२१२४-२८ | ८६० | गुरोरध्यवलिप्तस्य | १०६ |
| ११११५३ | ९०७ | १२१६०-६८ | ८६० | गृह्णन् गो भू | ५६ |
| ११११५४ | ८८० | १२१७८-८१ | ८६२ | गोत्रान्तरप्रविष्टानां | ५२४ |
| ११११६२-१६९ | ८८४ | १२१९२ | १९८ | गोरसं चैव सक्तुश्च | ४४६ |
| ११११६० | ९१६ | १२१११०-११३ | ८६९ | चतुरो निर्वपेत् | ६७२ |
| ११११७१-१७२ | १२७ | १२१११८ | १२२ | चतुर्दशैते मन्त्राः | ३८१ |
| ११११७३ | ८९० | १२११२४ | ११६ | चन्द्रसूर्यग्रहे | ८३० |
| ११११७४ | ८९२ | १२११३८ | ८७४ | त्रीण्यादुरति- | ४३ |
| ११११७६-१७७ | ८९४ | १२११५१ | ११८ | दन्तवद्वन्तलभेषु | २३८ |
| ११११७८-१७९ | ७०३ | १२१२४९-२५१ | ९३४ | दर्शं च पौर्णमासं | ४७९ |
| ११११८९ | १६४ | १२१२९४ | ९२४ | दहनं बहनं वापि | ५४५ |
| ११११९० | ८६७ | अग्निहोत्रस्य | ३५५ | द्विजवादे महाचान्द्रं | ८८६ |
| ११११९१ | ९०१ | अग्निहोत्र्यप | ३५६ | द्वौ देवे पितृकार्ये | ७७७ |
| ११११९३ | ४७५ | अज्ञानात्प्राश्य | ११८ | धर्मव्यतिक्रमो | ५ |
| ११११९७ | ९०१ | अनन्तरः सपिण्डो यः | ५६६ | नष्टे मृते प्रव्रजिते | १३९ |
| ११११९८ | २९, ९०१ | अनर्हते यत् | ५२ | नाद्यादन्तःशवे | ५४० |
| ११११९९ | ९०४ | अनिन्दन्भक्षयेत् | ४२३ | नारं स्पृष्ट्वास्थि | ५४७ |
| १११२०१ | ९०३ | अपुत्राः स्वकुले | ७५१ | नित्यं स्नात्वा शुचिः | २६४ |
| १११२०२ | ९२२ | अमुक्तयोरस्त | ४५० | निमन्त्रयेत् व्यवहारान् | ७१८ |
| १११२०३ | ३७० | अलाभे देवज्ञातानां | २५५ | नियतो विचरेत् | १८६ |
| १११२०३ | ९११ | अवरात्तुत्तमात् | ७० | पक्षादौ च रवौ | २८३ |
| १११२०४-२०५ | ९०० | असपिण्डक्रियाकर्म | ६५० | पतितं पतितेत्युक्त्वा | ८९८ |
| १११२०६-२०८ | ८९९ | अस्थीनां परकीयानि | ८९० | पितृगोत्रं कुमारीणां | ६८१ |
| १११२०९ | ९३१ | अस्वर्थं लोकविद्विष्टं | १३१, ५१८ | पितृणां तु | ७१० |
| १११२११ | ५५० | आचार्यं स्वमुपाध्यायं | ५४५ | पित्रोरुपरमे स्त्रीणां | ५२४ |
| १११२१२ | ९३७ | आदित्यमथ वा | ३८४ | पीत्वाऽपोशन | ४३१ |
| १११२१३ | ९३७ | आदिष्टी नोदकं | ५१९ | पुच्छे विडालकं | २६८, ४२९ |
| १११२१४ | ९३७ | आहिताग्निर्वथा | ५६८ | पुरोधाः शुद्धवर्णस्य | ९०१ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|----------------------------|---------|-----------------------------|----------|----------------------------------|-----------|
| मनुः | | मनुः | | मरीचिः | |
| पुष्पालंकारवस्त्राणि | २४४ | २०१, ३३८, ४४१, ४९७, ५०९, | | न बहिर्जातुराचामेत् | २२३ |
| प्रत्ययान्तरकल्पं | ८ | ५१९, ५२२, ५६०, ५६१, ७१३, | | पक्षहोमानतो | ३५९ |
| बहूनामेककार्याणां | ८६२ | ७४१, ८१२ | | पञ्चपर्वसु नन्दासु | ९८३ |
| बह्वचः सण्डवस्त्रेण | ५८० | मन्त्रः | | पञ्चमे सप्तमे चैव | १२७ |
| ब्राह्मणक्षत्रियविशां | १६३ | आयुर्वलं यशो | २४१ | पंडिता ज्ञानिनो | ७०६ |
| ब्राह्मणयां सधवायां | ७१ | संज्ञदीपिका | | पुत्रः पौत्रश्च तज्जश्व ५६०, ५६१ | |
| मातापित्रोर्दशाहं | ४९४ | देवस्य सवितुः | ३२७ | प्रतिमासं मृताहे | ७२९, ७३१ |
| माजार्जश्चैव | २६८ | मन्त्रदेवताप्रकाशिका | | प्रथमेऽह्नि तृतीये | ६०६ |
| यज्ञार्थं भिक्षितं | २२ | आसनमन्त्रस्य | ३२२ | प्रेतं पितृश्च | ७५७ |
| यदधीतमविज्ञातं | ३१६ | विष्णुं भास्वत् | ३२५ | ब्राह्मणो ह्यन्यवर्णस्य | ५६७ |
| यदि पूर्वदिने | ७०४ | मरीचिः | | भूमिष्टमुद्रतं | २५५ |
| यस्मिन्देसो तु | २१६ | अथ हविर्विधिं | ३९४ | मात्रैकया द्विपुत्रकौ | ५२१ |
| यस्य देशं न | १०९ | अनग्निश्च प्रवासी | ७१४ | यो विप्रः पापमज्ञात्वा | ८८५ |
| यस्यामस्तं गविः | ७१३ | आदित्यदुहिता | २८८ | लवणे मधुमांसे | ४८० |
| यः कामतो | ४८८ | आदिदके समनुप्राप्ते | ७१५ | वारिपूर्वं प्रदत्ता | ५१५ |
| या ब्रह्मव्यापिनी | ७१३ | आशौचान्ते ततः | ६३६ | विधेया देवता पूजा | ३८३ |
| येनांगेनावरो वर्णो | ६८ | उपरगो पितृश्राद्धे | ७३७ | विना ह्यप्यसुवर्णेन | ३७७ |
| राहुदर्शनं | २७० | उपस्पर्शेच्चतुर्थस्तु | २६५ | विप्रे शुक्ला तु | २१६ |
| राहुदर्शनसंक्रान्ति | २७६ | एकाहस्तु सपिण्डानां | ५२१ | विपशस्त्रश्चापदादि | ६६२ |
| वटार्काश्वत्थपत्रेषु | ४२० | कदलीचूतपनस | ४३९ | विपशस्त्रश्चापादि | ७५० |
| वधे प्राथमिकात् | ८७२ | कर्कटे सरितः सर्वा | २८७ | श्राद्धविप्रे द्विजातीनां | ८११ |
| वार्गिकूपतटाकेषु | २१६ | कर्पूरकुंकुमो | ७९० | श्राद्धविप्रे समुत्पन्ने | ६३२, ६५४, |
| विधाय पितृयज्ञांतं | ४०३ | रुक्तिकादिषु | ७६४ | ७१०, ७१६ | |
| वीर्यहानिर्यशोहानिः | ४३८ | गर्भस्तृत्यां यथा | ४९१ | श्राद्धेषु विकिरं | ८१३ |
| वेदश्च वेदमूलानि | २९७ | गृहपवेशगोदान | ७३४ | श्राद्धेषु विनि- | ७९० |
| व्याधितस्यार्थ | ४१० | गोत्रांतरप्रविष्टानां | ५२१ | श्रोत्रियश्च तटाकादि | ९०४ |
| शास्त्रसज्जन | १९४ | घृताद्वा तिल | ७९० | स पावित्रकरः | २९३ |
| शिष्टाचारस्मृतिः | १३१ | चन्दनागरुणी | ७९० | सर्पं दृष्ट्वा यथा | ५४९ |
| शुक्लानि हि | ४३६ | चूडायाः करणे | ५१४ | सामान्येन निषेधेऽपि | २८२ |
| संध्यारात्र्योर्न | ७१७ | तिसृभिश्रुतलात् | २१७ | सूतके कर्मणां | ३१४, ४७७ |
| सव्याहृतिकां | ३२३ | दिवाहृतं तु यत्तोयं | २७१ | सूतके सूतके | ५२० |
| सुवर्णं चंदनं | ३६६ | दुर्बोधा वैदिकः | २ | सूर्यग्रहे तु | ९१० |
| सूर्योपरागे चो | ९१० | द्विपुष्करेषु | ६५५ | सौवर्णेन च पात्रेण | ३७७ |
| स्नास्यतो वरुणः | ४२३ | द्विरश्मिमत्यां | ३५७ | स्तेयं वा व्यभिचारो | ८९९ |
| स्नेहद्वज्रां समं | ७१९ | व्यपराह्नव्यापिनी | ७०८, ७१३ | स्त्रावे मातुस्त्रिरात्रं | ४९२ |
| — १३, २१, ४८, ७३, ८१, १०२, | | नमश्चाहुं नव | ९१४ | हस्तं प्रक्षाल्य | ८१३ |
| ११२, १२८, १४४, १४६, १७६, | | | | — ४७८, ४९२, ७१६ | |

| क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|---------|----------------------------|---------|------------------------|---------|
| महाभारतम् | | माधवीयम् | | माधवीयम् | |
| १२२।६८ (शां. प.) | १ | अत्यापदि | ६२ | पुत्रः कुर्वात्पितुः | ६७० |
| अग्निहोत्रफला | ७६ | अत्र सुवर्णशब्दः | ८८२ | पुनरपो दत्त्वा | ७९१ |
| आयुष्कामोऽथ वा | ३०३ | अनतीतद्विवर्षं | ५०९ | पूर्वकस्य मुख्यस्य | ६९६ |
| इतिहासपुराणाभ्यां | २९२ | अनस्थिसंचये विप्रो | ५४३ | पूर्वेऽह्नि रात्रौ | ७७६ |
| क्रीतान्नं देवतागारे | ९०८ | अनुज्ञातः कनिष्ठो | २३ | पौरुषेण तु | ३८५ |
| गंगास्नानं प्रकुर्वीत | २७१ | अबुद्धिपूर्वसंस्पर्श | २६५ | प्रतिपत्प्रभृतिष्वेकां | ७४७ |
| गृहस्थो ब्रह्मचारी वा | १७२ | आचम्य च ततो | ३८३ | प्रदानं यत्र | ६५९ |
| ज्ञातीनां तु | ७४९ | आचार्यं स्वमुपाध्यायं | ५४५ | प्रागग्रेषु सुरान् | ३७६ |
| तत्रैव चेद्राद्रपद | ७४३ | आ ब्रह्मस्तं च पर्यंतं | ३८० | प्राजापत्यक्रिया | ९४३ |
| ते तथैव महाराज | ३१३ | ऊर्ध्वपुंड्रं त्रिपुंड्रं | ३०७ | ब्राह्मणोद्देशेन | ८१४ |
| पंचके पंचके वर्षे | ७२४ | एकोद्दिष्टं त्रिविधं | ६६१ | मातरं जननीं | ८८६ |
| पंचरात्रविदो | १४० | एवं यः सर्व | ३८० | मासं मासिकं | ७१५ |
| पादाभ्यंगं शिरोभ्यंगं | २८५ | कण्ठं शिरोग्रं प्रावृत्त्य | २२३ | यज्ञोपवीतं कुर्वीत | ९० |
| ब्राह्मणैः क्षत्रियैः | ३९० | कन्यागते सवितरि | ७४७ | यत्र कचनसंस्थानां | ३८० |
| महानयो देविका | २८७ | रुते चतुष्पात् | १२ | यदा तु विदितं | १८५ |
| माघे ह्यर्धोदिते | २८१ | सङ्गमौक्तिक | ३७७ | यदुच्चनीच | ३३९ |
| यच्चोत्कोचादि | ७८३ | गुरुवारोऽप्यमायां च | २८० | या तिथिः संक्रमात् | ७०५ |
| यमोऽथ लोकपालान् | १५६ | ग्रामाद्वृद्धशतं | ४७३ | लेपभाजश्चतुर्थाद्याः | ४९६ |
| या मन्वाद्या | ७६२ | चण्डालादिव्यतिरिक्ता | २६५ | वाचिकारुध्य उपांशुः | ३३९ |
| यावद्यावदभूत् | ११ | ज्योतिःशास्त्रप्रसिद्धं | ७२४ | शिवविद्या गुरुणां | ३९४ |
| ये च महृषया | ६०१ | त एते देवयज्ञ- | ४०३ | श्रवणाश्विध | ७३६ |
| राज्ञां पापनिबद्धानां | ९२७ | ततो गोदोहमात्रं | ४०८ | श्राद्धे यज्ञे च नियमे | २४४ |
| विद्या प्रसवतो मित्रं | ५५१ | ततो महाव्याहृतिभिः | ४२१ | होमं च रुत्वा | ३६६ |
| श्रवणाश्विध | ७४३ | तत्सूर्याभिमुख्य | २१२ | — | ४,१६२, |
| श्राद्धकर्मणि भोक्तारो | ९१५ | तिर्यग्यवोदरा | ५२३ | २२९,२४७,२५९,२६६,२६९, | |
| सर्वस्वेनापि कर्त्तव्यं | ७१७ | दशाहीनेन वस्त्रेण | २५९ | ३१३,३१६,३६७,३७६,४०५, | |
| — | २८९ | देवानां होमकर्मणि | ७९८ | ४३२,४४६,४४९,४९४,४९७, | |
| महोपनिषद् | | देवाश्चैव पितृश्चैव | ३८० | ४९९,५०१,५०५,५०६,५१८, | |
| एको ह वै | १७ | देशान्तरे स्थितः | ६२० | ५३१,५३५,५८५,५८९,६०३, | |
| धृतोर्ध्वपुण्ड्रः | २९२ | द्वयं पुरुषं | ९२१ | ६०६,६१४,६३७,६४७,६५४, | |
| माण्डूयः | | ननु केवलपितृ | ७४९ | ६६२,६६७,६६८,६७०,६८७, | |
| योनिबंध | ५२७ | नन्वेवं कलौ | १३ | ७१५,७२४,७४५,७४९,७५०, | |
| शावे च सूतके | ५४४,६१७ | नादर्शं चैव | ११४ | ७८४,७८७,८१२,८१६,८७२, | |
| सपिण्डो वाऽसपिण्डो | ६०० | नास्तिकस्त्रिविधः | ९२२ | ८७९,८८१,८८७,८९४,८९६, | |
| सुरापो ब्रह्महा | ३५१ | नास्तिक्यादथ वा | १९ | ८९९,९००,९०३,९०५,९१९, | |
| माधवीयम् | | नित्यं नैमित्तिकं | २४७ | ९२४,९३७. | |
| अकामरुते | ८६७ | नैकृत्यामिषविक्षेपम् | २११ | माधवीयपरांशरः | |
| | | पितुः पितृष्वसुः | १२७ | परिमोगात् | १७४ |

| श्लोः | पृष्ठम् | श्लोः | पृष्ठम् | श्लोः | पृष्ठम् |
|--------------------------|---------|------------------------|----------|---------------------------|----------|
| माधवीयपराशरः | | मार्कण्डेयः | | मार्कण्डेयः | |
| बहूदकश्च संन्यस्य | १८४ | उदङ्मुखः प्राङ्मुखो | २४३ | पूजयित्वा हरिं | ८५ |
| सूर्योदयात्प्राक् | २०९ | उदङ्मुखानां | ८१२ | प्रतीचि दक्षिणाशां | २४३ |
| — | ११२ | एकभक्तेन नक्तेन | ८४८ | प्रातर्भुक्त्वा च यतवाक् | २४३ |
| माध्यन्दिनगृह्यम् | | एवं गृहचलिं | ४०१ | प्राप्ते तु पंचमे | ८४ |
| भस्मना ललाटे | ३०३ | कन्यागते सवितरि | ७४५ | फलेर्मासेन | ९३८ |
| मानवम् | | कालिन्दी गौतमी | २८८ | ब्रह्माण्डं पुण्यतीर्थेषु | ९२६ |
| अतश्च वेदा | २९७ | कुशापाणिः सदा तिष्ठेत् | २२९ | ब्राह्मादिषु विवाहेषु | १२९, ६८१ |
| आयुधैः शंसचक्रायैः | २९९ | कुशवृत्त्यां | ३२७ | भुक्त्वा तु ब्राह्मणाशौचे | ४४८ |
| ब्राह्मणैश्च पुरा | २९८ | कैवर्तस्य स्त्रियं | ८८९ | भूयोऽप्याचम्य | ४५४ |
| वेदमस्तलितो | २९८ | क्रीतलब्धाशनाः | ६०६ | मार्जारं नकुलं | ८८५ |
| — | ५१९ | स्रमारुह्य विप्रो | ९०३ | मेषसंक्रमणे भानोः | ७०२ |
| मानवीयसंहिताम् | | गोधूमैरिक्षु | ७८३ | यवव्रीहिस | ७८१ |
| प्रातःकाले च | ३०५ | ग्रहणं तु भवेत् | ४५० | यस्य संवत्सरात् | ६९० |
| मानवोपपुराण | | चतुर्भिर्दर्भ | २३० | ये चापमृत्युना | ८१३ |
| ऊर्ध्वपुङ्गं च शूलं | २९५ | चन्दनागरु | ७९० | यो विप्रः पञ्च | ८९० |
| त्रिपुङ्धारिणं | ३०४ | चन्द्रस्य यदि वा | ४५० | रक्षणीया तथा | ५०२ |
| मार्कण्डेयः | | चौले कर्माणि | ९१५ | रौरवेऽपुण्यनिलये | ४५२ |
| २७१२३-२४ | ७६४ | जात्यश्च सर्वा | ७८९ | वटासनाकंखदिर | २४२ |
| अग्न्यंबुहीने | ५०२ | ततः शनैर्वलिं | ४०२ | वज्र्यां जन्तुमया | ७५८ |
| अज्ञात्वा पुष्पिणी | ९११ | ततो नित्यक्रियां | ४०६ | विशिष्टब्राह्मण | ७६२ |
| अनाहिताग्निः | ६८५ | तन्मक्षत्रमहोरात्रं | ८५८ | विश्वचक्रं द्विजो | ९२९ |
| अन्यायोपार्जित- | ८२२ | तस्याग्रतोऽथ | ८३ | दैश्वदेवं देवतार्चा | ९११ |
| अप्रतायां मृतायां | ५१५ | दशाहं ब्राह्मणः | ४७८ | शालमल्यश्चस्थभव्यानां | २४२ |
| अमंत्रेण रुतं | २९३ | दासी मानधनं | ८९१ | शिवे निवेदितं | ९१२ |
| अंयुते वा सहस्रे | ९०८ | देवतापुरतस्तस्य | ८३ | शान्तिमुष्णोदकात् | २७२ |
| अर्कद्विपर्वरात्रौ | ५११ | द्वादश्यामुपवासेन | ८४६, ८५० | शुक्लपक्षे तु | ७११ |
| अश्रीयात्तन्मना | ४२४ | द्विमासं सरितः सर्वा | २८७ | संपूर्णैकादशी | ८४२ |
| अह्नः षट्शु | ७८७ | धृत्वायजो गोसहस्रं | ९२७ | सख्युरुत्सुन्न | ५६७ |
| आपस्त्वपि सदा | ९२६ | नारी खल्वननु- | १५४ | सपवित्रेण हस्तेन | २३१ |
| आपाङ्कयेत्यस्य | ९२२ | नारी खल्वनुज्ञाता | ८४७ | सम्यगाचम्य तोयेन | २३६ |
| आग्नेशुखण्डताम्बूल | २३९ | नित्यक्रियां पितृणां | ८१८ | सर्वकालं तिलैः स्नानं | २८० |
| आग्नेशुखण्ड | ३८९ | पक्वान् तु समादाय | २४० | सर्वे कण्टकिनः | २४२ |
| आहिताग्निस्तु | ६८४ | पात्राभावे तृणार्तस्तु | ८८१ | सर्वेषामपि | ३३५ |
| उच्छिष्टेन तु संस्पृष्टो | २३९ | पिता पितामहश्चैव | १२९ | सालग्रामशिलां | ९१८ |
| उत्तरापोशनात् | ४५२ | पितृणां नामगोत्रेण | ८१३ | सौचिकस्य स्त्रियं | ८९० |
| उत्तरायणगे सूर्ये | ५५३ | पितृनुद्विश्य | ४०२ | सौरमेष्टयः सर्वहिताः | ४०८ |
| | | पुराणानां नरेन्द्राणां | २५५ | स्त्रिणामुपनयन | ५१६ |
| | | पूजयित्वाऽतिथीन् | ४१० | स्नातः स्नातान् | ७९१ |
| | | | | — | ७१२, ८१८ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------------|---------|------------------------|----------|---------------------------|---------|
| मार्कण्डेयपुराणम् | | मैत्रेयसूत्रम् | | यमः | |
| २७।१९-२२ | ५६३ | मासद्वये ययेक | ७३२ | आदित्यस्य करैः | २५८ |
| तुलाप्रतिग्रहीता | ९२५ | मौद्गल्यः | | आ निपाताच्छरीरस्य | १२१ |
| पुत्रो भ्राता च तत्पुत्रः | ५६३ | अवालुकायुतं | ३७४ | आपद्गतो विना | ९२२ |
| प्रतिगृह्य द्विजो | ९२६ | सरुदभ्यर्च्य | ३८७ | आमंत्रितस्तु यः | ७७९ |
| प्रधानं संपरित्यज्य | ९२५ | यजुषः | | आरभोमार्कवारेषु | ६१० |
| बाहुजादेकगुणितं | ९२६ | २।२।८-९ | ३९१ | आषाढ्यामथ | ७६० |
| मिताक्षरा | | यज्ञपार्श्वः | | आसनं संस्पृशत् | ७९५ |
| — | ८५ | ओषधीमन्तरे | ७९८ | आहरेन्मृत्तिकां प्राज्ञः | २१५ |
| मुण्डकम् | | दुहित्रा स्तुषया | ३५५ | आहारमात्रात् | ९७ |
| तद्विज्ञानार्थं | १८१ | पंचदश्याः परः | ८५४ | आहारमात्रादधिकं | ४११ |
| मुण्डकोपनिषद् | | होमान्तः पितृयज्ञः | ७४२ | आहारस्य चतुर्भागं | २०३ |
| ३-१-१० | ५५० | यतिधर्मसमुच्चयः | | उत्तीर्योदकमाचामेत् | २३५ |
| तमेवैकं जनिथा. | १९५ | आस्थेन तु | २०१ | उदकं च तृणं | ४२७ |
| पाणिपात्रम् | २०१ | क्षौमं शाणमयं | १८६ | उद्धृत्य वामहस्तेन | २२४ |
| मुद्गलः | | देवं रुष्णं मुनि | २०६ | उभे मुत्रपुरीषे | १९६ |
| देवेषु द्वावेको | ७५५ | यमः | | ऊनद्विवर्षिकं | ५०८ |
| मृकुण्डः | | २।५ | ९३४ | एकवासा अवासा | १८१ |
| पंच बूडा आंगीरसो | ८३ | अंके नारोपयेत् | ४२६ | एकैकं पिण्ड | ९३७ |
| मेधातिथिः | | अंगुष्ठमात्रो भगवान् | ८०४ | एकोद्विष्टे कुशाः कार्याः | २३१ |
| न स्नायादुत्सवे | २७० | अम्रो करणवत् | ८८६ | एतान्येव समस्तानि | ९३८ |
| बहन्नं पच्यते | २०४ | अघवृद्धिमदा | ५३१ | ओंकारपूर्विकाः | ३२३ |
| भिक्षाटनं जपो | १८८ | अदन्तजाते तनये | ४९३, ५०७ | कन्या द्वादशमे वर्षे | १३६ |
| यावन्न स्युस्त्वयो | १८४ | अन्तर्जले जपेन्ममः | २६१ | कपिलां विप्रमुख्याय | ३८७ |
| संरक्षणार्थं | १९० | अन्तर्वतापि कर्तव्यं | ५८९ | काणां कुटुजाश्च | ७७४ |
| — | ५११ | अपचन्तमतिक्रम्य | ४११ | कारागृहाद्विनिर्गत्य | ९०४ |
| मैत्रायणीश्रुतिः | | अपः परनखं स्पृष्टा | २२३ | कार्तिक्या पुष्करे | २८१ |
| इन्द्रस्य वज्रोऽसीति | १८० | अब्जिन्दुर्यः | २०४ | कार्पासं क्षौम- | ९४ |
| त्रिषु वर्णेष्वेका | २०१ | अर्वाग्दशाहात् | ६१४ | किल्बिषं हि | ४४४ |
| यस्तु त्वैरग्निभिः | २५, ५७० | अल्पानामेव पयसां | ४४७ | कुतूहलेन वा शृङ्गं | २३० |
| भिक्षार्थं ग्रामं | २०१ | अग्रतानाम् | ५२ | कुलं च शीलं च | १३४ |
| मैत्रेयः | | अशुद्धौ तु परित्यागः | १०६ | कुलानामान्यपि | १३२ |
| मासद्वये ययेकराशिं | ७२३ | अष्टमात् द्वादशात् | ६७० | कुशाः काशास्तथा | २३४ |
| मैत्रेयगृह्यपरिशिष्टम् | | अष्टमे तु भवेत् | १३५ | रुच्छ्रद्वादश | ८०७ |
| उद्वाहे पुत्रजनने | ७३८ | अस्थिसंचयनात् | ५६८, ६३८ | केतनं कारयित्वा | ९२३ |
| | | आचामाचित | ९३९ | संजः काणः | ७८६ |
| | | | | गंगा धर्मोद्भवा | २८८ |
| | | | | गायत्री चैव | ३३४ |
| | | | | गायत्री तु जपेत् | ३८३ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|----------------------------|---------|----------------------------|----------|-------------------------|----------|
| यमः | | यमः | | यमः | |
| गुर्वधीनोऽस्वतंत्रः | ११५ | द्वे लिङ्गे मृत्तिके | २१६ | ब्रह्महत्यासुरापान | ९३४ |
| गृहस्थो ब्रह्मचारी | ७६७ | द्वौ हस्तौ युग्मतः | २४८ | ब्रह्मा विष्णुश्च | ६६३ |
| गोब्राह्मणहृतं | ९२० | धर्मविद्व्राह्मणः | २२ | ब्रह्मोद्याश्च कथाः | ७९६ |
| घृतं च सार्षपं तैलं | २८५ | न खरैरुपयातस्य | ७७५ | ब्राह्मणं तु मुखं | ७८० |
| चक्रोपजीवी | ४४३ | न पङ्क्तौ विषमं | ९१३ | भक्ष्यं भोज्यं | ७८५ |
| चक्षुर्दद्यात् | ४१३ | न पङ्क्त्यां विषमं | ९२२ | भिक्षुको ब्रह्मचारी | ७६८ |
| चण्डालपुल्कसानां | ८८८ | न पृच्छेद्गोत्रचरणे | ४१३ | भूसुरो मद्यपाने | ११८ |
| चतुर्थे प्रहरे | ७११ | न शुद्धो यजमानं वै | ५४५ | मद्यपः स्वैरिणी | ७८६ |
| चतुर्दश्यष्टमी | २४३ | न हस्तेन पिबेत् | ४३० | मसुरमाणसंयुक्तं | ४३६ |
| चन्द्रसूर्यग्रहे | ७३३ | नांकयेन्न दहेद्ग्रात्रं | २९९ | मातुर्मृताहे पित्रादीन् | ७१८ |
| चीर्णविद्रवतो | १७२ | नाध्यापयति | १०४ | मातुः सपिण्डीकरणं | ६८० |
| जपेद्वाध्यस्य | ३४७ | नाभेरधः स्वकायं | ३४१ | मातृण्वसा मातृमुखी | ८६३ |
| जातिक्रियाव | ७७६ | नामधेयं दशम्यां | ८१ | मूत्रे तिस्रः पादयोस्तु | २१९ |
| जान्वालभ्य ततो | ७९५ | नाशौचं नोदकं | ४८९ | यजमाने चितारूढे | ५८२, ५८४ |
| जीवत्पिता पितामहा | ६७८ | नित्यं नैमित्तिकं | २५८ | यज्ञार्थमर्थं | २२ |
| ज्ञानेन मुच्यते | १७५ | नोदकेन न वाचा | १३८ | यत् किञ्चित् क्रियते | ९४१ |
| ततस्त्वृत्तये कर्तव्यं | ८२ | पंचसूना गृहस्थस्य | ३९५ | यत्तथा मध्यमं | ८१७ |
| ततोऽन्नप्राशनं | ८२ | पत्या चैकेन कर्तव्यं | ६४३ | यत्तद्वचन | ३८१ |
| ततः संवत्सरे पूर्णे | ८३ | पत्या चैकेन | ५३२, ६७८ | यत्तद्वचन नयां | ३८१ |
| ततः स्नात्वा | ७९१ | परकीयप्रदेशेषु | ७५८ | यत्सुखं त्रिषु लोकेषु | ११० |
| तथा क्षोभ्यतटाकादि | ४७३ | परकीयरहस्यानि | ४६५ | यदि संयोगकाले | ७५ |
| तस्मादस्याधिकारो | ६ | परपाकं सदा | ४४४ | यद्यद्रोचेत विप्रेभ्यः | ८०८ |
| तस्मादुद्वाहयेत् | १३६ | पात्राद्विरहितं | ३५३ | यवहस्तस्ततो | ७९६ |
| ताम्रपात्रस्थितं | ८८२ | पादप्रक्षालनं | ७९२ | यवागूं यावकं | १३९ |
| तावन्नोपस्पृशेद्द्विद्वान् | २२४ | पापोपकल्पनात् | ४८२ | यश्चरेत्सर्व | २०१ |
| तिलदर्भसमायुक्तं | २६४ | पितृव्यपुत्रान् | १५२ | यस्तु प्रव्रजितात् | २०८ |
| तुषाङ्गारकपालाम्नि | २१३ | पित्र्यं जीवपितुर्नोक्तं | ७४२ | यस्त्वेकपंक्तौ | ४२७ |
| तूष्णीं दम्पति | ६७९ | पुनर्भोजन | ८२० | यः सपिण्डीकृतं | ६५९ |
| त्रीक्ष्णीं पिण्डान् | ९४१ | पुराकल्पे तु नारीणां | ८४ | या दिव्या आप | ७९९ |
| त्र्यहं पिबेत्तु | ९३८ | पूर्वं जलेन प्रक्षाल्य | २१७ | यावद्द्विषयं | ८०८ |
| दक्षिणासंस्था | ७८५ | पूर्वमेव परीक्षेत | ७६५ | ये च संतानजा | १७५ |
| दण्डं कमण्डलुं | ११३ | प्रतिग्रहाध्यायन | २८ | ये यजन्ति पितॄन् | ८२२ |
| दत्ता तोयाजलिं | १८० | प्रतिश्रुताप्रदानेन | ४८ | यो न वेत्यभि- | ११२ |
| द्वयां देयं शृतान्नं | ४३० | प्रत्यङ्मुखस्तु पूर्वाह्ने | २१२ | यो मनुष्यां हि | १४४ |
| दशप्रणवसंयुक्तैः | ३२६ | प्रत्यादित्यं न मेहेत | २१३ | रहस्ये रहस्यं | ९३२ |
| दशवर्णा भवेत्कन्या | १३६ | प्रयान्त्याचामतो | २३८ | रात्राववीक्षितेनापि | २२३ |
| दैवविप्रकरेऽनाग्निः | ६८६ | प्रोक्षितं प्रणवे | २०३ | रक्षं रुमिहृतं | ७५८ |
| द्विजोऽज्ञानान्मलं | ८८१ | ब्रह्मचारी जितक्रोधो | ९३८ | रेतः सिक्त्वा कुमारीषु | ८८९ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|----------|---------------------|----------|---------------------|----------|
| यमः | | याज्ञवल्क्यः | | याज्ञवल्क्यः | |
| विद्यायुक्तो धर्मशीलः | ४८ | ११६ | २ | आ. ६३-६४ | १४० |
| विप्रस्तु वध | ९२० | आ. ७ | १ | आ. ६४ | १३६ |
| विप्रस्य दंडः | ९३ | आ. ८ | १९४ | आ. ६५ | १३७ |
| विप्रस्य मेसला | ९५ | ११८ | ३ | आ. ६६ | १३९ |
| विप्रः स्पृष्टो निशायां | २७१ | ११९ | ३ | आ. ६७ | १३९ |
| विरजाद्विगुणं | ३५०, ९३३ | आ. ९ | १९६, ८६९ | आ. ७० | १६३ |
| विवाहं चोपनयनं | १३६ | आ. १० | ७२ | आ. ७१ | ४७५ |
| वेदविद्याव्रत | ७६१ | आ. ११ | ७८ | आ. ७२ | १६३, ८९४ |
| वैश्वदेवं पुरोडाशं | ८६ | आ. १२ | ८१, ८३ | आ. ७३ | १५१ |
| शर्मा देवश्च | ८१ | आ. १३ | ७३, ८४ | आ. ७५ | १५६ |
| शीलं संवासतो | ४९ | आ. १४ | ८७ | आ. ७८ | १५४ |
| शुना चैव श्वपाकेन | २६७ | आ. १६ | २१२ | आ. ७९ | ७४, १५९ |
| संध्यामुपासते | ३११ | आ. १८ | २२१ | आ. ८० | ७५ |
| संवत्सरोषिते | ११६ | आ. १९ | २२५ | आ. ८१ | ७४ |
| सततं प्रातरुत्थाय | ३०, ११६ | आ. | २२२, २२५ | आ. ८४-८८ | १५६ |
| सत्कृत्य भिक्षुवे | ४१० | आ. २१ | २२२ | आ. ८६ | १६०, ८९५ |
| सपिण्डीकरणं नैव | ६६३ | आ. २३ | ३२३ | आ. ८९ | २४, ५६९ |
| सपिण्डीकरणात् | ६५९ | आ. २४-२५ | ३३६ | आ. ९० | १८, ८५ |
| समातिक्रान्तकालाश्च | ८९ | आ. २५ | ९८, ७५५ | आ. ९१-९२ | ७० |
| समर्धं धनमादाय | ५१ | आ. २६ | १०७, ११३ | आ. ९३-९४ | ७१ |
| समर्धं धनमुद्धृत्य | ७७३ | आ. २८ | ३१ | आ. ९५ | ७२ |
| समुत्थितस्तु यो | ४२४ | आ. २९-३० | ९६ | आ. ९६ | ७२ |
| समूलस्तु भवेद्दुर्भः | २३१ | आ. ३१ | ९७ | आ. ९७ | ६८३ |
| सहस्रपरमां | ३३७ | आ. ३२ | ९६, ७६९ | आ. ९७ | ३५४ |
| सायाह्नास्त्रिमुहूर्तं | ७११ | आ. ३३ | ११४ | आ. ९८ | २४१, ३१५ |
| सायाह्नास्त्रिमुहूर्तः | ७०९ | आ. ३४-३५ | १०४ | आ. ९९ | ३७४ |
| स्त्री यदा बालभावेन | १५३ | आ. ३६ | ११८ | आ. १०१ | ३७१ |
| स्वस्तीति ब्राह्मणो | ११० | आ. ३७ | ८९ | आ. १०२ | ३९६ |
| हंसे वर्षासु | ७४७ | आ. ३८ | ८९ | आ. १०३ | ४०१ |
| हस्तदत्ता तु या | ४३० | आ. ३९ | ८८ | आ. १०४, १०५, १०८ | ४०९ |
| होमाग्रदान | ४०५ | आ. ४० | २९ | आ. १०६ | ४२२ |
| — २२ टीप, ५०, ५०४, | | आ. ४१-४८ | ३७३ | आ. १०७ | ४०९, ४१३ |
| ५३१, ७०४ टीप, | | आ. ४९-५० | १२० | आ. १०९ | ४१५ |
| ८०६ टीप | | आ. ५१ | ११९ | आ. ११० | ४१५ |
| | | आ. ५२-५३ | १२५ | आ. १११ | ४१२ |
| याज्ञवल्क्यः | | आ. ५३ | ४९७ | आ. ११२ | ४१५ |
| ११२ | ९ | आ. ५५ | १३४ | आ. ११३ | ४१५, ४५४ |
| आ. ३ | ६ | आ. ५७ | १३२, १३३ | आ. ११४ | ४५५ |
| आ. ४-५ | ८ | आ. ५८-६१ | १४१ | | |

| क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् |
|--------------|----------|--------------|----------|--------------|-------------|
| याज्ञवल्क्यः | | याज्ञवल्क्यः | | याज्ञवल्क्यः | |
| आ. ११५ | २०९ | आ. ११६ | २३६ | आ. २६५-२६८ | ७६३ |
| आ. ११६ | १०६ | आ. ११८ | ६९ | आ. २६९ | ६६३ |
| आ. ११७ | १०७ | आ. २०० | ४८ | आ. २६९-२७० | ८२२ |
| आ. ११८ | १८ | आ. २०२ | ५८ | आ. २७७ | ९०४ |
| आ. ११९ | ६४ | आ. २०३ | ४० | आ. २९५ | २३७ |
| आ. १२० | ३८३ | आ. २०४-२०५ | ४१ | आ. ३०९-३११ | ६४ |
| आ. १२०।१२१ | ६७ | आ. २१३ | ५४ | आ. ३२५ | ७७७ |
| आ. १२३ | ४६५ | आ. २१५ | ५७ | आ. ३२८ | ६७६ |
| आ. १२४ | २१,६० | आ. २१७-२१८ | ७६९ | आ. ३४२ | ६७७ |
| आ. १२५ | २२ | आ. २१९ | ७६६ | आ. ३५९ | २५६ |
| आ. १२७ | २२ | आ. २२० | ७०६ | आ. ३६२-३६३ | ८८२ |
| आ. १२८ | ६० | आ. २२२ | ७७२ | २।३७ | ६४ |
| आ. १३० | ५५ | आ. २२५ | ८१८ | व्य. ८३ | ९२१ |
| आ. १३१ | २५१, ४२६ | आ. २२६-२२८ | ७९४ | व्य. ११७ | १२९ |
| आ. १३४-१३५ | २१४ | आ. २२७ | ७५८, ७७७ | व्य. १२८-१३२ | १०१, ५६१ |
| आ. १३८ | ४३० | आ. २२८ | ७७७ | व्य. १३२ | ५६३ |
| आ. १४० | ५६ | आ. २२९ | ७९६ | व्य. १३५ | ५६५ |
| आ. १४१ | ५५ | आ. २३० | ७९७ | व्य. १४५ | ५६४ |
| आ. १४२ | ३२ | आ. २३१ | ७९९ | व्य. १७५ | ४७, ४८, १०३ |
| आ. १४८-१५१ | ३५ | आ. २३३ | ७९७ | व्य. १८३ | ९१९ |
| आ. १५२-१५३ | ४६० | आ. २३५ | ७९९ | व्य. २८६ | ८९४ |
| आ. १५६ | ५ | आ. २३६-२३७ | ८०१ | प्रा. १-२ | ५०८ |
| आ. १६१ | ४४३ | आ. २३८ | ८०४ | प्रा. ३-४ | ५९८ |
| आ. १६४-१६५ | ४४३ | आ. २३९ | ८०६ | प्रा. ४ | ६०० |
| आ. १६५ | ४२५ | आ. २४० | ८०७ | प्रा. ७ | ६०४ |
| आ. १६७-१६८ | ४३१ | आ. २४१ | ८१२ | प्रा. ८-१० | ६०४ |
| आ. १६९-१७० | ४३६ | आ. २४२ | ८१५ | प्रा. ११ | ६०४ |
| आ. १७६ | ४३४ | आ. २४४-२४९ | ८१४ | प्रा. १२-१३ | ६०४ |
| आ. १७७ | ४५१ | आ. २४९ | ८१९ | प्रा. १४ | ५४६ |
| आ. १७८ | ४७१ | आ. २५१।२५२ | ६४८ | प्रा. १५ | ५५८ |
| आ. १७९ | ४५१ | आ. २५३ | ६७४ | प्रा. १६ | ५४७ |
| आ. १८४-८५ | ४६९ | आ. २५५ | ६९० | प्रा. १६ | ६०६ |
| आ. १८६-१८७ | ४६९ | आ. २५५-२५६ | ६४७, ६५९ | प्रा. १७ | ४७८, ६०३ |
| आ. १८७ | ४७५ | आ. २५६ | ६३७, ६९८ | प्रा. १८ | ५०१, ५१८ |
| आ. १८९ | ४३३ | आ. २५८, २६० | ७८२ | प्रा. १९ | ८०, ५०० |
| आ. १९० | ४६८ | आ. २६१ | ७४९, ७८२ | प्रा. २० | ४९१, ५३० |
| आ. १९१ | ४६८ | आ. २६२-२६४ | ७५० | प्रा. २१ | ५३४ |
| आ. १९२ | ४७३ | आ. २६४ | ७४७, ७८२ | प्रा. २२ | ४६४ |

| क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् |
|---------------------|----------|---------------------|-------------|--------------------------|---------------|
| याज्ञवल्क्यः | | याज्ञवल्क्यः | | याज्ञवल्क्यः | |
| प्रा. २३ | ५०७, ५१७ | प्रा. २५३-२५६ | ८७९ | जपयज्ञो हि | ३४८ |
| प्रा. २४ | ५२८ | प्रा. २५७-२५८ | ८८३ | जलमध्ये स्थितो | २६१ |
| प्रा. २५ | ५२१, ५२९ | प्रा. २५९-२६० | ८८६ | त्रिरात्रं दशरात्रं | ५१० |
| प्रा. २६ | ५४२ | प्रा. २६१ | ९५४ | देशांतरमृतिं | ४८५, ५२२ |
| प्रा. २७ | ४८७ | प्रा. २६३-२६४ | ८७५ | द्वादशाहमनामिस्तु | ३५६ |
| प्रा. २८-२९ | ४८१ | प्रा. २६५ | ९३१ | पारंपर्यागतो | २९ |
| प्रा. ३० | २६५ | प्रा. २६८-२६९ | ८७४ | प्रोषिते कालशेषः | ५३४ |
| प्रा. ३२ | १७५ | प्रा. २७०-२७६ | ८७७ | ब्राह्मणं विनियोगं | ३१६ |
| प्रा. ३५ | ६० | प्रा. २७५ | ९३१ | मत्स्यकच्छपमण्डुका | २५४ |
| प्रा. ३६-४० | ६२ | प्रा. २७८ | ८९२ | मदमोहहृता | ८९५ |
| प्रा. ४१ | ४८० | प्रा. २७९ | ९२० | मृते स्नानेन | ४९२ |
| प्रा. ५५ | १७० | प्रा. २८५-२८७ | ८९८ | मृत्तिका गोमयं | २५९ |
| प्रा. ५६-५७ | १७१ | प्रा. २८९ | ९०१ | य एष विस्तरः | २६३ |
| प्रा. ५८ | १८८ | प्रा. २९० | ७०२ टी, ९२४ | यत्पुंसां पर | १६४ |
| प्रा. ५९ | १९९ | प्रा. २९१ | ९०३ | यथा कथंचित् | ४२ |
| प्रा. ६० | २०२ | प्रा. २९२ | ९०० | यदा यदा तु | ९३१ |
| प्रा. ६५-६६ | १९२ | प्रा. २९३ | ८९९ | या संख्या सा | ३१३ |
| प्रा. ७५ | १६० | प्रा. २९६ | ८७८ | यो यस्य विहितः | ७३८ |
| प्रा. ८३ | ४९४ | प्रा. २९८ | ८६४ | वनस्पतिगते | ७८८ |
| प्रा. १९०-१९३ | १६६ | प्रा. ३०१ | ८६८, ९३२ | वृथा तूष्णोदकस्नानं | २५८ |
| प्रा. २०६-२०८ | ८६० | प्रा. ३०२ | ९३४ | शतमिदुक्षये | ४७ |
| प्रा. २०९-२१० | ८६० | प्रा. ३०४-३०५ | ९३५ | सुरापः स्वर्णहारी | ३४९ |
| प्रा. २१०-२१५ | ८६१ | प्रा. ३०६ | ३९५, ८८८ | — | १२८, १३९, २३८ |
| प्रा. २१७ | ८६० | प्रा. ३१० | ३३५ | ४४१, ४४७, ५१४, ५१९, ५२०, | |
| प्रा. २१८ | ८६२ | प्रा. ३१५ | ९३७ | ५२१, ५६१, ८००, ८१२, ८६८, | |
| प्रा. २१९-२२० | ८५९ | प्रा. ३१७ | ९३८ | ८९७, ९२१ | |
| प्रा. २२१-२२५ | ८५९ | प्रा. ३१९-३२० | ९३६ | योगयाज्ञवल्क्यः | |
| प्रा. २२६ | ८६७ | प्रा. ३२० | ९३७ | अग्न्यगारे जलान्ते | ३२१ |
| प्रा. २२७ | ८६२ | प्रा. ३२१ | ९३७ | अग्राह्यास्त्वधमा | २५८ |
| प्रा. २२८ | ८६४ | प्रा. ३२२ | ९३८ | अलाभे धौतवस्त्रस्य | २५२ |
| प्रा. २२९ | ८६५, ९२९ | प्रा. ३२३ | ९३९ | असामर्थ्यात् | ५४९ |
| प्रा. २३० | ८६५ | अनार्तश्रोत्सृजेत् | ३१३ | असामर्थ्याच्छरीरस्य | २८९ |
| प्रा. २३१ | ८६५ | अमत्रं वाथ | ४१९ | आगम्यागमनात् | २४५ |
| प्रा. २३४-२४२ | ८६६ | अमावास्याष्टका | ७२२ | आचमनं स्वकीय | ३१५ |
| प्रा. २३५ | ३१ | अविशेषेण पित्र्यस्य | ७३६ | आवाह्य पूर्वं | ७३७ |
| प्रा. २४३ | ८७१ | अशक्ताविष्ट | १८२ | आसत्यर्क्षु च पूर्वं | ३७६ |
| प्रा. २४४-४५ | ८७२ | गृहीतशिश्नश्रोत्थाय | २१५ | उत्थायावश्यकं | ३३७ |
| प्रा. २५२ | ८६४, ८७२ | गोवालं दर्भसूत्रं च | २३२ | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|----------|--------------------------|---------|----------------------------|---------|
| योगयाज्ञवल्क्यः | | योगयाज्ञवल्क्यः | | रत्नावली | |
| एवं संपूज्य | ३९० | यावन्नोदेति भगवान् | २८७ | दंतानां शोभनं | ४५३ |
| एवं संमार्जनं | ३२३ | रजो दृष्टेभसि | २८७ | दर्शो स्नानं न | २६३ |
| ओंकारं पूर्वमुच्चार्य | ३३८ | रात्र्यन्तयामनाडी द्वे | २४७ | देशः कालस्तथा | ७५७ |
| कव्यबाहोऽनलः | ३७९ | वसून् रुद्रान् | ३७८ | धार्याणि शिरसा | ३६७ |
| गंगायां यमुनायां | ६०९ | वायुमक्षो दिनं | ३३५ | न पिता नात्मजो | १५७ |
| गत्वोदकान्तं | २५९ | व्याहृतीनां तु | ३२५ | नैवेद्यस्य त्वलाभे | ३८९ |
| ग्रहणोद्वाहसंक्रान्ति- | २७० | शं न आपस्तु | २९१ | पर्वभिश्च जपः | ३४३ |
| घृतयुक्तैः | ३३६ | शिवे निवेदितं | ९१२ | पर्वभिस्तु जपेद्देवी | ३४३ |
| तिसृभिर्मध्यमाभि | २२६ | संधौ संध्यामुपासीत | ३१० | पित्रोर्भुतान्तराले | ५३३ |
| तूष्णीमेवावगाहेत | २३९ | संध्योरुभयोः | ३२० | प्रवासिनोऽग्नि | ३५९ |
| त्रिंशत्कोट्यस्तु | ३१२ | सवर्णेभ्यो जलं | ३७८ | भक्ष्यं चेच्छिषु | ४३१ |
| त्रिरात्रफलदा | २५५ | सहस्ररुत्वः | ३३८ | मंगल्यं पूर्णकुंभं | ४५७ |
| देवानामर्चनं | ३८४ | सौवर्णं राजतं | ३५३ | मुकुलैर्नार्चयेद्देवं | ३८८ |
| धात्रीफलैः | २८० | स्नात्वैवं वाससी | २५१ | बह्नीपलाशपत्रेषु | ४१९ |
| न तावत्पाप | ३५१, ९३४ | स्नानं दानं जपं | २५३ | विकिरे पिण्डदाने | ३८३ |
| नयामस्तमिते | २५७ | स्फटिकेन्द्राक्ष | ३४२ | संक्रान्तिर्वाथ दर्शो | ६१५ |
| नव प्रणव | ३१५ | हस्तेऽश्रीवात् | २७७ | सर्वं तु तरितुं | ४४५ |
| नास्तिक्यभावात् | ३८० | हत्वा लोकानपीमांसु | २६१ | राजाविषयः | |
| पवित्रे स्थ इति | ७९८ | — | २८१ | सहस्रधेनुदाने | ९२७ |
| पादयोरर्जघयो | ३२५ | योगवासिष्ठम् | | रामायणम् | |
| परकीर्यनिषानेषु | २५६ | संसारान्मोक्ष | ३५० | सर्पे क्षयान्ता निचयाः | ६०४ |
| पूरकः कुंभको | ३२४ | योगीश्वरः | | सा स्वभावेन | ३७४ दीप |
| पूरके विष्णुसायुज्यं | ३२४ | आर्धरात्राद्धः | ८३३ | सेतुबन्ध इति | ८७१ |
| प्रथमं कर्कटादौ तु | २८८ | रोहिणीसहिता | ८३३ | रुद्रस्कन्दः | |
| प्रदक्षिणं समावृत्य | ३६९ | स्वर्णयुक्तं ताम्रपात्रं | ४५ | स्त्रिणां सापिण्डये | ६७९ |
| प्राणायामत्रयं | ३२५ | रत्नकोशः | | रोमशः | |
| प्रातस्तिष्ठन् जपेत् | ३३७ | हस्तो मूलश्रवण | ७८ | निर्घातो बन्धनाग्न्याद्यैः | ४९० |
| प्रातः सह गोमयेन | २४७ | रत्नमाला | | लघुयमः | |
| बाह्यानि करणानि | ३२० | जन्ममासी न च | १४७ | अन्नहीनं क्रियाहीनं | ८०६ |
| ब्रह्मचार्याहिताग्नि | ३३८ | रत्नावली | | लघुव्यासः | |
| ब्रह्माणं तर्पयेत् | ३७८ | अनुज्ञा द्विगुणौ | ६४९ | ऋगादिकम् | ११९ |
| भूर्भुवस्वर्मह | ३२३ | अपक्वं ज्वेहपक्वं | ४३० | वेदस्याध्ययनं | १२६ |
| मात्रं भौमं तथाऽऽग्नेयं | ५४९ | अपि स्यात्सकुले | ४०२ | लघुहारीतः | |
| य एता व्याहृतीः | ३२६ | उच्छिष्टैरेव | ८१३ | इन्द्राग्नी यज्ञ | ७२३ |
| यदि वाग्यमलोपः | ३४१ | कर्पूरागर | ३९३ | एकमव्यक्षरं | १२० |
| यद्युदुतान् | ३७७ | चण्डालाशुचि | ३४० | प्रत्यब्दं द्वादशो | ७०२ |
| यावद्देवानृषीन् | ३८३ | | | | |
| यावद्देवानृषीश्चैव | २४९ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------------|----------|-----------------------|---------------|----------------|----------|
| लिखितः | | लौकाक्षिः | | वसिष्ठः | |
| छिद्राण्येतानि | ३९ | प्रत्यक्षे तु न | ५५३ | ११४-५ | ५,१२८ |
| भुक्त्वा वार्धुषिकं | ९०७ | मध्यमानामिकां | ३०२ | ११७ | १३१ |
| भुक्त्वोपस्थाय | ४५४ | मातामहस्य गोत्रेण | ६८१ | ११२३ | ९२१ |
| लिखितपराशरः | | मृतेऽहनि समासेन | ६९६ | ११२५-२७ | १३४ |
| परपाकनिवृत्तस्य | ४४५ | आद्रं कुर्यात् | ६९८ | २१३ | ८८ |
| लिंगपुराणम् | | आद्रं कुर्यादवश्यं | ७३५ | २१६ | ८६ |
| इशानेन शिरोदेशं | २९० | आद्रानि षोडश | ६५६ | २१७ | ८६ |
| तुलायां गोसहस्रे | ९२७ | षष्ठे मासेऽन्नप्राशनं | ८२ | २१३७-३९ | ६१ |
| दत्तामिमां कल्पलतां | ९२९ | सपिण्डीकरणात् | ६९२ | ३१९६-१७ | ८७४ |
| मुखजो धनलोभेन | ९२९ | सर्वाभावे स्वयं | ६७० | ३१३५ | २२४ |
| ततो विष्णोः प्रसादेन | २९७ | सिनीवाली द्विजैः | ७३९ | ३१३६ | २२२ |
| त्रिपुंड्रं सुरविप्राणां | २९६, ३०४ | — | ५०९ | ३१३८ | २३६ |
| भस्म विद्धि परं | ३०३ | लौगाक्षिः | | ३१५७ | ४७१ |
| केचित्कापाल | ३०६ | त्रिपुंड्रधूमिप्रवरो | ३०८ | ४१९८ | १२६ |
| लौकाक्षिः | | पितर्युपरते पुत्रो | ६३७ | ४१९४-१५ | ५४७, ६०६ |
| अन्येषां प्रेतकार्याणि | ६४० | मातामहस्य गोत्रेण | १२९ | ४१९८ | ४९८ |
| अप्रशस्तेषु | ८१६ | श्रुतिस्मृतिविरोधे | ७ | ४१२८-२९ | ४९५ |
| अमाश्राद्रं गथाश्राद्रं | ६७२, ७३७ | सायमेवामिं | ९८ | ४१३४ | ४९२, ५०९ |
| गृहामिद्विजदेवानां | ४०७ | वत्सः | | ६१३ | ४, ९७ |
| तिथेः परस्या | ८५६ | प्रदोषव्यापिनी | ८२९ | ६१९८ | २१६ |
| तूष्णीमथोदकं | ५१२ | सर्वोपायैरसाध्यः | १४२ | ७१७-१७ | १२० |
| तूष्णीमेवोदकं | ५९९ | वरदराजीयम् | | ८१९-२ | १२५ |
| तृतीयस्य वर्षस्य | ८३ | ईडाकरणपूर्वं | ९९ | ८१३०-३१ | ७७८ |
| तृतीये गर्भमासे | ७८ | करणे ब्राह्म्यतां | ९९ | १०१२४ | २०१ |
| त्रीनंशानोपसथ्यस्य | ८५४ | तच्छब्दश्रुते- | ३२७ | १११३ | ३९६ |
| न स्त्रियाश्च वृक्षोत्सर्गः | ६४६ | दर्शो प्रेतदिनेषु | ६१४ | १२१२० | ४२५ |
| नामान्नचोल | ७५४ | प्रागब्दाज्जननी | ५२४, ६२२ | १११५५-५७ | ९३ |
| नियतेषु निमित्तेषु | ७५४ | मृतजाते जातमरणे | ५०३ | १११६४-६६ | ९४ |
| पक्षान्तं कर्म | ४०७, ८१९ | संपातात्पितु- | ४९२ | १११७६-७९ | ८९ |
| पत्नीपुत्रस्तुषा | ६४० | — | १२८, १२९, ४९४ | १३१५१ | ८९८ |
| पितामहादिभिः | ६७८ | वराहपुराणम् | | १४१२० | ११४ |
| पित्रर्थं निर्वपेत् | ४०७ | मार्गशीर्षे सिते | ८२९ | १४१२३ | ४३२ |
| पित्रर्थं निर्वपेत्पाकं | ८१९ | वस्त्रशौचादि | ७७६ | १४१२८-२९ | ४३७ |
| पित्रोर्द्वयोर्दशाह | ६४० | — | ६६३ | १४१३७ | ४३६ |
| पुष्पवत्स्वपि | ६८८, ७१४ | वराहमिहिरः | | १५१३-६ | ४८, १०३ |
| पूर्वाह्नि वाथ | ८५४ | एकोदरप्रसूतानां | १४५ | १५१९ | ५६१ |
| | | देशाचारस्तावद् | १३१ | १६१२३ | ४९९ |

| कविः | पृष्ठम् | कविः | पृष्ठम् | कविः | पृष्ठम् |
|------------------------|----------|----------------------------|----------|------------------------------|----------|
| वसिष्ठः | | वसिष्ठः | | वसिष्ठः | |
| १७११-२ | ७६ | अवता ह्यनधीयाना | ९७ | दहमानं तु | ६४२ |
| १७११७ | १२६, ६८१ | अष्टौ दश द्वादश | १५२ | द्वादशरात्रम् | ८७२ |
| १७१५१-५३ | १५४ | आनुशंस्यं परो | ७७१ | न निःशेषकृत् | ४३१ |
| १७१७० | १३५ | आपोशनं सर्वतीर्थं | ४२२ | नासाग्रवर्तनाद्दोषैः | ५५५ |
| १७१७२ | १३८ | आपोहिष्टेदमापश्च | २६०, २६१ | नास्तिक्यभावात् | २४७ |
| १७१७३ | १४५ | आब्दिकं सौरमासे | ७०५ | पञ्चमीं सप्तमीं | १२८ |
| १७१७४ | १३९ | आमंत्रितो योऽन्त्यः | ११२ | पवित्रकर एकाग्रः | २५४ |
| १८११ | ८६७, ८६८ | आशौचान्ते तु | ६४५ | पितुर्मरणकाले तु | ५५३ |
| २०१८ | ९०३ | आ सप्तमात् | ४९७ | पित्र्येऽस्तमयवेलायां | ७१३ |
| २०११२ | ९०२ | उपवासे तथा | ८५० | पुत्रजन्मनि यज्ञे | ७९ |
| २०११३ | ८८७ | उपवासे तथा श्राद्धे | २४४ | प्रचरन्भयवहार्थेषु | २४० |
| २१११ | ८९३ | उपस्थानं स्वकैर्मन्त्रैः | ३४४ | प्रणवेनैव | २०७ |
| २१११० | ८९४ | उभयोर्हस्तयोः | ८०६ | प्रमीतपितृकः | ५३८, ६२८ |
| २११२८ | ९०० | ऊर्ध्वं चतुर्थ्याः | ७४६ | प्राक्प्रत्यङ्मुखा | १४९ |
| २११२९ | ४४५ | ऊर्ध्वं दशाहात् | ५३४ | प्राक्प्रत्यङ्मुखायोः | १४९ |
| २११२९-३० | ८९९ | ऊक्तामाथर्व | ३७४ | प्राणाद्गुतीषु सोमे च | २३९ |
| २११५८-६० | ९५ | एकस्मिन्सावने | ८४४ | ब्रह्मचारिणः शवकर्मणो | ५५८ |
| २३११-२ | १२२ | एकादशी तृतीया | ८३१ | ब्राह्मणकुले | ७६९ |
| २३१७-८ | ५४६ | एकादशीसमुत्थेन | ८३८ | भस्म विद्धि परं | ३०३ |
| २३११९-२२ | ९१९ | औदुम्बर्यामथा | ५८१ | भार्याहीनस्तु | १५२ |
| २३१२५-२६ | ५४७ | कांस्यपात्रे हविर्दृष्ट्वा | ३०९ | मांसमन्त्रं तथा | ४१४ |
| २३१३१ | २६९ | किंचिद्वेदमयं | ४९ | मृदैकया शिरः | २५९ |
| ४११२० | २४० | रुष्णाष्टमी स्कंदपष्टी | ८३१ | य आत्मत्यागिनां | ९२० |
| ६५१२९ | ९२२ | केचित्कापाल | ३०६ | यच्छास्त्रीयैस्तु | ११६ |
| ७०१४२ | ९३६ | क्षुते निष्ठीविते | २३६ | यतीन्साधून्वेति | ७६७ |
| ७०१४५ | ९४० | गुरोरवज्ञया | ३९५ | यत्कृतं प्रेतमुद्दिश्य | ६२६ |
| अरुत्वा वैश्वदेवं | ४०६ | गृहस्थ एव | १६९ | यदा यदा तु | ३३६ |
| अग्निक्षेपो नातिशवं | ५८३ | यस्तोदये विधोः | ४५० | यां तिथिं समनु- | ३३ |
| अग्न्याधेयं प्रतिष्ठां | ७२८ | ग्रहणे संक्रमे वाऽपि | २७२ | यावन्न लज्जयाऽगानि | १३५ |
| अज्ञातपूर्वाणि न | २४२ | चतुर्विधानां भिक्षूणां | ६६३ | ये ते शतम् | २६० |
| अनाहिताग्निः | ५६८ | चतुर्हस्तसमायुक्तं | २६३ | वाराणस्यां मृतो | ४८८ |
| अनुयाने च पत्न्या | ६४३ | चन्द्रसूर्यग्रहे | २७२ | विशाखा रोहिणी | ६०५ |
| अनुयाने तु | ५३२ | चीर्णब्रह्मचर्यो | १७२ | वैधे कर्मणि | ३५ |
| अनुयाने तु पतिना | ६७८ | जन्मन्यथोप | ७५३ | वैधे कर्मणि तु ५५३, ५९२, ६१२ | |
| अप्रत्याख्यार्थिनं | ९६ | ज्ञातयः सप्तमात् | ५९० | व्युत्क्रमेणापि | ६७३ |
| अप्रामाण्यं च | ६ | ततो विष्णोः प्रसादेन | २९७ | श्राद्धे नोद्वासनीयानि | ८१८ |
| अर्धप्रसूतिमात्रा तु | २१८ | त्रिविंत्सपूर्णा | ३६६ | श्रुतिं स्मृतिं | ९१८ |
| अवश्यं ब्राह्मणो | ११ | दर्शो रविग्रहे | ७१७ | संवत्सरमध्ये | ७२९ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|----------|------------------------|---------|----------------------|---------|
| वसिष्ठः | | वामनपुराणम् | | विज्ञानेश्वरः | |
| सन्तर्पयन्निषिद्धे | ३८२ | सत्यात्ममदितव्यं | ३०१ | पृ. ५ पं. ३० | २१७ |
| सप्तमेऽहि तृतीये | ६०५ | सरस्वती नदी | २८८ | पृ. १२ पं. २१-३० | १२४ |
| सप्तगाराण्य | २०१ | सरस्वती नदी पुण्या | २८८ | पृ. १३ पं. १-५ | १२४ |
| सर्ववेदपवित्राणि | ३४७ | हिरण्यार्थं द्विजो | ९२८ | पृ. १३ पं. २५-२६ | १२६ |
| सव्योत्तराभ्यां | ५९७ | — | २८३ | पृ. १४ पं. ७५ | १२८ |
| सूतकान्ते भवेन्नारी | ४९३ | वायुपुराणम् | | पृ. २० पं. १-३ | ७४ |
| स्त्रीपुंसयोस्तु | १३८ | अभार्यो दैविके | ६८६ | पृ. २३ पं. २७-२८ | १६२ |
| स्नानशाठ्यां | २५० | आहृत्य दक्षिणाम्निं | ६८४ | पृ. २४ पं. १८-२० | १६२ |
| स्वाध्यायिनं कुले | ८७४ | गतवीर्यश्च यो | ८१७ | पृ. २५ पं. १४ | २५ |
| हरिपूजापरो | ३५२ | जीरकं मरिचं | ७८२ | पृ. २५ पं. १५ | ५७१ |
| हित्वा सकल | ९३४ | ततस्त्रिपुंड्रं रचयेत् | ३०१ | पृ. २६ पं. २२ | ७० |
| हित्वा सकलपापानि | ३५१ | त्रयोदशयस्तगते | ८५२ | पृ. २८ पं. २१ | ३५४ |
| — ११०, १४६, ४७५, ४८३ | | दिवसस्याष्टमे भागे | ७११ | पृ. ३१ पं. १४ | ४१५ |
| वसिष्ठधर्मसूत्रम् | | पत्न्यै प्रजार्थं | ८१७ | पृ. ३२ पं. २४ | २०९ |
| ३१४ | ४११ | परिवेषणं प्रशस्तं | ८०३ | पृ. २४ पं. १६ | ६४२ |
| २६१० | ३५२ | फलस्यानंतता | ८०३ | पृ. २९ पं. १६-१७ | ३८३ |
| वसिष्ठशातातपौ | | बिल्वामलक | ७८१ | पृ. ३८ पं. ६९ | ४२६ |
| नाभेरूर्ध्वमना- | ९१ | याचते यदि | ८०८ | पृ. ४१ पं. १९ | ३५ |
| वसिष्ठसंहिता | | एकादशी विष्णुना | ८४१ | पृ. ४२ पं. ११ | ३६ |
| अथातः संप्रवक्ष्यामि | ६४७ | संन्यासिनोऽध्याब्दि | ७५० | पृ. ४४ पं. २३-२४ | २५६ |
| अष्टमी रोहिणीयुक्ता | ८३३ | सिंहराशिगते | ८३२ | पृ. ५२ पं. १९-२० | ४६९ |
| अहोरात्रं तयोर्योगो | ८३४ | — | ३०६ | पृ. ५४ पं. १५-१९ | ४७१ |
| यत्तु रुद्रार्चनं | ३०६ | वालमीकिः | | पृ. ५४ पं. २५ | ४३३ |
| लाङ्गलं मुखजो | ९२८ | ३१३७-३८ | १४१ | पृ. ६८ पं. २०-२१ | ६८५ |
| श्रावणे वा नभस्ये | ८३२ | उत्पन्नपि चाकाशं | ४८ | पृ. ६९ पं. २६-२७ | ७८२ |
| वसिष्ठसिद्धान्तः | | तीक्ष्णकामास्तु | १४१ | पृ. ७० पं. ३ | ८०७ |
| द्वान्निशद्विर्गतैः | ७२४ | न पिता नात्मजो | १५८ | पृ. ७० पं. ७ | ८१२ |
| वाजसनेयिगृह्यम् | | वासिष्ठम् | | पृ. ७० पं. १३ | ८१६ |
| वनं प्रवेक्ष्यन् | ४६३ | ४१३ | ८७ | पृ. ७३ पं. १३-१६ | ६७४ |
| वाधूलः | | ऊर्ध्वपुंड्रं तु | २९४ | पृ. ७३ पं. १९ | ६७९ |
| यत्र यत्र कर्म | ३५० | धर्माधर्मौ सुखं | १९४ | पृ. ७४ पं. ४ | ६७२ |
| वामनपुराणम् | | वासुदेवोपनिषद् | | पृ. ७५ पं. ५ | ६८१ |
| गोदावरी भीमरथी | २८८, ५२३ | गोपीचन्दन पापघ्न | २९२ | पृ. ७५ पं. १२ | ६७८ |
| देशानुशिष्टं | ४६६ | वाहटः | | पृ. ७५ पं. २७-३२ | ६८० |
| धृत्वा चर्ममयी | ९२९ | तांबूलं कटुतिक्तम् | ४५५ | पृ. ७६ पं. १-२ | ६९० |
| श्रुतिस्मृत्युक्त | २९४ | मुक्त्वोपविशतः | ४५४ | पृ. ७७ पं. २०-२४ | ६५९ |
| | | | | पृ. ७८ पं. १-१८ | ६६० |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------|---------|-----------------------------|---------|-------------------------|----------|
| विज्ञानेश्वरः | | विज्ञानेश्वरः | | विराटः | |
| पृ. ७९ पं. २१-२२ | ७४९ | इदमेकरात्राशौचं | ५३५ | अनुवर्त्तत | १६२ |
| पृ. ९० पं. १६-१७ | १०२ | एकादशे त्रिपक्षे | ६५२ | विवस्वान् | |
| पृ. ९० पं. १७।१८ | ५६५ | एकादशेऽहि संप्राप्ते | ६४६ | पर्वमात्रप्रमाणस्तु | ९१८ |
| पृ. १४१ | १२९ | रुच्छपादोऽसपिण्डस्य | ५४४ | अरत्निमात्रं जलं | २१६ |
| पृ. १४४ पं. ३१-३३ | ५३९ | दर्पादिना चण्डालादीन् | ४८८ | मंत्रसंभारसंयुक्तं | २५९ |
| प्रा. पृ. १६१ पं. ६-७ | ४७७ | देवत्वं गतस्य | ६६१ | एकतः सर्वतीर्थानि | २५५ |
| पृ. १६७ पं. १२ | ५५६ | नवभिर्दिक्सैः | ६०१ | अविदित्वेव यः | २५४ |
| पृ. १७० पं. १८-१९ | ६०३ | न ह्यत्र देवदत्तादयः | ८२३ | विश्वरूपः | |
| पृ. १७३ पं. ५-१० | ५१८ | नालिकाशणछत्राक | ४३५ | — | ५११ |
| पृ. १७३ पं. २० | ५११ | नित्यमन्नप्रद- | ४८१ | विश्वादर्शः | |
| पृ. १७३ पं. २८ | ५०० | पित्रादीनां त्रयाणां | ७९४ | आशौचमध्ये | ६१४ |
| पृ. १७६ पं. ९ | ५०३ | प्रतिव्याहृति पृ. ७ पं. १-३ | ३२३ | यः कुर्यात्प्रथमे | ६२४ |
| पृ. १७६ पं. १६ | ५०६ | प्रपासरण्ये घटके | ४७४ | शुभकर्म न कुर्वीत | ६५७ |
| पृ. १७६ पं. १९-२५ | ५०५ | प्रेतलोके तु वसतिः | ६९२ | स्त्रीपिण्डे पतिपिण्डगे | ६७८ |
| प्रा. पृ. १७६ पं. ३२ | २७७ | भगिन्यां संस्थितायां | ५२७ | विश्वामित्रः | |
| पृ. १७८ पं. ४-५ | ५३९ | माता शुष्येद्दशाहेन | १९३ | अथ तत्त्वानि वक्ष्यामि | ३२९ |
| पृ. १७९ पं. ६-७ | ५३४ | मातामहेन मातुः | ७२२ | आदावस्त्रेण संशोध्य | ३२९ |
| पृ. १७९ पं. १२-१३ | ६२१ | मृतस्य बान्धवैः सार्धं | ५४३ | एतैस्त्रिभिः | ३२० |
| पृ. १७९ पं. १५-१६ | ६२२ | यज्ञे संभृतसंभारे | ४८३ | देवस्य सवितुः | ३२७ |
| पृ. १८० पं. ६-७ | ४९५ | यदा संवत्सरात् | ६५६ | धिया यदक्षर | ३३९ |
| पृ. १८२ पं. १२ | ५११ | यद्यद्ददाति | ७५६ | नित्यं नैमित्तिकं | ७५७ |
| पृ. १८२ पं. २७-२८ | ५२४ | यस्तु नयादि | ५२३ | पित्रोरनुपनीतोऽपि | ५५९ |
| पृ. १८३ पं. २०-२१ | ५२६ | यस्यानयाति | ५८१ | प्रणवे नित्ययुक्तस्य | ३३५ |
| पृ. १८३ पं. २४ | ५२१ | यस्यामंतकुण्डिकायां | ४३५ | प्रणवोऽप्यत्र | ३३९ |
| पृ. १८५ पं. १९ | ८८१ | येन केनापि मातुः | ७१८ | यमायां क्रियमाणं | २ |
| पृ. १८७ पं. ८-१० | ५४८ | श्राद्धानि षोडशाकृत्वा | ६५२ | विश्रुतानि बहून्धेव | ३५१ |
| पृ. १९९ पं. २४-२६ | १७६ | सद्यःशौचं सपिण्डानां | ४९२ | — | ९३१ |
| पृ. १९९-२०० | १७२ | सामिकस्तु यदा | ६६८ | विष्णुः | |
| पृ. २३५ पं. २४ | ८५९ | सूतकं जन्म- | ५०१ | १५।३९ | ५६१, ५६३ |
| पृ. २४० पं. २४-२५ | ८६५ | सूतके मृतके चापि | ४८० | १९।७ | ६०१ |
| पृ. २४२ पं. १९-२० | ८६७ | — | १०७ | १९।१०-११ | ६०७ |
| पृ. ३१४ पं. २३ | ४४८ | १२६, १४४, १६३, १८८, १९०, | | १९।१३ | ५२२, ६१९ |
| पृ. ३४२ पं. ५ | ५५० | ४८५, ४४१, ४९३, ४९४, ४९६, | | १९।१४ | ५८६ |
| पृ. ३४३ पं. २०-२५ | ५५० | ४९७, ४९९, ५०३, ५०६, ५१०, | | १९।२३ | ५९७ |
| अमौ करिष्यन् | ८८२ | ५१८, ५१९, ५२०, ५२६, ५२८, | | २१।२० | ६६६ |
| अनु पश्चाज्जायन्ते | ५८६ | ५३५, ५४०, ५४२, ५८३, ६५६, | | | |
| अस्थिसंचयने | ६११ | ८१२ | | | |
| आदिके स्व स्व | ३८३ | | | | |

| क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् |
|------------|---------|-------------------------|----------|----------------------------|---------|
| विष्णुः | | विष्णुः | | विष्णुः | |
| २२१७ | ४४८ | ५११३९-४२ | ४३७ | अवाक् त्रिपक्षात् | ५३५ |
| २२१२२-२६ | ४९५ | ५२१५-८ | ४७८ | अश्वं पित्रा परीक्षेत | १३३ |
| २२१२६-२८ | ५०७ | ५४१२ | ४७३ | अष्टकास्तिस्रः | ७४४ |
| २२१३१-३३ | ५१६ | ५४१३ | ९२१ | असकृज्जलपानं | ८५० |
| २२१३४ | ५३० | ५४१४ | ९००, ९२१ | अस्पृष्टानां च | ४८४ |
| २२१४१ | ५२५ | ५६११-२७ | ९३३ | आरुह्यस्ताडितो | ८६२ |
| २२१४२ | ५२० | ६०१३, ७, १६, १७ | २१४ | आ जानुभ्यां भवेत् | २६८ |
| २२१४३ | ५२९ | ६०१२२ | २१३ | आयश्चाद्धमद्युद्धो | ६४७ |
| २२१४५ | ५२९ | ६४१९ | २४७ | आवृत्य गणयेत् | ३४३ |
| २२१५२ | ४८२ | ६४११९ | २६२ | आशौचापगमे | ६३६ |
| २२१६९ | २६७ | ६४१२४ | २४७ | उत्थायोत्थाय | २१० |
| २२१७२ | २७९ | ६४१३६-३९ | ३५० | उद्दिश्य कुपितो | ८६३ |
| २२१७४, ७५ | २३७ | ६४१४० | २४७ | ऊर्ध्वपुंड्रधरो | ५४९ |
| २२१७६-७७ | २१९ | ६५१९ | ८०० | एकरात्रोषित | १७५ |
| २४१९-१० | १२५ | ६६११-९ | ३८८ | एकादश्यां न | ४४९ |
| २५१४ | ६४१ | ६६१७ | ७९० | एकादश्यां निराहारः | ८४९ |
| २५११४ | १६१ | ६७१३३ | ४१६ | कण्टकीक्षीर | १९६ |
| २५११६ | ८४७ | ६८११६ | २२९ | कराभ्यामंजलिं | ३२० |
| २६१५ | १३३ | ६८१४६ | ४२६ | कुब्जवामन | १२१ |
| २८१३२ | ४५२ | ७१११ | ७४२ | कुशभावे कुशस्थाने | २३४ |
| २९१२ | १०४ | ७३१२४-२५ | ८१३ | कृच्छ्रत्रयं चोपनेता | ९९ |
| ३३११ | ८६५ | ७५१२ | ७४२ | कौपीनाच्छादनार्थं | १८५ |
| ३३११-५ | ८६२ | ७५१४ | ६७२ | क्षत्रवैश्यगृहे | ९६ |
| ३३१३ | ८६५ | ७५१४-७ | ७४२ | गोभिर्गुक्तेन | २८६ |
| ३३१४-७ | ८६५ | ७८११ | ७६३ | गोमयेनोप | ७५८ |
| ३३१६ | १७० | ७८१८ | ७६३ | ग्रामान्ते निर्जने | १९० |
| ३४११ | ८६४ | ७९१२ | ७८४ | जन्मप्रभृति | १०८ |
| ३६१८ | ९३१ | ७९१९ | ७९० | जानुभ्यानु | ३१९ |
| ३७११ | ९२१ | ७९१११ | ७९० | जानुभ्यामुपरिष्ठात् | २२९ |
| ३८११-६ | ८६७ | ७९१२२ | ८०४ | जानोर्दूर्ध्वं जले तिष्ठन् | २२८ |
| ३९१२२-४०१२ | ९३१ | ८०११ | ७८३ | ज्येष्ठो वाऽप्यनुजो | ६७० |
| ४६१२-९ | ९३९ | ९८१६२ | ६ | ततः कृत्वा | ३७६ |
| ४७११-९ | ९४१ | अच्छिन्नपादा | ३३९ | तिस्रोऽष्टकाः | ३५ |
| ४८१२१ | ९०७ | अनुच्छिद्येन संस्पृष्टे | २६८ | नृचाभिर्मात्रिनं | २९० |
| ५११३-५ | ११८ | अनुलेपनवस्त्रा | ८०० | दंडवन्मज्जनम् | ११३ |
| ५११४ | ४४८ | अन्नं व्याहृतिभिः | ३९८ | दक्षिणापवर्गेषु | ७९८ |
| ५११३८ | ८८२ | अपुत्रपौत्रसंताने | ५६२ | दक्षिणाप्रवर्गे | ७५७ |
| ५११३९ | ४३८ | अप्रबुद्धेऽविधूमे | ३६२ | दानादौ ग्रहणे | ४८५ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|----------|---------------------------|---------|--------------------------|----------|
| विष्णुः | | विष्णुः | | विष्णुधर्मोत्तरम् | |
| द्विजो निषिद्ध्या | ४४१ | वितस्तिमात्रमृजु | २४१ | भगवन् कर्मणा केन | ७०१ |
| द्विजो भोजनकाले | ९१२ | विप्रान् स्वागतान् | ७९५ | यथा विहन्ति | ८०१ |
| नमो विश्वेभ्यो | ८०५ | वृद्धानामातुराणां | १९३ | यस्तु विद्याभिमानेन | ८६४ |
| नवमे दशमे वाऽपि | ४९४ | वेदानधीत्य चत्नेन | १२३ | स ब्रह्महा स | ८४५ |
| नामेरधः | २६७ | वैश्वदेवान्तिके | ४१६ | सा तिथिस्तच्च | ८५८ |
| नीते स्वाशौचे | ५३५ | शिष्याणां चाशिषं | १०८ | सौरसंवत्सर- | ७२४ |
| पञ्चमास्तसमात् | १२६ | श्रावयेत्पुण्यसूक्तानि | ५५२ | सौरमासमाधि- | ७०१ |
| पलाशशरीरं | ६०८ | श्रौतं स्मार्तं च | ३५६ | — | ६८५, ७०० |
| पिण्डानां निर्वपणं | ८१७ | श्वश्र्वादीनां तथा | ५६७ | विष्णुपुराणम् | |
| पूर्वाह्णे वाऽपराह्णे | ५१४ | संन्यस्तमिति | १७४ | ३११२५-२८ | १९२ |
| पौष्कारगुणयोर्मध्ये | २८१ | सपिण्डीकरणं | ६८३ | ३१११५ | २०९ |
| प्रतिपत्पर्वषष्ठीषु | २४३ | सभासु चैव | १०९ | ३११११७ | २१७ |
| प्राजापत्यं नव | ९१३ | सर्वपापेषु सर्वेषां | ९४१ | ३१११२७-२८ | ३७६ |
| प्राजापत्यं नवश्राद्धे | ४४८ | सीमंतोन्नयनं | ७९ | ३१११२९-३७ | ३८० |
| प्रातःस्नातोऽपि | २५४ | सुप्रक्षालित | ४५७ | ३१११३९ | ३८४ |
| बालाश्व तरुणा | २८१ | सुसूक्ष्मं सूक्ष्मदन्तस्य | २४१ | ३१११४८-५३ | ४०१ |
| बाले समानवयसि | १०५ | स्थले स्थित्वा | ३७७ | ३१११६० | ४१३ |
| ब्रह्मक्षत्रविशां | २५४ | स्नानार्हस्तु निमित्तेन | २७९ | ३१११६८-६९ | ४१० |
| ब्राह्मणस्य कुलं | १३४ | स्मार्तमौपासने | ३५४ | ३१११७७ | ४१९ |
| ब्राह्मणस्य सपिण्डानां | ४७४ | — | ४८३ | ३१११७३ | ४१७ |
| ब्राह्मणः अनाद्वैण | २११ | ५२१, ५६५, ९०७, ९३१ | | ३१११७५-७६ | ४१७ |
| भुक्त्वोपविष्टो | ४५४ | विष्णुधर्मम् | | ३१११८२ | ४३१ |
| भैक्षं यवागुं | २०३ | असंभाष्यास्तु | ८५० | ३१११८६-९५ | ४५४ |
| मंटपे गोपुरे स्रष्टा | ५५४ | अहोरात्रं न भुञ्जीत | ४५० | ३१११९०१-१०९ | ४५५ |
| मातुर्मृताहे पिण्डादीन् | ७२० | वर्णत्रयात्सवर्णाद्वा | ८९५ | ३११२१८-१० | ४६१ |
| मृतायामपि | २५ | विष्णुधर्मोत्तरम् | | ३११३११-१२ | ६०६ |
| मृतायामपि भार्यायां | ५७० | अथ काम्यानि | ७६३ | ३११३१४ | ६०७ |
| मृत्पिण्डनृणकाष्ठानां | ४७१ | अष्टाविंशतिकोऽव्यः | ८५९ | ३११३३४-३७ | ५६२ |
| यज्ञोपवीतं दण्डं | १८५ | एकादश्यष्टमी | ८३१ | ३११४१२ | ३७ |
| यज्ञाशुचि स्थलं | ३७७ | ग्राह्यं प्राणप्रदानं | ५९ | ३११५१७ | ८१२ |
| यदि भैक्ष्यं | २०४ | तस्माच्छ्राद्धानि | ७५८ | ३११५२८-२९ | ८०६ |
| यानुद्दिश्य भवेत् | ७१८, ७३६ | तीर्थश्राद्धे सदा | ८१७ | ३११५३४, ३६ | ८०५ |
| यवदशौचं तावत् | ५९९ | त्रिंशन्मृद्भूतार्थ | ७०६ | ३११६१५-६ | ७८२ |
| ये क्षातदान्ताः | ७६६ | न दद्यात्कुणपं | ५८३ | ३११६१७-९, ११ | ७८४ |
| रजस्वलासंस्पृष्टो | २७९ | धूपो गुग्गुलुजो | ७९० | ३११६-१३ | ४८४ |
| वत्सरान्ते प्रेताय | ६७४ | परस्थाने वृथादानं | ५१ | अ. ११२-३ | ५ |
| वर्जयेच्छेत | ४३४ | विभर्ति निति | २०४ | अमावास्या यदा | ७४३ |
| वर्षैरेकगुणां | १२५ | | | अमावास्यासु न छिन्यात् | २३४ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|---------|-------------------------|-----------|------------------------|---------|
| विष्णुपुराणम् | | वृद्धगार्ग्यः | | वृद्धमनुः | |
| उपतिष्ठन्ति वै | ३१४ | ऋक्षेणूद्वाहनक्षत्रे | ३७ | आरनालं च तर्कं | ४५० |
| गृहीतविद्यो | १७२ | एकादश्यां दशम्यां | २८३ | अराध्यं देवमाराध्य | २७० |
| जातस्य जात | ७५२ | घटीपरिमितः | ३३ | कुर्यादनुपनीतो | ६८५ |
| तिलैः सप्ताष्टभिः | ६०० | ज्येष्ठस्य तु क्रतोः | ४८४ | कुर्यादनुपनीतोऽपि | ५५९ |
| दुष्टानां शासनात् | ६६ | दशमी पुत्रनाशाय | २८२ | रुषेस्तु विंशकं | ९२३ |
| नदीनदतटाकेषु | २५५ | नभस्यापरपक्षे | ७४९ | क्लीबाद्या नोदकं | ५३७ |
| पितृव्यगुरुदौहित्रा | ७६९ | नामान्नप्राशनं | ७३४ | गुरुभार्गवयोः | ३४ |
| पुत्रो भ्राता च | ५६५ | निमित्तं कालमादाय | ८२५ | ग्रामेश्वरे कुलपतौ | ५२९ |
| प्रेतस्य तापोप | ५९८ | प्राजापत्ये च पौष्णे | ७४८ | जाते कुमारे | ४८० |
| माघासिते पञ्चदशी | ७४३ | बुधत्रयेऽङ्गाराणि | ८८ | जाते कुमारे तदहः | ८० |
| यस्तु संत्यज्य | ९०२ | मानुः सहोदरो | ६६१ | जीवन् जातो | ५०५ |
| यागी दानं जपो | ३०४ | मीनमेधौ रविः | ७०१ | जीवन्यादि समागच्छेत् | ६३२ |
| येनकेनापि | ३०७ | यदास्तमयवेलायां | २७६ | ततः सम्यग्द्विराचम्य | ३५३ |
| वैशाखमासस्य | ७६१ | रात्रौ यामद्वयात् | ३९ | त्रयोदश्यां च | ३९ |
| शुक्ले वस्त्रधरः स्नातो | २४८ | वर्षादौ सरितः सर्वा | २८७ | दहनं वपनं वापि | ५८९ |
| श्राद्धं श्रद्धात्स्वितः | ७३५ | शास्त्राधिपे बलिनिके | ८८ | दीपोत्सवचतुर्दश्यां | ३८० |
| श्राद्धोपवासदिवसे | २४४ | स्वाध्यायवियुजो | ८८ | द्वादशेऽहनि विप्राणां | ६६६ |
| सर्वं कालमुप- | ४७७ | — | ४८८, ७. ३ | न पिबेन्न च | ४२९ |
| स्वानिस्थिते | २८५ | वृद्धगौतमः | | न प्रातर्न प्रदोषं च | ३१३ |
| — | १२, ५६३ | अनृतवाक् खलः | ८६१ | नभस्यस्यापरः | ७४५ |
| विष्णुरहस्यम् | | चंद्रसूर्यग्रहे | ४५०, ८३० | नाहरेदेकवस्त्रस्तु | ३५३ |
| अष्टमी ऋष्णपक्षस्य | ८३२ | मध्याह्नव्यापिनी | ७०६ | नित्याग्निहोत्रं | २० |
| असामर्थ्ये शरीरस्य | ८४८ | यायाद्गर्जोत्तरे | ३८ | निमन्त्र्य विप्राः | ७७८ |
| एकादशी भवेत्काचित् | ८४३ | सेचनान्मार्जनात् | ४७२ | न नियुक्तः शिक्षा | ८०० |
| द्वादशीतिथि- | ८४३ | वृद्धपराशरः | | निष्पीड्य स्नानवस्त्रं | २५३ |
| निष्कामस्तु गृही | ८४२ | अनाशकान् | ९१८ | पात्रभूतोऽपि | ५१ |
| परमापदमापन्नो | ८३८ | कृत्वाथ शौचं प्रक्षाल्य | २२१ | बहुपत्नीकपक्षे | ५७१ |
| यदीच्छेत् विष्णु | ८३७ | तावत्सूतकं | ४९७ | भार्यापुत्रकनिष्ठानां | ५८८ |
| रोहिण्यामर्धरात्रे | ८३३ | प्रेतस्पर्शनसंस्कारैः | ५४६ | मनुष्यतर्पणे स्नान- | २४८ |
| श्राद्धोपवासदिवसे | ८५० | यः प्रत्यवसितो | ९१९ | मासिके आब्दिके | ७७१ |
| सूतके मृतके वाऽपि | ५४७ | योऽस्रवर्णां तु मूल्येन | ५४५ | मृते जन्मनि | २५८ |
| विष्णुस्मृतिः | | लेखाप्रभृति | ७०७ | यस्य त्रैवार्षिकं | २० |
| उपवीतं शिक्षाबंधं | २९२ | — | ५४० | रात्रौ यामद्वयात् | ३९ |
| एकादश्यां न | ८३८ | वृद्धमनुः | | वपनं दहनं वापि | ५५८ |
| शंखचक्राद्यंकनं | २९८ | अन्यायोपात्त | २५६ | वस्त्रं त्रिगुणितं | २५० |
| वृद्धगार्ग्यः | | अपुत्रा शयनं भर्तुः | ५६३, ६७० | श्वभुरयोश्च भगिन्यां | ५२६ |
| अग्न्याधानाभि- | ७५५ | अभिवादाने तु | ११० | षडौकारान् जपेत् | ३३९ |
| | | | | संस्थिते पक्षिणीं | ५२४ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|----------|-------------------------|----------|----------------------|---------|
| वृद्धमनुः | | वृद्धवसिष्ठः | | वृद्धहारीतः | |
| सौंकारा चतुरावृत्त्या | ३३९ | मासत्रये त्रिरात्रं | ५३५ | देवानां तर्पणं | ३६२ |
| स्त्रीभिर्जितेषु | ५१ | मुक्त्वा मकरकर्कटौ | २७५ | मातामहपितृभ्यां | ६८१ |
| स्वसूत्रेऽवियमाने | ५ | मृते च सूतके | ४८५ | राज्ञः प्रतिग्रहं | ९२४ |
| वृद्धमनुः | ५०६, ६४६ | यतीनां तु न | ६६३ | शुक्रवारेऽप्यति— | ५८७ |
| वृद्धमिहरः | | यस्यां तिथावस्त— | ८२७ | संघातमरणे पित्रोः | ६४० |
| माधवाद्येषु | ७३५ | यावन्मेषर्षभौ | ७०१ | सकास्थं नालिकेराम्बु | ४३८ |
| वृद्धयाज्ञवल्क्यः | | वापीकूपतटाकानां | ७३४ | सुपुत्रकामो यः | ४५८ |
| अध्यात्मपुस्तकं | १८७ | विप्रस्य क्षत्रियस्यापि | ८८ | वृद्धात्रेयः | |
| आवसथ्यमनादृत्य | २४ | श्राद्धीयेऽहनि | ७२९ | यानुधानाः पिशाचाश्च | ४१८ |
| आहिताग्निर्थथा | ५६८ | सपिण्डीकरणं | ६७४ | वेदव्यासः | |
| इष्टकालोष्पापाणैः | २४४ | सपिण्डीकरणं नैव | ६७१ | वेदविक्रयजं | ७८३ |
| कर्मणो यस्य यः | ७०६, ७३० | सर्वेषामपि वर्णानां | २७२ | वैखानसः | |
| कुमारजन्मदिवसे | ७९, ५०३ | सूर्यग्रहे तु | ७१७ | आतुरे बाले | ४७५ |
| पौर्वाहिकास्तु | ८३० | सूर्यादि सौर्यन्तदिने | २८४ | क्षुरकर्म न | ३५ |
| मित्रे जामातरि | ४८५ | स्नानार्थमभिगच्छन्तं | २४९ | चिताया दक्षिणे | ६०९ |
| वृद्धवसिष्ठः | | — | ४९२, ५३५ | तिलदर्भास्तृते | ६५० |
| अभ्रजस्तु यदा | २३ | वृद्धविष्णुः | | सूतकप्रेतयोः | ६५० |
| अनभिक्कस्तु | ३९८ | रजस्वलां हीनवर्णां | २७९ | समानो मन्त्रः | ६७७ |
| अयने कोटिपुण्यं | २७६ | वृद्धशातातपः | | अग्निर्यजुर्भिः | ५८३ |
| अयने द्वे | २७४ | अग्रजो वाऽनुजो | ६२० | शवेऽन्याशौचयुक्ते | ५५६ |
| अह्निसंक्रमणे | २७४ | अपेक्षितं यो न | ८०७ | समिद्गोर्भयैः | २९५ |
| अहन्यहनि यत् | ७५७ | अशुचिं यः स्पृशेत् | २६५ | वैजयन्ती | |
| इंदौ निरुते | ८५७ | आपोशनं परीधानं | ४२२ | अलसान्द्रो राजमाषः | ७८४ |
| कुशामावेऽश्ववालो | २३४ | आसने पादमारोप्य | ८०९ | वैजावापः | |
| गर्भवता ज्येष्ठेन | ५५८ | उपविष्टस्तु विष्मूत्रं | २१९ | अथ सीमंतोन्नयनं | ७८ |
| गर्भस्त्रावे मासतुल्या | ४९२ | ज्ञानी यस्य | ७६८ | छिन्ने नाले ततः | ८० |
| गवां कोटिप्रदानेन | २७२ | त्रिष्वप्येतेषु | ७५५ | जन्मनोऽनन्तरं | ७९ |
| चौलवत्सकलं | १२३ | द्वितीया त्रिमुहूर्ता | ८५७ | त्रिवर्षं चूडाकरणं | ८३ |
| तुषाग्निना दहेत् | ५६८ | पर्वणोयश्चतुर्थीशः | ८५४ | पिता नाम करोति | ८२ |
| त्रिदशाः स्पर्शसमये | ७६० | पीतशेषं तु | ८८१ | पुरास्तमयात्पाक् | ९८ |
| दधिकर्कन्धु | ७५६ | प्रीत्या श्राद्धं तु | ५६७ | मासि द्वितीये | ७८ |
| दन्तकाष्ठे त्वमावास्या | २८३ | मातुलो भागिनेयस्य | ५६७ | राजतानि प्रशस्तानि | ७८९ |
| पितरं मातरं वापि | २८६ | मुखे पर्युषिते | १९६ | वैयाघ्रपादः | |
| पिता पितामहो | ९९ | शावे च सूतके | ५९० | चण्डालं पतितं | २६६ |
| प्रथमा स्यादमावास्या | ६६७ | संधिर्यद्यपराह्णे | ८५५ | | |
| भगिन्यां संस्थितायां | ५२६ | हस्तदत्तास्तु | ८०४ | | |

| श्लोः | पृष्ठम् | श्लोः | पृष्ठम् | श्लोः | पृष्ठम् |
|------------------------------|----------|------------------------|---------|---------------------------|----------|
| त्रिविधो जपयज्ञः | ३४० | आर्तवे देशकालानां | ७१५ | अधीत्य विधिवत् | ११९ |
| प्रातःस्नायी भवेन्नित्यं | २४६ | आर्तवेऽन्न | ७५६ | अधीयीत गृहस्थोऽपि | ३४ |
| स्मार्तकर्मपरित्यागो | ४७९ | रुतचौलस्तु कुर्वीत | ५६० | अनव्यायेष्वधीतं | ३१ |
| वैवस्वतः | | ततो वस्त्रद्वयं शुद्धं | २५१ | अनुत्सृष्टे तु | २५६ |
| द्वादशवर्तितं | २०७ | न भिषेत समं | १६२ | अनुतावृतुकाले | ७६ |
| व्याख्यातारः | | नवश्चाद्रे मासिके च | ५५९ | अन्नं दृष्ट्वा प्रणम्यादौ | ४२१ |
| — | ३६४ | नाधोमुखं न | ५८३ | अन्नप्राशनमातिथ्यं | १४७ |
| व्याघ्रः | | प्रातः संक्षेपतः | २४६ | अन्नहीनो दहेत् | २१ |
| अन्तर्दशाहे जातस्य | ५०३, ५०४ | बाले मृते | ५१० | अन्यानीतैश्च | १९८ |
| अवरश्चेत्तरं वर्णं | ५४५ | य एवं ब्राह्मणो | २४० | अन्यस्तमयवेलायां | ७१३ |
| अस्पृश्यस्पर्शनं | ९०९ | वपनं यो न | ५९० | अपराण्डे तु मध्याह्ने | ४५० |
| आदित्याकिरणैः पूतं | २७१ | विधिज्ञः श्रद्धयोपेतः | ७०९ | अपवित्रः पवित्रो वा | २२० |
| उच्छिष्टमन्नं | ६७ | शावे च सूतके | ५९१ | अपां द्वादश गंडूषान् | २२० |
| उपेतं विषमं | ५३६ | संस्कृतायां तु | ६६७ | अमलस्य निवृत्त्या | ४३३ |
| उभाभ्यामपि हस्ताभ्यां | २४८ | सिंहकंकटयोर्मध्ये | २८७ | अभुक्कवति | ११५ |
| एकादशेऽन्हि | ६४० | स्मार्तकर्मपरित्यागो | २७२ | अमा वै सोमवारेण | ७४४ |
| गन्धपुष्पाणि | ८१७ | व्यासः | | अयने विषुवे | ४७ |
| चतुरंगुल | २०३ | ३१३६-३७ | ३७५ | अयाचितं यथा | १९४ |
| तुल्यं वयसि | ५११ | ४१३५ | ५० | अरलिमात्रं | १९६, ८१७ |
| दहनायेव कार्यं | ५३९ | ११११ | ६५ | अर्धानामुदिते | ४४ |
| देशं कालं वयः | ९२० | २५१५ | १६० | अवमत्य च | १६३ |
| धात्रीफलं सदा | ४३९ | अंगुष्ठमूर्त्तातरतो | २२५ | अविमुक्ते | १९० |
| पतिव्रता तु या | ६४४ | अङ्गुष्ठाङ्गुलिभिश्चैव | २६१ | अवेक्षेत च | ६ |
| पत्या सहैकता | ६८० | अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां | २३० | अशक्तावशिरस्कं | २८९ |
| बाले मृते | ५१० | अक्षताभिः स | ७९२ | अश्विनीश्रवण | ८३ |
| बाले मृते सपिण्डानां | ५०४ | अमिहोन्नपरो | ७६७ | आचम्य च ततः | ४०८ |
| ब्राह्मणो ब्राह्मणीं गच्छेत् | ८८८ | अग्नेः पश्चिमतो | ३९६ | आचम्य च यथाशास्त्रं | ३७६ |
| मानुः प्रथमतः | ६८० | अग्न्याधेयं गवा- | १७६ | आचम्यांगुष्ठ- | ४५३ |
| स्नाने चैव तु | २४७ | अङ्गिन्नानाभ्यां | ७९ | आच्छाद्यालंरुतां | १४९ |
| — | ५०४, ५०५ | अज्ञानात् बाहुजो | ८७३ | आजन्मनस्तु | ४५१ |
| व्याघ्रपादः | | अतिथिं पूजयेत् | ४१६ | आत्मार्थं भोजनं | ३१ |
| असौ स्पृष्ट्वा कराग्रेण | २२६ | अतिथिं भोजयेत् | ६९० | आ दन्तजन्मनः | ५०७ |
| आनन्त्याकुल | ६९३ | अतीतिं दशरात्रे | ६६७ | आद्यमासिकमेव | ६४८ |
| उपायनोदितः कालः | १३६ | अथवा मन्त्रतः | ३९८ | आपयन्मौ तीर्थं | २७२ |
| गंगातोयेन रुत्नेन | २२० | अथागम्य गृहं | ३५४ | आपो नारा इति | २४६ |
| अतिदेशस्योप- | ८६४ | अथोपदिष्टेत् | ३४४ | आपो हि घाः | ३१७ |
| अभावे कूपवापीनां | २८९ | अधम्यां ये विवाहाः | १४८ | आपोहिष्ठैस्तृचैः | ३१५ |
| | २४ | | | आवाहयेत्तु | ३२६ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|----------|------------------------|---------|------------------------|---------|
| व्यासः | | व्यासः | | व्यासः | |
| आशौचं तु त्रिरात्रं | ५२५ | कुतपप्रथमे | ७०८ | ततस्तृप्तः सन् | ४५२ |
| इत्येतद्विले | ४५८ | कुरुक्षेत्रं गयां | २५७ | ततो मध्याह्नसमये | २५९ |
| उच्छिष्टं न | ८१८ | कुरूपो वा | १५७ | तर्पणं तु शुचिः | २४८ |
| उच्छिष्टोऽग्निः | ४२९ | कुर्वीतैवं दिवा | २१९ | तिष्ठन् प्रातर् | ३३७ |
| उत्तरे षडशीत्यां | ७०५ | कुशैः पूतं भवेत् | २२९ | तिस्रः कोट्यर्धकोटी | २५० |
| उदक्यामपि चण्डालं | ४२८ | रुतज्ञश्च तथाऽद्रोही | ३१ | तुरीयं तु पदं | ३३४ |
| उद्रुत्य दक्षिणं बाहुं | ९२ | रुष्णाजिनं | ५३ | तृतीयया युता | ८३० |
| उपवीती बद्धशिशः | ३१६ | कौपीनाच्छादनं | १८५ | नृपाः स्थ इति | ८१२ |
| उपस्पृशेत्तृणं | २३६ | क्रोधेनैव च | ८०८ | ते देशास्ते जनपदाः | १० |
| उपाध्यायं पितरं | १०६ | क्षत्रवृत्तिं पराम् | ६० | तेन स्मार्तमनु- | ६ |
| उपासते तु यां | ३११ | खट्वासंज्ञे च | ४३४ | त्यक्ताग्नेः पार्वणं | ८२१ |
| ऊढायाः पुनरुद्वाहं | १३९ | गत्वा सेतुं समुद्रस्य | ८७१ | त्रिमुहूर्तः प्रदोषः | ८२९ |
| ऊर्ध्वपुंङ्गं त्रिपुंङ्गं | ३०७ | गवाहिकं परगवे | ४०८ | त्रिरात्रमृतमध्ये | ५३१ |
| ऋणत्रयमपा | १७६ | गाण्डूषिकं जलं | ३८९ | त्रिसंध्यासु जपेत् | ३३९ |
| ऋत्विक्पुत्रोऽथ | ३५५ | गान्धर्वासुरयोः | १४९ | त्रिः पिबेद्दक्षिणे | २२५ |
| ऋषीन्देवान् | ४०६ | गायत्रीं तु गुरोः | ९७ | दत्ता नारी पितुः | ५१६ |
| एकं तु भोजयेत् | ४०२ | गायत्री नाम | ३१२ | दत्ता विप्रकरे | ८०० |
| एकपंक्त्युपविष्टानां | ४२७ | गुरुमूलाः क्रियाः | १९३ | दद्यात्पूर्वमुखः | १४९ |
| एकपादेन | १७० | गुरुरग्निर्द्विजातीनां | १०६ | दशरुत्वः | ३३५ |
| एकमुद्दिश्य यच्छाद्रं | ७०६ | गुरुशुश्रूषया | १२० | दशाहं शावमाशौचं | ४९५ |
| एकादशभ्यो विप्रेभ्यो | ६४७ | गुह्याका राक्षसाः | ३२१ | दिव्यतेजोमयः | १७५ |
| एकादशाहे त्वायस्य | ६४८ | गृहस्थो वैश्वदेवाख्यं | ४०५ | दुर्विप्रा गणिका | ५२ |
| एकादशी यदा | ८४०, ८४२ | गृहीत्वा वामहस्तेन | २३२ | दृष्टचन्द्रा सिनीवाली | ७३९ |
| एकादशेऽग्निं | ६४५ | गृह्योक्तविधि- | ९६ | देयं पितृभ्यो | १७७ |
| एकैकमञ्जलिं | ३७६ | गोकर्णार्कतिहस्तेन | २२२ | देव देव जगन्नाथ | ३८९ |
| एकोद्दिष्टं परित्यज्य | ६५९ | गोभूहिरण्य | ४५ | देवयज्ञं पितृयज्ञं | ३९५ |
| एवं वनाश्रमे | १७१ | ग्रामान्ते वृक्षमूले | १९३ | देवाश्च पितरश्चैव | ८० |
| औपनायनिकः | ८९ | चण्डालपतितौ | २६६ | देवासुरनरैः | ४४० |
| कदाचित्कवचं | ११० | चतस्रो घटिका | १९६ | देशक्षोभे | ३१३ |
| कन्धाकौपीन | १८९ | चतुर्थस्यैव | ८२१ | द्रव्याभावे द्विजाभावे | ८२२ |
| कन्याऽन्यस्मै | १३८ | चत्वार आश्रमाः | १७६ | द्वाविमौ पुरुषौ | ४११ |
| कपिलायास्तु | ३६० | चीर्णव्रता गुणैः | ७६७ | द्वारोपवेशनं | १५७ |
| कराभ्यां तोयमादाय | ३१९ | छत्रं च हरते | २८६ | द्वावेतौ समवीर्यौ | २०७ |
| करे कर्पटके चैव | ४२० | जन्मनाम्नोरविज्ञान | १२७ | द्विजातिभ्यो धनं | ५५ |
| काम एव मनुष्याणां | १९९ | जलदेवान्ममस्कृत्य | ३८३ | द्वितीयादिक | ८२६ |
| काषायवासाः | ७८६ | जान्दवीतीरसंभूतां | २९३ | द्विविधस्तु गृही | ६० |
| किं नु मे स्यादिदं कृत्वा | २१० | जुषधमिति | ८०६ | द्विहायनस्य वत्सस्य | ६०२ |
| कुटुम्बार्थे तु | २२, ५६ | जुहुयात् सर्पिणा | ३९७ | द्वे रूपे बासुदेवस्य | १७५ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|----------|--------------------------|----------|----------------------------|---------|
| व्यासः | | व्यासः | | व्यासः | |
| धर्मं यो बाधते | ७ | पञ्चमीं दशमीं चैव | २८२ | प्राचीनावीतिनो | ५९७ |
| धर्ममूलं वेदमाहुः | १ | पञ्चमीं मानुषक्षात् | १२६ | प्राणयान्नानिमित्तं | २०० |
| धर्मार्थकाम- | ६२ | पतिव्रता तु | १५९ | प्राणामिहोन्नं | ४२३ |
| धूपार्थे धूरसी | ८०० | पतिव्रता संप्रदीष्टं | १६२ | प्रातरुत्तान | ३४० |
| न किंचिद्वर्जयेत् | ८१० | परदारान्न गच्छेत् | ७६ | प्रातः काले तु संप्राप्ते | २४५ |
| न कुर्याद्बहुभिः | ४६१ | परपूर्वांस्तु भार्यास्तु | ५२० | प्रातः स्नानेन संशुद्धा | २४५ |
| नक्षत्रज्योतिरारभ्य त्वा | २११ | परमहंसखिदण्डं | १८५ | बुधसोमौ शुभौ | ६०७ |
| न तस्य विद्यते | १९३ | परस्थाने वृथा | ५१ | ब्रह्मावर्त्तः परो | ९ |
| नद्यां देवालये | २४४ | परित्यजन्ति ये | १०६ | ब्राह्मणक्षत्रिय | ९६ |
| नद्या यच्च परिभ्रष्टं | २५८ | पलाशपद्मपत्रेषु | ११९ | ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्थाय | २०९ |
| न निर्वपति | ७३५ | पाठमात्रावसान | ३१६ | भासवानरमार्जार | २६८ |
| न पृच्छेद्गोत्रचरणं | ४१३ | पानीयं पायसं | ४३१ | भुक्त्वा वै सुखम् | ४५४ |
| न प्रकाशं | ३४० | पानीयानि पिबेत् | ४३० | भृतकाध्यापितो | ९०२ |
| न भिन्नां प्रतिपद्येत् | ३३४ | पापदेशाश्च | १० | भोज्यमन्नं पयुषितं | ४३७ |
| न मेहेतजल- | २५५ | पालाशयः समिधः | ९८ | मधुपर्कं च सोमे | २३९ |
| नर्मदोत्तरदेशे तु | १४७ | पितृन् मातामहाश्चैव | ५६२ | मध्याह्नसमये | ३६७ |
| नाचामेद्वर्षधाराभिः | २२८ | पुरीषं यदि वा | २१४ | मनसैव जपं | ३४० |
| नाजीर्णे भोजनं | ४२४ | पृथ्वीं ससागरां | ३४९ | मन्त्रपूतैर्जलैः | २५४ |
| नाद्यात्सूर्यग्रहात् | ४५०, ८३० | पुष्करेष्वक्षयं | ७५९ | महाप्रस्थानिकं | १७१ |
| नान्यतो ज्ञायते | ३७४ | प्रक्षाल्य च शुचौ | २४२ | मातरं पितरं | ७२० |
| नाभिमध्ये स्थितं | ३२४ | प्रक्षाल्य दन्तकाष्ठं वा | २४१ | मातापित्रोश्च | ५० |
| नामधेयं दशम्यां | ८१ | प्रक्षाल्य पात्रे | २०३ | मातामहो मातुलश्च | १८४ |
| नास्नातां तु | ७७ | प्रक्षाल्य पादौ हस्तौ | २२१, २४१ | मार्जनं वामहस्तेन | २१५ |
| नित्यं स्वाध्याय | १६५ | प्रक्षिपेत्सूतके | ३१४, ४७८ | मार्जयेद्दृष्टशेषेण | २५१ |
| नित्यश्चाद्धे तु | ४०२ | प्रणवव्याहृति | ३३८ | मासान् दशोदरस्थे | १०५ |
| निर्वृत्ते चूडहोमे तु | ४४९ | प्रतिगृह्य द्विजो | ५९ | मुहूर्त्तत्रितयं | ७०७ |
| निहन्त्यन्नं मनः | ४४४ | प्रतिपत्सैव | ८२६ | मृद्धोमयाभ्यामालिष्य | २६१ |
| नैवेद्यमन्नं | ३९० | प्रतिपददर्शणं | २४४ | मौंजी त्रिवृत्समा | ९५ |
| नैवेद्यार्थं पृथग् | ३९५ | प्रतिश्रयादृक्षिण | २११ | मोक्षाश्रमं यः | २०८ |
| नैष्ठिकानां वनस्थानां | ४८५ | प्रत्तानां तु तथा | ४९८ | मौनं वाचो निवृत्तिः | ४२३ |
| नोत्तरीयमधः | २५१ | प्रथमं तु | ४९ | मौनी वाप्यथवा | ४२३ |
| न्यस्तपात्रे तु भुंजीत | ४२० | प्रथमा गतिरात्मैव | ४६५ | यज्ञोपवीती भुञ्जीत | ४१६ |
| पंग्वंधबधिरा | ५२ | प्रमादादकृते | ६६६ | यतिश्च ब्रह्मचारी | ४१० |
| पंचाद्रौ भोजनं | ४१७, ४२० | प्रवृत्तिलक्षणं | १७४ | यत्कृते दशभिः | १३ |
| पंथा देयो ब्राह्मणाय | १०७ | प्रवृत्ते चूडाहोमे | ९१४ | यत्तिथौ यच्च | ८२५ |
| पक्वाभावे प्रवासे | ३९८ | प्राक्कृतेषु | ३१३, ३२३ | यथा गोषु प्रनष्टौ | ८२३ |
| पक्षिणीं योनि- | ५२७ | प्राक्पश्चात्संक्रमे | २७३ | यदि निहरति प्रेतं | ५४५ |
| पक्षिभेदी वृथा | ९०६ | प्राङ्मुखोऽन्नानि | ४१८ | यदि मासमहोमी | ३५६ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|---------|--------------------------|---------|-----------------------|----------|
| व्यासः | | व्यासः | | व्यासः | |
| यदि स्यात्किञ्चवासा | ३४१ | विशीर्णापुः क्षयं | ३६० | सजलं भाजनं स्थाप्य | २१३ |
| यदि स्यात्तर्पणात् | ३६७ | विश्वामित्रऋषि | ३२६ | समक्षं वा परोक्षं | ८८३ |
| यदि स्यात्लौकिके | ३९६ | विष्णोः प्रस्थापनोत्थान | १४८ | समानोदकभावः | ४९६ |
| यद्यमत्रं समादाय | २३९ | वेदशास्त्रविनोदेन | ४६५ | समुद्रयानं मांसस्य | ४५२ |
| यस्तु पाणितले | ४२५ | वेदाभ्यासं ततः | २९ | सर्वं गंगासमं | २७१ |
| यस्य यावत् | ३९७ | वेदाभ्यासोन्वहं | ४१६ | सव्याहृतिकां | ३२६ |
| यस्य हस्तौ च पादौ | २८६ | वेदो वृक्षस्तथा | १९८ | ससूतकं समुतकं | २६५ |
| यस्यैतानि सुगुप्तानि | १७३ | वैणवा ये स्मृता | १८४ | सहस्रपरमां | ३३७ |
| यः पात्रपूरणीभिक्षां | ४१० | वैणवीं धारयेत् | १२३ | सहस्रपरमां नित्यं | ३३८ |
| यः सूर्यसंहितां | ३११ | वैश्वदेवस्तु कर्त्तव्यो | ४०२ | सायंप्रातर्मनुष्यानां | ४१७ |
| यावद्दूर्णविभागो | १७६ | व्याधितो बन्धनस्थो | ७६ | सायमाग्निश्च | ३१७ |
| ये त्वेकजाता | ४९७ | शवं दग्ध्वा यथान्यायं | ५९७ | सुक्षेत्रे वापयेत् | ४१५ |
| ये मृताः पापमार्गेण | ४८९ | शालामौ लौकिके | ३९६ | सुदूरादाशया | ४१२ |
| योगपट्टोत्तरीयं च | २३३ | शिरोललाट | ९३ | सूतकान्ते नरः | ६५१, ७२८ |
| योऽनूचानं | ३५० | शिस्तिपनश्चित्रकाराद्याः | ४८६ | सूतके तु | ५०१ |
| योऽनूचानं द्विजं | ९३४ | शिवो वह्निगुरुः | ३९४ | सूतिकापतितो | २६६ |
| यो मोहास्नानवेलायां | २४३ | शीतास्वप्सु निषिच्योष्णा | २५९ | सूतिकावासनिलया | ५०२ |
| यो विप्रो भूतकं | ९०१ | शुक्लाष्टम्यां तु | ३८१ | सूर्येऽस्तशिखरं | ४५५ |
| रविग्रहे सूर्यवारे | २७३ | शुक्लाष्टम्यां तु | ३८१ | सोपानत्को | २२९ |
| रवेरस्तमयात् | ५५५ | शुचौ देशे | २९१ | स्नानं मध्यदिने | २५४ |
| रागद्वेषविमुक्तात्मा | १८७ | शूद्रायोनौ पतद्वीजं | १३४ | स्नानमब्दैव | २९० |
| रागांधौ हि | १९२ | श्राद्धे यज्ञे च | २४३ | सगोत्रां मातृपत्येके | १२६ |
| रात्रेः षोडशके | ३५७ | श्लेष्मशुष्पाणिको | ४३१ | सिन्धुसौवीर | ११७ |
| रात्रौ चतुर्थ्या | ७५ | श्राद्धविघ्ने समुत्पन्ने | ७१६ | सूतकान्ते नरः | ६४७ |
| रात्रौ विवाह उत्पन्ने | १५० | श्रावण्यामथवा | ३३ | स्थाप्याः प्रतिद्विजं | ८०१ |
| रात्रौ स्नानं न | ७९ | श्लेष्मातकस्य | ३७ | स्वकालातिक्रमे | ७०९ |
| वक्त्रप्रमाणं पिण्डांश्च | ४२५ | श्वभ्यश्च श्वपचेत् | ४०१ | स्वयं प्रक्षाल्य | ४१९ |
| वर्ज्येद्वन्तकाष्ठानि | २४२ | षष्ट्या तु दिवसैः | ७२३ | स्वयमेवोपसन्नाय | २९१ |
| वसंते ब्राह्मणस्य | २४ | षष्ठिभिर्दिवसैः | ७२९ | स्वाध्यायं चान्वहं | १८३ |
| वाणिज्यस्याष्टमं | ९२३ | षष्ठ्यष्टमी पञ्चदशी | २८३ | हंतकारमथाग्रं | ४०४ |
| वास्तपण्डुलमष्पात्रं | ५९६ | षाड्भिः पादौ | २६० | हरिद्रां कुंकुमं | १५८ |
| विट्शौचं प्रथमं | २१८ | षण्मासान्वर्जयेत् | ५९३ | हरिरोमिति | २९ |
| विद्याग्रहणशकस्य | १०० | संज्ञाहानौ मरणेऽपि | ५५२ | हव्यार्थं गोघृतं | ३६१ |
| विना यच्छिखया | ९१ | संनिरुष्टमधीयान | ५० | हस्ते च विद्यमाने | ४२९ |
| विन्यस्यैवं | ३३१ | संपूज्य गन्धपुष्पाद्यैः | ६४५ | हुत्वाग्निं विधिवत् | ४५५ |
| विप्रश्चातीतकालः | ८८ | संवत्सरस्यैकमवि | ४५१ | हृदि तत्सावितुः | ३३१ |
| विप्राणां चरणस्पृष्टं | २३३ | संवत्सरेण पतति | २८, १५३ | हैमेन सर्वदा सर्व | २३२ |
| विरक्तिश्च द्विधा | १८३ | संशुद्धैर्जमानैः | २३ | होमः प्रतियहो | ३४१ |

| क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|----------|---------------------------|----------|------------------------------------|----------|
| होमे भोजनकाले | २३७ | शङ्खः | | शङ्खः | |
| — | ४० | आम्नांश्च कदली | ७८१ | ज्यहं त्रिषवण | १३९ |
| १२१, १२५ टीप, २६६, ३३८, | | इष्टिश्चाद्रे क्रतुः | ७९२ | दधि मक्ष्यं च | ४३७ |
| ५०२, ६५५, टीप, ८४४, | | ईकारांतं स्त्रीणामिव | ८२ | दन्तवद्दन्तलभेषु | २३८ |
| व्याससूत्रम् | | उग्रगन्धिन्य | ७८९ | दर्माः कृष्णाजिना | २४३ |
| ७११३९ | ३१८, ३४६ | उच्छिष्टस्पर्शनं | ८१० | दशमान्तर्गते | ५०४ |
| व्रतचतुष्टयम् | | उपलिप्ते शुचौ | ४१७ | दशम्यामुत्थाप्य | ८१ |
| मेखलामजिनं | ३५ | उपवीतं कटौ | ८०० | दानं प्रतिग्रहो | ४७७ |
| शक्तितन्त्रम् | | ऊर्ध्वं दशाहात् | ५३५ | दारानाहरोत् | १२५ |
| आर्द्रं ज्वलति | ३०० | ऊर्ध्वं वार्षिकाभ्यां | १९० | दीपामिं दीपितेलं | ३०७ |
| शङ्करसंहिता | | काशहस्तस्तु नाचामेत् | २३४ | दुःस्वप्नारिष्ट | १२२ |
| यत्र भुञ्जीत | ३०५ | कुमारप्रसवे | ८० | दूर्वा प्रवालमग्निं | ६००, ६०४ |
| शङ्खः | | कुर्यान्निरवकाशं | ६८८ | देशान्तरगतं | ५३४ |
| १६१२०-२१ | २१७ | कुलदेवतानक्षत्राभि | ८१, ८२ | न पुत्रः पितुः | १०५ |
| अभिहोत्रार्थं | ४७९, ५०५ | कुशवृक्षां | ३३६ | न वेदमनधी- | ११५ |
| अभ्युत्सादी | १२१ | कुशालाभे द्विजः श्रेष्ठः | २३४ | नाघमर्षणात् | ३३५ |
| अङ्गुलिनां चतुष्कोणं | २२६ | रुतेषु मासिकेष्वेव | ६५६ | नानुका गृहान् | १५६ |
| अङ्गुष्ठमूलस्यान्तरतः | २२५ | रुष्णरुच्यस्तानि | ९४ | नानुदको नामुत्तिको | २१२ |
| अजातदन्ते तनये | ५०७ | केशवधिललाटान् | ९३ | नाम चैव तथोत्पत्तिं | ७९७ |
| अतीते दशरात्रे | ५३४ | क्रियास्तानं प्रवक्ष्यामि | २८६ | नाल्पोदके निमज्जेत् | २५६ |
| अर्थाङ्गुलीनां | ३४३ | क्षीराणि यान्यपेयानि | ४३८, ८८२ | नास्तिको नास्तिक | ८९९, ९२२ |
| अध्यास्य शयनं | १२२ | गर्भस्पन्दने | ७८ | नोदकुम्भहस्तो | १०९ |
| अनध्यायेष्वधीयान् | ७७५ | गृहाश्वरथ- | ४४६ | पर्यटनशीलः | १९३ |
| अन्वारोहे तु | ६७८ | गोगजाश्वादि | ७५८ | पितुः पुत्रेण | ६७० |
| अपुत्रायाः पतिः | ६७० | गोदोहमात्र | ४०८ | पितुः पुत्रेण कर्त्तव्याः | ५६३ |
| अपूपाः सक्तवो | ४३७ | गोपुरीषं यवाभ्यासो | ९३९ | पितृवेश्मनि या | ५१५ |
| अद्भिः समुद्रतामिस्तु | २२२ | घृतेन दीपो दातव्यः | ७९० | पित्रादित्रयपत्नीनां | ७१८ |
| अनौरसेषु पुत्रेषु | ५२० | चण्डालीं पुष्कसीं | ८८७ | पीतावशोषितं | ४२९ |
| अभ्यवहायाणां | ४६८ | चतुर्थे दशरात्रं | ५१८ | पुत्राणामसवर्णानां | ४९८ |
| अमावास्या तु | ७४४ | चतुर्थे मासि कर्त्तव्यं | ८२ | पुत्राभावे तु | ५६५ |
| अमाश्राद्धं प्रकुर्वीत | ३८२ | चतुर्दश्यां तु | ६६६ | पुरुषार्द्रवो | ६६४ |
| अलाबुशिषु | ४३६ | चाद्रायणं नव | ९१४ | पूर्वाह्णे दैविकं | ७०९ |
| अस्नातस्तु पुमान् | २५४ | चाद्रायणं नवश्राद्धे | ४४९ | प्रथमेऽह्न्यारभ्य | ६१५ |
| आदित्या वसवो | ४१८ | ज्येष्ठे तिष्ठत्यनूढे | १५३ | प्रपद्ये वरुणं देवं | २६० |
| आदौ मध्ये तथाऽन्ते | ६१५ | तिष्ठः कोट्यर्थ | १६१ | प्रयतोऽपराह्णे | ७९१ |
| आयश्चाद्रम् | ६१९ | तृतीये वर्षे चूडाकर्म | ८३ | प्राङ्नामकरणात् | ५०३ |
| | | त्रियहं योनिबन्धूनाम् | ६१७ | प्रातः संख्यां सनक्षत्रां ३१०, ३७५ | ७४९ |
| | | ज्यहं च योनिबन्धूनाम् | ५४५ | प्रोष्ठपद्यामतीतायां | ७४९ |
| | | | | बालवृद्धमत्तोन्मत्त | १०७ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|----------|-----------------------|--------------------------|--------------------------|---------------|
| शङ्खः | | शङ्खः | | पाते सद्यस्तु कठिने | ४९२ |
| ब्रह्मदेयानु | ७६६ | सावकाशं तु | ६९२, ७३४ | मुख्यकर्तुर्गघं | ६९१ |
| ब्रह्महा कुष्टी | ८६१ | सूर्यायैव तु | ३१९ | वत्सरमध्ये तत्परं | ६२२ |
| ब्राह्मणेन क्षत्रियायां | ७० | स्नातस्य वह्नितप्तेन | २५८ | — | ४९४, ५०२, ६२४ |
| ब्राह्मणोच्छिष्टशाने | ४३१ | स्नानं तु द्विविधं | २५३ | शतकव्याख्याकारः | |
| भूमौ माल्यं पिण्डं | ६०१ | स्नाने भोजनकाले च | २३७ | — | ६९३ |
| भृतकाध्यापको | १०४ | स्वरवर्णपदैः | ३३८ | शाकटायनः | |
| भोजयेद्ध वा | ७७८ | हस्तिच्छायासु | ७६० | बालस्त्वन्तर्दशाहे | ५०६ |
| मनुयमदक्ष | ८ | — | १२७ टीप, ५०४ ५०५, ६७९ | शाक्यायनिः | |
| मातर्यमे प्रमीतायाम् | ५३२, ६३६ | शङ्खलिखितौ | | आब्जं हिरण्मयं | ३५३ |
| मातामहादेः | ७७१ | अथ चेदन्तरा | ५३० | ततः सूर्यमुपस्थाय | ३५३ |
| मातुः सपिण्डीकरणं | ६७८ | अन्नपानं प्रभूतं | ८०८ | नयादौ सम्यगाचान्तः | ३५३ |
| यत्रकचन | ७५९ | आपत्स्वपि च | ४६५ | नभस्यास्यपरे | ७४५ |
| यथाविभव | ७९१ | आहारं मैथुनं | ४७ | पुण्यः कन्यागतः | ... |
| यदा विष्टिष्यतीपात | ७६० | उभाभ्यामपि हस्ताभ्यां | ३७६ | प्रेतश्राद्धानि शिष्टानि | ६५६, ६६९ |
| ययकेजाता बहव | १२८ | रुतघ्नः कूट | ८६६ | यावत्कालमहोमी | ३५६ |
| रथ्याकदर्म | २६७ | क्रयविक्रय | ९१६, ९३१ | सपिण्डीकरणात् | ६५६ |
| रथकारस्तस्येज्या | ७१ | गुप्तायां वेश्यायां | १२२ | — | ६५८ टीप |
| रागद्रव्याणि | ४७० | त्रिरात्रोपोषितो | ९३४ | शाण्डिल्यः | |
| रौद्रश्वैत्रस्तथा | ७०७ | द्रव्यहस्त उच्छिष्टो | २४० | अन्नेः प्रभूतैः | ४५५ |
| लघुनपलाण्डु | ४३४ | धियमाणे तु | ७२१ | अयाचितानि | ४३ |
| वापीकूपतटाकेषु | २७१ | नात्यधिकं दद्यात् | ८०८ | अयाचितोप | ६० |
| वाराणस्यां कुरु | ७५९ | नातवे दिवा | ७४ | अवकीर्णा द्विजो | १२२ |
| विचार्य च पुराणार्थान् | ४५४ | पत्नी मध्यमं | ८१७ | आर्द्रवासा न कुर्वीत | ३५ |
| शीतपाकीमपि | ७८४ | परिविस्तिः परिवेत्ता | ९०३ | उच्चैः स्वरेण यः प्रातः | २११ |
| शुक्लपक्षे तिथिर्ग्राह्या | ८३७ | बलिं बलिभुजो | ८१३ | एकादश्यां सिते | ३९१ |
| शूद्रस्य सूतके मुक्त्वा | ४४८ | रागद्वेषाभि | ६ | कुतुम्बिनो विनाज्येषां | २८७ |
| शूद्रान्नं ब्राह्मणो | ९०७ | सपिण्डता तु सर्वेषां | ४९६ | ग्रहादिसेविते रूक्षे | २५८ |
| श्राद्धपंकौ तु | ८१० | स्वैरिण्यां वृषल्यां | ८८८ | जीवनार्थं हतं | २८७ |
| श्राद्धपंकौ तु भुञ्जानो | ४२९ | शंभुः | | दीक्षितोप्येक | ४८४, ५६० |
| श्राद्धे नियुक्तान् | ८०९ | उत्तरे क्षतसंयुक्तान् | ७९२ | द्वारवत्यां सेतुबन्धे | ६०९ |
| संध्यादिनित्य | ३१५ | उदक्प्लवमुदीच्य | ७९१ | न गच्छेद्गर्भिणी | ७७ |
| संवत्सरं व्रतं | ८७८ | शतकम् | | त हुंकुर्यान्न | ३९० |
| संवत्सरात्प्राक् | ८३ | आ त्रिपूरुष | ४९८ | नातिदोषावहं | ४२० |
| संस्कारैः संस्कृतः | ७३ | रुच्छादीनां समाप्तिः | ५२० | नावश्यं भोजने | ४२३ |
| समानाशौचसंपाते | ५३१ | दशरात्रं सदा | ६२१ | पिबेत् भोजनपात्रेण | ४३० |
| सर्वासां द्विस्तीनां | ४३६ | | | प्रदक्षणे प्रणामे | १६ |
| सर्वेषां सकुल्यानां | ७९ | | | | |
| सहस्रं भोजयेत् | २२ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|----------|-----------------------|---------|----------------------|----------|
| शाण्डिल्यः | | शातातपः | | शातातपः | |
| प्रदक्षिणे प्रणामे | ३४१ | एकोद्विष्टं सुतः | ६२६ | बालानां पंचम | ८६ |
| बाहू जान्वन्तरा कृत्वा | ३४१ | कुर्यात्सदायने | २७६ | ब्राह्मणस्य व्रण | १०५ |
| भुवं स्पृष्ट्वा तु | ४१८ | कृत्रिबे देशान्तरस्थे | १५२ | भिक्षा माधूकरी | २०४ |
| मासादिचूर्णेः | ४५३ | कृत्रिबेन पतितैः | ६७४ | भोजयेद्यस्त्वथ | ७६५ |
| वानप्रस्थो यतिः | ८९२ | गवां भृङ्गोदक | २६९ | मण्डनं मुण्डनं चैव | १४५ |
| वासो भूषणमाल्यादि | ४४० | गोकुले यज्ञ- | ४७५ | मयं पीत्वा | १३५ |
| शुद्धिं कुर्यात्तथा | ४६१ | गोवालतृण | ३५३ | मयपानप्रवृत्ता | १५१ |
| शातातपः | | यासमात्रं भवेत् | ४०४ | मानुलस्य सुताम् | १२६ |
| अंगेषु नांघ्रेत् | २९९ | चतुर्थेऽङ्गनि | ९४ | मातृश्राद्धं तु | ७५३ |
| अग्न्युत्सादी | ३५७ | चितौ दहनमेतेषां | ५८४ | माणे तु यत्र | २७९ |
| अयासनोपविष्टस्तु | ४२७ | चित्ते विभावयेत् | ४१३ | मासिके चाब्दिदके | ७१९ |
| अतिथिर्यस्य | ४१६ | जन्मनैव महाभागो | ६९ | मूत्रोच्चारं द्विजः | १०९ |
| अनग्निरपि यो | २७ | जपे हेमे तथा दाने | २३० | मृता याजुगता | ६७८ |
| अनाद्यगर्भो | ६६१ | तन्मात्रा तत्पिता | ६८० | मूल्यकर्मकराः | ४८६ |
| अनुक्तेषु विधिं | ९३१ | तपो दमो दया | १८ | यथाकथंचित् | ८२० |
| अनृतं मद्यगन्धं | ३१५ | तिलान् ददत् | ४२ | यथाश्वा रथ- | ४९ |
| अन्त्यैरपि कृते | २५६, ४७४ | तैलं घृतं दधि | ४४६ | ययेकजाता | ४९७ |
| अन्नपानाश्व | ५५१ | दन्तलमे फले मूले | २३९ | या मृता सुभगा | ६४३ |
| अन्यगोत्रोऽप्यसंबंधः | ६१८ | दर्भहीना तु या | ३२० | युवा सुवासा | ७९१ |
| अपराह्णे पितृणां | ७०९ | दर्शश्राद्धं तु | ७३६ | योगिनं भोजयेत् | ७६८ |
| अभिवाद्यो नमस्कार्यः | १०९ | दाराभिहोत्र | २३, १५३ | यो हि हित्वा | ४४५, १०६ |
| अमायां च नवम्यां च | २८३ | नदीतीरेषु गोष्ठेषु | १४२ | रजकश्चर्मरुत् | २६८ |
| अमावास्या भवेद्द्वारे | २८० | न यावदुपनीयंते | २१९ | रात्रिशेषे ब्रह्मात् | ५३० |
| अर्थे पीत्वा तु | ४५२ | नष्टं देवलके | ५१ | रात्रौ धाना दधि | ४३८ |
| अवमन्य च या | १६३ | नामयः परिविंदति | २३ | रेणवः शुचयः | ४६५ |
| अविज्ञातं द्विजं | ७७० | निगृहीतेन्द्रिय | २०६ | लघुनं गृजनं | ११८ |
| आचम्य पात्रमुत्सृज्य | ४५३ | नित्यश्राद्धमदैवं | ४०२ | वत्सरान्तर्गतः पापो | ७२३ |
| आभाकासित | ३७ | निर्वपेच्चतुरः | ६७७ | वनस्पतिगते सोमे | ४४९ |
| आर्द्रामलकमात्रा | २१८ | पलांडुलघुन | ४३४ | वरश्चेत्कुलशीलाभ्यां | १३८ |
| आशौचस्यापि | ६०२ | पवित्रं तु करे | ८०० | वरो वरयितव्यो | १३४ |
| उद्धृत्य वामहस्तेन | ४२९, ८६५ | पिण्डनिर्वापरहितं | ७३८ | वसवः पितरो | ८२३ |
| उष्ट्रीक्षीरं मृगीक्षीरं | ४३८ | पुत्राणामसपिण्डानां | ४९७ | विश्वदेवनिविष्टानां | ८१३ |
| एकमातृप्रसूतानां | १४६ | पूर्वाह्णे मध्यमे | ८५४ | वेदाक्षराणि | ३१ |
| एकमूर्तितमायाति | ७१९ | पृथक् दिने | ७५४ | शुचिदेशात्तु | १९६, २५९ |
| एकादशशु विप्रेषु | ६४७ | पूर्वाह्णे मातृकं | ७५४ | शेषमन्नमनु- | ८२० |
| एकादशाः।।। | ४९५ | प्रश्नपूर्वं तु यो | ३१ | श्रवणाहे न कुर्वीत | ६२१ |
| एका लिंगे करे | १९६, २१८ | बह्वर्षं वा स्व | १५ | श्राद्धे कृते तु | ३८२ |
| एकोद्विष्टं जलं | ६६२, ६६३ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|---------------|---------------------------|---------|-------------------------|---------|
| शातातपः | | अल्पापराह्णे | ७३९ | शौनकः | |
| श्रौतं यत्तत्स्वयं | ३५५, ३६५ | ग्रहादिव्यतिरिक्तस्य | ७११ | उत्तमेत्यनुवाकेन | ३४४ |
| संक्रान्त्यां यानि | २७३ | प्रातःकाले तु | ७१० | उभयोः सन्ध्ययोः | २४६ |
| संधिन्या अंतर्दशाया | ४३७, ८८२ | शिवसर्वस्वम् | | ऋष्यादीनि | ३३६ |
| संनिरुष्टमधीयानं | ५० | यावन्न कीर्तयेत् | १३ | एकं पादमथैकस्मिन् | ३२१ |
| सत्यं शौचं तपो | ३०३ | शिवस्वामी | | एकचविधिना | ५१२ |
| सद्यः पतति | ६२ | न मासिकश्राद्धं | ६५७ | एकैकस्य द्वौ | ७७७ |
| सपिण्डीकरणं | ६५८ | नव श्राद्धानि | ६०५ | ॐ भूर्भुवः सुवः | १७९ |
| सपिण्डीकरणं कृत्वा | ७१८ | शुद्धिनिर्णयः | | कनिकदं जपेत् | ९०६ |
| समानप्रवरां | ९०३ | ऊर्ध्वेच्छिष्टाधोच्छिष्टं | ५५३ | कल्केनामलके- | २८० |
| समानप्रवरां कन्यां | १२७ | इह केचिदनमिज्ञाः | ५९१ | कृत्वोत्तानौ करो | ३४० |
| सर्वस्वेनापि कर्तव्यं | ७६२ | दशादिनपर्याप्तं | ५९६ | रुणाजिने तु | ५७४ |
| सुरां पीत्वा | ३४९ | महागुरुमरणे | ५९३ | केचित् गणपतिं | ३९४ |
| सूर्यसंक्रमणे | २७३ | ग्रतान्ते विधिवत् | ५९३ | गर्भिणीमरणे | ६४४ |
| स्नानं दानं तथा | २७२ | — | ५९३ | गर्भिणी यदि | ९९ |
| स्वगोत्राद्भक्ष्यते | ६८१ | शुनःपुच्छः | ५५२ | गायत्र्या वाऽऽदाया | २६० |
| स्वर्गकामो वृषोत्सर्गे | ६४६ | पैतृके प्रेतकृत्येषु | ५७९ | चण्डालसूतिको | ५४७ |
| स्वाध्यायेनाग्निं | ४१५ | शालिना सक्तुभिः | ६०२ | जलमध्ये स्थितो विप्रः | २४६ |
| हंसस्वरां मेघवर्णां | १२४ | शैवः | | ज्ञानं महेश्वरादि | १९८ |
| हस्तदत्तानि | ४३० | ऊर्ध्वपुंङ्गं त्रिपुंङ्गं | ३०७ | तत उद्धृततोयेन | २१८ |
| हस्तवाताहतं | ८०० | चापराशौ स्थिते | ३९१ | तर्जनी मध्यमांगुष्ठ | ४२३ |
| — | ४७५, ४८३, ७३१ | शौनकः | | ताः प्रतिग्राह | ७९९ |
| शालंकायनः | | अमावसुगते | २४, ३६४ | तृतीये वर्षे चोलं | ८३ |
| कुशाग्रस्तर्पयेद्देवान् | २३१ | अग्निमुत्तपनं | ५६९ | तेजसाश्ममय | ७९८ |
| शिक्षोपनिषद् | | अग्निर्विष्णुः | ३७८ | तेषु तद्रूपवत् | ६८६ |
| — | ७३ | अग्निश्चेत्यनुवाकेन | ३१७ | दन्तानां धावनं कुर्यात् | २४३ |
| शिवः | | अथ बलिहरणम् | ३९९ | दर्भान् द्विगुण | ७९४ |
| — | ७४४ टीप | अथाग्न्योर्गृह्य- | ५७१ | दहनादि सपिण्ड्यन्ते | ६३३ |
| शिवधर्मोत्तरम् | | अनग्निश्चेदाद्यं | ६८६ | देवादींस्तर्पयेत् | २४९ |
| मासिके चाब्दिके | ७२० | अन्यजैः स्नानिताः | २५६ | दैवं च वार्षिकं | १७७ |
| शिवपुराणम् | | अमायां तु न | २४४ | धनुः सहस्राण्यष्टौ | २५५ |
| धरामभ्यर्च्य | ९२९ | अष्टम्यां च चतुर्दश्यां | ४४९ | न नदीषु नदीं | २५७ |
| शिवरहस्यम् | | आ ब्रह्मलोकादा | ३२१ | नवप्रणवयुक्तेन | ३१६ |
| अन्यायाद्विप्र | ८८४ | आयुष्कामो दिवारात्रौ | ४०१ | नातानमिति सूक्तं | ५५२ |
| शिवराघवसंवादः | | आवाहनं तैत्तिरीये | ३२६ | निरुद्धासु न कुर्वीरन् | २५६ |
| अमावास्या तु | ७३९ | | | निशायाः प्रथमे | ४५६ |
| | | | | नैकपुत्रेण कर्त्तव्यं | १०३ |
| | | | | पाकं सर्वमुपानीय | ८०४ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|---------|------------------------|---------|-------------------------|----------|
| शौनकः | | शौनकः | | श्रुतिः | |
| प्रक्षाल्य पादौ हस्तौ च | २२७ | — १७९, ३३८, ५७१, | | १६।९ | २० |
| पाणिग्रहणात् | ३५५ | ५७२, ५७७, ७७७. | | अपराणहः पितृणां | ७०९ |
| पीडयित्वा य | २०२ | शौनकपरिशिष्टम् | | अपां वा एष | ३६८ |
| पाणिपात्रं चरन् | २०१ | यावत्सो रेचकम् | २०७ | एतत्तं योऽनूत्सृज- | ३७२ |
| पुरुषस्य हरेः | ३५० | शौनकस्मृतिः | | उत्तमं नाकं | ३७२ |
| पूर्वेद्युनान्दीमुखं | १७७ | गन्धमाल्यैः पात्रं | ७९९ | कुटीचको | १८३ |
| प्रभूते विद्यमाने | २५६ | श्रीधरीयम् | | जायमानो वै | १५२ |
| प्रयतो मृदमादाय | २५९ | अस्थिसंचयन | ६०७ | ग्रामे मनसा | ३७० |
| प्राग्बोद्ध्वा | ३६९ | अस्थिसंचयनं कार्यं | ६१० | तद्यदिदमाहुः | ३६० |
| प्राजापत्ययेष्टा | १७९ | एकादशाहमारभ्य | ६६५ | तस्माद्देवो न | ६४२ |
| प्राणायामान् | ३२६ | एकोद्विष्टे तु | ६५० | तस्य वा एतस्य | ३७१, ३७२ |
| प्राणायामैर्दग्ध- | ३६९ | कन्या कुम्भगते | ६६६ | तिस्रो रात्रौर्वतं | ७५ |
| प्रातराचमनं कृत्वा | २४५ | केशान् मासत्रयात् | ५९४ | त्याग एव हि | १७५ |
| प्रौष्ठपद्यापर | ७५१ | चतुर्थे पंचमे चैव | ६०७ | त्रिनेव प्रायुङ्क्त | ३६८ |
| ब्राह्मणानां सपिंडेषु | १०२ | तृतीये पञ्चमे | ६०५ | दक्षिणत उपवीय | ९२ |
| ब्राह्मे मुहूर्ते | १७९ | त्यजेत्संकमणं | ६१२ | दक्षिणत उपवीथोप | ३६८ |
| ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय | २०९ | दशाहकर्मण्यारब्धे | ६१६ | दक्षिणोत्तरौ पाणी | ३६८ |
| भोजनोपरमात् | ८११ | दशाहान्तः सपिण्डानां | ५९९ | दर्भाणां महदुपस्तार्थो- | ३६८ |
| मनः संतोषणं | ३४० | दिवसं गुणदोषाभ्यां | ६१० | दानमिति सर्वाणि | ४० |
| महत्तत्प्रजपेत् | २७ | द्वादशाहप्रभृत्यस्य | ६१० | दिवा न रात्रौ | ४४९ |
| यदा चैवोद्धृतं | ७९८ | द्वादशाहे त्रिपक्षे | ६८३ | नव वै त्रिवृत् | ९० |
| यश्च श्रुतिजपः | ३६९ | द्विचन्द्रदर्शने | ६१२ | न स्यात् पिबेत् | ८७९ |
| यस्मिन्वयं जपेत् | ९१३ | नम्रप्रच्छादनं दद्यात् | ५९६ | नामावास्यायां | ७४ |
| वक्ष्ये पुरुषसूक्तस्य | ३८५ | नर्मदोत्तरभागेषु | १४७ | ब्राह्मणो वै | ७० |
| वापिकूपतटाकेषु | २५६ | पुत्रस्य पाणिग्रहणात् | १४५ | मर्त्यदिने प्रबल | ३७० |
| विच्छिन्नवन्दि- | ३६४ | भरणी यमदेवत्वात् | ६३४ | यच्चिराचामति | ३६८ |
| विजातवृक्षं क्षुण्णाग्रम् | २४१ | मृताहे केशवपनं | ५९१ | यदृचोऽधीते | ३७३ |
| वेदाक्षराणि यावन्ति | ३१, ९०१ | रात्रौ वापि | ५८६ | यद्वै किं च | ६ |
| व्याहृत्या सह | ३१९ | वामपार्श्वे गृहद्वारे | ५८७ | विष्णुनात्तमश्रंति | ४४० |
| श्रुतिषु प्रबला | ३४९ | आद्रमेकोत्तरं | ५९८ | वरिहा वा | २२ |
| समावृत्तो ब्रह्मचारी | ३४ | षष्ठाब्दे द्वादशाब्दे | ५९३ | स वा एष | ३७० |
| स्नानवस्त्रेण यो विप्रः | २५१ | — ५५७, ६१८, ७२६ | | श्रुतिरत्नम् | |
| स्मार्तोऽग्निर्विविधो | ३५४ | श्रीपातिः | | आपोशनमरुत्वा | ४२३ |
| स्वर्धुन्या तु समानी | २७२ | आज्ञया नरपतेः | ५९० | श्रुत्यन्तरम् | |
| स्वाहांताः प्रणवाद्याश्च | ४२२ | | | आत्मानं चेत् | १९५ |
| हुतशेषेण पृथक् | ३९५ | | | पूर्वाहो वै | ७०७ |
| हुत्वाभौ परिशिष्टे | ८०३ | | | | |
| हेमन्ताशिशिरयोः | ७४४ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|----------|------------------------|---------|------------------------|---------|
| श्लोकगौतमः | | षट्त्रिंशन्मतम् | | संग्रहः | |
| अन्तर्दशाहे दर्शः | ६१४ | सर्वेषामेव वर्णानां | ४५० | अर्कशुक्ल | ३७७ |
| अपुत्रा तु यदा | ७१५ | — | ७८५ | अल्पं जपेत् | ३८ |
| आरभ्य कुतपे | ७०८ | षडशीतिः | | अष्टशीतिसहस्राणि | ८ |
| कन्यागते सवितरि | ७४५ | अन्तर्दशाहे दाहे | ६२९ | असंस्कारे कुलीनस्य | ६३० |
| द्वौ मासावेक | ७२३, ७२५ | एवं पित्रोर्भगिन्यौ | ५२६ | अस्थिसंचयनं | ६०७ |
| पूर्ववत्पृथगै | ७१९ | ज्ञानेर्मृतौ यदा | ५२३ | अस्थिसंचयनात्पूर्वं | ६११ |
| पूर्वाह्ने चेत् | ७४० | त्रिदिनं त्रिषु | ४९६ | आ चौलात्सद्य | ५१५ |
| श्राद्धीयेऽहनि | ६८७ | देशकालादिभेदे | ५२३ | आत्माधर्मपि | ३५४ |
| षट्त्रिंशन्मतम् | | द्वितीये प्रथमे | ५०९ | आद्योराश्रमिणो | ५८५ |
| अपेयं हि सदा | २७० | नाभिरुतनतः | ५०६ | अशौचान्तः क्रीकसादेः | ६२८ |
| अपेयं हि सदा तोयं | २३७ | पूर्वाशौचेन | ५३३ | आतुराणां संन्यासे | १७४ |
| आगतो ज्येष्ठपुत्रस्तु | ६२० | पूर्वर्ण चापरेणापि | ५३२ | आदित्यमंबिकां | ३८४ |
| आपः स्वभावतो | २५८ | यत्र तूद्धहिता | ५१७ | आन्तं शावेङ्ग | ५०० |
| आमश्राद्धं यदा | ८२२ | यावत्सूतक | ५०० | आपोशनमरुत्वा | ४२१ |
| आमश्राद्धे भवेत् | ९१५ | शावादल्पा समा | ५३१ | आर्तवाभिष्कृता नारी | २७८ |
| उदिते विमले | ३८२ | सूतकात्प्राक् | ४८२ | आशौचात्ते कृतस्नानः | ५४८ |
| उभाभ्यामपरि- | ४८० | षड्धर्मीयम् | | आसनेष्वासनं | ८०१ |
| ऐन्दवेन मृगा | ९२४ | गर्भिणीष्वसवर्णासु | ५९२ | उत्तमं द्वादशाहेषु | १०३ |
| गोब्राह्मणहतानां | ४८९ | दर्शो यत्रापराह्णं | ७४० | उद्भूत्य बन्धि | ३६५ |
| तस्मिन्दिने श्राद्धमेकं | ६२० | सायंतन्यपरत्र | ७१४ | एककाले मृतौ | ६३७ |
| ताम्बूले चैव सोमे | २३९ | षड्विंशम् | | एकगर्भप्रसूतौ | १०० |
| तृतीयां मातृतः | १३० | ब्राह्मणीं वार्धकीं | ८८८ | एकोद्विष्टस्य दिवसे | ६५३ |
| दशरुत्वः पिबेदापो | ४४९ | संग्रहः | | कन्यकाजनने | ४९८ |
| देवयात्राविवाहेषु | २८० | अकृते प्रेतकार्ये तु | ६९१ | करे कर्पटके चैव | ४२० |
| पापमार्गमृतौ नृणां | ४९० | अग्निवेदास्त्रयः | ५९९ | कर्तुः सगोत्रिणः | ७२२ |
| प्रेतकार्याणि सर्वाणि | ६१५ | अग्निहोत्रपरिभ्रष्टः | २१ | कार्तिकाश्वयुजौ | १४८ |
| भिक्षामात्रे गृहीते | ९२४ | अघान्तं स्पशमिव | ५०१ | कूपस्नानं तु | १० |
| भुंजानेषु तु | ४८४ | अजस्वरकरभा | ४६२ | रुच्छूदेवोत्सव | ४८२ |
| मातुः सपिण्डीकरणं | ६७८ | अये भोक्तुर्धिया | ४४८ | रुते नामादि | ५११ |
| मासिकाब्दे तु | ६५४ | अस्याशौचं दिनं | ५३५ | कर्तुः सगोत्रिण | ६९० |
| यद्यप्यजात- | ५०९ | अधिमामे हरेः | ६३४ | केचित्तु पत्न्यः | २४ |
| यस्य त्वेकगृहे | ७७० | अधिसंपर्कतोऽशौचं | ५४० | सननं दहनं | ५८० |
| विवाहोत्सव- | ४८४ | अन्तर्दशाहदाहे तु | ५३७ | सत्त्वाटकश्च दुर्बालः | ७७३ |
| शावाशौचे समुत्पन्ने | ५३० | अन्तर्दशाहे दर्शः | ६१४ | गयां गंगं कुरुक्षेत्रं | २५८ |
| षण्डं तु ब्राह्मणं | ८७४ | अन्तः शवोऽष्टाचिः | ५४१ | गृहीत्वाऽपोशनं | ४२२ |
| संनिरुष्टमधी- | ७७० | अन्नब्रह्मात्मकं | ८०५ | गृह्योकाविधिना हुत्वा | ३६४ |
| सपिण्डीकरणात् | ६९३ | अन्वक्षं शृंगि- | ४८८ | गोव्याश्च स्पर्शमात्रे | २६७ |
| | | अमृतापिधानम् | ४५२ | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|---------|------------------------|----------|-----------------------|---------------|
| संग्रहः | | संग्रहः | | संग्रहः | |
| गोविप्रखीरुते | ४८७ | पितृणां तत्र सर्वेषां | ८११ | वृद्धावादी क्षये | ४०७ |
| ग्रहर्क्षयुक्तो | ३५७ | पित्रान्यनन्तरा- | ५३३, ६३५ | वेत्रचर्मकृतं | ४३० |
| ग्रामश्मशानयोः | ५८२ | पित्रा सहैव मातुश्च | ६३८ | शय्याया वेत्रासने | ४२६ |
| चण्डालान्नं द्विजो | ११८ | पुण्यत्वात्पुत्र | ८० | शावे च सूतके | ४७९ |
| चतुर्थे संचयः | ६०७ | पित्रोर्भ्रातृभवेत् | ५३६ | शिलाविनाशे सति | ६०३ |
| चतुर्थेऽहनि | ६०७ | पुत्र्याः सापत्नकौ | ५२८ | शिलान्तरे स्थापिते | ६०३ |
| चौलात्परं भवेत् | ५०७ | पूर्वमौपासनारंभ | १४९ | शिष्टाहमेव सर्वेषां | ५३४ |
| जनने क्षेत्रजादीनां | ५२१ | प्रत्यब्दं प्रतिमासं | ३८१ | शूद्राह्नानि | ३७४ |
| जाते च सूतके | ४९६ | प्रथमेऽहनि चण्डाली | २७८ | श्राद्धपंक्तौ तु | ८११ |
| ज्येष्ठा विवाहवन्हौ | ५७२ | प्राङ्नामकरणात् | ५०८ | श्राद्धाहे जन्मदिवसे | २८४ |
| तथा नैव क्रिया | ५४० | बन्धुष्वहहयहं | ५१७ | श्राद्धोत्सवादी | ४८४ |
| निलपिष्टं गृजनं | ४३५ | भक्ष्यजातं तथा | ४८० | श्रुतिस्मृतिपुराणेषु | ७ |
| तुलसी श्राद्धकाले | ७८९ | भर्तृर्यद्यदयं | ५२८ | श्रौतस्मार्तक्रियाः | २९३ |
| तेषामभावे तु | ५६४ | भिन्नपित्रोः जार- | ५२८ | श्वश्रूस्वशुर | ५२६, ५२९ |
| त्यजेदनुपनीतान् | ४४३ | भिन्नोदररुते | ६२३ | श्वश्रूस्वशुरतत्पुत्र | ४८५ |
| व्यहं मासत्रये | ४९६ | भ्रातरस्त्वनुजाः | ५८६ | षंडपाषंडपतित- | ४८९ |
| दधिक्षीरं घृतं | ४८० | भ्राता वा भ्रातृपुत्रो | ५८६ | षण्मासादूर्ध्वम् | ६४४ |
| दशरात्रं सदा | ५३६ | मंत्रवत्संस्कृतस्थापि | ६२६ | संकरपं तु यदा | ७३८ |
| दशाहं द्वादशाहं | ४९५ | मातापित्रोर्मृताब्दे | ५९३ | संपातात्पितु | ४९२ |
| दशाहमध्ये संक्रान्तौ | ६१५ | मातुः श्राद्धे | ७२० | सपिण्डा ज्ञातयः | ५९८ |
| दारकर्मणि मृतौ च | ५८८ | मातृष्वसृमुता | ५२७ | सब्रह्मचारिणि | ५२९ |
| देशान्तरगते | १५३ | मासेषु कन्या- | ५९५ | सभूमिजारुण | २५७ |
| द्वादश्यां पार्वणेनैव | ७५० | मृतप्रियायाश्च | ६८२ | साधु वाऽसाधु | ३९० |
| द्वौ हस्तौ युग्मतः | ३२० | मृतस्य तु यदा | ५०९ | सायं प्राप्तायातिथये | ४१३ |
| न देयं न प्रतिग्राह्यं | ४८० | मृते च सूतके | २७७ | सूतकान्तस्तु | ५०४ |
| न विशेद्धेवतागारं | ५४७ | यतीन्द्रानाथनिर्हारे | ५४६ | सूतके तत्पुनः | ५३१ |
| नाभेरधस्तात् | २१६ | यदि संक्रमदर्शो | ६१३ | सौरमासे तिथिद्वैधे | ७०४ |
| निमित्तं पिंडदानादेः | ४७७ | यदि स्यालौकिके | ३९६ | स्त्रिया अनाहितामेः | ६०९ |
| निर्माल्यं च निवेद्यं | ४४० | यमयोजार्जयोः | १४६ | स्नातस्तूपयमात् | १२३ |
| निशा व्यतीयात् | ३५८ | यः प्रमीतमलंकुर्यात् | ५४४ | स्नात्वा दूराज्जले | २४९ |
| पक्वतैलं गन्धतैलं | २८५ | या जुषाः सामगाः | ४०७ | स्नानं कृत्वाद्भ्रवहं | २५१ |
| पःयुर्मृताहान्य- | ५३२ | यौगादिकं मासिकं | ७२९ | स्पर्शं तु धार्यमाणं | ३६५ |
| पराश्रिताया भार्याया | ५२१ | रात्रौ प्रहरपर्यन्तं | १४ | स्वकाले तानि | ६५२ |
| परोक्षे पक्षिणी नो | ५२४ | राष्ट्रोमे नृपाक्षिमे | ३१४ | स्वाशौचकालतः | ५३३ |
| पातस्यान्ते पूर्वभागे | ७४४ | वर्जयेत्तिलकं | ३०८ | हैयग्वानं | ४४६ |
| पितुर्दीक्षान्तरे | ५८८ | वर्ज्यं पौष्णमथांगना | ७४८ | हस्तर्क्षे जुदये | ३३ |
| पितुर्मृताहे पितरो | ७२० | विदेशगो वाऽपि | ७१५ | — | २६०, ६३८, ७३२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------------|----------|-------------------------|----------|----------------------------|----------|
| संग्रहकारः | | संग्रहान्तरम् | | संवर्तः | |
| अमीन्धनादि | ८०२ | प्राजापत्यं तीर्थरुच्छं | ५६४ | जाते पुत्रे पितुः | ७९ |
| अन्याभावे पिता | ५६६ | मातामसौ पिता | ५२७ | जानुभ्यानुपरिणतु | २२९ |
| अर्वाक् त्रिपक्षात् | ६३५ | संवर्तः | | ततोऽधीयीत वेदं | ११३ |
| आचातो विधिवत् | ३१४ | अरुत्वा पादशौचं तु | २२३ | तिथिपूर्वोत्सवाः | ४१२ |
| एकोदराणां पुंसां | १४५ | अग्निहोत्री तपस्वी | ९१७ | दशवर्षा भवेत्कन्या | १३६ |
| औपासनाग्नौ | ५७२ | अजा गावो महिष्यश्च | ४९३ | दिवा स्वपिति चेत् | ११५ |
| ग्राह्या वर्तनकालिकी | ७०८ | अनाचान्तः पिचेत् | ९२२ | देवागारे द्विजानां | ३८८ |
| चन्द्रसूर्योपरागे | ७१६ | अपो निशि न | २७१ | पंचयज्ञविधानं | ४०६, ४७९ |
| चैत्रे मास्यसिते | ८३७ | अयने विषुवे | ४७ | पाकयज्ञं तथा | ५४१ |
| तिथ्यग्नीनतिथि | ७६२ | अर्घ्यप्रदानतः | ३१४ | पितामहो यस्य | ६३८ |
| त्रिरात्रं त्रिषु | ५३५ | अष्टौ मिक्षाः | २०१ | पितृदारान् समारुह्य | ८८७ |
| दशाहं दर्शनं | ५०१ | आचम्यैव तु भुञ्जीत | ४१८ | पुलकसीगमनं | ८८९ |
| दशाहमध्ये त्वथ | ६१६ | आशौचे निर्गते | ५४८, ६४५ | पूर्वकर्ता दशाह | ६३५ |
| नष्टे श्रावानले | ६१० | उत्तरीयं पीडयेद्ब्रह्मं | २५० | पूर्वाह्णे वाऽपराह्णे | ५१४, ६०२ |
| नित्यं सदा | ८३६ | उत्पात्तिप्रलयौ | ४९ | प्रणवाद्यां तु | ३३९ |
| पुत्रः कुर्यात्पितुः श्राद्धं | ५६३ | उदक्यामपि चण्डालं | ४२८ | प्रणवेन तु | ३२३ |
| भुक्तां समुद्देहत् | १४९ | उपासिता न चेत् | ३१४ | प्राणायामैस्त्रिभिः | ३२३ |
| भुजेर्निषेधकाले | ७१७ | उभाभ्यामपि | २३० | प्रातःसन्ध्यां सनक्षत्रां | ३१० |
| श्राद्धोत्सवादौ | ४८४ | उषित्वैवं वने | १७१ | प्राप्ते तु द्वादशे वर्षे | १३५ |
| श्रुतिस्मृतिपुराणेषु | ७ | एकाकी चिन्तयेत् | १८९ | ब्रह्मचारी तु | १२२ |
| श्रौतस्मार्तक्रियाः | २९३ | रेहिकामुष्मिकं | ३३५ | ब्रह्मचारी तु यः | ८९२ |
| श्वश्रूश्चशुर | ५२६, ५२९ | उत्तरे दिवसे | ७०३ | ब्राह्मणो ब्राह्मणीं गत्वा | ८८७ |
| श्वश्रूश्चशुरतपुत्र | ४८५ | औषधं स्नेहमाहारं | ८६३ | ब्राह्मण्याः शूद्रसंपर्कं | ८९४ |
| मास्येकस्मिन् | ७०४ | कटिसूत्रं विना | ९५ | मंत्रवत्प्राशनं | ७९ |
| मृतानां तु सपिण्डानां | ५३८, ६२९ | कथञ्चित् ब्राह्मणीं | ८९३ | महापातकसंयोगी | २८ |
| यज्वा मृतस्त्राक | ५७३ | कन्याविक्रयिणी | १४४ | माता शुच्येत् | ५०१ |
| यज्वायज्व पुनर्दाहे | ५३७ | कपालैर्भिन्न | ३५७ | मानसं वाचिकं | ३२५ |
| यज्वायज्वपुनः | ६२९ | रुते मूत्रे पुरीषे | २६८, ४२९ | यत्र ग्रामे तु | ११० |
| योज्यः पित्रादि | ८०३ | केशैः पिपिलिका | ४३२ | यस्तु जापी सदा | ५९ |
| रजोमध्ये तु भार्याया | ५६४ | क्रियाहीनस्य मूर्खस्य | ४८८ | यावन्न लज्जते कन्या | १३५ |
| स त्री गृहीतनियमो | ४८१ | गच्छेदेवं वनं | १६९ | योगाभ्यासपरो | १९९ |
| — ४९९, ५१४, ५३५, ५३७, | | गृहस्थो ब्रह्मचारी | ३३८ | रजस्वलां च | ८९० |
| ५४०, | | चण्डालं पतितं | २६५ | लोकवार्तादिकं | ३४० |
| संग्रहान्तरम् | | चण्डालं पुलकसं | ८९७ | वापीकूपतटाकानां | ४७४ |
| नित्याद्धं चतुर्थीव | ४५६ | चतुर्विधा भिक्षवस्तु | १८३ | विप्रो दशाहम् | ४७८ |
| पुंसि जाते | ४९८ | जलं जलस्थो नाचामेत् | २२९ | वेदं चैवाभ्यसेत् | २९ |
| | | जातस्यापि विधिः | ४९५ | शुना पुष्पवती | २७९ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|----------|------------------------------|---------|-----------------------|---------|
| संवत्तः | | सत्यव्रतः | | सायणीयम् | |
| शूद्राणां भाजने | ४२० | मन्त्रवर्मन्त्रहीनं च | २८५ | नान्दश्राद्धं पिता | ७५३ |
| शूद्रा शूद्रैकहस्तैश्च | २२४ | राशिद्वयं यत्र | ७२४ | पितुः प्रत्याब्धिकं | ७१७ |
| शूद्री तु ब्राह्मणो | ८९१ | वर्षे वर्षे तु | ७३० | पुंसां दीपप्रशमनात् | ४६६ |
| शूद्रोच्छिष्टं जलं | ४३२ | सिलोच्छिन्नां | २० | श्राद्धं सपिण्डनं | ६६५ |
| श्रोत्रियाय कुलीनाय | ४२ | स्त्री यदाऽरुत | ७९ | श्राद्धद्वये च | ६९५ |
| श्वकाकोच्छिष्ट | ४३२ | सत्याषाढसूत्रम् | | श्राद्धभोजनकाले | ८०७ |
| श्ववराहसरा | २६७ | १४११ | ९३१ | षष्ठ्यष्टमीं पंचदर्शी | ७५ |
| षण्मासं पञ्चमासं वा | ३५०, ९३५ | सनत्कुमारः | | सपिण्डीकरणं कुर्वात् | ६८४ |
| संकटं विषमे चैव | २६६ | एकादश्यां मुनिश्रेष्ठ | ४४९ | सपिण्डीकरणेऽवश्यं | ६७६ |
| संन्यस्य दुर्मतिः | २०८, ९१९ | निष्कृतिर्मद्यप- | ८३८ | सारसंग्रहः | |
| सचैलं तु पितुः | ४९९ | भानुवारेण संयुक्ता | ८४५ | चतुर्दशी याऽश्वयुजस्य | २८५ |
| समित्पुण्यकुशादीनि | ३७४ | सनत्कुमारसंहिता | | सारसमुच्चयः | |
| सहस्रपरमां | ३३७ | एकादशी सदोषोण्या | ८३७ | एकतः क्रतवः | ४३ |
| सीरस्नातप्रपातोयं | ४७४ | सप्तर्षिसंवादः | | गिरिकार्णिकया | ३८८ |
| सूतके तु यदा | ५०१ | धर्मार्थः संचयो | ५५ | बिंबं च श्वेतवृंताकं | ४३५ |
| सौरमानविधाने | ७०५ | सरणी | | बीजानां वापनं | ४६६ |
| स्नात्वा पीत्वा | २३५ | — | ६५० | यो दर्भपाणिस्तोयेन | २३२ |
| स्नानवस्त्रेण हस्तेन | २५१ | सांख्यायनः | | सार्वभौमः | |
| स्वभावाद्यत्र | ९ | गृहद्वारे वामपार्श्वे | ६०० | एकोद्देश्याव | १२५ |
| हृद्धानामिरेफेरनाभिः | २२६ | दिवा यदाहृतं | ७९ | सार्वभौमीयम् | |
| होमे पर्युक्षणे | ३६४ | यस्मिन्देशे प्राणा | ६०४ | ऋग्यजुः सामाथ | ३४ |
| — | ४३२ | सप्तमे मासि | ७८ | पाणिग्रहणात् | २७ |
| संस्कारमञ्जरी | | सांख्यायनगृह्यम् | | — | १२८ |
| अथ पुनःसंस्कारं | ११८ | त्रयायुषमिति | ३०३ | सुदर्शनाचार्यः | |
| यस्मिन्देशे य आचारः | ५ | येयकवस्त्रो यज्ञोपवीतं | २१२ | वेदार्थनिर्णयविधौ | २९२ |
| सत्यतपाः | | सामसूत्रप्रयोगवृत्तिः | | सुधानिधिः | |
| अहतं यंत्रनिर्मुक्तम् | २५२ | मातुर्मृताहे संप्राप्ते | ७२१ | यस्मिन्मासे मृतिः | ६९९ |
| वर्षे वर्षे तु | ७३१ | सायणीयम् | | सुधीलोचनः | |
| सत्यव्रतः | | इति वै देवलः | ६७६ | अनाहिताग्नेर्दाहस्य | ६२७ |
| आदव्मंबुघटं | ७२९ | उत्तरायणगे सूर्ये | ८४ | सुधीविलोचनः | |
| एकादशेऽह्नि | ६४८ | कार्तिके पौषमासे | ८२ | — | ७२९ |
| रुतोपवीती देवेभ्यो | ३७८ | गर्भाधानर्क्षे | ७७ | सुन्दरराजीयम् | |
| जर्त्तिलास्तु तिलाः | ७८८ | गुरोः कवेर्लोहितस्य | ८८ | प्राङ्मुखौ विष्वेदेवा | ६५० |
| पिष्टपकारानालेन | २८५ | तुलसीशतपत्रं | ७८९ | तस्मात्तमः संजायते | १७ |
| पुत्रजन्मन्या | ८० | | | | |
| पितृभ्यः प्रत्यहं | ३७८ | | | | |
| बलं रूपो यशो | २४५ | | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|---------|----------------------------|----------|--------------------------|----------|
| सुबालोपनिषद् | | सुमन्तुः | | सूतसंहिता | |
| शांतो दान्त | १९५ | न जीवपितृकः | ७४२ | श्रेयान्वेदोदितो | २९७ |
| सुबोधः | | न ब्रह्मव्यापिनी | ७१३ | स्वमातुः सोदरायां | २९६ |
| स्वजातीजन्य | ६०५ | नान्यथोक्तिः | ३४१ | सूत्रकारः | |
| सुमतिः | | नामि व्याहारयेत् | ५५९ | त्रयाणां वर्णानां | १७६ |
| सार्धमासात् द्विजानां | ४९० | पाकामविधिकारः | ८२१ | ब्राह्मणभोजनार्थात् | ४०७ |
| सुमन्तुः | | पिता पितामहे | ६८० | समावप्रच्छिन्नाग्रौ | २३३ |
| अक्रोधनो रसान् | ८०९ | पितृपत्न्यः सर्वा | १२८ | सौरधर्मः | |
| अग्निविद्युत्पयः | ४९० | पितृष्वसृसुतां | १२७ | आदित्योदयवेला | ८३९ |
| अनुपेतोऽपि कुर्वीत | ५५९ | पित्रस्योत्पत्तिमात्रेण | ५६० | सौरपुराणम् | |
| अन्नं निधाप्य | ४२१ | प्रेतश्चेदाहिताग्निः | ६६८ | मूलं हि पितृ- | ७१३ |
| अपुत्रे संस्थिते | ६७० | ब्रह्मचर्यं ततो | ९८ | मस्मना छन्नसर्वांग | ३०५ |
| अपुत्रे संस्थिते कर्ता | ५६३ | ब्रह्मचर्यं तपो | ११५ | स्कन्दपुराणम् | |
| अप्सवम्रौ वा | ९२२ | ब्रह्महत्या सुरापानं | ८९७ | अथवा शिवरात्रिं च | ८५२ |
| अभ्यागतो ज्ञातपूर्वः | ४१२ | मातुरेव सूतकं | ५०० | आवर्त्तनात् | ७०७ |
| आकाशे निक्षिपेद्वारि | २४९ | मातुः पितश्च कुर्वीत | ५५६, ५५८ | तत्रैवोपवसेत् | ८५८ |
| आपत्काले तु | १७४ | यत्र शास्त्रगतिः | ६८०, ७०३ | दक्षिणाभिमुखो भूत्वा | ३८१ |
| उदिते दैवतं | ७१३ | यद्येकवस्त्रः स्याद्विप्रः | २१२ | दिनार्धसमये | ८२८ |
| एकपिण्डरुतानां | ७५० | येभ्य एव पिता | ६७२ | ये न कुर्वन्ति | ८३३ |
| एतान्यातुरस्य | ४३६ | राजान्नं तेज | ९०६ | लक्षकोटिसहस्रस्य | ३४३ |
| कन्याराशौ महाराज | ७४७ | रात्रौ स्नानं न कुर्वीत | २७६ | षष्ठयेकादश- | ८३१ |
| कर्तव्यं पार्वणं | ६६० | लघुनपलांडु | ४३६ | संमुखा नाम | ८२६ |
| कमशूद्रः स्मृतो विप्रो | ५५९ | वज्याश्चाभिषवा | ७८४ | — | ८२७ |
| काणाः कुब्जश्च | ७७५ | वर्षे वर्षे सुतः | ६६० | स्कान्दम् | |
| कुटीचके तु | ६६४ | वानप्रस्थस्य पक्कान्नं | ४७ | अज्ञानाज्जनकं | ८७३ |
| खण्डवस्त्रावृत | ३४१ | व्यसनासक्तचित्तो | २३ | अक्रमेण मृतानां | ६७१ |
| गर्भमासनुल्या | ४९२ | श्राद्धात्परतरं | ८२२ | अर्थतस्खलितानां | २९८ |
| चण्डालाद्यवेक्षित | ७८७ | सपिण्डीकरणात् | ६६१ | अयमेव परो | १९७ |
| चित्यारोहणकाले | ६४३ | समत्वमागत | ६६२, ७५० | अष्टमी नवमी | ८३१ |
| तस्माद्वचन | ६६० | स्वर्णस्तेयी द्वादश- | ८८३ | आत्मा पुत्रः पुरोधः | १४ |
| तिथिनिक्षत्रनियमे | ८२७ | हंसः शुचिपत् | २६१ | उद्यात् प्राक् | २४७, ८३९ |
| तिथौ यत्रोपवासः | ८२८ | सुश्रुतः | | उद्ये वाष्टमी | ८३५ |
| तिरस्कृतो यदा | ८६३ | ततः प्रभृति | १५९ | उपोषणं चतुर्दश्यां | ८५३ |
| त्रयाणामपि पिण्डानां | ६७१ | सद्यो गृहीत | १५९ | एकादशी भवेत्पूर्णा | ८४२ |
| दण्डग्रहणमात्रेण | ६६३ | सूतसंहिता | | एकादश्यां न | ८४५ |
| दूरस्थोऽपि हि | ५० | अनन्तशाखा | २९२ | कृष्णाष्टमी स्कन्दपृष्ठी | ८५३ |
| धर्मशास्त्रगति | ७ | ललाटे चैव | ३०५ | तिथीनामेव | ८२८ |
| | | शैवागमोका | २९६ | | |

| क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् | क्रषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|---------|------------------------------|--------------|--------------------------|---------|
| स्कान्दम् | | स्मृतिचन्द्रिका | | स्मृतिभास्करः | |
| त्रिमुहूर्तः प्रदोषः | ३९ | पृ. ९९ पं. २१ | २४० | शिष्टस्याभाव | ३६१ |
| त्रयोदशी यदा | ८५२ | पृ. १०६ पं. २५ | २४४ | सप्तभिर्दर्मपुञ्जिलैः | २३० |
| द्वादशी च प्रकर्तव्या | ८५० | पृ. १११ पं. १४ | २४७ | सर्वे चापि | ११० |
| नागो द्वादश | ८३९ | पृ. १२५ पं. २६ | २८३ | स्मृतिरत्नम् | |
| नामगोत्रे समुच्चार्य | १४९ | पृ. १२९ | ३८५ | अंगुल्यधैर्न | ३६२ |
| परमापदमापन्नो | ८३९ | अत्यकालेऽपि यस्यास्ये | ५४९ | अंगुष्ठं घर्षयेद्दुर्द्ध | २३३ |
| परात्परतरं | ८५२ | अवीत्य विधिवत् | १७३ | अंगुष्ठमूलेनाचामेत् | २२५ |
| पितृणां गति- | ८४५ | आद्यन्तयोस्तु | २१७ | अकृत्वा तर्पणं | ३८० |
| पुत्रं वा विनयोपेतं | ८४८ | रुष्णसारैः | ९ | अक्षिरोगी ह्यपस्मारी | ४५७ |
| पुत्रादिर्जनकं | ९०० | तद्वस्तुशौचामिप्रायं | २१८ | अत्र मघा त्रयोदश्यां | ७५० |
| पुराणैरेव विस्पष्टो | २९२ | द्वादशोऽहनि कर्तव्यं | ८२ | अनुयाने मृतौ | ६४२ |
| प्रतिगृह्य तुलां | ९२५ | नावस्करेषु | १५९ | अन्तरङ्गक्रमेणैषा | ६३९ |
| प्रतिगृह्य तुलादीनि | ९३० | मनःप्रसादात् | १५ | अन्तर्जलगता ग्राह्या | २१६ |
| प्रथमेऽहनि संपूर्णा | ८४१ | ययैककर्तृकं | ६३० | अन्येन यस्य | ६१७ |
| प्रदोषव्यापिनी | ८२९ | सर्पिडादिजनने | ४७७ | अहोऽष्टधा | ३७५ |
| भस्मना वै त्रिसंध्यं | ३०३ | — | ८६, ११२, ११९ | अपसव्ये ततः | ५१७ |
| भस्मरुद्राक्षधारी | ५४९ | १३२, ३६७, ४८२, ४९३, ६८७ | | अप्रजायामतीतायां | ५६४ |
| भूतविद्धा सिनीवाली | ८५३ | स्मृतिचिन्तामणिः | | अब्रह्मचारिदारायैः | १३० |
| मरुदेशे निरुदके | ५६ | एक एव तु | ४१९ | अभर्तुर्योषितः | ६८२ |
| माघरुष्णचतुर्दश्यां | ८५३ | मासिमास्युद्धृत | २३३ | अमायां च | ६६६ |
| माघस्य रुष्णपक्षे | ८५१ | मृताहे मासिकं | ६९९ | अयुतं यो | ३९३ |
| यदा भवेत् | ८४७ | स्मृतिदीपिका | | अवलिप्तस्य | ४४३ |
| यदीच्छेद्विपुलान् | ८३७ | यस्यां रात्र्यां व्यतीतायाम् | २१० | अस्थिसंचयनं | ६४३ |
| यां तिथिं समनु- | ८२७ | अनुद्धृतैरुद्धृतैर्वा | २८५ | आगम्य राक्षसीमाशां | २१२ |
| शिवं च पूजयित्वा | ८५२ | उद्धृतोदकमादाय | २१२ | आचार्यं चैव | ११२ |
| शुद्धा यदा समा | ८४२ | चित्रभानुमनद्वाहं | ३६७ | आपोशनं तु | ४२२ |
| संपूर्णैकादशी यत्र | ८४१ | स्मृतिभास्करः | | आश्वयुक् रुष्णपक्षे | २८४ |
| स्नातकं ऋत्विजं | ८७३ | आमं शुद्धस्य | ४४६ | इति बोधायनः प्राह | ६७६ |
| स्मृतिः | | चतुरंगुलमयं च | २३३ | उत्क्रान्तिवैतरण्यो | ५५२ |
| धनुर्मीनयुग्म | २७५ | तदित्येतत्परं | ३२७ | उद्धृतोदकमादाय | २१५ |
| स्मृतिकामधेनुः | | तावदन्तं विना | २३ | उपावरोहणं कृत्वा | ३६३ |
| संसर्गदोषो नैव | ८९७ | दक्षिणं तु करं | २२१ | ऋत्विक्पितृव्य- | ११० |
| स्मृतिचन्द्रिका | | निर्धनो धनसाध्येषु | २२ | एकभर्तृकपत्नीनाम् | ५६४ |
| पृ. ३८ पं. २ | १११ | रात्रेस्तु पश्चिमे यामे | २८९ | एकस्मिन्शोभने | १४५ |
| पृ. ६७ पं. ११ | १२४ | वनस्पतिगते | ३०३ | एकादशातीत | ६६५ |
| पृ. ९२ पं. १७-२५ | २१७ | वाजपेये कर्तौ | २२ | एकादशे द्वादशेऽहि | ६६५ |
| पृ. ९५ | २२८ | विवाहहोमे प्रक्रान्ते | १३७ | एकादशेऽहि | ६५३ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|---------|-------------------------------|---------|------------------------|---------|
| स्मृतिरत्नम् | | स्मृतिरत्नम् | | स्मृतिरत्नम् | |
| एकादशोऽह्नि संप्राप्ते | ६४५ | धौतवस्त्रैः | १२३ | पंढांधवाधिर | १०० |
| एकामुत्क्रम्य | १५१ | नन्दायां भार्गवैऽर्के च | ६१० | षष्ठी च द्वादशी | ४५६ |
| एकाहमुपवासः | ६०७ | न पादौ धावयेत् | ४५९ | संपर्कमशनं पानं | ५४० |
| एकाहात् क्षत्रिये | ५४२ | न सोपानत्पादुको | २१४ | सकर्मं तु | २१९ |
| एकेऽभ्युदितहोमाः | ३५९ | नित्यं नैमित्तिकं | ४७९ | सकृन्म्रियन्ते बहवः | ६३८ |
| एकोद्विष्टं तु | ६५९ | पिता माता तथा | १०४ | सत्यामाचमना | २३६ |
| औरसः पुत्रिकापुत्रः | १०१ | प्रणवव्याहृतीनां | ४५६ | सन्ध्ययोनैव | १५९ |
| कदलीगर्भपत्रे | ४१९ | प्राणाहुत्यूर्ध्वं | ४२० | सपिण्डीकरणे त्रीणि | ६६६ |
| कन्यां लक्षणसंपन्नां | ४५ | प्रेतश्चाद्रं सपिण्डयन्तं | ५६६ | सप्तमे चाष्टमे | ८७ |
| काथै रूपाैस्तथा | ३६१ | प्रेतेभ्यस्तु स्वर्णैऽभ्यः | ६०१ | सर्वैः स्वजन्मदिवसे | ८१ |
| किञ्चिद्वेयमिति | ५८३ | प्रोक्षितं भक्षयेत् | ४५१ | सुवर्णां कनका | ३६३ |
| कुंकमागुरु | ३८७ | चालानामदन्त | ५१० | सूतके होमवत्कर्म | ४७९ |
| कुशं पवित्रं ताम्रं | २३२ | ब्राह्मणं त्वनधीयान | ४०९ | सूर्याग्निरुद्रदेवानां | ३२१ |
| कोविदारं करंजं च | ३६० | ब्राह्मणस्य सदाश्रीयात् | ४४२ | स्नात्वा शुचिः | २०० |
| कौपीनयुगुलं | १८५ | ब्राह्मणानां नृपाणां | ३०८ | सुवपाणिकमना- | ११० |
| गायत्री मूल्यमादाय | ३३६ | ब्राह्मे स्नानेन सूर्यार्घ्ये | २२९ | हृतं वित्तमदानेन | ३५६ |
| गोमूत्रं गोमयं | ३६७ | भूदेवस्तप्तमुद्रा | २९९ | हस्तं प्रक्षालयेत् | ४२२ |
| घृतात्केन घृतात् | ४३७ | भोक्ष्यमाणो द्विराचामेत् | २३७ | हस्तयोरुभयोर्द्वौ | २३५ |
| चंडालं पतितं | ४२८ | मकारं मन | ३३६ | हुताग्निर्वदितगुरुः | ४५५ |
| चतुर्दशीमृतः | ६१३ | मनुर्वृहस्पतिः | ८ | — १६२, १७६, २३४, | |
| चतुर्भुजं महादेवं | २९० | मन्त्रैर्वैष्णव | ३८४ | ३४३, ४१८, ४१९, ४२०, | |
| छन्दो गायत्री | ३२८ | महाभारतमाख्यानम् | २१० | ४५२, ४५३, ४०४, ४९४, | |
| छायामन्त्यश्वपाकादेः | २६६ | मृतस्य यावदस्थानि | ५४३ | ४९७, ४९९, ५०५, ५०८, | |
| जनौ सपिण्डाः | ५०१ | यवानां व्रीहिशालानां | ४०४ | ५१९, ५३१, ५३५, ५६१, | |
| जलजानां च सर्वेषां | ३७४ | यस्य संवत्सरात् | ६५८ | ५८५, ५९८, ६१४, ६३९ | |
| जानुभ्यामूर्ध्वमाचम्य | २२८ | याजानाभ्यापने | ३० | स्मृतिरत्नसारम् | |
| ततस्तु नाम | ८१ | यावन्मासत्रयं | ४९१ | अज्ञातकुलगोत्र- | ४१३ |
| तैलयन्त्रेक्षु | ४३१ | लशुनं गृजरं चैव | ४३३ | स्मृतिरत्नावलिः | |
| त्रेधा कृत्वा यामिनीं | १५० | लोकाग्रावितरौ | ५७२ | अच्छिन्नपादं | ३३९ |
| दंतशोधनकाष्ठं | ४५३ | लोहितो यस्तु | ६४६ | गृहमेधिनि यत्प्रोक्तं | २०९ |
| दक्षिणे रेचकं | ३२४ | वत्सरान्ते तु | ६५१ | देवतार्चनमंत्राणां | ३७२ |
| दर्शः संक्रमणं | ६१२ | वामहस्ते स्थिते दर्भे | २३२ | प्राणाग्निहोत्रात् | ४२३ |
| दर्शो दशाहमध्ये | ६१४ | वासस्तिरोहितं | ४६४ | भोक्तुकामे यदा | ४१८ |
| दशाहमभ्यन्तरे | ६१४ | शयनस्थो न मुञ्जीत | ४२८ | मध्यमानामिकां | ३०३ |
| दिवा तिथौ तु | ४१३ | शरावे भिन्नपात्रे | ३५७ | वर्षैर्वयोऽधिका | १०९ |
| दिवैव तर्पणं | ६०७ | शुद्ध्यैव तु | ३३८ | संपुटैकषडोकारा | ३३९ |
| देशान्तरगतो विप्रः | २१६ | शुभमिच्छन्नरः | ३९० | सप्तवाताहतं | २५२ |
| धर्मोऽयं सर्व | १६२ | श्वचण्डालादिभिः | ६०३ | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|---------|------------------------|----------|-------------------------|---------|
| सुरया लिप्तदेहस्य | २८४ | सूर्यस्याग्नेर्गुरो | ३२१ | अन्नेन मांसं | ७८२ |
| स्नात्वा यज्ञोपवीती | ३६९ | स्वाध्याये भोजने | २९३ | अन्यदीयेन वत्सेन | ५७४ |
| स्मृतिं विना | ६ | स्मृतिसारसमुच्चयः | | अन्यमासे प्रमीतानां | ७२९ |
| स्वकालादुत्तरो | १४ | अशक्तः समयाचारे | ३०३ | अन्वष्टकासु | ७१९ |
| — | २२ | उत्सन्नबान्धवं प्रेतं | ५६६ | अपराहे तु | ७०९ |
| — | ३४३ | गृहस्थो ब्रह्मचारी | ३३९ | अपसव्येन यस्त्वन्नं | ८०३ |
| स्मृतिसंग्रहः | | त्र्यायुषश्चैव | २९० | अपि वानूचानेभ्य | ७४५ |
| एकपाकेन वसतां | ४०५ | परेद्युरनुयाने | ६७८ | अपि वा मातरं | ८८९ |
| कौपीनाच्छन्नं | ९४ | पूर्वं निमन्त्र्य | ६७६ | अपुत्रस्य परे | ६७० |
| गायत्रीं मूल्यमादाय | ३१ | मुहूर्ते चतुर्थे | ३५८ | अपुत्रायाः सपत्नीजः | ५६४ |
| त्रिपुङ्गं भस्मना | २९५ | स्मृतिसारसुधानिधिः | | अपुत्रोऽनामिक | ७४८ |
| देवार्चनपरो | ५१ | अग्निभिर्वाभिना | ५८३ | अपूपभक्षणे भुक्तौ | २२० |
| निमज्ज्य देवर्षि | २५१ | स्मृत्यन्तरम् | | अपूर्णद्वादशाब्दानां | ६७१ |
| पुनर्दाहि दिनं | ६३५ | अङ्गानि यस्तु | ७३८ | अपेक्षितं द्विजो | ८०७ |
| ब्रह्मचारी तु | ९७ | अंगारेण भवेत् | ४७० | अब्दादुपरि संस्कार | ६३४ |
| स्मृतिसारम् | | अकालमरणे मुक्त्वा | ६३३ | अभिश्चवणहीनो | ८०७ |
| अप्रबुद्धे तु | ३९७ | अकाले यत्कृतं | १५ | अमन्त्रपूर्वं दग्धानां | ६२६ |
| आब्दिके समनुप्राप्ते | ३८२ | अरुत्वा पार्वणं | ८०३ | अमापातश्च | ७६२ |
| एकवेदस्य चैकं | ९१ | अरुत्वा प्रेतकायाणि | ६९७ | अमायां तु दिवा | ८५६ |
| एलालवंगकर्पूर | २२६ | अग्निना भस्मना | ४२७ | अमाया च मृतिर्यस्य | ६१३ |
| कराग्रे करपृष्ठे | २१७ | अग्निरित्यादिभिः | ३०२ | अमाश्राद्धं गयाश्राद्धं | ६९३ |
| कुर्याच्चत्वारि | १७७ | अग्न्यभावे घृताभावे | ५४२ | अमा सोमेन | ७४४ |
| कुशाः काशा यवा | २३४ | अच्युताद्यैः समाचामेत् | २२८ | अयोर्हृत्पं द्विजं | ८७३ |
| रुत्वावकुण्ठनं चात्र | २१२ | अज्ञातिं च नरं | ६१७ | अर्कद्विपर्वरात्रौ | ४४९ |
| क्षीरं लवणसम्भिश्चम् | ८८२ | अतिशुक्लोद्य | ७८५ | अर्धवेदं ब्राह्मणान् | ८०१ |
| क्षीरे तु लवणं | ४३८ | अतीते द्वे तु | ६०८ | अर्धाजलिमपः | ५८५ |
| ग्रन्थीकृतपवित्रेण | २३१ | अतीते पक्षिणीकाले | ५३५ | अवर्जयित्वा | ५९३ |
| च्छेदे विनाशे वा | ९० | अथानुगतवह्निः | ५७० | अष्टम्यां च चतुर्दश्यां | २४४ |
| पत्नी भ्राता च | ५६६ | अथोर्ध्वं रुष्णपक्षस्य | ६१२ | अष्टैतान्यव्रत | ८४५ |
| मध्यमानामिकां | ४२३ | अदत्तमन्नं | ८०८ | अष्टोत्तरशतैर्मांसा | ३४२ |
| मातुलस्य सुतां | १३० | अदत्तमन्नं विप्रस्तु | ८०५ | असंस्कृतप्रमीता | ८१३ |
| मौंजीयज्ञोप- | ३५ | अनभ्रेर्मरणात् | ५३९, ६०८ | असपिण्डो यदि | ६१८ |
| यज्ञोपवीतिना | ३८१ | अनाथमनुपेतं च | ५४२ | असामर्थ्याच्छरीरस्य | २९१ |
| रक्तमाल्यं न | ४६५ | अन्तर्दशाहे तत्कर्तुः | ६३५ | अस्थिसंचयनं | ६०८ |
| विप्रस्य दक्षिणे भागे | २२० | अन्तर्दशाहे दर्शः | ६१४, ६१६ | अस्थिसंचयनं चैकं | ६४३ |
| श्रावण्यां पौर्णमास्यां | ३२ | अन्नं निधाय | ८०२ | अस्थना पलाशवृत्तैर्वा | ५३७ |
| सर्वस्य प्रभवो | ४८ | अन्नस्य क्षुधितं | ५० | अहत्वाऽपि यथा | ८७२ |
| | | | | आग्नेयमैन्द्रं | ६५६ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|---------|------------------------|----------|--------------------------|----------|
| आत्मपुत्रपितृ | ४९८ | उभौ हस्तौ समौ | ७९६ | कन्याऽन्यस्मै प्रदातव्या | १३९ |
| आदित्येऽस्तामिते | ८५७ | ऊनद्विवत्सरात् | ६७१ | कन्यामनुपनीतं | ५६८ |
| आयश्चाद्रं निमित्तं | ६४९ | ऊर्ध्वं पंचसु | ४९६ | कपालोऽन्यः | ५६८ |
| आधाने यज्ञदीक्षायां | ५८९ | ऊह्यमानं शवं दृष्ट्वा | ५४६ | कपित्थफलवच्चाद्वे | ६०२ |
| आपोशने धार्यमाणे | ८०६ | एकचित्यां समारूढौ | ६९६, ७२२ | कर्णे जपेदीशवाक्यं | ५५२ |
| आद्रमम्बुघटं | ६९० | एकत्र निक्षिपेत् | ६०२ | कर्ता भोक्ता च | ७८० |
| आद्विकं प्रथमं | ६९६ | एकत्र मासद्वितयं | ७२६ | कर्तुंश्च पुत्रदाराणां | ७४८ |
| आद्विके समनु | ७३७ | एकदा क्रियमाणानां | ७५३ | कलाद्वयं त्रयं | ८४७ |
| आद्विके समनुप्राप्ते | ७१६ | एकपंकौ तु | ४२८ | कलार्धेनापि | ८३९ |
| आमलक्याः फलं | ४३८ | एकभक्तेन नक्तेन | ८४८ | कुर्याद्गामनवम्यां | ८३६ |
| आरम्भदर्श | ७३४ | एकमासि तिथि | ७०४ | कूपमाण्डं माहिषं | ७८५ |
| आरुह्य पत्नी | ६४२ | एकश्रेद्धाहणो | ७७८ | रुच्छादिकरणाशक्तौ | ५५० |
| आर्द्रवस्त्रो वहिः | ५५४ | एकस्मिन्द्वयोः | ६६२ | रुच्छ्रो देव्ययुतं | ५५० |
| आवाहनामौकरणं | ७३८ | एकादशाहे यदि | ६४८ | रुच्छ्रोऽयुतं तु | ९४३ |
| आवाहनासने | ७९३ | एकादशाहे षण्मासे | ६४५ | रुतचौडस्य विप्रस्य | ५१० |
| आवाहनेऽर्घ्ये | ५७९ | एकादशाहे संप्राप्ते | ६४८ | रुतचौलोऽनुपेतस्तु | ५६० |
| आवृत्तिरन्य | ७२८ | एकादशीं परित्यज्य | ८४६ | रुते श्राद्धे | ६२१ |
| आशौचं कर्ममध्ये | ४८३ | एकादशी तथा | ८२६ | रुते सपिण्डीकरणे | ५९४ |
| आशौचं द्वादशाहान्तं | ६९८ | एकादशी तु | ८४० | रुणपक्षे तृतीयायां | ४० |
| आशौचमध्ये | ६०२ | एकादशी तु संपूर्णा | ८४२ | रुणपक्षेऽप | ७६४ |
| आशौचान्तः कीकसादेः | ५३७ | एकादशी न लभ्येत | ८४३ | केशानाश्रित्य | ५९० |
| आशौचान्ते तु | ५९१ | एकादशी यदा | ८४०, ८४३ | गर्भादिप्राशानान्तानि | ६९२ |
| आशौचे तु | ४७८ | एकादशे भवेत् | ६५२ | गवामभावे निष्कं | ५५४ |
| आसनेषु सदर्थेषु | ७८८ | एकादशेऽहनि | ६४७ | गान्धारिका पटोलानि | ७८४ |
| आस्यतामिति | ७९५ | एकादशेऽन्हि | ६५०, ६५० | गुरुशुक्रारश- | ६१० |
| इन्दुक्षये यदा | ६१३ | एकोत्तरं यथाशक्ति | ५९८ | गृहस्थस्तु खवंतीषु | २५७ |
| इष्ट्यादि सर्वं काम्यं | ७३२ | एकोद्विष्टं यत्र यत्र | ६६१ | गोत्रस्थ त्वपरिज्ञाने | ६८२ |
| उत्थाय वामहस्तेन | २१५ | एकोद्विष्टेषु | ३८१ | गोत्रान्तरप्रविष्टास्तु | १०३, ५२१ |
| उत्सृजेद् वृषभं | ६४६ | एकोद्विष्टेषु सर्वेषु | ३८१ | ग्रस्यमाने रवौ | २७३ |
| उदक्या सूतिका | ७८६ | एतानि पतितानां | ९२० | ग्रहणे तु द्वितीयेऽन्हि | ७१७ |
| उदङ्मुखस्तु देवानां | ७९३ | औपासनाग्नि | ३६५ | ग्रामस्थे शवचण्डाले | ५४१ |
| उदयं याति चादित्ये | ६१३ | औपासनान्गौ | ६८४ | घृतकुम्भे निषादैनं | ६३३ |
| उदुत्यं चित्रं | ३२० | औरसे तु समुत्पन्ने | १४६ | चण्डालं पतितं | २६९ |
| उद्वाहंकुर आरब्धे | ४८४ | औरसो दत्तको वापि | ६६९ | चण्डालस्य चतुःषष्टि | २६६ |
| उपनेतुर्भजेत् | ५२१ | कण्ठदूर्ध्वं वपेदाद्ये | ५९१ | चण्डालादुदकात् | ४८८ |
| उपमूलान् समास्तृथी | ८१६ | कदली जातयः पंच | ७८२ | चतुरश्रं तीर्थपीठं | २६३ |
| उपविष्टेषु विष्टेषु | ८०९ | कनिष्ठयां मृतायां | ५७१ | चतुर्थमर्घ्यं | ३१४ |
| उपायनो हि | ९८ | कनिष्ठेन रुतं | ६२४ | चतुर्थे ग्रहे | ७११ |

| क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् | क्रषि: | पृष्ठम् |
|-----------------------------|----------|---------------------------|----------|-----------------------|---------|
| चतुर्थे स्यैरिणी | ८८८ | त्रयोविंशति | ५१३ | न पुत्रस्य पिता | ५६६ |
| चतुर्मुहूर्त्तं द्वादश्याम् | ८५० | त्रिवर्षादि दहेत् | ६०८ | नमो ब्रह्मण | ३७० |
| चतुःशकाधिकैर्विभैः | ५२१ | दंपत्योः सह | ६३७, ६३८ | नरं पर्णमयं | ५३७ |
| चतुःसंवेष्टय | २५० | दग्ध्वास्थि पित्रोः | ५३७, ६२९ | नवभिर्दिवसैः | ६१९ |
| चन्द्रक्षये मृतोऽनाथो | ६१३ | दत्तस्य पुत्रजनने | ५२४ | नवश्राद्धं तु | ६०५ |
| चान्द्रायणं त्रयः | ५५५ | दत्तस्वसरि | ५२८ | नवश्राद्धं सपिण्डत्वं | ५५६ |
| चित्तिभ्रष्टा यदा | ६२४ | दत्ताऽनूढा च | ५१५ | न शिला न मृदा | ६२४ |
| चौलाद्वे च विवाहाद्वे | ५९३ | दर्शो क्षयाह | ६९५ | नाड्यः षोडश पूर्व्वेण | २७३ |
| चौलोपनयने चैव | ९१५ | दर्शो तिलोदकं | ७३७ | नान्दीमुखेऽष्टका | ७१८ |
| जननेष्येतन् | ४९९ | दर्शो रविग्रहे | ७१७ | नालिकेरोदकं | ८६५ |
| जन्मत्रयं संचयने | ६१० | दशप्रणवसंयुक्तैः | ९३५ | नासपिण्डीकृतेः | ६९८ |
| जर्त्तिलाश्रये | ७८८ | दशम्याः प्रान्तमादाय | ८३९ | निर्मन्त्रितानां | ७८७ |
| जले प्रवाहे कूले | ६११ | दशाहमध्ये दर्शः | ६१२ | निर्मात्यमपि | ७८२ |
| जीवतस्तु पिता | ७२१ | दशाहान्तं सपिण्डानां | ५३८, ६२७ | निर्वीतिनो वहेयुः | ५८१ |
| जीवन्त्या मातरि | ७५१ | दक्षमाने शवे | ५८४ | निशायां कृष्णपक्षे | ५५६ |
| ज्ञातिभिश्चाद्र्द्रवासोभिः | ५९८ | दाकर्मण्यशक्तः | ५६९ | निशावशेषे | ५३० |
| ज्येष्ठस्य तु क्रतोर्मध्ये | ५६० | दिगंबरं मुक्तकच्छं | ४६२ | पचेदन्नानि | ७८० |
| ज्येष्ठस्वसृणां | ५८० | दुर्मृतानां च | ६३० | पच्छोग्यधर्चं | २९१ |
| ज्येष्ठानां तु सपिण्डानां | ५८६ | दूरे पिताऽनमि | ५७१ | पतितस्योदकं | ६०० |
| ज्येष्ठाभार्या मृता | ५७१ | देवतान्तरनामानि | ४२३ | पत्नी भ्राता च | ५६५ |
| ज्येष्ठा विवाहवन्हौ | ५७२ | देवर्षितर्पणं कृत्वा | २४९ | पत्न्यग्रजपितृव्याणां | ६६१ |
| ज्येष्ठो वाऽपि कनिष्ठो वा | ५५७ | देशान्तरे प्रमीतस्य | ५७४ | पत्न्योरेका यदि | ५७१ |
| ततः समप्ते | ५९४ | देशान्तरे स्थितः | ५८८ | परस्याशौचिनः | ५०२ |
| तन्नासनानि देयानि | ७९५ | दैवं पिता ततो | ७५१ | पवित्रपाणयः सर्वे | ७९५ |
| तथायुष्यहितार्थाय | ३७४ | दैवविप्रकरे | ६८६ | पश्चिमाभिमुखो | ५८३ |
| तदहश्चेत् | ६५४ | द्वादशाब्दात्परं | ६३० | पाते पर्वणि | २८४ |
| तर्पयेत्तिलसंमिश्रं | ७३७ | द्वादशाहे यदा | ५९५, ६५३ | पात्रे यवकुशाः | ८१३ |
| तस्मात्तु प्रथमं | ७७७ | द्वादशेऽहनि | ६६५ | पाददेशे तु | ८०१ |
| तस्मादुभयसंबद्धः | ५६१ | द्वादश्येकादशी | ८४६ | पादमात्रमवच्छाद्य | ५८० |
| तावद्धिः पलाशपर्णेः | ५७४ | द्वारस्य दक्षिणे | ६०० | पादेन स्थापयेत् | २५० |
| तिथिक्षये तिनी | ७३९ | द्विगुणं क्षत्रियस्योक्तं | ८७३ | पितरि प्रोषिते | ६३१ |
| तिथ्यर्क्षयोर्यदा | ८३५ | द्विगुणा यामनश्छाया | ७०९ | पितरि प्रोषिते प्रेते | ६२१ |
| तीर्थे पापं न | ५५ | द्विजभोजन | २३ | पितरौ प्रमीतौ | ६४० |
| तृणं वा यदि वा | ८८६ | द्वितीयया तु | ८३१ | पिता पितामहः | ५२४ |
| तृणपर्णेः सदा | २४४ | नक्तं निशायां | ८२९ | पितुर्दशाहमध्ये | ५८८ |
| तृणराजाहं य | २४३ | नम्रप्रच्छादनं कर्म | ५९६ | पितृकार्येषु सर्वेषु | ७७६ |
| तृणानि वा गवे | ८२२ | न दानं नैव वरणं | ६३३ | पितृर्दक्षिणान्तराले | ५८८ |
| तृतीयमासादारभ्य | ४६६, ५४३ | नयादि देवसातेषु | २५१ | पितृदैवतयोः | ८१२ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|--------------------------|---------------|-------------------------|----------|--------------------------|----------|
| पितृमातृपति | ८४८ | प्रेतस्य वत्सरात् | ६३५ | मातृष्वसामातुल्योः | ५२५ |
| पितृव्याभ्रजयोः | ७२२ | प्रेतस्य वातः स्रक् | ५४४ | मात्राशौचस्य मध्ये | ६३६ |
| पित्रोर्मृतदिनात् | ७५२ | प्रेतस्यास्थीनि | ६०९ | मानस्तोकेति | ३०१ |
| पित्रोर्मृताद्दे गभाद्धि | ५९४ | बहूनामेकवश्यानां | ६३० | मासिकं सोदकुम्भं | ६८३ |
| पित्रोर्मृतौ चेत् | ५३४ | बालापत्या तु | १६२ | मासिकानां तु | ६५३ |
| पित्रोश्चैव पितुः | ५५८ | बीजानां वापनं | ५८६ | मासे संवत्सरे | ७०४, ७३० |
| पुत्रश्च दुहिता चैव | ५६२ | बीजिनः क्षेत्रिणश्चैव | १२९ | मुख्यकर्त्रागमे | ६२३ |
| पुत्रस्वरुतचौलोऽपि | ५५९ | ब्राह्मणानां विना | ५५३ | मुख्यकर्त्रागमेऽन्यस्तु | ६१६ |
| पुत्रस्त्वनुपनीतोऽपि | ५५९ | ब्राह्मणानुहूताद्यः | ५५५ | मुनिभिर्मिन्न | ८१६ |
| पुत्रः पित्रोस्तु | ५३८, ६२८ | भक्ष्याभक्ष्याण्य | ९१६ | मूकोन्मत्तौ न | १०० |
| पुनः प्रभातसमये | ८४१ | भाषामेदो महा | ५२३ | मृतं पतिमनुब्रज्य | ६४१ |
| पुराणपात्रपक्वं | ७८० | भिन्नस्थानगतैः | ७१४ | मृतायां तु | ५७१ |
| पुष्पैस्तु गन्धमाल्यां | ५८० | भुक्तिक्रियायाः | ८११ | मृते च सूतके | ५४७ |
| पूर्वं गृहीताशौचानां | ५३८ | भुक्तिपात्रस्थं | ८१८ | मृते भर्तारि | ६८८ |
| पूर्वगृहीताशौचानां | ६२८ | भुक्तबोच्छिष्टः | ४५३ | मृतेऽह्नि तु | ७१५ |
| पूर्वमेव मृता | ५६८ | भोज्यपात्रेणाज्य | ८०४ | मृत्पात्रेणाध्यं | ७९८ |
| प्रतिष्ठादिषु कालेषु | ५४१ | आतरः पितरः | ५९० | मेषादिस्थे सवितरि | ६९९ |
| प्रत्यक्षमरणे पित्रोः | ५५३, ५८८, ६३४ | आतुर्देशान्तर | ५३६, ६२३ | यज्ञे संभृतसंभारे | ४८३ |
| प्रत्यङ्गं प्रतिमासं | ६३१ | आतुस्तु पत्नीभगिनीं | १२९ | यज्ञकुत्रस्थितः | ५२३ |
| प्रत्यङ्गाङ्गं तिलं | ७१८ | मंत्रवत्संस्कृतस्यापि | ६१७, ६२६ | यथेक्षुहेतोः | ४ |
| प्रत्याङ्गिके तिलं | ३८३ | मंत्रेण विकिरं | ८१२ | यथैवात्मा तथा | ५६५ |
| प्रथमाद्विकमारभ्य | ३८२ | मधुमांसं न दातव्यं | ७६९ | यदाभिर्दूरतो | ६८३ |
| प्रथमेऽह्नि यः | ५९१ | मध्याह्नव्यापिनी | ७१२ | यदा संवत्सरात् | ६५२ |
| प्रदोषव्यापिनी | ८५२ | मध्याह्नः सङ्ग | ७८८ | यदि कन्या पितुः | ५१७ |
| प्रमीतपितृकः | ७३५ | महालयं चाद्विकं | ३८२ | यदि नष्टो मृतो | ६०३ |
| प्राङ्गणे मण्डले | ७९१ | महालये गयाश्चाद्दे | ६७० | यदेन्दुः पितृदेवत्ये | ७४९ |
| प्राचीः पूर्वमुदक्संस्थं | ३५४ | मातापित्रोर्मृतौ | ५३२ | यद्यमान्तर्दशाहे | ५२२ |
| प्राजापत्यं चरत् | ९४३ | मातापित्रोर्ब्रती | ५५९ | यमला चैकगर्भे तु | ५५७ |
| प्राजापत्ये तु | ९४४ | मातापित्रोः | ६९५ | यवीयसां पितृव्याणां | ५८९ |
| प्रातः प्रतिदिनं | ४७१ | मातापित्रोः क्षयाहे | ७२३ | यस्तु रामनवम्यां | ८३६ |
| प्रायः पित्र्येषु | ६०१ | मातामहस्य तत्पत्न्याः | ५८९ | यस्मिन्नह्नि संक्रान्तेः | ७०४ |
| प्रेतकर्माणि वक्तृणां | ५४० | मातुर्मृतेऽन्हि | ७२० | यस्मिन्मासि मृतिः | ६९९ |
| प्रेतकर्मोपदेशित्वं | ५४० | मातुलानुज | ६६१ | या नारी भर्तृसुतयोः | ६४६ |
| प्रेतकार्येषु सर्वत्र | ६४९ | मातुः पितुश्च | ६७९ | यानि शास्त्राणि | २९९ |
| प्रेतत्वस्य विमोक्षार्थं | ६४७ | मातुः पित्रोर्मातुलस्य | ५६७ | यावत्पण्मास- | ४९० |
| प्रेतपक्षे चतुर्दश्या | ६६२ | मातुः पित्रोर्मातुलादेः | ६८४ | रवौ पुष्पं गुरौ | २८५ |
| प्रेतस्य पार्श्वयोः | ५८१ | मातुः सपिण्डीकरणं | ६८० | राष्ट्रक्षोभे नृपाक्षिमे | ४७७ |
| | | मातृविद्धा प्रशस्ता | ८३१ | रात्रौ प्रहरपर्यंतं | ३५६ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|---------|-----------------------------|----------|--------------------------|----------|
| रोचत इति | ८१४ | आद्रे मातामहानां च | ५६२ | साध्वीनामेव | ६४१ |
| वत्सराज्तेऽथ मध्ये | ५९४ | आद्रपंक्तौ तु | ८१० | साश्रमं नैव | १०३ |
| वर्षाद्रे तु संप्राप्ते | ४८३ | आद्रभूमि गयां | ७९६ | सूक्तस्तोत्रजपं | ७९४ |
| वर्षे वर्षे तु | ६५९ | आद्रे च भान्वर्क- | ५९५ | सूत्रं तु दक्षिणे कर्णे | २१२ |
| वस्त्रधान्यादि | ४६९ | आद्रे निमंत्रितो | ७७९, ७८० | सूर्यश्चेत्यनुवाकस्य | ३१८ |
| वस्त्रपाषाणकुम्भानां | ६०२ | आद्रे भुञ्जन् | ८१० | सूर्यस्य सिंह | ७६१ |
| वाससि वाससि | ७९० | श्रुणोत्यनिर्दशं | ६१६ | सोदयाश्च मुतायाश्च | ५२७ |
| वियमानधनो | ७७९ | श्वसूकरशृगालाद्यैः | ५५६, ६०९ | सौरमासे तिथ्यभावे | ७०५ |
| विद्वद्ब्राह्मण | ८६६ | श्वोभूते नित्यकर्माणि | ३०८ | सौर वर्षे पंचमे | ७२४ |
| विना यज्ञोपवीतेन | ९२२ | षोढा विभज्य रजनीं | ... | स्तेनाभिश्चस्त | ७७५ |
| विप्रगर्भे पराकं | ८९४ | संकरूपः सूक्तपठनं | २४६ | स्त्रीमृताहे स्त्रियो | ६७९, ७२० |
| विश्वेदेवा द्वितीयो | ८१० | सन्धिः संगवतः | ३३ | स्त्रीशुद्धिरर्थ | ४७५ |
| विहितं यदकामानां | ८६७ | संनिधाने सपिण्डानां | ५८८ | स्नात्वा स्वशक्त्या | ५७९ |
| वैश्वदेवाहुतीः | ८१९ | संपूर्णैकादशी | ८४२ | स्पृष्टस्पृष्टिं भाषणं | ५०० |
| विष्णवर्षणविहीनं | २९३ | संपूर्णैकादशी यत्र | ८४१ | स्पृष्टा रुद्रस्य | २६७ |
| वृत्ते पितरि | ६६४ | संभोजनी नाम | ७७१ | स्मृतानामेक | ६३९ |
| वृद्धे पितरि संन्यस्ते | ६७४ | संमार्जितोप | ७९१ | स्त्रावे चैव पितुः | ४९३ |
| वृश्चिकादित्रिमासेषु | ७०५ | संस्काराणां तु | ६३५ | स्वगोत्राद्ध्ययते | ४९८ |
| वृषहीनो मृतो | ६४६ | सरुत्प्रसिञ्चत् | ५९९ | स्वभर्तृप्रभृति | ७३७ |
| वैदिकैर्मन्त्राहितं | ३०८ | सद्यः स्पृश्यो गर्भदासो | ४८६ | स्वमातृपितृदीक्षायां | ५९२ |
| वैश्वदेवाहुती | ४०७ | सपत्न्याः पुत्रवत्त्वेऽपि | ५६५ | हन्ता मन्त्रोपदेशा | ८६३ |
| व्याधितां स्त्रीप्रजां | १५१ | सपिण्डनं विना | ६६७ | हस्तेऽभौकरणं | ६८५ |
| व्युत्क्रमाच्च प्रमीतानां | ६७३ | सपिण्डीकरणात् ६६९, ६९३, ७७९ | ५९३ | हिरण्ये तूदकं | ३८२ |
| व्रते चान्द्रमासं | ७०३ | सपिण्डीकरणादूर्ध्वं | ६८७ | होमस्तत्र न कर्तव्यः | ४०६ |
| शयनिबोधनी | ८४५ | सपिण्डीकरणे | ६८७ | — | २२४ |
| शवं दध्वा यथा | ५८५ | सपिण्डीकरणे प्राप्ते | ३२४ | ४२३, ४९५, ४९७, ६९०, | |
| शवचण्डालपतित | २६४ | सप्तव्याहृत्तिसंयुक्तां | ५२९ | स्मृत्यर्थवः | |
| शवानुगमने | ५८५ | सब्रह्मचारिणि | ४९६ | अज्ञेभ्यो ग्रंथिनः | ४८ |
| शाखां विदार्य तस्यास्तु | २४१ | समानोदक- | ६०० | सर्वेषां ब्राह्मणो | ४६५ |
| शाखाशौचे दहेत्पेतं | ५४५ | समानोदका कुर्वीरन् | ९३२ | स्मृत्यर्थसारम् | |
| शावमाशौचं | ४९५ | सर्वजन्मार्जिता- | ४८५ | अभिस्तीर्थानि | २३६ |
| शिरोवारि शरीराम्बु | २५० | सर्वसंगनिवृत्तस्य | ५६६ | अङ्गुल्या धावयेद्दन्तान् | २४४ |
| शुक्रवारे च रात्रौ | ५८७ | सर्वभावे पिता | ४९६ | अतीताशौचं तु | ५३५ |
| शुची वो हव्या | २५२ | सर्वेषामेव वर्णानां | ६४३ | अनुपनीत | ५११ |
| शुद्धाऽप्येकादशी | ८४२ | सहैव भर्त्रा | ६८५ | अनुपनीतमरणे | ५१० |
| शुभागमेऽप्रकृष्टानां | ६५७ | सामिरभावन | ८२६ | अनुमरणे सहमरणे | ६७९ |
| शूद्रं हन्ति द्विजो | ८७३ | सा तिथिस्तद्वहो- | | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|------------------------|---------|-----------------------------|---------|------------------------------|----------|
| अन्ततस्तरुणौ साधौ | २३० | गायत्र्यान्मम् | ४२२ | प्रणवव्याहृती | ३७१ |
| अन्धः श्वित्री च | १४८ | गुप्तमयधाम्बु | ३५४ | प्रतिमा लोहजा | ४७६ |
| अभिवादे नमस्कारे | ११० | चतुर्थ्या पूर्वरात्रौ | ३९ | प्रभात उत्थाय इष्टं | २०९ |
| अमृतापिधानम् | ४५३ | चतुर्दश्यष्टमी | ३८ | प्राचीदिशामनुक्तौ | १५ |
| अस्नेह औषधे | २३९ | चतुर्मासाभ्यन्तरे | ४९२ | प्रातर्होमे संगवान्तः | ३५८ |
| अस्पृश्यस्पर्शन | ५८५ | जपान्ते प्रातः | ३४५ | प्रातः स्नानं सदा | २४६ |
| अस्पृश्यस्पर्शनस्नाने | २४७ | जलादुत्तीर्य वस्त्रप्रान्तं | २५० | प्रादेशमात्रं देवानां | ७९१ |
| आयदेशादन्यदेशे | ६०२ | जाताशौचे मृताशौचे | ४७९ | बर्हिः काशमयं | २३४ |
| आयश्चाद्रविघ्ने | ७२८ | जाते पुत्रे पिता | ८० | बाल उपनयनात् | ४७६ |
| आयश्चाद्रस्य विघ्ने | ६४८ | तैलाभ्यंगनिषेधेषु | २८४ | ब्रह्मचारी गृहस्थश्च | ३३८ |
| आपोशनं गृहीत्वा | ४२३ | तैलाभ्यङ्गे निषिद्धाः | २८५ | ब्रह्माणमीशं विष्णुं | ३८४ |
| आपोशनं वामभागे | ४२२ | दंडः पलाशान्यमोध | ९५ | ब्राह्मतीर्थेन त्रिश्चतुर्वा | २२७ |
| आपोहिष्ठेत्युचा | ३१६ | दन्तवह्मन्तलमं | २३८ | भूतयज्ञबलि- | ४०१ |
| आरंभो वरणं | ४८२ | दशाहस्थाने | ५१९ | भूतलं नारी | ४७२ |
| आसूर्यदर्शनात् | ३३७ | दिवोदितानि कर्माणि | ३५८ | भोजने केशकीटादि | ४३३ |
| आस्यगतशमश्रु | २३७ | देवयज्ञो वैश्वदेवारुखं | ४०३ | मातापितृमरणे | ५२३, ६२१ |
| आस्ये चान्नस्य | ४२३ | देवरेण सुतो | १३ | मुखजा विप्रुषः सूक्ष्माः | २३८ |
| आहिताग्नेर्विधि | ६२७ | देशान्तरादर्वाक् | ५२२ | मूत्रं पुरीषं समुत्सृजन् | २१४ |
| उच्छिष्टस्पर्शनं | ४२८ | द्रव्याभावे द्विजाभावे | ७९८ | मृन्मयानां | ४७१ |
| उच्छिष्टायुप- | २६४ | न जले शुष्कवस्त्रेण | २२९ | यदि कश्चित् | ९०३ |
| उत्तरीयशिलापात्र | ६०२ | न महानिधि | २७० | यदि कश्चित् ज्ञानः | १२७ |
| उत्तानदेवतीर्थेन | ३१६ | नवमिश्रपुराणानि | ६६१ | यस्यां हतश्चतुर्दश्यां | २८४ |
| उदक्यां सूतिकां | ४०९ | न सर्वैरक्तं रुष्णं | २५२ | रजस्वला चतुर्थेऽन्दि | २७७ |
| उपनयनं गर्भात् | ९० | नात्मानं पश्यन्नाचामेत् | २२३ | वयोवस्थाविशेषम् | ६७१ |
| उपनयनात् | ११७ | नान्दीमुखे गया- | ८०७ | वसंतकालेऽपि | १५० |
| उपनयनात्पाक् | ८६ | नान्योदग्न्युदकशेष- | २२२ | वस्त्रं यज्ञोपवीतार्थे | ९२ |
| उपसंग्रहणं नाम | १११ | नान्योन्यं पृष्ठतो | २६३ | वस्त्रादिसहित | २४० |
| उपात्ते तु | १६ | नाभिच्छेदात् | ५०५ | वामेन पात्रमुद्रुत्य | २२४ |
| उपात्ते तु प्रतिनिधौ | ५७८ | नाशुष्कपाणिपादौ | ४२८ | वायसैः सेविते | ६०३ |
| एकपंक्तिषु भुञ्जानो | ४२८ | निमित्तश्चाद्र | ६३५ | वासस्तण्डुलमण्यात्रं | ५९६ |
| एका तु मृत्तिका | २१९ | नित्यश्चाद्रमदैवं | ४०२ | विष्णून्त्रशुक्ल | ४६७ |
| एते संस्कारा | ८४ | निवीती सनकादिभ्यो | ४०४ | विप्राग्न्यर्कां | ३६६ |
| कनिष्ठा देशिन्यङ्गुष्ठ | २२५ | निषिद्धदिवसे वारे | २८५ | विवाहात्परमाधाय | २१ |
| कन्यामरणे | ५१५ | निष्कामणं चन्द्र | ८२ | वैश्वदेवारुखं | ४०५ |
| कुक्कुटाण्डप्रमाणं | ६०१ | पवित्रकर आचामेत् | २३१ | शालिः श्यामाक | ३६१ |
| रुच्छं तस्या यथा | २७९ | पादौ प्रक्षाल्य | ४२० | शाल्मल्यरिष्ट | २४३ |
| कोद्रवं वरकं | ३९८ | पादौ हस्तौ प्रक्षाल्य | २२१ | शुक्लेस्तिर्लेदवान् | २४९ |
| कोविदारशमीक्षा | २४३ | पालाशः सादिरो | ३६० | श्रोत्रियं वेदवित् | ६४९ |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|----------|--------------------------|----------|-------------------------|----------|
| षण्ढादिषु | १०१ | हारीतः | | ऐशान्यभिमुखो | २२१ |
| संनिधौ यजमानः | ३५७ | ११९-१३ | १७ | कंदुपक्कं खेपक्कं | ४४६ |
| संशोध्य दन्तानाचम्य | २४५ | १११५ | १८ | कन्यादूषी सोम | ९२२ |
| संस्काराणामयोगोऽपि | ३६१ | १११६ | ९ | कन्यामकरमीनेषु | ७४० |
| सपिण्डीकरणात् | ६४५, ७२८ | १११७-१८ | १८ | काम्यश्राद्धानि | ७६४ |
| सपिण्डीकरणेष्वेतान् | ६७७ | अरुते वैश्वदेवे | ४१० | कालेऽन्यथा गतं | ८२३ |
| समस्येदमि | ३५९ | अग्निं स्वात्मनि | १७१ | कालेयपालाशको | २४२ |
| सर्वदा नित्यकामार्थं | २५९ | अतिथीनागतान् | ४०८ | कुरुष्वेत्यनु | ८०२ |
| सर्वेषां वा भवेत् | २३० | अथोद्धृत्यान्नं | ८०१ | कुर्वीत देवतापूजां | ३८३ |
| सायं सन्ध्यामुपास्य | ४५६ | अदृष्टपूर्वमज्ञातम् | ४१३ | कुर्वीत सर्वकर्माणि | ५५३, ६१० |
| सावित्र्यादिक्रियाः | ३४५ | अधिमासे न | ७२९ | कुशहस्तेन यज्जतं | २२९ |
| सूतिकास्ववर्णा- | ४९३ | अध्यापनं च | ३१ | रुतहोमस्तु भुञ्जीत | ४१७ |
| सौवर्णं राजतं | ४६८ | अनाश्रमी संवत्सरं | ९०२ | क्लिन्ने भिन्ने | ४७४ |
| स्त्रीषु सापिण्ड्यं | ४९८ | अनुयानेन सापिण्ड्यं | ७१८ | क्लिन्ने भिन्ने शवे | ४४७ |
| स्नेहादिना जातिषूत्कृष्ट- | ५४२ | अन्तर्ह्वोररत्नी | २२१ | क्षत्रियस्याभि | ९२३ |
| स्पृष्टे रजस्वले | २७९ | अन्नपतये नमः | ४२१ | गर्भाष्टमेऽद्वे | ८५ |
| स्वकर्महानौ | ३६६ | अपराहः पितृणां | ७०९, ७३९ | गुडतिलपुष्प | ९१६ |
| हस्तेनावर्त्तयेत् | ३४२ | अग्रावृत शिरा यस्तु | २१२ | गृहस्थः पुत्रपौत्रादि | १६९ |
| हृत्कण्ठतालुगामिस्तु | २२२ | अवकीर्णी नैऋत्यै | १२२ | गोरक्षां रुषि- | ६६ |
| होमे मुख्यो | ३५५ | अवेक्षेत च | ६ | गोशृङ्गेण शतं | ९०५ |
| — ३२ टीप, ३६५, ३६७, | | अष्टागवं धर्म्यहलं | ६३ | ग्रन्थिर्यस्य पवित्रस्य | २३१ |
| ५००, ५३६, ५४६, ५६१, ७८९, | | असंक्रमे तु | ७३० | चतुर्थीसंयुता कार्या | ८३१ |
| हरदत्तः | | असंक्रान्तेऽपि | ७३० | चतुर्थेहि स्नाताया | ७४ |
| अन्यः पूर्वः पतिः | ८८७ | आदित्येन सह | ३१२ | चत्वारोपद्धारयोनं | २१४ |
| अभिवादनस्य यत् | ११२ | आर्द्रवर्षं परित्यज्य | ५४२ | चाटकं कुक्कुटं | २६७ |
| गुरुरत्र पिता | ८८७ | आर्द्रवासा जले | ३४५ | चान्द्रायणं नव | ९१३ |
| जाते कुमारे | ८० | आर्द्रवासा जले कुर्यात् | २२८ | चान्द्रायणं नवश्राद्धे | ४४८ |
| तस्मिन्विषय | २६७ | आहारं च रहः | २१५ | चिकित्सकस्य | ५७ |
| परिसंख्येयं भोजनस्य | ४१७ | इमं श्राद्धविधिं | ८२२ | छंदःस्तु पादाक्षर | ८७ |
| वाक्कर्मजन्यो | २ | उच्छिष्टेन तु संस्पृष्टो | २४० | जपेन देवता | ३५२ |
| शौचेऽपि यथा स्यात् | २१५ | उद्धृत्य पाणिं | ८०९ | जातपुत्रे मृतजाते | ५०५ |
| सागं सकल्पं | ४९ | उपक्रमं वृषोत्सर्गं | ७३४ | जलात्तीरं समासाद्य | २५१ |
| — ८६, ८९, ९४, | | उपनीतो माणवको | ११५ | जातमृते मृतजाते | ४९४ |
| १०८, ११२, १४३, १९२, २२४, | | उपास्य विधिवत् | ३५४ | ततः संध्यामुपासीत | ३१५ |
| ३१७, ३६८, ३९७, ३९९, ७१० | | एकवस्त्रो न भुञ्जीत | ४२६ | ततो देवान् | ३८३ |
| हरिवंशः | | एकादशे द्वादशे | ६६५ | तस्य तु कुमारौ | १५४ |
| अभिजिन्नाम | ८३२ | एका लिंगे तिष्ठोऽपाने | २१७ | तीर्थद्रव्योप | ७६० |
| | | एवं वनाश्रमे | १७१ | त्रयः स्नातका | ११९ |

| कृषिः | पृष्ठम् | कृषिः | पृष्ठम् | कृषिः | पृष्ठम् |
|---------------------------|----------|-------------------------|----------|---------------------------|----------------|
| त्रयोदश्यां यदा | ८३८ | प्रेतनिर्हरणं कृत्वा | ५४४ | वामहस्ते कुशान् कृत्वा | २३२ |
| त्रिदण्डं वैणवं | १८३ | प्रेतसंस्कारकार्याणि | ६६४ | वस्तुपालनभूतेभ्यो | ३९९ |
| त्रिः पिबेद्वीक्षितं तोयं | २२७ | ब्राह्मणेन वधे | ४९० | विदितात्प्राति | ५६ |
| दंपत्योः सह | ६३७ | भक्त्या च शक्तितो | ४१० | विरक्तः प्रव्रजेत् | १७३ |
| दर्भासीनो दर्भपाणिः | ३६९ | भर्त्रा सहानुमरणं | ६४२ | विवर्णं गन्धवत्तोयं | २२२ |
| दशाह एव | ५१९ | भूतविद्धा त्वमा | ७४० | वेदाः प्रमाणं | २ |
| दशाहाच्छुष्यते विप्रो | ४९५ | भूमावेव निदध्यात् | ८०४ | वेदो विद्या ब्राह्मणस्य | ११५ |
| दाहकायर्द्धयं | ५३३, ६३५ | भैक्षमपेक्षितं | ९७ | वैश्वदेवो देवयज्ञो | ४०३ |
| दृष्टार्थे द्विगुणं | ५४५ | भ्रष्टशौचं नरं दृष्ट्वा | २२० | शंखरूप्यमयी | ३४२ |
| देवता पितरश्चैव | ३८० | मंत्रमुच्चारयेत् | ३३९ | शङ्खैः शतगुणं | ३४२ |
| द्विजः पुरुषसूक्तस्य | ३९५ | मंत्रार्थज्ञे जपन् | ३० | श्राद्धविघ्ने द्विजातीनां | ६५५, |
| द्विविध एव | ७३, ५८० | मणिवासो गृहा- | ९२४ | ७१५, ८२१ | |
| द्विविधा स्त्रियो | ८४ | मधुना परमप्रीताः | ७८३ | श्रौतस्मार्तेषु | २३७ |
| न काष्ण्यायसे मृन्मये | ४२० | महानवम्यां | ३७ | श्वानो वा क्रोष्टुको | ९०४ |
| न ग्रामाभिमुखं | ५८९ | माघे नभस्यमा या | २३३ | श्वोनध्यायेऽद्य | ३९ |
| न तत्र वीरा | ८२२ | मातृतः पितृतः | ६४१ | संचिन्त्य पोष्यवर्गस्य | ३७५ |
| न यस्य वेदा | २ | मार्जनाचनं | ३१६ | संतिष्ठमानेष्व | ७९५ |
| न रक्तमुल्बणं | २५१ | मुक्तमयोपवीतं | ९२ | संवत्सरोत्सन्ने | ९२१ |
| न रूप्यं केवलं | २३२ | मृतजातेऽपि वा | ४९४ | सरुत्संस्कृत | ७८ |
| न शुद्धप्रति- | ४९६ | मृतवत्सापयः | ८८२ | सर्वे कण्टाकिनः | २४१ |
| नष्टे जलपवित्रे | १८४ | मृतसूतक | ९०७ | सर्वेषामाश्रमाणां | २०६ |
| नाग्निहोत्रात्परो | २० | मृते भर्तारि या | १६१ | सस्यां सन्ध्यागतः | ७३८ |
| नोचरेदनुपस्पृशेत् | २३५ | मृत्योः परस्तात् | १२१ | सायंकाले तु | २०० |
| पंचप्राणाहुतीः | ४२३ | य आत्मरुतैः | ९३९ | सालग्रामादिभिः | ९१२ |
| पतितपापं | ८५० | यज्ञेन लोका | १९ | सावित्र्याभिमंत्रित | ३१९ |
| पथि दर्भाश्चितौ | २३४ | यतेतैर्वैविधं | ७७६ | सुषुप्सुर्भोक्ष्यन् | २३५ |
| परपूर्वासु भार्यासु | ५२० | यथा कथंचित् | ७३५ | सोदराणां तु | २३ |
| पापण्डानाश्रितात् | ४८८ | यथा हि वेदाध्ययनं | ६ | सोन्तर्जलं प्रविश्याथ | २४६ |
| पित्रादीन् मात्रादीन् | ३७८ | यदन्नं प्रतिलोमस्य | ९०६ | सोरे यदि दिनं | ७०५ |
| पित्रोस्तत्सह | ५२७ | यद्देवेभ्यो जुहोति | ४०६ | स्व्युच्छिष्टस्थिता | ४३२, ८८१ |
| पित्र्यं तूभय | ७२० | यस्थेतानि सुगुमानि | १२० | स्वल्पकाले मृताशौचे | ५३१ |
| पुरा जग्राह वै | ९८ | या तु पूर्वममावास्या | ६६७ | हयरथगज | ११५ |
| पूर्वाह्नि चेद् | ७३९ | येभ्य एव पिता | ७३८ | हस्तदत्तभोजने | ४४८ |
| प्रतिप्रस्तु चतुर्दश्यां | ३५ | यो मोहादथवा | ३९० | — | १३२, १५४, ५०३, |
| प्रतिश्रुत्यानृतं | ९२१ | रहस्ये रहस्यं | ८६९, ९३२ | ५०६, ६६२, ७६६, ८६८, ९०७ | |
| प्रत्यद्वं द्वादशे मासि | ७३० | लोष्ठेन परिमृंजीत | २१५ | हिरण्यकेशी | |
| प्रत्युद्वाहो नैव | १४८ | वसित्वा वसनं | ३७६, ७३७ | पाणिग्रहणादि | ३५४ |
| प्राङ्नाभिच्छेदनात् | ८० | वस्त्रनिष्पीडनं | २५३ | | |

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-------------------------|---------|---------------------------|---------|---------------------|---------------|
| हेमाद्रिः | | धनार्थं क्षेत्रद्वारार्थं | ८६२ | यो विप्रो वृषभं | ८७७ |
| अज्ञानात् ब्राह्मणं | ८७१ | न्यायार्जितस्य | ५० | रवेरस्तमयात् | ७०४ |
| अथ चेत्प्रति- | ९०३ | पलद्वये पञ्चगव्यं | ८८४ | वसुसुद्धा दितिसुता | ७९३ |
| अथानुमरणे पत्नी | ६४२ | पूर्वजः पूर्वजं | ९१७ | वामहस्ते तु | ३०८ |
| अनङ्गान् हन्यते | ८७७ | पूर्वजो द्रव्यलोभेन | ९२५ | विप्रः कण्ठगत | ९०९ |
| अन्यथा निष्कृतिः | ९२५ | प्रतिपात्रं द्विजे | ८०१ | विमक्ता वाऽविभक्ता | ७४९ |
| आमापाते भरण्यां | ७४८ | भिक्षार्थमागतां | ७६८ | सपिण्डीकरणं नाम | ६८३ |
| असत्प्रतिग्रहः | ५८ | महिषीहनने | ८७८ | सुरापं दंडयेत् | ८७९ |
| रुच्छोयुतं तु गायत्र्या | ५५० | मातापित्रोरेक- | ६९५ | स्नातवृत्त्यामुत्तौ | ९११ |
| जपे होमे तथा | ३०८ | माधुकं शैल- | ८८० | स्वस्याकिंचन्य | ९१७ |
| जातके नामकरणे | ६५७ | मेपी च महिषीं | ५८ | स्वस्वेष्टदेवता | ६४५ |
| तिर्यक्पुङ्खं | ३०९ | यथा पुष्पवती नारी | ५५४ | हृत्वा ब्रह्मस्व | ८८३ |
| दर्शपाते भरण्यां | ७४८ | यदि रोगनिवृत्त्यर्थं | ८७९ | हृत्वा शतपलं | ८६५ |
| देवाचां दक्षिणादिः | ७९६ | यस्त्वासनोप | ७८८ | -- | ९१५, ९२४, ९४३ |
| देवालये राजगृहे | ८८९ | यो विप्रो विधवां | ८९१ | | |

ADDENDA

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------------------|---------|----------------------|---------|-------------------------|---------|
| आपस्तम्बः | | भरद्वाजः | | आ. २१६ | ५६ |
| २१५१२१३-४ | १४१ | वसन्ते ब्राह्मणं | ८७ | मा. ४५ | १६९ |
| आपस्तम्बगृह्यसूत्रम् | | समाहितमनाः | ३२४ | योगयाज्ञवल्क्यम् | |
| ११३१२० | १२५ | भविष्योत्तरः | | असामर्थ्याच्छरीरस्य | ५४९ |
| पराशरः | | मिथुनात्कर्क | २७६ | मात्रं भौमं तथा | ५४९ |
| उच्छिष्टोच्छिष्ट | ४२८ | मनुः | | वसिष्ठः | |
| प्रजापतिः | | ५११३७ | २३५ | आग्नेयमाद्रां | ६३४ |
| सर्वसंस्थाधिकारी | १९ | मरीचिः | | विष्णुः | |
| बैजावापः | | सर्पं दृष्ट्वा यथा | ५४९ | ऊर्ध्वपुङ्खरो | ५४९ |
| आज्यमासिच्य | ८०२ | मार्कण्डेयः | | व्यासः | |
| बोधायनः | | देवार्चनादि कार्याणि | २३५ | गृहे त्वेकगुणा | ३१५ |
| ११५११५११६-२१ | २२७ | यमः | | न श्मश्रुव्यंजन | १२४ |
| अनुष्ठितं तु | ५ | नारद | १२४ | स्नास्यतो वरुणः | ३६४ |
| अन्नाभावे द्विजाभावे | २७२ | याज्ञवल्क्यः | | स्वस्वोक्तवर्ण | ३२५ |
| मातृदुहिनु | ३५० | आ. ६५ | १३७ | व्यासस्मृतिः | |
| २७ | | | | तथा बालस्य | ५१३ |

१०३४

सूचिः

| ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् | ऋषिः | पृष्ठम् |
|-----------------|---------|-------------|---------|-----------------------|---------|
| शङ्खः | | शौनकः | | सुमन्तुः | |
| गृहे त्वेक गुणं | ३२१ | अप नः शोशुच | ३४८ | कूष्माण्डं बृहती | ४३८ |
| गृहे मृतासु | ५१७ | त्वं सुमेधं | ४४९ | स्मृत्यन्तरम् | |
| शातातपः | | संवर्तः | | उपवासदिने यो वै | २४४ |
| तस्मादहरहः | ७०७ | रजस्वलां च | ७७ | प्रथमेऽहनि कर्त्ता ये | ६१५ |